परा-आधुनिक युग

माताजी श्री निर्मला देवी

परा-आधुनिक युग

हिन्दी रूपान्तरण
(Meta Modern Era)

माताजी श्री निर्मला देवी

प्राक्कथन (Preface)

वास्तव में मैं इस प्रकार की कोई पुस्तक नहीं लिखना चाहती थी। मैं तो परमेश्वर के पूर्ण आनन्द में मग्न व्यक्ति हूँ। परमात्मा के प्रेम का सर्वव्यापी आनन्द विद्यमान है और मैं चाहती थी कि परमात्मा के प्रेम के इस सर्वव्यापी आनन्द का मज़ा सब लोग लें। विशेषतौर पर पश्चिम में, मैंने देका है कि सत्य को खोजने वाले बहुत से साधक हैं। बहुत से वैज्ञानिकों ने चेतना और जागृति विषय पर बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखी हैं। इन पुस्तकों की एक बहुत बड़ी सूची बनाई जा सकती है परन्तु ये पुस्तकें वास्तव में व्यक्ति को उदासीन कर देती हैं क्योंकि इनके लेखकों ने अन्तिम सत्य के ज्ञान को व्यक्त नहीं किया है। मैं उनकी आलोचना नहीं करना चाहती, आखिरकार वे ईमानदारीपूर्वक शोध तो कर रहे हैं। परन्तु इस नई खोज को क्यों न एक अवसर दिया जाए, क्यों न विनम्र होकर कृत्रिम प्रज्ञा (बनावट बुद्धि) प्रदान करने वाले मस्तिष्क से परे जो सत्य का ज्ञान है उसे देखा जाए?

पश्चिमी जीवन की समस्याओं के विषय में लिख पाना मेरे लिए बहुत कठिन कार्य है। ये एक विशाल वृक्ष सम है, जिसका विकास बाहर की ओर हुआ है। इसकी जड़ों को पृथ्वी में ले जाकर किस प्रकार इसका अन्तर्विकास किया जाए? अन्दर, गहनता में जाकर ही ये जान सकते हैं कि पाश्चात्य सभ्यता की कौनसी समस्याएं हैं जिन्होंने पश्चिमी मस्तिष्क को सत्य से दूर रखा हुआ है।

ये पुस्तक विशेषरूप से पश्चिम के लोगों के लिए है, जो ये चाहते थे कि मैं इस विषय पर लिखूँ। दुर्भाग्यवश मैंने कभी कोई पश्चिमी भाषा नहीं पढ़ी। भारत में अपने शासन काल में अंग्रेजों ने भारत को अंग्रेजी भाषा

आशीर्वाद के रूप में प्रदान की। परन्तु दुर्भाग्यवश पहले मैं एक मराठी स्कूल में पढ़ी और बाद में एक चिकित्सा महाविद्यालय में, जहाँ अंग्रेजी सीखने का कोई प्रश्न ही न था। पश्चिम में तो अंग्रेजी को सार्वदेशिक भाषा के रूप में स्वीकार किया गया है।

यह पुस्तक किसी भी प्रकार से मेरी अलंकृत (लच्छेदार) भाषा या साहित्यिक प्रतिभा का प्रदर्शन नहीं हैं। यह तो मात्र उन तथ्यों की अभिव्यक्ति है जिन्हें मैं जानती हूँ और जिनका सन्देश मैं पश्चिमी संसार तक पहुँचाना चाहती हूँ। अत: मैं पाठकों से अनुरोध करूँगी कि मेरी भाषा की गलतियाँ खोजकर अपना समय बर्बाद न करें क्योंकि न तो यह मेरी मातृभाषा है और न ही मैंने कभी इसका अध्ययन किया है। दुर्भाग्य की बात है कि इस पुस्तक को किसी अन्य व्यक्ति से नहीं लिखवाया जा सकता था क्योंकि ये सब तो मुझे स्वयं ही लिखना आवश्यक था।

सबसे कठिन कार्य मानव को ये विश्वस्त करना है कि पूरी सृष्टि में वही सबसे अधिक विकसित जीव है तथा उसमें गरिमामय व्यक्तित्व तथा सुन्दर एवं शान्त देवदूत बनने की योग्यता है। आधुनिक समय की समस्याओं के बारे में बताना मानव को उसकी असलियत के विषय में विश्वस्त करने का कोई अच्छा मार्ग न होगा। मानव की मूल्य प्रणाली में इतना ओछापन आ गया है, इसका इतना पतन हो गया है कि मुझे लगा कि समस्या की जड़ों तक पहुँचे बिना यह समझा पाना कठिन होगा कि विकसित होने और उत्थान प्राप्त करने के लिये क्यों मानव को अपने वर्तमान बन्धनों से मुक्त होना आवश्यक है। स्पष्ट रूप से बताना पड़ेगा कि समस्याएं क्या हैं और उनके वास्तविक समाधान क्या हैं।

आधुनिक मानव के न तो अन्दर शान्ति है और न बाहर। गरीब, अमीर

सभी दु:खी हैं। सर्वत्र लोग समाधान खोजने के लिए भटक रहे हैं, एक सीमित मानसिक स्तर पर बुद्धि हमारे आसपास की बिगड़ी हुई चीज़ों की कुछ समस्याओं को हल कर सकती है परन्तु इस प्रकार से यदि कुछ समस्याओं का समाधान हो भी गया तो अन्य समस्याएं खड़ी हो जाती है। सच्चा समाधान तो मानव की बाह्य भौतिक परिस्थितियों में न होकर उसके अन्दर विद्यमान है। सभी दोषों का सच्चा तथा स्थाई समाधान केवल मानव के आन्तरिक एवं सामूहिक परिवर्तन में खोजा जा सकता है। यह सम्भावना है। वास्तव में यह घटित हो चुका है। लाखों लोग वास्तव में इस अवस्था को प्राप्त कर चुके हैं। आत्मसाक्षात्कार द्वारा मानव के सामूहिक आन्तरिक परिवर्तन की सच्चाई, वर्तमान युग की सर्वाधिक क्रान्तिकारी खोज है। परन्तु अभी तक बहुत थोड़ी सरकारों ने इस खोज को स्वीकार किया है, विशेषकर अमेरिक, इंग्लैंड, फ्रांस, इटली और जर्मनी में। पोप स्वयं, जिन्हें कि धर्माधिकारी माना जाता है, सभी झूठ-मूठ के गुरुओं से मिलता है परन्तु न तो मुझसे कभी मिलता है और न बात करता है, यद्यपि पोप की पदवी के लिए चुने जाने से पूर्व मैं उनसे मिल चुकी हूँ। सहजयोग मेरा नहीं है, यह तो परमात्मा की नैसर्गिक इच्छा है कि इसे पूर्ण प्रकाश में लाया जाए ताकि मनुष्यों को चेतना की उच्चावस्था तक उठाया जा सके जिससे वे महसूस कर सकें कि वे क्या हैं और स्वयं को पहचान कर यशस्वी बन सकें।

मेरे लिए अधिकतर मनुष्य उन देवी-देवताओं की तरह से हैं जो पाषाण मूर्तियों के रूप में हैं और जिन्हें कुण्डलिनी जागृति द्वारा फरिश्ते बनाया जा सकता है। मुझे आशा है कि, इस पुस्तक द्वारा मैं किसी का दिल नहीं दुखाऊँगी। इसके विपरीत मैं आशा करती हूँ कि इसके द्वारा सहजयोग का महान कार्य करने के लिए मुझे बहुत से लोग प्राप्त होंगे। सहजयोग द्वारा वे अपनी खोज का अन्ति लक्ष्य प्राप्त कर सकेंगे। मुझे विनोदशीलता का

उपयोग करना पड़ा क्योंकि स्वभाव से ही मैं अत्यन्त विनोद-प्रिय हूँ और जिन घटनाओं को लोग अत्यन्त गम्भीरता से लेते हैं उनमें भी मैं विनोद पाती हूँ।

माँ के लिए अपने बच्चों के दोषों की बात करना बहुत कठिन है। परन्तु दोषों का सामना किए बिना बच्चे न तो कभी उनकी कृपा पा सकते हैं और न कभी आत्मसाक्षात्कार रूपी अपना अन्तिम लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। तो मैं आप सबसे यह कहूँगी कि मुझ पर नाराज़ न होकर यह समझें कि अपनी अथाह करुणा एवं प्रेम से लोगों के हित के लिए मैंने यह पुस्तक लिखी है। जो भी अंग्रेजी मुझे आती है, जितना भी साहित्य का उपयोग मैं कर सकती थी तथा जो भी शैली मैं अपना सकती थी, उसका उपयोग मैंने किया।

अनुक्रमणिका

अध्याय	शीर्षक	पृष्ठांक
1	आधुनिकता एवं तर्कवाद	8
2	चयन की स्वतन्त्रता	70
3	प्रजातन्त्र	110
4	जातिवाद	130
5	पाश्चात्य संस्कृति	164
6	धर्म	176
7	शान्ति	216
8	विश्व शान्ति	232
9	उत्क्रान्ति	272
10	पराविज्ञान का संदेश	281
11	सूक्ष्म तन्त्र	292

अध्याय १

आधुनिकता एवं तर्कवाद
(Modernism & Rationality)

आधुनिक काल, जिसमें हम लोग रह रहे हैं, उसे पुराणों में कलियुग कहा गया है- अर्थात् भ्रान्ति एवं अन्तर्द्वन्द का युग। युग- सहस्राब्दियों लम्बा काल होता है जिसकी पुनरावृत्ति चक्रवत या घुमावदार प्रगति से होती है। द्वापर युग दूसरा काल है। इसमें लोग उन महान गुणों को खोने लगते हैं जो सत्ययुग या प्रथम स्वर्णिमकाल में उनके अन्दर विद्यमान थे। युगों के इस पूरे चक्र में कलियुग (आधुनिक-काल) में चारित्रिक एवं आध्यात्मिक चेतना निम्नतम स्तर पर पहुँच जाती है। कलियुग के पश्चात कृतयुग आता है - परिवर्तन या आध्यात्मिक अनुभव के वास्तवीकरण का युग। अन्ततोगत्वा यह काल सत्ययुग-सत्य एवं वास्तविकता के युग तक हमें ले जाता है। इस काल में स्वर्णिम युग लौट आता है और मानव के सभी आध्यात्मिक गुणों की अभिव्यक्ति एक बार फिर पूर्ण यशस्विता से होने लगती हैं। अतः पुराणों के कथनानुसार शान्ति, समरसता एवं परमेश्वरी प्रेमप्रदायक सत्ययुग का आनन्द उठाने की मानव को बहुत आशा है।

पुराणों में किए गए कलियुग के वर्णन की तुलना यदि हम अपने समाज की स्पष्ट दिखाई देती वर्तमान अवस्था से करें तो मुझे लगता है कि कलियुग के अधमतम समय की शुरुआत इस शताब्दि के पहले चौथाई भाग में हुई। विश्वास नहीं होता कि इतने थोड़े समय में किस प्रकार विचार एवं संस्कृति पूर्णतः परिवर्तित हो गए, विशेषकर अन्य सभी संस्कृतियों को प्रभावित करने वाले पश्चिमी देशों में! कलियुग में सभी पारम्परिक मूल्यों को हानि पहुँचाई गई और नष्ट किया गया। आज की सारी चारित्रिक भ्रान्ति का यही कारण है। अत्यन्त व्याकुलतापूर्वक नए आदर्शों एवं पद्धतियों को खोजा जा रहा है।

पुराणों में कहा है कि पतन की चरम सीमा पर पहुँच कर लोगों का सम्बन्ध अपने आन्तरिक धर्म-विवेक (धर्म-परायणता के अन्तर्जात विवेक) से टूट जाएगा। उचित अनुचित के विषय में भ्रान्ति उत्पन्न हो जाएगी। बच्चे माता-पिता का सम्मान नहीं करेंगे। पुरुष महिलाओं की तरह और महिलाएं पुरुषों की तरह से आचरण करेंगी। अधमतम लोग सत्ता एवं शक्ति के पद प्राप्त कर लेंगे, तथा उच्चकोटि के आध्यात्मिक मनुष्यों का तिरस्कार किया जाएगा, उनकी उपेक्षा की जाएगी।

लगभग पच्चीस वर्ष पूर्व सत्ययुग की क्रियाशीलता को दर्शाते हुए अन्त:कालीन (बीच का समय) कृतयुग का आरम्भ हुआ। कृत-युग आध्यात्मिक चेतना का अद्वितीय काल है क्योंकि इसमें परमात्मा की सर्वव्यापी शक्ति , जिसे हम संस्कृत में 'परमचैतन्य' कहते हैं, सर्वसाधारण मानव के स्तर पर गतिशील हो उठी है। भविष्यवाणी की गई है कि यह परमेश्वरी गतिविधि चिरप्रतीक्षित विकास एवं आध्यात्मिक उत्थान के युग-सत्ययुग को लौटा कर लाएगी। सभी प्रकार से देखा जा सकता है कि सत्य का समय अब उन्नत हो रहा है और हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं कि सहजयोग के माध्यम से किस प्रकार बिल्कुल सर्वसाधारण लोग भी पूर्ण सत्य एवं वास्तविकता के प्रति चेतन हो रहे हैं! सहजयोग व्यक्तिगत चेतना की सर्वव्यापी परमेश्वरी शक्ति से नैसर्गिक एकाकारिता है, जो सभी मनुष्यों में उनकी रीढ़ के अन्त में स्थित पावन त्रिकोणाकार अस्थि में सुप्तावस्था में स्थित कुण्डलिनी की अवशिष्ट शक्ति की जागृति से घटित होती है।

कृतयुग जब प्रकट होता है तो इसकी एक अन्य विशेषता भी है जिसके द्वारा बाह्य धर्मों का असत्य, सत्तारुढ़ लोगों के देश-विरोध एवं बेईमानी की स्वत: ही पोल खुल जाती है। झूठ-मूठ के सभी पैगम्बर एवं पंथ-प्रमुखों की पोल खुल जाएगी तथा परमात्मा के नाम पर घृणा एवं असत्य फैलाने वाली संस्थाओं का कृतयुग में भंडाफोड़ हो जाएगा, क्योंकि इस काल में सत्य स्वत:

प्रकट हो जाता है। सभी भ्रष्ट उद्यमी तथा झूठे गुरुओं का पर्दाफाश हो जाएगा।

कृतयुग की एक अन्य विशेषता यह है कि जब-जब मानव अस्तित्व को नियमित करने वाले अन्तर्जात धर्मपरायणता के दैवी नियमों का पतन होगा तब पूर्ण सांसारिक ढाँचा, पूर्ण प्रकृति, इसके विरुद्ध खड़ी हो जाएगी और अनुरूप क्षतिपूरक परिणाम होंगे (अर्थात पतन के कारण हुई क्षति को पूरा करेंगे)। अंग्रेजी में इसे-'ध्रुवत्व का नियम' (The Law of Polarity) और संस्कृत में 'कर्मफल' कहते हैं। इसका व्यवहारिक अर्थ ये है कि जो भी कुछ आप करेंगे उसका फल आपको भुगतना होगा। ('As ye sow, so shall ye reap')। तो इस युग में सभी लोगों को भूत या वर्तमान काल में किए सभी कर्मों का फल भुगतना पड़ेगा। यदि उन्होंने मानव अस्तित्व के सर्वव्यापक एवं शाश्वत धर्म के अनुसार अपना जीवन बिताया है तो वे शान्ति तथा सन्तोषमय जीवन का आनन्द लेंगे। परन्तु इसके विपरीत यदि उन्होंने कोई अपराध किए हैं या धर्म के मध्य-मार्ग से व्यक्तिगत रूप से या सामूहिक रूप से गिरे हैं, तो उन्हें इसी जीवन में इसका दण्ड भुगतना पड़ेगा।

कृतयुग में कष्ट भुगतने के लिए बहुत कुछ हो सकता है। यह दुर्भाग्य पूर्ण है, परन्तु यह हमारे अपने ही कर्मों का फल है जिसको हमें भुगतना होगा। यदि लोग योगवर्णित आत्मावस्था या परमेश्वरी शक्ति से एकाकारिता प्राप्त कर लें तो निःसन्देह इन कष्टों से बचा जा सकता है। पूर्ण आध्यात्मिकता का मार्ग ही मानव के लिए एकमात्र सुख-प्रदायक मार्ग है इसे स्वीकार किए बिना कृतयुग में पोल खुलने की ये अभिव्यक्ति तथा दण्डक्रम कर्मफल के माध्यम से घटित होता ही रहेगा। सामूहिक या व्यक्तिगत रूप से लोग जो कष्ट भुगतेंगे वे उनके कर्मफल के अतिरिक्त कुछ अन्य न होंगे, वर्तमान में उन्हीं की इच्छाओं के फल।

इस पक्ष के बावजूद भी वास्तविक गम्भीर सत्य-साधकों के लिए

कृतयुग सुखद काल है। कृतयुग में आत्मपरिवर्तन के अद्वितीय अवसर हैं। उत्थान को प्राप्त करके ये साधक अत्यन्त महान आध्यात्मिक अवस्था प्राप्त कर लेंगे। कृत युग के इस समय में परमेश्वरी करुणा एवं प्रेम (परम चैतन्य) की सर्वव्यापक शक्ति इस प्रकार गतिशील है कि अपने दोषों के फलस्वरूप कष्ट भुगत रहे लोग भी इस सर्वव्यापक परमेश्वरी शक्ति की गतिशीलता द्वारा कष्टों से मुक्ति पा सकते हैं। इतना ही नहीं, मार्कण्डेय तथा अन्य पुराणों में कहा गया है कि मानव की अन्तर्जात सुप्त अवशिष्ट शक्ति-कुण्डलिनी, जो कि सदैव उसे कुछ ऊँची चीज खोजने की प्रेरणा देती है तथा मानव को उसका उत्थान प्रदान करती है, जागृत होकर जिज्ञासुओं को आत्मसाक्षात्कार (या आत्मज्ञान) प्रदान करेगी। यह शक्ति उन्हें शारीरिक, भावनात्मक, मानसिक तथा आध्यात्मिक सुख भी प्रदान करेगी। हमारे अन्दर सूक्ष्मतन्त्र पर स्थित ऊर्जा केन्द्रों की बाधाओं की शुद्धि द्वारा उन्हें ताल-बद्ध करके कुण्डलिनी उनकी सभी समस्याओं का समाधान करेगी। इस प्रकार विश्व में मानव रचित व्यक्तिगत, सामूहिक या सामाजिक सभी मानवीय समस्याओं का समाधान हो जाएगा। कहा गया है कि ये अवस्था केवल उन लोगों के लिए है जिन्होंने उत्थान के माध्यम से आत्म-बोध की स्थिति प्राप्त कर ली है। ये सब प्राचीन भविष्यवाणियाँ हैं जिन्हें अब स्पष्ट देखा जा सकता है।

भारतीय प्रथम महान ज्योतिषविद् ब्रह्मज्ञानी, भृगु मुनि को इस क्षेत्र में अग्रणी कहा जा सकता है। अपनी पुस्तक ''नाड़ी-ग्रन्थ'' में उन्होंने आधुनिक समय के विषय में स्पष्ट भविष्यवाणियाँ की हैं। उन्होंने विशेष रूप से भविष्यवाणी की है कि किस प्रकार सहजयोग के माध्यम से स्वत: ही कुण्डलिनी की जागृति होगी-सहजयोग अर्थात स्वत: परमात्मा से एकीकरण -और उस समय अवतरित एक महान योगी की शिक्षाओं द्वारा किस प्रकार कुण्डलिनी जागृति विशालस्तर पर व्यक्तिगत एवं सामूहिक मानव परिवर्तन का माध्यम बनेगी। ये योगी कुण्डलिनी के अद्वितीय स्वामी होंगे तथा सभी

लोगों को आत्मपरिवर्तन के प्राचीन रहस्यों की शिक्षा देंगे। इस समय को पावन बाइबल में ''अन्तिम-निर्णय'' (Last Judgement) कहा गया है और कुरान में इसे कियामा या पुनरुत्थान का समय कहा गया है। ज्योतिष शास्त्र में इसे ''कुम्भ-युग'' (The age of Aquarius), पृथ्वी पर पुनर्जन्म एवं महान आध्यात्मिक विकास का समय कहा है।

नि:सन्देह यह विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का युग है जिसमें मानव ने अन्धविश्वास की सीमा से परे जाकर उन्नति की है। अन्तिम निर्णय और पुनरुत्थान के समय की इस महान घटना में व्यक्ति को उत्थान या मोक्ष की बात पर आँखें बन्द करके न तो विश्वास करने की आवश्यकता है और न ही उसे ऐसा करना चाहिए। व्यक्ति को चाहिए कि परिकल्पना के रूप में लेकर वैज्ञानिक के खुले मस्तिष्क से इसके तथ्य को जाँचे-परखे। नि:सन्देह प्रमाणित होने पर वैज्ञानिक मस्तिष्क के आधुनिक मानव को ईमानदारी पूर्वक इस परिकल्पना को स्वीकार कर लेना चाहिए। आत्मसाक्षात्कार के माध्यम से सीधे ही स्वयं को अभिव्यक्त करने वाला परमात्मा का पावनज्ञान नए युग के लिए एक नई प्रजाति की सृष्टि करने में सशक्त रूप से सहायक होगा, यानि प्राचीन काल की तरह से यह ज्ञान थोड़े से विशिष्ट व्यक्तियों के लिए न होकर पूरे विश्व के हित के लिए है। इस प्रकार सामूहिक स्तर पर हमारे विकास का अन्तिम लक्ष्य (Last Breakthrough) प्राप्त किया जा सकेगा, पूर्ण मानवजाति का नवीनीकरण एवं परिवर्तन किया जा सकेगा। धर्म एवं धर्मपरायणता का एक बार फिर से सर्वत्र सम्मान होगा और मानव परस्पर एवं प्रकृति के साथ शान्ति एवं समरसता पूर्वक (Harmoniously) रह सकेगा।

चाहे अभी तक कृतयुग का प्रादुर्भाव अधिकतर मनुष्यों को दिखाई न पड़ता हो, क्योंकि पूरे विश्व में कलियुग अभी तक अपनी अभिव्यक्ति कर रहा है, परन्तु पश्चिमी देशों में कलियुग की यह अभिव्यक्ति अधिक एवं गहनतम दिखाई पड़ती है। फिर भी भारत तथा अन्य तथाकथित विकासशील

देशों में, जहाँ अब भी धर्म का सम्मान होता है, कलियुग ने जीवन की एक ऐसी शैली उत्पन्न कर दी है जो न तो पारम्परिक है और न ही धार्मिक, विशेष रूप से नगरों में। पश्चिमात्य आधुनिक संस्कृति अत्यन्त भयानक रूप से पूर्वी संस्कृति पर आक्रमण कर रही है और युवा पीढ़ी को अभद्र, तुच्छ, छिछली तथा स्वसमर्थक (self promoting) जीवनशैली की ओर प्रोत्साहित कर रही है।

नाड़ी ग्रन्थ की भविष्यवाणी में छोटी-छोटी चीज़ों का वर्णन स्पष्ट रूप से किया गया है कि लोग पारम्परिक धातुओं से बने बर्तनों के स्थान पर लोहे के बर्तनों में खाना खाने लगेंगे तथा बच्चे माता-पिता को पलटकर जवाब देंगे आदि आदि। जो भी हो, भारत का सौभाग्य है कि यहाँ परमात्मा के प्रति विश्वास को उतनी दृढ़ता से चुनौती नहीं दी गई है जितनी पश्चिमी देशों में। वहाँ तो बहुत से लोग विनाशकारी परमात्माविरोधी तरीके अपना लेते हैं। अश्लील एवं चरित्रहीन गतिविधियों के प्रति वे बहुत आकर्षित हैं तथा किसी भी आत्मघातक चीज़ को वे स्वीकार कर लेते हैं।

भारत में ये विश्वास, दैवी नियमों के अस्तित्व के प्रति अन्तर्जात सम्मान तथा ब्रह्माण्ड में सर्वत्र विद्यमान समरसता, बहुत से लोगों में मौजूद हैं। बालवत अविकृत अबोधिता की अवस्था में, व्यवहारिक रूप से, हर मनुष्य का परमात्मा के अस्तित्व पर स्वाभाविक एवं सीधा विश्वास है। समय बीतने के साथ-साथ यह विश्वास विचलित हो सकता है और लोग राजनीतिक, आर्थिक या सामाजिक शक्तियों में विश्वास करने लग सकते हैं। परमात्मा की कृपा पर शुद्ध विश्वास, कट्टरपन, रूढ़िवाद, सम्प्रदायवाद, धर्मान्धता, कुगुरुओं, कालाजादू तथा टोनाटोटका का पतित रूप धारण कर सकता है।

समय बीतने के साथ-साथ ऐसा भी हो सकता है कि व्यक्ति बहुत से कारणों से किसी भी चीज़ में, अपने आप में भी, विश्वास करना छोड़ दे। पश्चिमी देशों में विस्तृत रूप से ऐसा ही हो रहा है। केवल भारत जैसे देशों में

ही हमें लगता है कि लोगों के जीवन में विशेषकर ग्रामीण लोगों के, अभी भी परमात्मा में शुद्ध विश्वास बिल्कुल अटूट है।

नि:सन्देह यह बात सत्य है कि भारत में भी कुछ हद तक कलियुग का प्रभाव प्रवेश कर गया है, परन्तु अभी तक इसने अन्तर्जात धर्म-परायणता, परमात्मा में विश्वास की सीमा को पार नहीं किया है। यही कारण है कि भारत के सर्वसाधारण लोगों ने पश्चिम के ईसाविरोधी (परमात्मा-विरोधी) शैली को पश्चिम की तरह से स्वीकार नहीं किया है। यद्यपि सभी भारतीयों ने, चाहे वे भारत में जन्मे और यहाँ के पारम्परिक मूल्यों और प्राचीन विवेक के प्रति सम्मान को आत्मसात भी किया, अपने अन्तर्जात आध्यात्मिक वैभव-विवेक को नहीं सम्भाले रखा, और नगरों में बहुत से लोगों ने जीवन की पश्चिमात्य शैली को अपना लिया।

कितनी विडम्बना है कि भारतीय मस्तिष्क के लिए पश्चिम की दिखावटी सम्पन्नता आकर्षण का कारण है! नि:सन्देह एक समय था जब भारत सोने की चिड़िया कहलाता था, परन्तु विदेशी सत्ता के परिणामस्वरूप ये देश निर्धन हो गया और स्वतन्त्रता के पश्चात् भी निर्धन बना रहा। अंग्रेजों ने विरासत में बहुत सी चीज़ें छोड़ीं जिनमें से थोड़ी अच्छी थीं और दुर्भाग्यवश अधिकतर बहुत ही बुरी। परन्तु तथाकथित भारतीय बुद्धिजीवियों, जो कि पश्चिमी रंग में रंगे हैं, के अतिरिक्त सर्वसाधारण भारतीय भी इन्हें न पहचान सका। 'फुट डालो और राज करो' की नीति के आधार पर ३०० वर्षों तक राज्य करने के पश्चात् भारत से जाते हुए अंग्रेजों ने धर्म के आधार पर इसका विभाजन कर दिया, जिसके कारण कुछ क्षेत्रों में क्रोध और घृणा का वातावरण बन गया। इन क्षेत्रों में धर्मान्धता और हिंसा ने आसानी से जड़ें पकड़ लीं। परन्तु इतने आघातों के बावजूद भी भारतीय समाज ने देश की पारम्परिक जीवन प्रणाली में अधिक परिवर्तन स्वीकार नहीं किए। स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् भी भूतकाल की तरह से भारत में

पारम्परिक मूल्यों का सम्मान होता रहा तथा परमात्मा में विश्वास एवं अन्तर्जात धर्मपरायणता को स्वीकार किया जाता रहा।

स्वतन्त्रता उपरान्त भारत में बहुत से पाखण्डी तथा देश-विरोधी लोग भी थे जिन्होंने यहाँ के सीधे-सादे नागरिकों का अनुचित लाभ उठाया। ऐसे लोग अधिकतर नौकरशाही, राजनीति तथा आर्थिक क्षेत्र में दिखाई पड़ते हैं। इनका जीवन आम भारतीय की जीवन शैली को नहीं दर्शाता क्योंकि भारतीय जीवन शैली की जड़ें तो पारम्परिक विवेक में बहुत गहरी उतरी हुई हैं। देखा जा सकता है कि भारत की अधिकतर समस्याएं उन पाखण्डियों की गतिविधियों के कारण हैं जिन पर देश के कल्याण का भार है। सौभाग्यवश भारत में 'फ्रॉयड और सेद् (Sade) आदि जैसे बुद्धिजीवी बहुत कम हुए, जो कि बहुत लम्बे-लम्बे मानसिक प्रक्षेपण (विचार धाराएं) बनाकर 'परिवर्तन के लिए परिवर्तन' को बढ़ावा देते हैं और पारम्परिक मूल्यों तथा सामाजिक विघटन का उसी प्रकार पक्ष लेते हैं जिस प्रकार उन्होंने पश्चिम में लिया है। सौभाग्यवश भारत को बड़े युद्धों का भी सामना नहीं करना पड़ा।

इसके विपरीत भारत ने श्रेष्ठ आदर्शों वाले बहुत से पुरुषों तथा महिलाओं को जन्म दिया है जो कि पारम्परिक विवेक तथा सत्य के पक्षधर थे। सन्तों, पैगम्बरों, महान राजाओं तथा सच्चे समाज सुधारकों ने भारत के इतिहास को आध्यात्मिक रूप से सम्पन्न किया है और आज भी देश के सर्वसाधारण लोग इनका गहन सम्मान करते हैं। ये सब लोग महान विद्धान, महान चरित्रवान और महान आध्यात्मिक स्थिति वाले थे। उदाहरणार्थ महात्मा गाँधी, जो स्वयं आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति थे, ने महान देश भक्तों की पूरी पीढ़ी की सृष्टि की। महात्मा गाँधी की तरह से ही वे सब एक सर्वव्यापी धर्म में विश्वास करते थे, ऐसा धर्म जो विश्व के सभी महान धर्मों के तत्व को अपने में समेटे हुए था। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात इस सत्य को देख पाना आसान है कि इन सभी धर्मों की उत्पत्ति एक ही

आध्यात्मिकता के वृक्ष पर हुई, परन्तु धर्माधिकारियों ने उसके फुलों को जीवन्त स्रोत से तोड़ लिया और अब केवल आंशिक सत्य के मृत-पुष्पों से परस्पर लड़ रहे हैं। दुर्भाग्यवश गाँधी जी की पीढ़ी के अधिकतर देशभक्त बहुत कम समय जीवित रहे और भारत के राजनीतिक जीवन में वो उचित स्थान प्राप्त न कर सके। फिर भी भारत में अधिकतर धर्मं, आयोजित धर्म नहीं हैं। सभी लोग इच्छानुसार धर्म अपनाने को स्वतन्त्र हैं। यहाँ तक कि हिन्दू धर्मान्धिता के मूल में भी राष्ट्रवाद ही है और एक मात्र सर्वव्यापी धर्म के प्रति पारम्परिक विश्वास अब भी लोगों में बहुत दृढ़ है। इस प्रकार पारम्परिक समाज के मूल्य यहाँ पर मूलत: अखण्ड बने रहे।

तीन सौ वर्ष के बर्तानवी शासन के उपरान्त भी गरीबी तथा आर्थिक एवं औद्योगिक अल्प-विकास भारत की मुख्य समस्या है। यहाँ पर इंग्लैण्ड के चर्च की तरह से कोई एक संस्था धर्माधिकारी नहीं है। रोमन कैथोलिक चर्च की सबसे बड़ी बेटी कहलाने वाला फ्रांस, तो निकृष्टतम है। सारी गैर कानूनी गतिविधियों तथा जघन्य अपराधों, जिनकी विश्व में सर्वत्र पोल खुल रही हैं, के अतिरिक्त वहाँ पर एडफी (ADFI) नामक एक संस्था है जो यूरोप के अधिकतर देशों में न्याय को प्रभावित करती है। फिर भी फ्रांस धर्मनिरपेक्ष राज्य कहलाता है। यूरोप की तरह से भारत में कोई सरकारी धर्म नहीं है जो बिना सत्य को पहचाने किसी अन्य धर्म, पन्थ या मत को अवांछित कह सके। लोगों को अपनी इच्छानुसार कोईं भी धर्मं या विचारधारा अपनाने की आज्ञा है। परन्तु इस उदार मस्तिष्क एवं धार्मिक सहनशीलता का अन्धेरा पक्ष यह है कि लोग अपनी इच्छानुसार किसी भी उल्टे-सीधे मार्ग का अनुसरण करने लगते हैं या किसी भी ऐरे-गैरे को गुरु रूप में स्वीकार कर लेते हैं। सौभाग्यवश ये सब झूठे गुरु, लालची तथा धनलोलुप हैं और पश्चिम की ओर आकर्षित हो जाते हैं। गरीब देश होने का यह लाभ है। परन्तु जिन देशों में राज्य-धर्म (Official State Religion) हैं वहाँ पर मनुष्य की स्वतंत्रता पर पूर्ण

रोक है, अपने उत्थान के लिए अन्य धर्मों पर अन्तर्दृष्टि डालने की उन्हें स्वतन्त्रता नहीं है। वे केवल उतना ही प्राप्त कर सकते हैं जितना कि सरकारी धर्म उन्हें दे सकता है। परिणामस्वरूप या तो वे अपने अन्धविश्वास से चिपके रहते हैं या किसी असत्य मार्ग, पंथ या सम्प्रदाय में फँस जाते हैं। कट्टर धर्मों ने सरकारी सिद्धान्तों एवं मतों की परवाह न करके, दैवी वास्तविकता का सीधे ही ज्ञान प्राप्त करने के लक्ष्य से किसी भी माध्यम से प्राप्त सत्य को अपनाने वाली प्रारम्भिक अनीश्वरवादी परम्परा का मुकाबला करने का प्रयत्न किया। संस्कृत संज्ञा (Gerund) ''ग्रा'' (gna) का अर्थ है ज्ञान पाना (To know)। ''बोध'' या ''विद्'' जैसे अन्य शब्द भी हैं। इन सबका अर्थ है सत्य को अपने मध्य नाड़ी तन्त्र पर अनुभव करना। बोध से 'बुद्ध' शब्द का उद्भव है, अर्थात प्रबुद्ध (Enlightened One) तथा विद् शब्द की उत्पत्ति दैवी ज्ञान के प्राचीन ग्रन्थ वेदों से है।

दोहरे मापदण्डों तथा चारित्रिक दारिद्रय के मध्य भी पश्चिमी देशों में हम देख सकते हैं कि ध्रुवत्व का नियम (The Law of Polarity) कार्यरत है। प्राकृतिक सम्पदा की निर्मम लूट तथा साम्राज्यवादी शक्तियों द्वारा साम्राज्यों के बाज़ारों के दोहन से, बिना किसी परिश्रम के, कमाए गए वैभव को पश्चिमी देशों ने अपना लिया, जिसके फलस्वरूप पश्चिम में भयानक परिवर्तन हुए : महान भौतिक सम्पदा तो आई परन्तु मानव को धर्म के शाश्वत मूल्यों का ज्ञान देने वाली पारम्परिक सभ्यता से शनैः शनैः उसका सम्बन्ध ढीला पड़ता गया। इन गहन परिवर्तनों ने पश्चिम में पारम्परिक सभ्यता को गम्भीर रूप से हानि पहुँचाई और बहुत से विकासशील देशों के नगरों को भी प्रभावित किया। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि भौतिकवाद के सूक्ष्म अन्त:प्रवाह ने आजकल प्रचलित अशिष्ट पाश्चात्य सभ्यता को जन्म दिया।

दो विश्वयुद्धों तथा शीतयुद्ध काल के संघर्ष के परिणामस्वरूप लोगों को सम्भालने वाले पारम्परिक मूल्यों पर भयानक आक्रमण हुए। संक्षिप्त

ऐतिहासिक अध्ययन से जैसे पता चलता है कि साम्राज्यवादी देशों के सिपाहियों तथा नागरिकों ने व्यर्थ में ही ये स्थिति वहाँ पर थोप दी। उदाहरण के रूप में वियतनाम युद्ध के दौरान थाईलैण्ड में रुके हुए अमेरिका के सैनिक वहाँ की पारम्परिक सभ्यता को हानि पहुँचाने तथा उसे नष्ट करके वहाँ असभ्य वेश्यावृत्ति, नशे-बाज़ी तथा आयोजित अपराध-वृत्ति थोपने के लिए जिम्मेदार हैं। ये भी सम्भव है कि दो महायुद्ध पश्चिमी संसार में प्राचीन मूल्यप्रणाली को उखाड़ फेंकने के लिए जिम़्मेदार हों! पश्चिम के उन दिनों के भयानक अहं ने न केवल अन्य देशों को गुलाम बनाया बल्कि इसके परिणाम स्वरूप गोरे लोगों ने विश्व भर में युद्ध फैला दिया।

यूरोप के लोगों ने अमेरिका पर आक्रमण कर दिया और वहाँ के मूल देशवासियों की शान्त संस्कृति को नष्ट कर दिया। उत्तरी अमरीकी समाज में किसी भी मूल निवासी को उच्च पद पर आरूढ़ पाना असम्भव है। दक्षिणी अमरीका के अर्जेन्टीना (Argentina) जैसे राज्यों में बहुत से जर्मन युद्ध अपराधी आकर शान से बस गए हैं। वे कहते हैं कि फॉकलैण्ड युद्ध की योजना उन्होंने बनाई थी। मैंने उनसे पूछा, ''यूरोप से आप यहां इतनी दूर किस प्रकार पहुँच गए?'' डींग मारते हुए उन्होंने मुझे बताया, ''यह परमात्मा की कृपा थी जिसने रोमन कैथोलिक चर्च को माध्यम बनाया।''

नि:सन्देह पश्चिम में इन समानान्तर सभ्यताओं के विकास के और भी कई सूक्ष्म कारण हैं जिनका वर्णन मैं बाद में करूँगी।

इस पुस्तक में आधुनिक समय में पश्चिमी देशों की सभ्यता तथा विचारों में आए गहन परिवर्तन के बारे में लिखना हमारा उद्देश्य है। हृदय से हम इसके लिए चिन्तित हैं। यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि क्यों ये परिवर्तन इतने स्पष्ट और प्रभावशाली हुए, विशेषकर पश्चिम में। पश्चिम में लोग प्रजातान्त्रिक अधिकारों तथा स्वतन्त्रता समर्थक होने का श्रेय लेते हैं।

परन्तु यदि पश्चिमी विश्व वास्तव में पूरे संसार की चिन्ता करता है तो इसे अन्तर्दर्शन करना होगा। अपनी भौतिक सम्पदा तथा प्रौद्योगिक विकास के कारण, जो कि अब असन्तुलित हो गया है, पश्चिमी लोगों को एक नए युग की सृष्टि करने की और मानव को उच्चावस्था में परिवर्तित करने की जिम़्मेदारी लेनी होगी। परन्तु यदि पश्चिमी देश असाम्यवादी (Fascist Type) तरीकों से पुनर्आयोजन द्वारा समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न करेंगे तथा केवल विकसित देशों का हित ही उनकी चिन्ता का विषय होगा तो अपनी चारित्रिक जिम़्मेदारी निभाने में ये पूर्णत: असफल रहेंगे और कोई नहीं कह सकता कि किस प्रकार वे स्वयं को आन्तरिक एवं बाह्य रूप से नष्ट कर देंगे! अनियन्त्रित भौतिकवाद न तो आन्तरिक शान्ति स्थापित कर सकता है न बाह्य। मेरे विचार में हर पश्चिमी व्यक्ति को तुरन्त समझ लेना चाहिए कि परिवर्तन तथा अन्तिम निर्णय के इस महान युग में उसने क्या महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है।

पश्चिमी लोगों को उन पर आईं असाधारण जिम़्मेदारी को महसूस करना होगा। उन्हें तुरन्त पता लगाना होगा कि किस प्रकार सन्तुलन प्राप्त किया जाए, धन के दृष्टिकोण से नहीं, उत्तरदायित्व के दृष्टिकोण से। पूरी मानवता के उत्थान के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है अन्यथा मानव आधुनिक गतिवाद (Dynamism) द्वारा अन्तर्जात सभ्यता के विनाश के लिए किसको दोषी ठहराया जाएगा, विकसित को या विकासशील को ?

इस आधुनिक काल में विकास प्रक्रिया में हम मानवीय चेतना की अवस्था तक पहुँच गए हैं। यह मानवीय चेतना अपनी सोच, तर्कबुद्धि या बन्धनों के माध्यम से (Rationality or Conditioning) कार्य कर सकती है। बहुत से आधुनिक कवियों ने इनका वर्णन ‘‘ आत्ममुक्ति की दीवारें’’ कहकर किया है। परन्तु यदि व्यक्ति उच्च आयामों तक उन्नत हो जाए तो क्या हो ? तो क्यों न उस अद्वितीय खोज के प्रति अपने मस्तिष्क के द्वार खोल लिए

जाएं जो इस महत्वपूर्ण उत्थान के लिए प्रकट की गई हैं ? परमात्मा के जिस साम्राज्य का वचन हमें दिया गया था, वह आ पहुँचा है।'' यह किसी उद्देश्य या भाषण से लिया गया कथन नहीं है यह तो सर्वोच्च सत्य के अनुभव का वास्तवीकरण है जो सम्पूर्ण है, और जिसकी अभिव्यक्ति अब सर्वसामान्य लोगों में हो रही है। आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् जिस तथ्य का वास्तवीकरण होता है वह यह है कि आप यह शरीर, यह मस्तिष्क, पूर्व बन्धन (संस्कार), यह अहं या ये भावनाएं (Body, Mind, Conditioning, Ego, Emotions) नहीं हैं, आप तो पवित्र आत्मा हैं।

इस सर्वोच्च सत्य का एक अन्य पक्ष यह है कि परमात्मा के प्रेम की एक सर्वव्यापी शक्ति है जो परमात्मा की सभी कृतियों के हर तत्व में प्रवेश कर जाती है। इस पूरी सृष्टि में यही परमेश्वरी शक्ति सारा जीवन्त कार्य करती है इसके सभी कार्यों को हम बिना सोचे समझे स्वीकार कर लेते हैं। छोटे-छोटे बीजों से हम सुन्दर फुल निकलते हुए देखते हैं। नन्हें-नन्हें बीजों से विशाल पेड़ बनते हुए देखते हैं। वैज्ञानिक चाहे जितनी चीर फाड़ कर लें और जितना चाहे इस जीवन्त प्रक्रिया का विश्लेषण कर लें परन्तु उनमें से कोई भी यह नहीं बता सकता है कि किस प्रकार ये चमत्कार हो रहे हैं, या वह कौन सी शक्ति है जो जीवन की इस पूर्ण प्रक्रिया का निर्देशन करती है और इसे बनाए रखती है। हमारे हृदय को कौन धड़काता है, इस रहस्य को जब वे विस्तारपूर्वक बताने का प्रयत्न करते हैं तो कहते हैं कि स्वचालित नाड़ीतन्त्र (Autonomous Nervous System) हृदय को चलाता है। परन्तु यह 'स्व' (Auto), यह आत्मा है कौन? मनुष्य की इन आँखों की तरफ देखें, ये कितने अद्भुत कैमरे हैं? मस्तिष्क कितना महान कम्प्यूटर है? वैज्ञानिक घटनाओं का विश्लेषण कर सकता है, परन्तु हम न तो कभी रुक कर प्रश्न करते हैं और न यह जानने का प्रयत्न करते हैं कि इन सारे आशीर्वादों की वर्षा हम पर क्यों की गई है। परन्तु अब सभी विवेकशील लोगों के लिए, उनके अपने अनुभवों

के माध्यम से, यह जान लेने का समय आ गया है कि पृथ्वी पर अवतरित होने के पीछे हमारा क्या लक्ष्य है। हमारे पूर्ण विकास एवं उत्थान का केवल एक ही लक्ष्य है कि हम इस सर्वव्यापी शक्ति से जुड़ जाएं, ताकि हम स्वयं दिव्य हो जाएं। यह दैवी प्रक्रिया सहज रूप से (स्वत:) कार्य करती है। इसे प्रमाणित किया जा सकता है और यह पूर्ण सत्य है। वैज्ञानिक नियमों एवं खोजों से भी कहीं अधिक सत्य, क्योंकि वैज्ञानिक अविष्कारों को भी सदैव चुनौती दी जाती रही है और इन्हें परिवर्तित किया जाता रहा है।

ये प्रक्रिया अब सामूहिक स्तर पर आरम्भ हो चुकी है। यह विलियम ब्लेक की महान हार्दिक इच्छा की पूर्ति है कि : ''काश! परमात्मा के सभी मानव पैगम्बर होते!'' कृतयुग के इस काल में परमचैतन्य (या परमेश्वरी प्रेम) की कृपा से असंख्य मनुष्यों की कुण्डलिनी जागृत की जा रही है। विलियम ब्लेक की इच्छानुसार वास्तव में चीज़ें घटित हो रही हैं। परमात्मा के बन्दे पैगम्बर बन गए हैं और इससे भी अधिक बात यह है कि उनमें लोगों को पैगम्बर बनाने की शक्ति है।

अभी भी एक छोटी सी समस्या है। आधुनिक मस्तिष्क बहुत सारे विचारों से परिपूर्ण है: मूलभूत विचारों से नहीं, परन्तु अध्ययन, समाचार पत्रों तथा आसपास के मानसिक वातावरण से एकत्र किए गए विचारों से। कारण जो भी हो परन्तु मस्तिष्क दूसरे लोगों के विचारों से लबालब भरा हुआ है। इस कारण से लोगों का वास्तविकता के सत्य को स्वीकार करना या तो कठिन हो जाता है या उसकी गति धीमी पड़ जाती है। लोगों को इस बात का विश्वास दिलाना आसान नहीं है कि पूर्ण सत्य मौजूद है और यह मस्तिष्क से परे है। उन्हें इस बात के बारे में भी विश्वस्त करना कठिन है कि वास्तविकता बहुत समीप है और सभी मनुष्य इसे प्राप्त कर सकते हैं। ईसा-मसीह ने कहा है कि ''विनम्र (Meek) लोगों को ही पृथ्वी का उत्तराधिकार प्राप्त होगा। उनका अभिप्राय दुर्बल (Weak) से न था, परन्तु इसके विपरीत उन

शक्तिशाली लोगों से था जो अपने अहं एवं बन्धनों का त्याग कर सकते हैं। परन्तु आधुनिक मानव न तो शक्तिशाली है और न विनम्र। वह तो अत्यन्त दम्भी, अत्यन्त हेकड़, अत्यन्त बन्धनग्रस्त है। वो इतना दुराग्रही है कि इस विचार तक को स्वीकार नहीं कर पाता कि कोई ऐसा व्यक्ति भी है जो उसे सत्य और वास्तविकता का मार्ग दिखा सकता है तथा सत्य को प्राप्त करने में उसका मार्गदर्शन कर सकता है। सत्य जो पूर्ण है, आधुनिक समय में उसे अपनी अभिव्यक्ति करनी पड़ेगी। इस सत्य को यदि स्वीकार न भी किया गया तो भी यह नष्ट नहीं हो सकता। इसे यदि स्वीकार न किया गया तो यह सारे असत्य का पर्दाफ़ाश करके इसे नष्ट कर देगा।

पूर्ण सत्य को यदि स्वीकार न किया गया तो यह इसे अस्वीकार करने वाले सारे मस्तिष्क नष्ट कर देगा। ऐसे लोग अन्य विकल्प अपना लेंगे और उनमें से अधिकतर को आत्मघातक शैलियाँ अपनानी होंगी। सत्य के नाम पर असत्य की शिक्षा देने वाले गलत लोगों के विचारों को वे स्वीकार करेंगे। कितनी अजीब बात है कि प्रेम पूर्वक पूर्ण सत्य के विषय तक पहुँचने के लिए लोगों से प्रार्थना करनी पड़ती है कि वे इस बात को सुनें कि उनमें दिव्य शक्ति सही-सलामत है और कुण्डलिनी जागृति द्वारा उत्थान प्राप्त करने पर यह शक्ति स्वयं को प्रकट कर सकती है! तरस आता है कि पश्चिमी मस्तिष्क को फुसलाने और विश्वास दिलाने में इतना समय बर्बाद होता है। कितनी विडम्बना है कि आधुनिक बनावटी नेता और गुरु, परमात्मा विरोधी जो कि परमात्मा के विरुद्ध हैं, जो मानवता का विनाश चाहते हैं, वास्तव में अत्यन्त सफल हैं और थोड़े से समय में ही विश्व भर में अनुयायी प्राप्त कर लेते हैं। परन्तु ये भी सत्य है कि परमचैतन्य और ध्रुवत्व के नियम की गतिशीलता के कारण उचित समय पर इन कुगुरुओं का तथा उनकी असत्य एवं दुष्ट अपराधमयी विचारधारा का पर्दाफ़ाश हो रहा है तथा ये तेजी से नष्ट हो रहे हैं। वे सुगमता से प्रकट होते हैं और स्वयं को स्थापित कर लेते हैं, परन्तु कृत

युग के इस समय में वे बहुत कम समय तक रह सकते हैं। कठिनाई ये है कि एक झूठे गुरु का पर्दाफ़ाश होने पर लोग तुरन्त दूसरे गुरु को खोजना शुरु कर देते हैं। किसी भी ऐसे गुरु को जब वो थाम लेते हैं तो प्रायः धनहीन वैरागियों के रूप में उनका अन्त हो जाता है। गुरुओं की ये खरीद-फ़रोख्त.आज कल एक आम बात है और यह पश्चिमी जिज्ञासुओं की फैशनेबल जीवन शैली है। दूसरी तरह के आदर्शों की भी यही बात है। रूस में साम्यवाद असफल हो गया है और धर्मान्धता तथा प्रगतिवाद ने इस रिक्त-स्थान को भर दिया है और यह इन तथाकथित प्रजातन्त्रों में पनपने लगे हैं।

वास्तविक सत्य साधकों को विनम्रता पूर्वक स्वीकार करना होगा कि अभी तक वे सत्य को प्राप्त नहीं कर पाए हैं और निःसन्देह अपने आप वे इसे खोज भी नहीं सकते। पूर्व में सभी लोग जानते हैं कि सर्वोच्च सत्य को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को ईसा-मसीह के कथनानुसार विनम्र होना पड़ता है। इस सत्य को स्वीकार करना पश्चिमी मस्तिष्क के लिए अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि इसका अर्थ है अहं का त्याग करना।

एक पश्चिमी साधक जो सहजयोग सीखने के लिए पहली बार मेरे पास आया उसे लगा कि बिना कोई धन खर्च किए, बिना कोई प्रयत्न किए आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लेना बहुत सुगम कार्य है। हर्षोन्माद से वह इतना भर गया था कि चिल्लाता हुआ वह बाहर बगीचे की ओर दौड़ा : ''मैंने पा लिया है (I have found it)।'' जब वह वापिस आया तो आनन्द से लगभग नाचते हुए कहने लगा : ''अब मैं अपने उन सभी मित्रों को लिखूंगा जो युगों से उत्सुकता पूर्वक सत्य को खोज रहे हैं और उन्हें बताऊंगा कि मैंने इस सर्वव्यापी परमेश्वरी शक्ति को आदिशक्ति (Holy Ghost) की शीतल लहरियों के रूप में अपनी अंगुलियों के सिरों पर महसूस किया है। अब मैं जानता हूँ कि सत्य ये है कि व्यक्ति को आत्मा (Spirit) बनना है और यह कि परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति मौजूद है जिसे हम सबको विकास

प्रक्रिया के माध्यम से अपने मध्य नाड़ीतन्त्र पर महसूस करना है। पूर्ण विश्‍वास के साथ मैं उन्हें बताऊँगा कि यह जीवन्त प्रक्रिया है और पुस्तकों के माध्यम से इसे प्राप्त नहीं किया जा सकता, और न ही धन खर्च करके आप उत्थान पा सकते हैं।

अत्यन्त उत्तेजित होकर उसने अपने उन प्राध्यापकों, मित्रों एवं सहकर्मियों को पत्र लिखे जो बहुत वर्षों से दिन और रात साधना की बातें करते थे और इस विषय पर पुस्तकें पढ़ते थे। उसके आश्‍चर्य एवं निराशा की सीमा न रही क्योंकि उन लोगों का उत्तर उत्साहित करने वाला बिल्कुल न था। कुछ ने तो उसके पत्रों का उत्तर ही नहीं दिया, कुछ अन्य ने लिखा, ''हमें प्रसन्नता है कि तुमने पा लिया है परन्तु हमें अपने ही ढंग से खोजना है। हमें आशा है हम भी किसी अन्य तरीके से पा लेंगे।'' कुछ तो इस बात पर विश्‍वास ही न कर सके कि यह काम सुगम है। कुछ ने कहा : ''सर्वसामान्य जीवन बिताते हुए तुम इस सत्य को प्राप्त नहीं कर सकते, अपने दुष्कर्मों के लिए व्यक्ति को कष्ट भुगतने पड़ते हैं और इस खोज की शुरुआत करने से पूर्व व्यक्ति को समाज से तथा मानवीय बन्धनों से मुक्त होना पड़ता है। जब वह कहता कि कुण्डलिनी जागृति के द्वारा उसने सत्य को प्राप्त कर लिया है तो कोई उसकी बात न सुनता। किसी भी परिणाम तक पहुँचना पसन्द न करने वाली आधुनिक प्रगतिशील विशिष्ट सोच के साथ वे कहते : ''हाँ हो सकता है कि यह (कुण्डलिनी जागृति) तुम्हारे पर कारगर हो, परन्तु यह एकमात्र मार्ग तो नहीं हो सकता, अन्य मार्ग भी अवश्य होंगे।''

यह देखकर उसे गहन आघात लगा कि जो लोग उसके साथ घण्टों बैठे रहते थे, घण्टों गोष्ठियाँ करते थे, बातचीत करते थे, मिलकर पुस्तकें पढ़ते थे और एक दूसरे को पत्र लिखते थे कि किस प्रकार पूर्णसत्य को प्राप्त किया जाए, उन्हीं लोगों को जब उसने बताया कि उसने वास्तव में पूर्णसत्य को प्राप्त किर लिया है तो वे उसे सुनने को भी तैयार न थे! इस प्रकार अन्ततः वह

समझ गया कि सभी लोगों में सत्य का सामना करने की शक्ति और विनम्रता नहीं होती। सत्य से बचने के लिए वे सभी टाल मटोल करने का प्रयत्न करते। कहते, ''हाँ, परन्तु .... '', एक बहाना करते या दूसरा। परन्तु जैसे कहा जाता है : ''सत्य तो स्वयं प्रकट हो जाएगा।''

सौभाग्य की बात है कि इस आधुनिक काल में परमात्मा के विषय में जानने वाले व्यक्ति को न तो क्रूसारोपित किया जा सकता है और न ही मौन किया जा सकता है। निःसन्देह यह व्यक्ति तब तक प्रतीक्षा भी नहीं कर सकता जब तक ये संवेदनहीन लोग विनम्र होकर पुनर्जन्म ले लें, क्योंकि, ''परमात्मा के जिस साम्राज्य का वचन दिया गया था वह समीप है।'' सत्य का सामना करने का यही समय है। इसके विपरीत फ्रांस की अडफी (ADFI) जैसी कुछ अधकचरी ईसाई संस्थाएं सत्य को बिना समझे सहजयोग के विरोध में अफवाहें फैला रही हैं।

वह पश्चिमी व्यक्ति सत्य के बारे में छत पर चढ़ कर चिल्लाना चाहता था परन्तु दुर्भाग्य वश उसके मित्रों ने कुछ सुना ही नहीं क्योंकि कलियुग में जिज्ञासा ने बहुत गति प्राप्त कर ली है और लोग साधना के कार्य को छोड़ना ही नहीं चाहते चाहे उनका लक्ष्य उनके सामने ही क्यों न खड़ा हो! ''आधुनिक समय'' नामक फिल्म में चार्ली चैपलिन काबलों (Bolts) से भरे वाहकपट्टे (Conveyer Belt) पर काम करता है। काबलों पर नट चढ़ाने की गतिविधि उसके शरीर में इतनी जड़ता पैदा कर देती है कि जब वाहक पट्टा घूमना बन्द हो जाता है और नट कसने का कार्य समाप्त हो जाता है तब भी उसके हाथ इस प्रकार चलते रहते हैं मानों काबलों पर नट कस रहा हो! जिज्ञासा की चूहा-दौड़ में लगे हुए अपनी इस आदत को न छोड़ पाने वाले लोगों का यह तुल्यरूप (उदाहरण) है। इसी प्रकार सत्य की खोज में भी अकर्मण्यता है जिसे ब्रेक लगाकर रोका नहीं जा सकता। ऐसे लोग क्षण भर के लिए रुककर किसी ऐसे व्यक्ति की बात नहीं सुनना चाहते जो वास्तव में

बता सकता है। सत्यविद् लोगों को सदैव नासमझी का सामना करना पड़ता है। कबीर साहब ने कहा : ''कैसे समझाऊं सब जग अन्धा''। निःसन्देह कबीर साहब के समय के बाद बहुत सुधार आया है और आज मैं यह नहीं कह सकती कि सारा विश्व अन्धा है क्योंकि हज़ारों लोग खुले मस्तिष्क से कुण्डलिनी जागृति द्वारा सत्य का ज्ञान पाने के लिए आए हैं। सहजयोग में पच्चीस वर्ष के परिश्रम के पश्चात् भी इतने अधिक लोगों का आत्म-साक्षात्कारी होना आश्चर्य की बात है।

कलियुग में पश्चिम में जो गहन परिवर्तन आए हैं- अच्छे या बुरे -उनके विषय में हम इस पुस्तक में विचार करेंगे। हमने धर्म के पतन तथा पश्चिम में बढ़ती हुई आत्मघातक प्रवृत्ति के विषय में तो बात की है, परन्तु यह भी सत्य है कि आधुनिक समय में पश्चिम में बहुत से सत्यसाधकों का जन्म हुआ है। द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् जब पश्चिमी समाज ने धर्मपरायणता के मूल्यों का सम्मान, जो कि प्राचीनकाल में हुआ करता था, खो दिया तब ठीक स्थितियों का विकास हुआ। यहाँ तक कि परमात्मा में विश्वास को भी चुनौती दी गईं और जिज्ञासुओं को उस समय उभरते हुए अत्यन्त श्रद्धा विहीन तथा भ्रान्ति में फँसे समाज का सामना करना पड़ा।

वास्तव में पश्चिमी सभ्यता के प्राकृतिक आधार को चारमुखी आक्रमण ने चुनौती दी। इनमें से एक निश्चित रूप से विज्ञान है। दूसरे बुद्धिजीवी लोग हैं जोकि तथाकथित बौद्धिकता की परम्परा के उत्तराधिकारी हैं। तीसरे स्थान पर आयोजित धर्म, झूठे गुरु एवं पंथ हैं। चौथा और सबसे अधिक शक्तिशाली, आक्रमण है उद्यमियों द्वारा संचालित धन से अन्धे किए हुए पत्रकार।

ध्रुवत्व के नियम के अन्तर्गत, साम्राज्यों की विजय तथा उनके शोषण, के परिणाम अन्ततः भोगे जाने थे और पश्चिम को अपने पूर्व सामूहिक

कर्मफल के परिणाम भुगतने पड़े। कृतयुग की यह एक अन्य अप्रत्यक्ष कृपा है कि किसी भी देश ने दूसरे देश को यदि कोई हानि पहुँचाई है तो उसका फल आक्रान्ता को सामूहिक रूप से भुगतना पड़ा। निःसन्देह व्यक्तिगत रूप से भी मनुष्यों को अपने कर्मों के फल भुगतने पड़ते हैं। बहुत से राष्ट्रों ने साम्राज्यवाद और साम्राज्यों के शोषण के विषय में अपने को अपराधी पाया और राष्ट्र के रूप में स्वीकार किया कि यह उनकी गलती थी। परन्तु जिन पर उन्होंने आक्रमण किए थे और जिन्हें दबाया गया था, वे प्रतिकारी बन गए क्योंकि हिंसा-हिंसा को ही बढ़ाती है। निरन्तर आक्रमण और शोषण ने पूरे विश्व को पटरी से उतार दिया और इसे तथाकथित विभाजन की ओर ले गए: उत्तर दक्षिण विभाजन, विश्व का विकसित और विकासशील देशों में विभाजन, गरीब और अमीर में विभाजन! किस प्रकार पश्चिमी राष्ट्र तथा उनके द्वारा शोषित राष्ट्र, दोष-घृणा-भावना से उभर सकते हैं? आक्रमण, दोष भावना और आत्मघृणा का कुचक्र अत्यन्त विनाशकारी है। स्पष्ट शब्दों में यह कहना होगा कि यह कुचक्र केवल तभी समाप्त हो सकता है जब ये सारे राष्ट्र परमेश्वरी प्रेम के पूर्ण सत्य को जान जाएंगे। केवल उत्थान का वास्तवीकरण ही पाश्चात्य विश्व के लोगों को दोषभावना एवं आत्मघृणा द्वारा दिए गए आन्तरिक विनाश से बचा सकता है।

पश्चिम के लोग अत्यन्त गर्व से अपने आध्यात्मिक जीवन और उत्थान की बातें करते हैं परन्तु उनमें से कोई भी यह नहीं जानता कि वे क्या खोज रहे हैं। तो सन् १९१८ के लगभग, साम्राज्यवाद के महानयुग की समाप्ति और आधुनिकता के आरम्भ के साथ ही, आध्यात्मिकता के प्यासे अज्ञानमय समाज ने खोजना आरम्भ किया। विश्व युद्ध के साये में वे व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से कष्ट उठाने लगे और सत्य को पा लेने के लिए सभी तरीके अपनाने लगे, सभी प्रकार के प्रयत्न करने लगे। इस काल में बहुत से साधकों ने जन्म लिया परन्तु अपनी अज्ञानता के कारण झूठी

शिक्षाओं के प्रति समर्पित होकर वे सब नष्ट हो गए। इस शिक्षा ने उनसे वायदे तो बहुत लम्बे-चौड़े किए परन्तु आर्थिक विनाश एवं मनोवैज्ञानिक निर्भरता के अतिरिक्त दिया कुछ भी नहीं। यहाँ भी ध्रुवत्व का नियम (The Law of Polarity) कार्यरत था।

साठ और सत्तर के दशकों में पश्चिमी देशों में मिथ्या वैभव की स्थापना के कारण भारत के कुछ चालाक लोगों को जब ये पता चला कि वहाँ पर साधकों का बाज़ार है तो उन्होंने पश्चिमी लोगों के धन को लूटने का निर्णय किया और बहुत से ईसा-विरोधी दम्भी गुरु पश्चिमी देशों, विशेषकर अमरीका, में गए। उन्होंने स्वयं को अत्यन्त गतिशील गुरुओं के रूप में वहाँ स्थापित किया और इन अशान्त परन्तु गम्भीर सत्यसाधकों का शोषण करने के लिए मिथ्या आध्यात्मिकता उन्हें बेचने की पेशकश की तथा अत्यन्त चतुराई से इस सौदे में उनका धन लूटकर उन्हें नष्ट किया। बाह्य दर्शक के लिए यह देखना अत्यन्त आश्चर्यजनक था कि किस प्रकार पश्चिम के इतने पढ़े-लिखे व वैभवशाली लोग इस असत्य को पचा रहे हैं, मानों उन्होंने अपने पारम्परिक मूल्यों का विवेक पूर्णत: खो दिया हो और अपने धन तथा मस्तिष्क का पूँजी-निवेश करने का विवेक उनमें बिल्कुल न रहा हो!

इन वैभवशाली लोगों ने अपने जीवन के आध्यात्मिक भविष्य को इन कुगुरुओं के बैंक खाते में निवेश कर दिया। उनके इतने सीधेपन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। संभवत: यह उनका छुपा हुआ अहंकार हो या शायद उन्हें लगता हो कि अपना फालतू का या अधिकतर धन इन गुरुओं को देकर वे अपने लिए मोक्ष खरीद सकते हैं और ऐसा करने से उन्हें भविष्य में कोई कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा। परन्तु जैसा ईसामसीह ने कहा: ''किसी धनवान व्यक्ति के परमात्मा के साम्राज्य में जाने की अपेक्षा ऊँट का सुई के छेद में से निकल जाना आसान है। ''नि:सन्देह तीसरे विश्व की अपेक्षा साठ और सत्तर के दशकों में पश्चिम का हर व्यक्ति वैभवशाली था। कुगुरु निश्चित रूप से

जानते थे कि इन पश्चिमी वैभवशाली जिज्ञासुओं के अहं तथा दुर्बलताओं को किस प्रकार हवा दी जा सकती है क्योंकि धनलोलुप होने के कारण ये साधक भी अपनी आध्यात्मिक सम्पदा का विवेक खो चुके थे।

इस काल में मैं जिन भी साधकों से मिली उनमें से अधिकतर ने मुझे बताया कि यद्यपि वो जानते हैं कि वो कुछ खोज रहे हैं फिर भी अपने लक्ष्य का उन्हें बिल्कुल ज्ञान न था और इन दम्भी कुगुरुओं ने उन्हें सम्मोहित कर दिया था। भारत के इन तथाकथित भयानक कुगुरुओं द्वारा इन साधकों का शोषण किया जाना वास्तव में दु:ख और अत्यन्त लज्जा की बात है। जिज्ञासु एक विशेष वर्ग के लोग होते हैं और वे अत्यन्त बहुमूल्य हैं। विलियम ब्लेक ने उनका वर्णन ''परमात्मा के बन्दे'' कहकर किया है। ये वो लोग हैं जो जन्म-जन्मान्तरों से परमात्मा को खोज रहे हैं और जो प्राय: मिथ्या विचारों के जाल में फँस कर खो गए। (आदिशंकराचार्य ने इसे संस्कृत में ''शब्द-जालम्'' कहा है)

अपने गुरु के लिए रोल्स-रोयस कार खरीदने के लिए कुछ लोग जो भूखों मरे थे, उनसे मैंने पूछा कि ऐसा करने के लिए वे क्यों तैयार हो गए? उन्होंने उत्तर दिया कि उनके गुरु ने उन्हें धातु के बदले आत्मा लौटाने का वचन दिया था इसलिए धन की उन्होंने परवाह नहीं की। बेचारे बदनसीब भोले साधक! क्योंकि अधिकतर लोगों से उनके गुरु ने उनका धन ले लिया और उन्हें एक मृत आत्मा दे दी जो उन्हें बाधित करे, सम्मोहित करे तथा दिवालिए वैरागी बना दे! यह जानने के लिए कि उनकी आत्मा की ज्योति को बुझा दिया गया है और उसका स्थान किसी विनाशकारी चीज़ ने ले लिया है, आपको इन कुगुरुओं के शिष्यों के शून्य तथा बुझे हुए चेहरे देखने पड़ेंगे।

खेद की बात है कि अभिव्यक्ति एवं विश्वास की स्वतंत्रता (Freedom of Expression & Belief) जैसे उत्कृष्ट विचारों वाले मानव का

भयानक शोषण करके ये कुगुरु पश्चिम में फले फुले। समस्या यह है कि यहाँ स्वतन्त्रता का विचार इतना भ्रष्ट हो चुका है कि इसका अर्थ व्यवहारिकता एवं तर्कबुद्धि की कीमत पर विवेक तथा धर्मपरायणता का त्याग करना बन गया है। आज़ादी (Liberty) जीवन को चलाने वाली मूल्यप्रणाली को त्याग कर आत्मविनाश की ओर जाने की स्वच्छन्दता बन गई है, चाहे इसके लिए जितनी भी कीमत देनी पड़े। ये तथाकथित गुरु जानते थे कि आधुनिक काल में वास्तविक स्वतन्त्रता, (जीवन की स्वतन्त्रता और मानव रूप में अपने सर्वोच्च लक्ष्य की प्राप्ति) ही बहुमूल्यतम चीज़ नहीं रह गई, धन ने उसका स्थान ले लिया है। तो इन धूर्त लोगों ने साधकों को उनके धन तथा स्वास्थ्य से भी मुक्त कर दिया। एक गुरु अपने शिष्यों को निर्वाण प्राप्त करने के लिए गोबी मरुस्थल में भेजा करता था। साधक से मुक्ति पाने तथा उसकी धन सम्पत्ति हथियाने का यह पक्का तरीका है।

आधुनिक समय में धन सभी प्रकार की तथाकथित आध्यात्मिकता को दूषित कर देता है। दावा किया जा रहा है कि वैटिकन (पोप प्रशासन) ने ९० लाख डालर के जाली नोट बनवाकर वैटिकन बैंक (परमात्मा के बैंक) के माध्यम से बंटवाए। दुर्भाग्य की बात यह है कि आधुनिक समय में अधिकतर धर्म, धन या सत्ता लोलुपता के कारण ही चलाए जा रहे हैं। तो अब हमें अधिक समीप से देखना होगा कि ये आधुनिक काल हमारे लिए क्या लाया है, इसने हमारे अन्दर क्या परिवर्तन किए हैं और इन परिवर्तनों को हमने क्यों स्वीकार कर लिया है?

वर्तमान समय को प्रायः आधुनिक काल कहते हैं। यह बड़ी अजीब चीज़ है। परन्तु आधुनिक समय में किसी भी चीज़ को प्रचलन से बाहर या पुरातन होने में कोई समय नहीं लगता। इस प्रकार आजकल ''आधुनिक'' का अर्थ हुआ 'वर्तमान समय में नई' या 'इस क्षण नई।' अर्थात जो भी कुछ आधुनिक है उसका बहुत ही सीमित अस्तित्व है तथा आधुनिक अवस्था

क्षणिक है। तो 'आधुनिकता' शब्द अत्यन्त भ्रान्तिपूर्ण है। इसका अर्थ वर्तमान में स्वीकार किए गए सिद्धान्त या विश्व में प्रचलित दृष्टिकोण है। परन्तु आधुनिकवाद में सभी कुछ निरन्तर परिवर्तित और स्थानान्तरित हो रहा है। सनक और सम्प्रदायों का यह स्थायी सिलसिला है जो थोड़ा सा समय चलता है और फिर लुप्त हो जाता है, परन्तु यह मानव मन पर बहुत गहन प्रभाव या चोट छोड़ जाता है।

आधुनिकता का परिष्कृत साहित्यिक या दार्शनिक अर्थ किसी नई चीज़ की खोज की तरफ इशारा करता है या कम से कम मानसिक प्रक्षेपणों के माध्यम से (जो प्रायः बहुत ही असंगत तथा भयावह किस्म का होते हैं) पुरानी चीज़ों से कुछ हट जाने की ओर। परन्तु तर्कबुद्धि या तार्किकता द्वारा इसका औचित्य स्थापन किया गया होना चाहिए! पुराना होने के कारण तुच्छ समझकर जब पारम्परिक मूल्यों के स्थायी संसार को त्याग दिया जाता है तो एक प्रकार की रिक्तता, अव्यवस्था और भ्रांति का अनुभव होता है। भली-भांति आज़माए हुए दिशासूचकों (मार्गदर्शकों) तथा आचरणों का जब परित्याग कर दिया जाता है तो सोचा जाता है कि मानवीय मानसिक गतिविधि, विवेकशील या विवेकहीन, ही वास्तविकता के सत्य को खोज निकालने का एकमात्र मान्य साधन है।

जीवन का अर्थ या मानव अस्तित्व का कारण खोजने के लिए आधुनिकता ने अविवेक के दुरुपयोग के कुछ अत्यन्त विचित्र उदाहरण पेश किए हैं। मनोविज्ञान, नाज़ीवाद तथा अवचेतन (Psychology, Nazism, Surrealism) के माध्यम से यथार्थवाद-ये सब मानव के मानसिक प्रक्षेपणों की विवेकहीनता की देन हैं, तर्कबुद्धि का चोगा पहनाकर जिनका औचित्य स्थापन किया गया है। परन्तु दुर्भाग्यवश तर्कबुद्धि, चाहे इसका उपयोग जान बूझकर विवेकहीनता पर पर्दा डालने के लिए किया जा रहा हो या इस भ्रम के कारण कि माऩव विचारों की रेखीय रचना सत्य तक पहुँचा सकती है, एक

अन्य सारहीन मानसिक प्रक्षेपण है। तार्किक दु:साहसों को आश्रय देने वाली तर्कबुद्धि द्वारा कभी भी वास्तविकता को नहीं जाना जा सकता।

समस्या यह है कि मानव मस्तिष्क तार्किकता का उपयोग अपने किसी भी विचार का वर्णन करने के लिए या उसका प्रतिरक्षण करने के लिए कर सकता है चाहे वह विचार उद्दाम हो या दूषित, सन्तुलित हो या विक्षिप्त, रचनात्मक हो या विध्वंसात्मक। मानव अपने विचारों को किसी भी दिशा में, किसी भी नमूने के लिए, उदाहरण के लिए या किसी भी निर्माण के लिए, जैसा वो चाहे, विकसित कर सकता है। तर्क़बुद्धि द्वारा दी गई मानव जीवन की बड़ी बड़ी समस्याओं के प्रति प्रतिक्रियाएं भी अत्यन्त विचित्र होती हैं। अत्यन्त भ्रामक रूप से ये प्रतिक्रियाएं भिन्न-भिन्न लोगों में भिन्न होती हैं क्योंकि तर्कबुद्धि केवल सम्बन्धित चीज़ों के विषय में ही कह सकती है, सम्पूर्ण के विषय में कुछ नहीं कह पाती। उदाहरण के रूप में तर्कबुद्धि द्वारा व्यक्ति परमात्मा या परमेश्वरी प्रेम के अस्तित्व को प्रमाणित नहीं कर सकता, परन्तु वास्तव में मनुष्य परमात्मा के प्रेम को अपनी अंगुलियों के सिरों पर महसूस कर सकता है।

आश्चर्य की बात है कि यदि हम ये देखें कि उन्नीसवीं शताब्दी की तथाकथित विवेकशीलता के लिए तर्कबुद्धि कितनी महत्वपूर्ण थी और तार्किकता के ऐतिहासिक परिणामों का मूल्यांकन करने का प्रयत्न करें तो हम पाते हैं कि कुछ परिणाम विनाशकारी साबित हुए। इस प्रकार की तार्किकता के कुछ भयंकरतम सामाजिक उदाहरण हिटलर, मुसोलिनी और स्टालिन ने पेश किए। आधुनिकता के पीछे यदि केवल तर्कबुद्धि ही संचालन शक्ति है तो परिणामस्वरूप यह देखकर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि आधुनिकता मानव अहं द्वारा उत्पन्न किए गए असीमित भ्रमों की देन है जो व्यक्ति को मात्र सुविचार-हीनता, मूर्खता, कष्ट और विनाश तक ले जाती है।

विश्लेषण और आलोचना के औज़ार के रूप में नि:सन्देह तर्कबुद्धि का दर्जा बहुत ऊँचा है। परन्तु व्यक्तिगत तर्कबुद्धि अत्यन्त धूर्त एवं छलयुक्त भी हो सकती है, विशेष तौर पर जब यह आलोचना के माध्यम से किसी अन्य आधुनिक विचारक के अहं को चुनौती देती है। सच्चे सृजनात्मक लेखकों और विचारकों ने आलोचकों के कारण बहुत कष्ट उठाए हैं। आलोचक में अपनी सृजनात्मकता नहीं होती और सम्भवत: ईर्ष्या या हीन भावना के कारण वह अन्य लोगों की कृतियों का विश्लेषण करके, आक्रमण द्वारा उन्हें नष्ट करने का प्रयास करता है। अन्य व्यक्ति की अहं की शक्ति को वह इस प्रकार बर्बाद करता है और बदले में अपने अहं को बढ़ावा देता है। आवश्यक नहीं है कि एक व्यक्ति की तर्क बुद्धि दूसरे व्यक्ति की तर्कबुद्धि को चुनौती दे। चाहे तर्कबुद्धि का उपयोग आक्रामक रूप से न किया जाए, फिर भी यह इस बात को स्पष्ट नहीं कर सकती कि ठीक क्या है और गलत क्या है। यह एक आम घटना है। कुछ लोग सोचते हैं कि एक विशेष शासनप्रणाली या एक विशेष धर्म-विश्वास अच्छा है, परन्तु अन्य लोग इस परिणाम तक पहुँचते हैं कि जो शासनप्रणाली या धर्म उन्होंने अपनाए हैं वे भी उतने ही अच्छे हैं। यही कारण है कि धर्म या राजनीति के विषय में सभ्य लोगों के बीच बैठकर बातचीत करना शिष्टता नहीं है। नि:सन्देह विज्ञान के क्षेत्र में आलोचना स्वस्थ क्रिया है, यह वैज्ञानिकों को अपने सिद्धान्त प्रमाणित करने के लिए विवश करती है और इस प्रकार बहुत से नए उपयोगी आविष्कारों को जन्म देती है। परन्तु विज्ञान भी निश्चित परिणाम तक नहीं पहुँच पाता कि वास्तविक क्या है और सत्य क्या है। इतना ही नहीं व्यवहारिक मूल्यों के बावजूद भी विज्ञान मानवीय समस्याओं को पूर्णरूपेण नहीं देख पाता। मेरे विचार में ये समस्याएं केवल आत्मज्ञान के माध्यम से ही सुलझ सकती हैं। नि:सन्देह, वैज्ञानिक भी आलौकिक या हवाई प्रतीत होने वाली चीज़ के प्रति संशयालु हैं। परन्तु जिस आत्मज्ञान की बात मैं कर रही हूँ वह विज्ञान की तरह से यथार्थ है, ठोस है और तर्कबुद्धि द्वारा भी इसे समझा जा सकता है और

इसका सत्यापन किया जा सकता है।

फिर भी तर्कबुद्धि द्वारा प्राप्त किए गए परिणामों की निरर्थकता, इनके निहित अर्थों तथा अनुप्रभावों (after effects) पर यदि हम ध्यान दें तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि तर्कबुद्धि पर जितना चाहे हम गर्वित हों या इसकी डींग मारें, यह विवेक का विश्वसनीय माध्यम नहीं है। प्रायोगिक तार्किकता के अविश्वसनीय परिणामों पर यदि ध्यान दें तो तार्किकता के आधार पर दृढ़ विचार या विश्वास बनाना स्पष्ट रूप से गलत है। केवल तर्कबुद्धि के उपयोग से मूल प्रश्नों का कोई निर्णायक उत्तर नहीं प्राप्त किया जा सकता क्योंकि विचारविमर्श ये दर्शाता है कि सभी विचारधाराएं आंशिक रूप से ही ठीक हैं। निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि एक विचारधारा पूरी तरह से ठीक है और दूसरी पूरी तरह से गलत। अपने विवेक द्वारा हमें ये समझना चाहिए कि सत्य का प्रभाव सम्पूर्ण होता है। जैसे प्रायः हम अनुभव करते हैं, यह सम्बन्धित या परिवर्तनशील नहीं है। सत्य का प्रभाव वैसा नहीं है जैसे छः अन्धों ने हाथी को भिन्न कोणों से महसूस करके समझाः सूंड को पकड़कर एक अन्धा कहता है ''हाथी साँप की तरह से लम्बा है'', टाँग को छूकर दूसरा अन्धा कहता है, ''हाथी वृक्ष की तरह से विशाल है।'' हर एक को अपने अनुभव के ठीक होने का अत्यन्त दृढ़ और न्यायोचित विश्वास है, परन्तु सभी दूसरे के अनुभव का खण्डन करते हैं, उसे गलत बताते हैं क्योंकि सभी ने हाथी को केवल आंशिक और सम्बन्धित रूप से देखा है।

तार्किकता तो वास्तविकता से इतनी दृढ़तापूर्वक जुड़ी हुई भी नहीं है जितनी कि उस अन्धे आदमी की अनुभूति जो हाथी के सम्पर्क में ही नहीं आया, केवल वृक्ष के तने, लटकती हुई रस्सी के टुकड़े या जहरीले साँप के सम्पर्क में आया। जब तक आपकी पहुँच पूर्णसत्य तक नहीं है, सत्य जो पूर्णत्व है, जब तक आप सम्पूर्ण हाथी को देख नहीं सकते, किस प्रकार आप यह निर्णय कर सकते हैं कि आपका ही दृष्टिकोण ठीक है?

फिर भी ऐसे बहुत से लोग हैं जो महान विश्वास के साथ असत्य का प्रचार करते हैं और बड़े ही दिखावे और ठाठबाट के साथ स्वयं को इसका अधिकारी बताते हैं। परन्तु, जैसा कि बहुत से तथाकथित धार्मिक रूढ़िवादियों ने दर्शाया है, यदि कोई अन्य उन्हें चुनौती दे तो वे आक्रमक, हिंसक या हत्यारे भी बन जाते हैं। सभी प्रकार के पंथ जो बाह्य से देखने में अत्यन्त हितैषी लगते हैं वे अपने अनुयायियों को सिखा रहे हैं कि विश्व का अन्त होने वाला है। ऐसे पंथों के अनुयायी हिंसात्मक होकर विनाश के देवता के महान योद्धा बनकर अपने पंथ से बाहर के लोगों की हत्या कर सकते हैं। अपने अनुभवी चोर शिष्यों द्वारा लूटा हुआ धन उनसे हथियाने के लिए कुछ कुगुरु अपने ही शिष्यों की हत्या कर देते हैं, विश्व के अन्त की बातें करने वाले ये गुरु अपने शिष्यों को विवाह करने की आज्ञा नहीं देते, कुछ कुगुरु महिला शिष्यों से बलात्कार करते हैं और परिणामतः वे गर्भवती हो जाती हैं और चोरी छिपे अपने अजन्मे या नवजात बच्चों की हत्या कर देती हैं। 'गोपनीयता' विश्व के अन्त की घोषणा करने वाले इन सभी पंथों का सांकेतिक शब्द है।

पूर्ण सत्य की मज़बूत नींव पर ही व्यक्ति सम्बन्धित रूप से अनिश्चय, अन्तर्विरोध और भ्रान्ति से परिपूर्ण विश्व में दृढ़विश्वास, पूर्ण शान्ति एवं अहिंसा की स्थिति प्राप्त कर सकता है। उदाहरण के रूप में विलियम ब्लेक की तरह से, ऐसा व्यक्ति सच्चे अर्थों में महात्मा है जो अपने दिव्य ज्ञान द्वारा देखे गए सत्य का वर्णन सच्चाई से करता है तथा प्रतिवादों और तिरस्कार के प्रति प्रबलता या उग्रता पूर्वक प्रतिक्रिया नहीं करता। वह अपने पर आक्रमण करने वालों को अन्धे एवं अज्ञानी जानकर उन पर दया करता है।

परन्तु आधुनिक समय में सत्य का सहज एवं विनम्र वर्णन मनुष्यों को प्रभावित नहीं करता, ओछा दिखावा तथा प्रदर्शन उसे प्रभावित करता है। अमेरिका में जब मैं प्रवचन यात्रा पर गई हुई थी तो बोस्टन के दूरदर्शन

सम्वाददाताओं ने मुझसे पूछा कि आपके पास कितनी रोल्स-रॉयस कारें हैं? जब मैंने उन्हें बताया कि मेरे पास एक भी नहीं है तो उन्होंने मुझसे साक्षात्कार करने से मना कर दिया क्योंकि मैं इस व्यापार में न थी। निःसन्देह मैं बोस्टन दूरदर्शन के लोगों को दोष नहीं देती क्योंकि वे एक ऐसे समाज में कार्यरत हैं जहाँ धनशक्ति ही अन्तिम कसौटी है। कुछ प्राप्त करने के लिए आपको भी आधुनिक समाज की खलबली में जीवित रहना होगा जहाँ तर्कबुद्धि और अहंकार, घोड़े की आँखों पर बंधे दो पर्दों सम बन चुके हैं, ऐसे समाज में जिसका धन के अतिरिक्त कोई सार ही नहीं है।

अब तर्कबुद्धि की शक्ति और कार्यक्षेत्र पर प्राकृतिक सीमाओं के कारण, केवल आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति ही पूर्ण सत्य या असत्य के विषय में अधिकारपूर्वक बता सकता है क्योंकि ऐसा व्यक्ति तर्कबुद्धि से ऊपर उठकर विचारों से परे वास्तविकता के साम्राज्य में होता है। सत्य के विषय में इतनी दृढ़तापूर्वक बात करना मानव मस्तिष्क की सामान्य सीमाओं से परे की बात है। ऐसा व्यक्ति यदि सत्य की केवल घोषणा ही नहीं करता, वास्तविक रूप में वह सत्य की अभिव्यक्ति भी करता है तथा अपने जीवन और कार्यों में इसका उपयोग करता है तब तो ऐसे व्यक्तित्व पर गहन ध्यान दिया ही जाना चाहिए। ऐसा व्यक्ति या तो सन्त है या पैगम्बर और या महान विकसित आत्मा जिसका अद्वितीय व्यक्तित्व अहंकार और बन्धनों के सभी दोषों से मुक्त है। हम कह सकते हैं कि वह ''परा-आधुनिक'' है और तर्कबुद्धि, धन-महत्व, आधुनिक समय के फैशन तथा सनक द्वारा थोंपे गए मानदण्डों की शक्ति की वह चिन्ता नहीं करता। वास्तव में सभी विचारों को राय मात्र मानने वाले व्यक्ति को ऐसा विवेकशील व्यक्ति यद्यपि अहंकारी प्रतीत होगा परन्तु अपने जीवन काल में वह कोई ऐसा कार्य नहीं करेगा जो अप्रिय हो या जिसे पापमय कहा जा सके, जो मानव हित के विरोध में हो। ऐसा व्यक्ति लोगों के मस्तिष्क में विनाशकारी विचार भी उत्पन्न नहीं करेगा। इसके

विपरीत, जो भी कुछ वह करता है वह रचनात्मक एवं करुणामय होता है और ऐसा व्यक्ति अपने पूर्ण कार्यक्षेत्र में शान्ति की सृष्टि करता है। पूर्ण एवं कुशल जीवनार्थ मानव उत्थान को बढ़ावा देने के लिए किया गया उसका कार्य शाश्वत तथा सम्पन्न स्वभाव का होता है, चाहे 'आदर्शवादी' और 'अव्यवहारिक' कहकर लोग उसकी निन्दा ही क्यों न करें।

आधुनिक जीवन के इस माध्यम और आधार, तार्किकता का पूर्ण सत्यापन होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके मूल्य और सीमाएं यदि हम जान सकें तो, हमारे मार्ग में इसके द्वारा खोदे गए अन्धकूपों से बचते हुए, इसके फलों का आनन्द हम उठा पाएंगे। सर्वप्रथम ये आवश्यक नहीं कि तार्किकता अनुभवसिद्ध ही हो। यह सदैव मानव अनुभव द्वारा प्राप्त तथ्यों के अनुरूप नहीं होती। यदि किसी विचार या सिद्धान्त का उद्भव ही वास्तविकता से न हो तो व्यवहार में लाने पर उसका अन्त और अन्तिम परिणाम भी विनाशकारी हो सकता है। ऐसा औचित्यस्थापन यदि सामूहिक हो तो यह अत्यन्त भयानक होता है। केवल एक व्यक्ति को ही इससे चोट नहीं पहुँचती, बहुत से लोगों को इसका आघात पहुँचता है और कभी-कभी तो पूरे राष्ट्र को या बहुत से राष्ट्रों को इससे हानि होती है या इस प्रकार की सामूहिक भ्रान्ति के प्रभाव के कारण वे नष्ट भी हो सकते हैं। तार्किकता, सम्भव प्रतीत होने वाली एक पद्धति की रचना मात्र करती है परन्तु आवश्यक नहीं कि यह सच्ची या वास्तविक हो। प्रायः तार्किकता उन विपरीत विचारों को भी भली भान्ति सत्य साबित कर सकती है जो बाद में दोष एवं छल पूर्ण प्रमाणित होते हैं। तर्कबुद्धि किसी भी व्यक्ति को क्षुद्र या शूरवीर समझने के लिए विवश कर सकती है।

समस्या ये है कि तार्किकता की ये सब अभिव्यक्तियाँ सम्बद्ध स्तर पर हैं क्योंकि इनकी सृष्टि उन मनुष्यों द्वारा की गई है जिनमें विवेकशीलता के अन्तर्जात, पथ-प्रदर्शक सिद्धान्तों का पूर्ण अभाव है। जब भी वे तार्किकता

का निरूपण करके किसी पद्धति की रचना करने का प्रयत्न करते हैं तो वे केवल अपने अहं एवं बन्धनों का निरूपण मात्र करते हैं। कुछ पूर्ण या वास्तविक तथ्य प्रदान करने के स्थान पर वे स्वरचित लक्ष्य की ओर निरंकुशतापूर्वक अपने को बढ़ाते हैं। जंगली सूअर की तरह से, जो एक बार यदि आक्रमण कर दे तो दिशापरिवर्तन नहीं कर सकता, तार्किकता सीधी रेखा में चलती है। जंगली सूअर प्राय: अपना लक्ष्य खो देता है और तब तक संघर्ष करता रहता है जब तक वह पूरी तरह से थक नहीं जाता। बहुत से बुद्धिजीवियों का भी यही हाल होता है। ये लोग भी इस सम्बद्ध विश्व में अपने विचारों का चरमसीमा तक पीछा करते हैं, यह भी नहीं जानते कि वास्तविक जीवन धाराप्रवाह है और परिवर्तनशील! प्राय: लक्ष्य-स्थान परिवर्तित हो जाते हैं और वे इन्हें प्राप्त नहीं कर सकते। सफलता के शिखर पर सवार आधुनिक व्यक्ति अविरल गति में फँस जाता है और गति को धीमा करके या रुककर ये भी नहीं देख सकता कि वह कहाँ जा रहा है और किस प्रकार अन्य लोगों को ले जा रहा है। इस प्रकार औचित्य-स्थापकों की सत्य-धारणा सामान्य रूप से रेखीय गतिविधि है जो केवल मानसिक निरूपण की उस धारणा को उसके तर्कसंगत परिणाम तक ले जाती है।

नि:सन्देह इसमें एक सीमा तक अन्तर्दृष्टि की चिंगारी भी हो सकती है परन्तु पूर्ण अवलोकन पर आधारित न होने के कारण इसमें सत्य सार नहीं होता और इसका पतन होने लगता है। अन्ततोगत्वा यह पलटकर अपने निरूपक पर ही दनदनाती है या उन लोगों पर जिन्होंने इस विचारपद्धति को स्वीकार किया हो। यह पद्धति रोग की तरह से पलट कर आती है और असफल होती है क्योंकि इसमें वास्तविकता की शक्ति का अभाव है। परिणामस्वरूप अपनी ही बेतरतीब उड़ान को यह सम्भाल नहीं सकती। इससे पता चलता है कि केवल तर्कबुद्धि पर आधारित परहितैषी प्रतीत होने वाले समाधान क्यों विनाशकारी तत्वों से परिपूर्ण होते हैं।

फ्रॉयड के सिद्धांत इसका एक बहुत अच्छा उदाहरण हैं। अब इतने लम्बे समय पश्चात् लोग समझने लगे हैं कि ये सिद्धांत कितने विकृत और कपटपूर्ण हैं तथा फ्रॉयड द्वारा प्रतिपादित मनोविश्लेषक उपचार कितने छलमय और मूर्ख बनाने वाले साबित हुए हैं! यह बात अब स्पष्ट हो गई है कि फ्रॉयड को अचेतन की समझ ही नहीं थी। उसके प्रारम्भिक शिष्य सी.जी.युंग ने बाद में अचेतन का सभी महान सृजनात्मक विचारों, सारी वास्तविकता के आधार के स्रोत एवं उत्पति स्थान के रूप में वर्णन किया। फ्रॉयड के सीमित एवं विनाशकारी दृष्टिकोण की तरह सी.जी.युंग ने 'अचेतन' को 'असभ्य प्रेरणा से भरी व्यक्तिगत कचरा पेटी' नहीं कहा।

फ्रॉयड ने दावा किया था कि मनोविश्लेषक सिद्धान्त लोगों को सुखमय जीवन व्यतीत करने में सहायक होंगे। परन्तु इन सिद्धांतों ने पश्चिमी लोगों को बहुत हानि पहुँचाई। जिन लोगों ने फ्रॉयड के भयानक हानिकारक सिद्धान्तों को सहज ही में स्वीकार कर लिया था उनके मस्तिष्क से चरित्र-विवेक को निकाल फेंकने के लिए ये सिद्धान्त काफी हद तक जिम्मेदार थे। मातृ-मनोग्रन्थि, फ्रॉयड की मुख्य एवं प्रिय विषय, के प्रति लोगों के मन में उत्पन्न हुई घोर प्रतिक्रिया एवं विरोध को निष्प्रभावित करने के लिए फ्रॉयड के पक्षधर लोगों ने स्वयं को मुबारक बात दी और उसके व्यक्तिगत सम्मोहन को बिना किसी परेशानी के स्वीकार कर लिया (गले से उतार लिया)। अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने के लिए यदि फ्रॉयड भारत आया होता तो यहाँ के लोग क्रोध एवं रोष के कारण उसकी हत्या कर देते क्योंकि यहाँ के लोगों में पावित्र्य और नैतिकता का गहन विवेक है तथा सत्य और अच्छाई की सूझ-बूझ है, विशेष रूप से मातृत्व के सम्मान का उन्हें गहन विवेक है। क्रूसारोपित ईसामसीह ने मृत्यु से पूर्व ये क्यों कहा : ''माँ का अवलोकन करें'' (Behold the Mother) अर्थात् माँ की प्रतीक्षा करें ?

भारतीय गहन पारम्परिक विवेक की एक मुख्य शिक्षा ये है कि

आदिशक्ति ही सभी चीज़ों के उद्‌भव का स्रोत हैं और अन्ततोगत्वा सभी कुछ स्वाभाविक रूप से उन्हीं की ओर जाता है। केवल सहजयोग की महान घटना द्वारा ही यह पूर्णतया समझ पाना सम्भव है कि माँ के शरीर में पुनः प्रवेश करने का क्या अर्थ है, प्रेम एवं करुणा के सागर में पवित्रतम् रूप में ज्ञानोददीप्त कोषाणु बनकर प्रवेश करना, जिस प्रकार बूंद सागर बनकर माँ के (सागर के) जीवन्त शरीर का अंश बन जाती है! फ्रॉयड अत्यन्त तुच्छ एवं अधम मस्तिष्क का व्यक्ति था। उसने सभी चीज़ों के महत्व को, इन महान सत्यों के महत्व को भी, क्षीण करके अपनी कुटिल मनोग्रस्ति (Perverse Obsession) को तुच्छ आयाम देने का प्रयत्न किया (अर्थात अपने सिद्धान्तों की तुच्छता से इन पारम्परिक सत्यों को भी तुच्छ बनाने का प्रयास किया)।

सौभाग्यवश भारत में न केवल पढ़े लिखे लोग परन्तु सर्वसाधारण लोग भी जानते हैं कि वास्तविकता क्या है। प्राचीन पुराणों में भी स्पष्ट वर्णन किया गया है कि सच्चा गुरु कौन है और झूठा गुरु कौन है, तथा ठीक शिक्षा क्या है और गलत शिक्षा क्या है। ये मूल तथा शाश्वत सत्य हैं जिन्हें न तो परिवर्तित किया जा सकता है, न ही रूपान्तरित करके, नए बदलाव या तोड़-मरोड़ कर फ्रॉयड के सनकी सिद्धान्तों के साथ जोड़ा जा सकता है।

वास्तविकता और सत्य, तार्किक या रेखीय सोचविचार की उपज नहीं है। इन्हें आत्मा के प्रकाश से आने वाले, स्वतः अभिव्यक्त पूर्ण विवेक से प्राप्त किया जा सकता है। आत्मसाक्षात्कार से पूर्व, चाहे व्यक्ति स्वीकार करे या न करे, परन्तु सत्य यही है कि, आत्मा हमारे हृदय में सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। केवल आत्मसाक्षात्कार के पश्चात्, केवल तभी, सीधे आत्मा का अनुभव होता है। तब ये मानव व्यक्तित्व में अपनी शक्तियों को प्रकट करती है और इसका प्रकाश चित्तशक्ति को एक नई चेतना में प्रकाशित करता है। आत्मा का दिव्य विवेक चहुँ ओर अपना प्रकाश फैलाता है। तार्किक विचारों की तरह से इसकी रेखीय (एक ही ओर की) गतिविधि

नहीं होती। यह पक्षपात पूर्ण, निहित प्रयोजन या छल युक्त (Partial,Tendentious or Manipulative) नहीं है। यह तो बस सूर्य की किरणों की तरह से है जो अज्ञान एवं अन्धेरे के हर क्षेत्र को प्रकाशित करती हैं। आत्मा से निकलकर वास्तविकता की चमचमाती किरणे चहुँ ओर प्रकाश फैलाती है और गहन प्रश्नों एवं समस्याओं में भी प्रवेश कर जाती हैं। आत्मा की शक्ति असीम है और ये हर क्षेत्र को प्रकाशित करती रहती है चाहे वह जितना भी कठिन और धुंधला हो। जिस प्रकार रेखीय (तार्किक) चेतना निश्चित रूप से करती है, ऐसे किसी बिन्दु तक आत्मा की शक्ति के पहुँचने का प्रश्न ही नहीं उठता जहाँ यह पलटकर मस्तिष्क को भ्रम एवं भ्रान्ति की ओर ले जा सके। इसके विपरीत आत्मा की शक्ति वहाँ तक प्रकाश फैलाती है जहाँ तक व्यक्ति का चित्त जाता है और इस प्रकार मनुष्य सन्तुलित एवं ठोस रूप से वास्तविकता को स्पष्ट देखता है, क्योंकि वास्तविकता जो है, वही है। किसी मानसिक रचना या तर्क की माँग को पूरा करने के लिए तार्किक प्रक्षेपणों के उपयुक्त बनना, सीमित अहं (अन्ध चेतना) की तरह से आत्मा न तो चाहती है और न ही उसे किसी विचार को तोड़ने-मरोड़ने की आवश्यकता है। परेशानी ये है कि सत्य कभी समझौता नहीं करता। यह अपने गहन पावन प्रेम की नींव पर अड़िग खड़ा रहता है।

यही कारण है कि सत्य को जानने वाला व्यक्ति कभी-कभी अन्य लोगों से कतराता है क्योंकि अपने दिव्य ज्ञान का वह अन्य लोगों के तार्किक प्रक्षेपणों, सर्वप्रचलित सफल एवं लोकप्रिय विचारों से मेल नहीं बिठा पाता। वह परम (Absolute) की पीठिका (आधार) पर खड़ा है और जानता है कि आधुनिक औचित्य स्थापकों की भ्रान्ति एवं दुर्व्यवस्था से परे वास्तविकता और पूर्ण सत्य (Reality and Absolute Truth) का साम्राज्य है। वह यह भी जानता है कि अहं की सीमाओं में रहते हुए तर्कबुद्धि द्वारा वास्तविकता को प्राप्त नहीं किया जा सकता, केवल उत्थान द्वारा इसे पाया जा सकता है। यह

कोरी काल्पनिकता नहीं है, यह हमारे आत्मानुभव का वास्तवीकरण है। आत्मा पहिए की सुस्थिर धुरी के समान है। निरन्तर गतिशील जीवन के पहिए के मध्य में स्थित अडोल धुरी पर यदि हमारा चित्त टिक जाता है तो आत्मा द्वारा ज्योतित होकर हम आन्तरिक शान्ति के स्रोत बन जाते हैं और पूर्ण शान्ति एवं आत्म ज्ञान की अवस्था प्राप्त कर लेते हैं।

जब तक हमारी चेतना पहिए की परिधि (बाह्य रेखा) पर रहते हुए अहं से जुड़ी रहती हैं, हमारे रोज़मर्रा के जीवन में निरन्तर गतिशीलता होती है और हम अपने चहुँ ओर विद्यमान खलबली की सम्बद्ध सूझ-बूझ के स्तर पर ही बने रहते हैं। सीमित करने वाले अहं के प्रभाव के अतिरिक्त सभी प्रकार की इच्छाएं, आशाएं और बन्धन हमारी सतही शारीरिक या मानसिक इन्द्रियों तक पहुँचकर वहाँ दबाव, तनाव और पूर्ण थकान पैदा करके हमारी चेतना को प्रभावित एवं विकृत करते हैं। इसके विपरीत आत्मा का अन्तर्जात गुण है जो हमें सभी बनावटी एवं अवास्तविक खलबलियों से उठाकर शुद्ध वास्तविकता के साम्राज्य में ले जाता है, जहाँ ये वास्तविकता हमारे अन्दर, और बाहर वातावरण में भी, शान्ति का प्रसार करती है। इसकी न तो माँग की जा सकती है और न इसे थोंपा जा सकता है और न ही इसके लिए धन दिया जा सकता है। विकास की जीवन्त प्रक्रिया के माध्यम से यह स्वतः ही घटित होता है। चेतना, जो कि अस्थिर और सम्बद्ध है, हमारे उत्थान के पश्चात् सर्वव्यापी परमेश्वरी चेतना के साथ एकाकार हो जाती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि आत्मसाक्षात्कार के माध्यम से आत्मा को स्वयं का ज्ञान हो जाता है और यह पूर्णतः तेजोमय, पूर्णतः विश्वस्त और पूर्णतः आत्मनिर्भर हो जाती है। हम कह सकते हैं कि आत्मा पूर्णचेतना है और इसलिए उसे अपने स्वभाव का सर्वोच्च ज्ञान है।

अब, जैसा मैंने कहा, आत्मा के ज्ञान का स्वभाव उस अद्वितीय प्रकाश सा है जो चहुँ ओर प्रकाश फैलाता है और प्रतिक्रिया के रूप में, बिना कभी

ध्रुवत्व प्रभाव का सामना किए, जहाँ तक भी ये पहुँच सकता है, प्रकाश फैलाए चला जाता है। आत्मा के प्रकाश से आने वाली चेतना समझती है, परिवर्तन करती है और सृजन करती है। इस प्रकार, आत्मविवेक न तो किसी चीज़ का कारण है और न प्रभाव (Neither the cause nor the effect), यह कार्य-कारण का सम्मिश्रण है। यह न तो सक्रिय है और न निष्क्रिय (Neither active nor passive)। इसलिए इसे न तो आज्ञा लेने की आवश्यकता है और न छलयोजना करने की। केवल प्रभावी होने के लिए कार्य करने का गुण इसमें अन्तर्रचित है। हम कह सकते हैं: ''यह है, इसलिए यह कार्य करता है।'' (It is, therefore, It does)

सूर्य की किरणों को लें। किरणें पेड़ पर पड़ती हैं और पर्णहरिमा (पत्तों का हरा रंग-Chlorophyll) का सृजन करती हैं। इस प्रक्रिया के लिए न तो किसी आशय की आवश्यकता होती है और न ही किसी मानसिक प्रक्षेपण की। वास्तविकता को जानने एवं प्रभावी होने की योग्यता आत्मा में सहज ही में रचित है। पृथ्वी माँ में डाला गया बीज इसलिए अंकुरित होता है क्योंकि बीज और पृथ्वी माँ दोनों में प्रभाव उत्पन्न करने का गुण अन्तर्रचित है। चीज़ों के स्वभाव के अनुसार ही वास्तवित रूप से जीवन्त सभी चीज़ें स्वत: कार्यान्वित होती हैं। पहले से अन्तर्निहित सम्भावना के अनुरूप ही हर चीज़ बनने का प्रयास करती है।

दूसरी ओर मानसिक प्रक्रिया में ऐसी स्वचालित गतिविधि का प्रसार नहीं होता क्योंकि सभी चीज़ों के सृजनात्मक-स्रोत, अर्थात् आत्मा में इसकी जड़ें नहीं होतीं। मानसिक प्रक्रिया द्वारा जो भी कुछ होता है वह सुनिश्चित, अहंचालित या बन्धन एवं विवशता के कारण होता है। यह रेखीय रूप से चलता है जो न पीछे मुड़कर देखता है और न अगल-बगल। परिणामस्वरूप यह स्वयं को कायम नहीं रख पाता, क्योंकि इसमें सत्य की शक्ति नहीं होती। अत: पलटकर यह मूल विचार को हानि पहुँचाता है, ऐसी आशा इससे

आरम्भ में नहीं की गई होती।

हिटलर का चरम उदाहरण लें। अपनी तर्कबुद्धि से वह विश्वस्त था कि यहूदी लोग जर्मनी को नष्ट कर रहे हैं। उसने एक सिद्धांत का प्रतिपादन किया कि जर्मन श्रेष्ठ आर्य हैं, सर्वोच्च प्रजाति, तथा यहूदी उनसे कहीं घटिया प्रजाति के लोग हैं। यह तर्क सिद्धान्त था जो कि सत्य के बिल्कुल भी समीप न था। मनुष्यों को ज़हरीली गैस कक्ष में डालकर उनकी हत्या करने वाले और उस वीभत्स दृश्य का आनन्द लेने वाले जर्मन, सर्वोच्च-प्रजाति किस प्रकार हो सकते हैं? ज़हरीली गैस से मारे जाने वाले लोगों में बहुत से अबोध बच्चे भी थे। कोई भी मनुष्य जिसे तार्किकता ने अन्धा न कर दिया हो वह स्पष्ट रूप से समझ सकता है कि केवल अधम, असभ्य व्यक्ति ही ऐसा जघन्य कार्य करेगा। इस प्रकार की तर्करचना का अन्तिम समाधान स्वयं हिटलर का विनाश था, क्योंकि यहूदियों को नष्ट करने का उसका विचार एक मानसिक प्रक्षेपण था और मानसिक प्रक्षेपणों का अन्त पलटकर स्वयं को नष्ट करने से होता है। मानसिक प्रक्षेपण की एक स्वाभाविक सीमा, जो कि मनुष्य के व्यक्तित्व और अहंचेतना तक ही सीमित है, को जब व्यक्ति लांघता है तो ध्रुवत्व प्रभाव घटित होते हैं। तब यह मानसिक प्रक्रिया आरम्भ करने वाले उस व्यक्ति पर उसी प्रकार पलटकर आता है जैसे धनुष की रस्सी से बंधे हुए तीर को यदि तीरन्दाज अनन्त की ओर चलाए तो वह पलटकर तीरन्दाज को ही घायल करता है।

अपने सांसारिक, सतही-स्तर पर भी प्रतिदिन के अनुभव हमें सिखाते हैं कि अनियन्त्रित तार्किकता का अनुसरण हमें नहीं करना चाहिए, परन्तु इसे देखना चाहिए और नियन्त्रण द्वारा इसको उचित सीमाओं में रखना चाहिए।

औचित्य स्थापन का उपयोग भी है, परन्तु अवांछित तार्किकता के ध्रुवत्व परिणामों को सोचे-विचारे बिना हमें तार्किकता की चरम सीमा तक

नहीं जाना चाहिए। हैरानी की बात है कि अहं की प्रचण्ड शक्ति के कारण किसी को भी यह पाठ पढ़ना आसान नहीं लगता। अपने मानसिक प्रक्षेपणों के प्रभाव से भयंकर पीड़ित बहुत से लोग मेरे पास आए। मैं जब उन्हें ठीक करने का प्रयत्न करती हूँ तब भी वे अपनी विनाशकारी गतिविधियों को तर्कसंगत ठहराते हैं: ''मैंने ऐसा किया, तो क्या? इसमें क्या दोष है? क्या दोष है? क्या दोष है?'' यही आधुनिक 'मानव-मन्त्र' या 'निरंतर-संयम' प्रतीत होता है। रोज़मर्रा के अनुभव से सीखने के लिए यदि व्यक्ति तैयार हो और स्वतः केवल यही मन्त्र उच्चारण न करता रहे कि ''इसमें क्या गलती है'', 'इसमें क्या गलती है', तो वह ज्यादतियों से बचता हुआ मध्यमार्ग का व्यवहारिक विवेक प्राप्त कर सकता है। अभ्यास द्वारा अपनी तर्कबुद्धि को सीमाबद्ध करके हम सन्तुलन प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार व्यक्ति कुछ अधिक चुस्त और सुरक्षित रह पाएगा और निश्चित रूप से स्वयं को या अन्य लोगों को हानि नहीं पहुँचाएगा।

अन्तदर्शन करते हुए यदि मनुष्य हार्दिक विनम्रता से कहे : ''अभी तक मुझे सत्य का ज्ञान नहीं है, परन्तु यह ज्ञान मुझे प्राप्त करना है,'' तो समय के साथ-साथ इस विनम्रता का फल प्राप्त होगा और वह व्यक्ति उत्थान प्राप्त कर लेगा। ऐसा यदि हो जाता है, तो व्यक्ति का चित्त मध्य में आ जाता है, न बाएं को रहता है और न दाएं को। अर्थात् उसका चित्त न तो उसके पूर्वबन्धनों से नियन्त्रित होता है और न ही उसके महत्वाकांक्षी अहं द्वारा संचालित। ऐसा सन्तुलित व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार के लिए बहुत उपयुक्त होता है और आत्मसाक्षात्कार द्वारा वह सत्य को पूर्ण रूप में जान सकता है।

आत्मा के प्रकाश में अनुभव एवं सूझ-बूझ के साथ वास्तविकता को समझ कर आधुनिकता की भ्रान्ति तथा तार्किकता की समस्या से बचने के विषय में मैंने ये सब बताया है। भ्रान्ति एवं अन्तर्विरोध के आधुनिक काल-कलियुग में एक अन्य अभिशाप, जिसकी भविष्यवाणी की गई है, ये है कि

लोग आसानी से अपराधमय और विनाशकारी गतिविधियाँ अपना लेंगे। ये भविष्यवाणी भी की जानी चाहिए थी कि सत्तारूढ् लोग इन गतिविधियों की आज्ञा देंगे और इन्हें प्रोत्साहित करेंगे, क्योंकि इनसे उनका लाभ होता है। आधुनिकता के हृदय में बसे आत्मविध्वंस की जड़ों में जाकर इससे उत्पन्न होने वाली सामाजिक समस्याओं का समाधान करने का प्रयत्न ये लोग नहीं करेंगे, परन्तु अधूरे और अल्पकालिक समाधान समस्याओं को उस स्थिति तक ले जाएंगे जहाँ ये सुलझ न सकें। उदाहरणार्थ फुटबाल के महान खिलाड़ी श्री.सिम्पसन पर अपनी पत्नी की हत्या करने कर आरोप है। इसके परिणामस्वरूप अमरीका की पत्रिकाओं में ऐसे लेख छपते हैं जिनमें कहा जाता है कि हमें न तो विवाह करने चाहिएं और न परिवार बनाने चाहिएं। अमरीका में केवल दो सौ साल पुराना समाज है। इन थोड़े से वर्षों में उन्होंने अपने समाज को नष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया है। समाज या विवाहित जीवन पर बातचीत करके विश्व की प्राचीन परम्पराओं वाले अन्य समाजों को नष्ट करने का अधिकार उन्हें किस प्रकार दिया जा सकता है? परन्तु समाज की जड़ों को नष्ट करना तो रोगलक्षण का इलाज करना हुआ, रोग का नहीं। इस काल में सरकारें भी अपनी जनता के हित की चिन्ता नहीं करेंगी और सत्ता कपटी, धन लोलुप, लोगों के हाथ में चली जाएगी जो अधमतम लोगों की चापलूसी तथा उनकी स्वार्थी इच्छाओं की पूर्ति के वचन देकर, समाचार एवं दूरदर्शन मीडिया का दुरुपयोग करके, वोट खरीदने में सफल हो जाएंगे। आज इस आधुनिक काल में जो कुछ हम वास्तव में देख रहे हैं वह किसी भी कल्पना या भविष्यवाणी से कहीं अधिक है।

बुद्धि-विनम्रता के श्रेष्ठतम उदाहरण बुद्धिवादी लोगों की रचनाओं में इतने नहीं मिलते जितने उन गहन कवियों और सहज कलाकारों से मिलते हैं जो हृदय से विनम्र हैं और अपने सृष्टा के प्रति सहज समर्पित होकर चित्रकला करते हैं। अपने मानसिक प्रक्षेपणों में वह उस विश्व को देखते हैं जिसे

परमात्मा ने अपने समरूप बनाया है। इन विनम्र लोगों की सहज कृतियाँ परमात्मा तथा प्रकृति के शाश्वत प्रतिबिम्ब हैं। उनकी तूलिका से खींची गई हर रेखा, उनके चित्रों से फुट पड़ने वाली सम्पन्नता एवं आनन्द, हमारे हृदय को सुगन्धित कमलों की तरह से खिला देती है। उनकी कृतियाँ एक अद्वितीय और मौन प्रेरणा प्रदान करती हैं। कुछ चित्र तथाकथित भोले या गंवारू भी हो सकते हैं जो कला की एक ही शैली को गुंजरित करते हैं।

दुर्भाग्यवश इस आधुनिक समय में महान कलाकारों की चित्रकारियाँ नहीं बन रही हैं। अधिक से अधिक हम या तो प्राचीन महान कलाकारों की नकल करते हैं या उनकी कृतियों को निवेश के रूप में बहुत ऊँचे दामों में खरीदते बेचते हैं। आधुनिक समय में हमने अनन्त कला की धारणा को त्याग कर उसके स्थान पर आधुनिक कला को अपना लिया है। आधुनिक कला इतनी आत्मपरक है कि इसे केवल कलाकार ही समझ सकता है या अपनी कृतियों के महान मूल्य के औचित्य के विषय में हमें विश्वस्त करने के लिए उन्हें बहुत लम्बी व्याख्या देने की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त ऐसे आलोचक हैं जिन्हें स्वयं आनन्द या आत्मा का विवेक बिल्कुल नहीं है। वे विवेक एवं सहजता के विरुद्ध जाकर किसी भी अच्छी दिखाई पड़ने वाली निकृष्ट कृति की सराहना करके उसे आकाश तक उठा देते हैं।

आधुनिक कला का उद्गम यदि निराकार आत्मा से हो तो इसकी भी निश्चित रूप से अत्यन्त उत्कृष्ट अभिव्यक्ति हो सकती है। प्रकाश से परिपूर्ण पारदर्शी अर्थों वाले निराकार तत्वों का सृजन करने के लिए यह प्रचलित कला की रेखाओं तथा आकारों को तोड़ देती है। परन्तु इस सम्भावना को प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को आत्मसाक्षात्कारी होना पड़ता है, जो अपने निराकार आनन्द का चित्रण इस प्रकार कर सके कि यह आत्मा द्वारा आत्मा के गहन स्वचालित ‘‘आनन्द का प्रतिनिधित्व करे और इसे प्रवाहित करे। ऐसी कला को न तो किसी व्याख्या की आवश्यकता होती है न

ही किसी विचार विमर्श की। केवल कवि ही इसका वर्णन कर सकता है। विलियम ब्लेक जैसी महान विकसित आत्मा और उन्हीं जैसा सन्त ही उन स्वप्नों का चित्रण कर सकता था जो उन्होंने अपनी कविता में किए हैं। ऐसे महान कवियों की कल्पना ही उन सुन्दर ऊँचाइयों को छू सकती है जिन्हें समझकर, केवल आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति, उसका आनन्द ले सकते हैं। ऐसी सभी विकसित आत्माएं, चाहे वे किसी छोटे से गाँव में बैठकर देवी के लिए शाल बुन रहे हों या अपनी दिव्य कविताओं में शाश्वत और अनन्त की स्तुति गा रहे हों, या दिव्य संगीत बजा रहे हों, उस सृष्टा की ध्वनि तरंगे (Divine Ripples) हैं। हो सकता है कभी-कभी उन्हें समझा न जा सके, अज्ञानी और अन्धे लोग उनकी आलोचना करें, परन्तु वे तो अपने लिए और दिव्य ज्ञान सम्पन्न लोगों के लिए कार्य करते हैं, गाते हैं और बजाते हैं, ऐसे लोगों के लिए जो उनके चित्रित विश्व को समझ सकें।

इस दिवास्वप्न का सन्देश पहुँचाने के लिए अभद्रता या वासनात्मक सुझावों का उपयोग, जैसा कि आधुनिक काल में कलात्मक प्रेरणा, की अभिव्यक्ति के लिए किया जा रहा है, आवश्यक नहीं है। कला यदि पवित्र है तो यह अपने आप में उत्कृष्ट तथा अत्यन्त आनन्दप्रदायक होगी, इतनी अधिक आनन्दप्रदायक कि पावन कला की ऐसी कृति को जब आप देखते या सुनते हैं तो सभी विचार शांत हो जाते हैं और साक्षी रूप से आप उस आनन्द के सौन्दर्य को देखने लगते हैं जो सृजन करते हुए कलाकार ने अपने हृदय में महसूस किया था। सत्य एवं वास्तविकता की श्रेष्ठ अनुभूति आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति की देन है तथा यह औचित्य स्थापन द्वारा सृजित कृतियों से बिल्कुल भिन्न है।

इस श्रेष्ठ अनुभूति के अभाव में बुद्धिवादी आलोचक, जो स्वयं एक रेखा भी नहीं खींच सकते, अपनी अहं संचालित और सीमित तर्कबुद्धि को गतिशील करते हैं। यह उन्हें किसी भी उभरते हुए कलाकार की आलोचना

एवं निर्णय द्वारा उसकी संवेदनशीलता को आहत और जड़ करके उसकी कृति की हत्या करने का क्षेत्र प्रदान करती है। उदाहरणार्थ पीछे एक दिन मैंने दूरदर्शन पर एक श्रेष्ठ संगीत रचना सुनी। इसे अस्सी वर्ष की एक अंग्रेज़ महिला ने संगीतबद्ध किया था। यह कृति अत्यन्त सुन्दर एवं मनोहर थी। परन्तु अगले दिन समाचार पत्र में इस श्रेष्ठ कृति की आधे पृष्ठ की उपेक्षा तथा अपमानजनक आलोचना छपी। इसके पश्चात् वह संगीतकारा हमेशा के लिए गायब हो गई।

इस तथाकथित सम्भ्रान्त आलोचना के पीछे कौन सी संचालन शक्ति है? क्या यह उन लोगों की ईर्ष्या है जिनमें सृजन करने की प्रतिभा का पूर्ण अभाव है और जिन्होंने सृजन की अपेक्षा आलोचना का कार्य सीख लिया है? समस्या ये है कि व्यक्ति स्कूल में, पाठशाला में सच्ची कला की सराहना करना नहीं सीख सकता। यह केवल मानसिक सूझ-बूझ का विषय नहीं है, यह तो अन्तर्जात आध्यात्मिक अनुभव है। आलोचक की मानसिक सूझ-बूझ वास्तव में बहुत भयानक होती है क्योंकि वास्तविक और मूलतत्व को नकार कर या नष्ट करके यह किसी भी अर्थहीन, अतिसाधारण या अन्ततोगत्वा विनाशकारी, तत्व को कृत्रिम चकाचौंध प्रदान करके उसे श्रेष्ठता का दर्जा प्रदान कर सकती है। परन्तु वे आलोचना करते ही क्यों हैं? हर व्यक्ति की अपनी ही शैली है, तो बड़े-बड़े शब्दों के उपयोग से, जिनका प्रशिक्षण आलोचक लेते हैं, क्यों लोगों को भटकाना है? इसी प्रकार पत्रकार भी मशीनगन जैसा मुँह लेकर विनम्र एवं विवेकशील लोगों के विचारों को मार गिराने के लिए उनका साक्षात्कार लेते हैं।

आधुनिक कृतियों को यदि देखें तो पता चलता है कि आधुनिकवाद ने अधिकतर सैद्धान्तिक रूप से उन कृतियों का सृजन किया है जिनसे भ्रान्ति एवं खोखलापन छलकता है, तथा इसने मानसिक आलोचना की निपुणता का ही पोषण किया है। परन्तु सौभाग्यवश इन सब समस्याओं का अन्तर्जात

समाधान है। यदि सभी महान कलाकार लुप्त हो जाते तो (जैसा कि वास्तव में हम ऐसा होते हुए देख रहे हैं क्योंकि सृजनात्मकता और अन्तर्जात सम्वेदनशीलता को आलोचना द्वारा आहत करके उन्हें मौन कर दिया गया है) परिणाम क्या होता? ध्रुवीकरण का सिद्धान्त कार्य करेगा और आलोचक समाप्त हो जाएंगे क्योंकि आलोचकों की आलोचना करने के लिए कौन शेष रह जाएगा? उन्हें एक दूसरे की आलोचना आरम्भ करनी होगी। वास्तव में यही हो रहा है क्योंकि आलोचक पूर्वयोजित (Programmed) मशीन की तरह से हैं, उस मशीन की तरह जो आलोचना का अनन्त तानाबाना बुनना बन्द नहीं कर सकती। परिणामस्वरूप, निःसन्देह, वे एक दूसरे की आलोचना करेंगे और समाप्त हो जाएंगे। विश्लेषण, सुगन्धमय बिखरी हुई पंखुड़ियों वाले पुष्प के विरोध में, विषैला दृष्टिकोण मात्र है।

आधुनिकता की एक समस्या ये है कि ये सदा अपनी ही रचनाओं को नष्ट करती है और उन्हें निष्प्रभावित करती है। आइए ध्रुवत्व के कार्यरत होने के एक अन्य सुन्दर उदाहरण को देखते हैं। सोलहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक अन्य देशों पर आक्रमण करना आधुनिकता समझी जाती थी। निरंकुश लूट-खसोट और उपनिवेशवाद प्रचलित एवं व्याप्त थे। बीसवीं शताब्दी में अन्य देशों के मामले में ''प्रबुद्ध'' दिलचस्पी लेना आधुनिक हो गया। परन्तु ध्रुवत्व का नियम विश्वस्त करता है कि, जो भी नवप्रवृत्ति व्यक्ति अपना ले, लोलक (पैण्डुलम) पलट कर वापिस आएगा और परिणाम स्वरूप ध्रुवत्व के नियमानुसार हम पश्चिम की उन बहुत सी समस्याओं में फंस चुके हैं भूतकाल की बहुत सी गलतफ़हमियों के कारण जिन्होंने पश्चिमी देशों की आँखों पर पर्दा डाल दिया था।

वर्तमान शताब्दियों में श्वेतवर्ण प्रजातियों के माध्यम से तर्कबुद्धि ने अत्यन्त उच्च स्तर पर कार्य किया और इन प्रजातियों ने तर्क विचारों से निकाले गए रेखीय क्षेत्र का विस्तार करते हुए कहा कि चमड़ी के अन्य सभी

रंग परमात्मा ने नहीं बनाए और कुशलता पूर्वक ये मान लिया कि परमात्मा निश्चित रूप से श्वेत वर्ण था और सम्भवत: प्राचीन अंग्रेज़ प्रजाति का तथा यह भी मान लिया गया कि दैवी-दण्ड के रूप में अन्य प्रजातियों को भिन्न वर्ण प्रदान किए गए। इस प्रकार की मूर्खता चाहे हमें अटपटी लगे परन्तु विशेष प्रकार की तर्कसंगति तथा साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद की शक्ति से सम्पन्न इन लोगों की तर्कबुद्धि ने हज़ारों-लाखों लोगों की हत्या की, उनकी भूमि लूट ली और जनता को गुलाम बना दिया। परिणामस्वरूप अमेरिका में एक भी लाल भारतीय (Red Indians) पारम्परिक शैली में प्राकृतिक एवं स्वतन्त्र रूप से रहता हुआ दिखाई नहीं देता, क्योंकि आक्रमणकारियों द्वारा उदारतापूर्वक दी गई संकोचशीलता में वे बन्ध गए हैं। उनके चित्र देखने के लिए व्यक्ति को संग्रहालय जाना पड़ता है जहाँ उनके सिर का श्रृंगार लाल भारतीयों (Red Indians) जैसा किया गया है, किन्तु अजीब बात है कि उनकी मुखाकृतियाँ प्राचीन अंग्रेजों (Anglo-Saxons) जैसी बनाई गई हैं!

परमात्मा की अपार कृपा हुई कि कोई दैवी शक्ति कोलम्बस को अमेरिका ले गई और उसे भारत के स्थान पर वहीं बनाए रखा। मार्ग में वह यही समझता रहा कि वह भारत जा रहा है, अन्यथा भारत, हिन्दुस्तान, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका, तिब्बत, नेपाल, अफ़गानिस्तान तथा प्राचीन सुसभ्य संस्कृतियों वाले सभी स्थानों के अश्वेत भारतीय, स्पेनी वीरों-स्पेन के साँडों से लड़ने वाले योद्धाओं-के अहं भाव द्वारा नष्ट-भ्रष्ट कर दिए गए होते। साँडों से लड़ने वाले इन योद्धाओं का मानव समाज की उन्नति में योगदान केवल कैथोलिक चर्च के आँगन में सुख-शान्ति का सृजन करना है। परन्तु कोलम्बस की गलती को सुधारने के लिए महान प्राचीन अंग्रेज़ (Anglo Saxons) इंग्लैण्ड से भारत आए और भारतीय गहन विवेक की धरोहर को समाप्त करने का पूरा प्रयत्न किया तथा तीन सौ वर्ष तक

मेज़बानों पर थोपे गए सम्माननीय आतिथ्य को पाकर बड़ी शान से यहाँ से लौट गए। शान्तिपूर्वक उन्होंने भारत छोड़ दिया, परन्तु दुर्भाग्यवश ये महान देश दो हिस्सों में बँट गया और अन्ततोगत्वा तीन भागों में क्योंकि इस हिंसात्मक विनाश के बीज तो पहले से ही बोए जा चुके थे।

संयुक्त राज्य के वैयक्तिक अधिकारों एवं तर्क संगत सिद्धान्तों पर आधारित लूट-खसोट द्वारा प्राप्त किए गए इस साम्राज्य के पूर्णतः टूट जाने और हस्तान्तरण के पश्चात् भी उपनिवेशवाद का वह औचित्यस्थापन ध्रुवत्व की शक्तिशाली अग्नि को अपने हृदय में समेटे हुए किसी प्रकार चलता रहा। अपनी ही इकाइयों, जो कि अपने व्यष्टिवाद की रक्षा करने के लिए न केवल लड़ रही हैं परन्तु एक दूसरे को नष्ट करने के लिए उग्रतापूर्वक हिंसा का उपयोग भी कर रही हैं, में बर्तानिया अब तनाव देख रहा है। वर्तमान शान्ति प्रक्रिया आरम्भ होने से पूर्व उपनिवेशवाद के अवशेषों की रक्षा या उसका विरोध करने के लिए उत्तरी आयरलैण्ड में प्रतिदिन लोग मारे जा रहे थे और महान सुरक्षित नगर लन्दन में थोड़े-थोड़े समय के पश्चात् आतंकवादी बम विस्फोट कर रहे थे। कोई नहीं जानता कि युद्ध से पूर्व की ये शान्ति कब तक बनी रहेगी!

अब यह स्पष्ट करने का प्रयत्न करें कि यह तार्किक एवं मानसिक रचनाओं की अभिव्यक्ति का ध्रुवत्व किस प्रकार कार्य करता है। जब प्राचीन अंग्रेज अश्वेत प्रजातियों (विशेष तौर पर अमरीका की) की तुच्छ वर्णित संस्कृतियों को जोर-शोर से लूट रहे थे तब उनका अहं इस सीमा तक बढ़ गया कि वास्तविकता के प्रति वे बिल्कुल अन्धे हो गए और सोचने लगे कि उनका अहं तथा अमानवीय क्रूर व्यवहार बिल्कुल सामान्य एवं ठीक है। औचित्य स्थापन की तर्कसंगति के नियमों के अनुसार अत्यन्त सन्तोषपूर्वक उन्हें लगा कि पूरे विश्व को लूट कर, ''तुच्छ'' प्रजातियों को बलपूर्वक दास बनाकर उन्होंने बहुत अच्छा किया और अपने अहं के फल का आनन्द भोगने

के लिए अब वे बड़े आराम से जम गए हैं। निःसन्देह एक बार फिर ध्रुवत्व स्वयं को प्रकट करने लगा। अमरीका विशेष रूप से सम्पन्न होने लगा: उपनिवेशवाद के विरुद्ध अमरीकी क्रान्ति के महान आदर्शवाद के बावजूद शनैःशनैः लोग ऐशो-आराम के दास और अपने अहं के शिकार बन गए। ज्यों-ज्यों समय बीतता गया उन्होंने प्राचीन अंग्रेजों के अतिरिक्त यहूदियों, स्पेन, इटली और रूस के लोगों को भारतीयों की उस भूमि में 'तुच्छ प्रजाति' एवं 'विदेशी' कह कर सताना शुरु कर दिया जिसे अब तक वे अपना मान चुके थे। धार्मिक जोश से प्रेरित होकर उनमें से बहुत लोगों ने इस बात का दावा किया कि यह उनका जन्मसिद्ध अधिकार है तथा वहाँ के मूल निवासियों (Red Indians) को नष्ट करने के महान कार्य के लिए उन्हें परमात्मा ने चुना है तथा आशीर्वादित किया है क्योंकि मूल निवासी असभ्य आदिमानव थे और उनकी चमड़ी का रंग भी परमात्मा की चमड़ी के रंग की तरह से श्वेत न था।

अब वहाँ पर श्वेत वर्ण लोगों के सुन्दर घरों और उद्यानों से परिपूर्ण सुन्दर नगर हैं। सभी लहलहाते जंगल और उपजाऊ भूमि, जो कभी किसी और की थी, अब उनकी अपनी है और वे इस भूमि के तथा उसकी उपज के कानूनी तौर पर स्वामी बन बैठे हैं। अपनी भूमि पर रहने के अपराध के दण्डस्वरूप जिन लोगों की हत्या कर दी गई थी या जिन्हें वहाँ से भगा दिया था, वे सदा के लिए समाप्त हो गए हैं। उनके विषय में सोचने या चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि तर्कवाद तथा स्वः दुराग्रह के कुशल उपयोग के माध्यम से हर चीज़ की व्याख्या की जा सकती है और उसे उचित ठहराया जा सकता है।

परन्तु दुर्भाग्यवश वास्तव में इस आक्रमण का अभी अन्त नहीं हुआ है। ध्रुवत्व के प्राकृतिक नियम के अनुसार जब अन्य लोगों पर आक्रमण करके आप उन्हें नष्ट करते हैं तब पलटकर वही आक्रमण आक्रान्ता के विरुद्ध खड़ा

हो जाता है। व्यक्तिवादी एवं चतुर तर्कबुद्धि पर गर्वित उच्च विकसित क्रूर सभ्यता वाले वही लोग, वही प्राचीन अंग्रेज (Anglo Saxons) तथा अन्य अहंकारी उपनिवेशवादी जनजातियाँ अब ध्रुवत्व द्वारा हाल ही में समर्पण किए गए सभी सामूहिक एवं आत्मघातक जोखिम़ के कार्यों को अपनाने में सबसे आगे हैं।

वे सामूहिक रूप से नशे एवं व्यसनों में तुरन्त लग जाते हैं। कोलम्बिया और बोलीविया की भूमि से जहाँ उपेक्षित और दरिद्र अमरीकी मूल निवासी (Red Indians) अब भी विद्यमान हैं, वहाँ से ये सब नशीले पदार्थ अमरीका भेजे जा रहे हैं। श्वेत लोगों के आक्रमणों से अपनी रक्षा करने के लिए ये लोग ऊँचे पहाड़ों में दौड़ गए थे। हमारे लिए यह आश्चर्य की बात नहीं होनी चाहिए कि उन लोगों के छुपने के स्थान आज ध्रुवत्व की गतिशीलता के केंद्रबिन्दु हैं। क्रैक (Crack) जैसे भयानक नशीले पदार्थ इन दो देशों में बनाए जा रहे हैं और अमरीका के लोग अपने लोगों के पतन एवं हत्या करने के लिए इन्हें इच्छानुसार तस्करी द्वारा अमरीका ला रहे हैं, परन्तु अमरीका के मूलनिवासी आत्महत्या करने के लिए क्रैक जैसे इन पदार्थों का उपयोग नहीं करते। वे केवल ये पदार्थ बनाते हैं और स्पेन आदि देशों के श्वेत-वर्ण लोग इन्हें वाशिंगटन निर्यात कर देते हैं। अमरीका में नशे की लत का प्रभाव किसी एक नगर या जनता के किसी एक वर्ग तक सीमित नहीं है। इसका प्रभाव इतना विस्तृत है कि मियामी (Miami), सां-फ्रासिंसको और लॉस एन्जलिस की व्यस्त गलियों में अन्धाधुंध हत्याएं देखी जा सकती हैं; मानो अनअधिवासी श्वेत लोगों द्वारा वहाँ के मूलनिवासियों की बेरोक-टोक की गई हत्याओं ने ऐसे वेग की सृष्टि कर दी हो जिसके कारण वे अब निरन्तर अपने ही अमरीकी साथियों की हत्या कर रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ''हत्या-खेल'' का अभ्यास भी टेनिस की तरह से होना चाहिए ताकि लम्बे समय तक मूलनिवासियों (Red Indians) पर किए गए हत्या के अभ्यास की

इस प्रतिभा को कुशलता पूर्वक प्रचलित रखा जा सके।

अब वे लोग अपने से अधिक सम्पन्न लोगों को धोखा दे रहे हैं और उनकी हत्या तक कर रहे हैं। ये विकसित समाज ज्यों ज्यों समृद्ध होते हैं, ध्रुवत्व के नियम से ये बहुसंख्या में चोरी तथा व्यवहारकुशल कानूनविरोधी तत्वों का सृजन भी करते हैं जो अमीर लोगों का अपहरण करके पैसा बनाते हैं तथा जहाँ भी ये लोग पनपते हैं वहीं पर भ्रष्टाचार और मुसीबतें फैलाते हैं। कानून विरोधी तत्वों (माफ़िया) के इन समानान्तर साम्राज्यों को नियन्त्रित नहीं किया जा सकता, इसके विपरीत ये लोग सबका, सरकारों और राजनीतिज्ञों का भी, नियन्त्रण करते हैं।

आधुनिक पाश्चात्य विश्व धनार्जन को इतना अधिक महत्व देता है कि आधुनिकता के दुर्भाग्यपूर्ण नक्षत्र में जन्मे सभी लोगों की गर्दन के इर्द-गिर्द धन, फाँसी का फंदा बन गया है। परन्तु हमें समझना चाहिए कि 'ध्रुवत्व के नियम' के अनुसार ये सब चोर और कानून विरोधी तत्व मात्र प्रतिसन्तुलन (Counter Balance) देने के लिए हैं।

चोरी केवल अपराधी वर्ग तक ही सीमित नहीं है। अमरीकी समाज के सभी कल्पनीय वर्ग, छोटे से बड़े तक, बिना किसी लज्जा और सम्मान के या तो भ्रष्टाचार, चोरी और लूट-खसोट में लगे हुए हैं और या चुपचाप इन ठगों और उचक्कों द्वारा किए गए जुल्मों तथा उनके कारण होने वाले कष्टों को झेल रहे हैं। वे फलते-फुलते हैं और अपने वांशिक साम्राज्यों की रचना करते हैं। हिंसा उस स्तर तक पहुँच चुकी है कि अमरीका में यदि किसी को यात्रा करनी हो तो उसे घड़ी, गहने या शादी की अंगूठी भी नहीं पहननी चाहिए।

सामान्य मानवीय मूल्यों (शाश्वत धर्म) जिनका मनुष्य स्वत: सम्मान करता था, यदि उन्हें पारम्परिक मूल्यों के साथ जोड़ा गया होता तो प्रगति व्यवस्थित होती। इन मूल्यों का क्षय और धीमा विनाश अमेरिका में इस

भयानक शिखर पर पहुँच गया है कि यह आदर्श बनता चला जा रहा है और लोग अत्यधिक मद्यपान तथा नशीले पदार्थों के सेवन को सामान्य रूप से स्वीकार करते चले जा रहे हैं। यहाँ तक कि विशिष्ट वर्ग के प्रीति-भोजों और व्यवहारकुशल लोगों की पार्टियों में भी नशीले पदार्थों के सेवन के विषय में इस प्रकार विचार-विमर्श होता है जैसे पुराने दिनों में ये लोग फ्रांस की शराब के अलौकिक विषय पर किया करते थे।

यौन दुरुपयोग इससे भी गम्भीर है। अपनी तथाकथित स्वतन्त्रता के नशे में धुत्त लोगों ने भद्रता, विवेक, स्वाभाविक विनम्रता एवं संयम खो दिया है। बहुत से समाचार दर्शाते हैं कि ये लोग अपने बच्चों का दुरुपयोग करने से भी नहीं चूकते। इन असभ्य माताओं से तो पशु-माताएं अपने बच्चों की कहीं अधिक अच्छी तरह से देखभाल करती हैं। ये तो मानवीय कल्पना तथा निन्दा से भी परे है। परन्तु ऐसा लगता है कि तथाकथित क्रीड़ा के लबादे में ढकी यह हिंसक संस्कृति सामूहिक रूप से सामान्य चारित्रिक मूल्यों से मुक्त हो गई है। यह कोकाकोला संस्कृति, चर्चोत्सव शैली (Helloween Style) समारोहों, अभद्रता एवं अश्लीलता के धूमधड़ाके वाले नशा संचालित डिस्को तथा संगीत से परिपूर्ण है। किस प्रकार बेचारा 'प्राचीन' (Primitive) भारतीय पैगम्बर-ज्योतिषी आधुनिक युग की पतित, चरित्रहीन अवस्था की भविष्यवाणी करने के लिए ऐसे भविष्य की कल्पना कर पाता?

हाल ही में हमने अमरीका की पुलिस द्वारा दो सौ बच्चों के साथ दुराचार करने का समाचार सुना है, अर्थात् उन्हीं लोगों द्वारा जिन्हें बच्चों की सुरक्षा और हित का भार सौंपा गया हो! आधुनिक युग में बच्चों को भयानक कष्ट हुए हैं, परन्तु दुराचार पीड़ित इन बच्चों का तो गैसकक्ष मृत्यु से भी बुरा हाल हुआ है क्योंकि उन्हें तो बाल्यावस्था में अपने साथ हुए इस दुराचार का घाव लेकर पूरा जीवन बिताना पड़ेगा! कनाडा में बहुत से कैथोलिक पादरी अबोध बच्चों को नष्ट कर रहे हैं। हाल ही में यह सुनकर बहुत आघात लगा कि

आस्ट्रिया के कैथोलिक चर्च के चोटी के पादरी पर बाल यौन शोषण का आरोप लगाया गया। उसकी वेशभूषा का रंग पूर्णत: लाल था, काश कि वह व्यक्ति स्पेन की सांडों की लड़ाई के अखाड़े में चला गया होता जहाँ उसके सामने कोई साँड मृत्यु-दूत की तरह से खड़ा होता! ऐसा घिनौना जीवन जीने से तो ये बच्चे मृत्यु को अच्छा समझते होंगे। अभी हाल ही में एक छोटी लड़की को उसके माता-पिता ने आसुरी भूतबाधा वाली एक डरावनी फिल्म में मुख्य भूमिका करने के लिए विवश कर दिया और व्यस्क होते ही उस लड़की ने आत्महत्या कर ली।

पश्चिमी जगत भारतीय भविष्यवाणियों में विश्वास नहीं करता, सम्भवत: इसका कारण ये है कि ऐसे पापमय कार्यों द्वारा अबोध बच्चों के साथ कदाचार करने वाले हृदयविहीन लोगों का वर्णन इन भविष्यवाणियों में नहीं किया गया है। पश्चिम के लोग दृढ़तापूर्वक इस बात को कहते हैं कि प्राचीन भारतीय भविष्यवक्ताओं की अन्तर्दृष्टि स्पष्ट न थी। नोस्ट्राडमस (Nostradamus) के विषय में क्या है? ऐसा लगता है मानो ये प्राचीन संत इन घोर अपराधों के, जिन पर कलियुग के इस अधमतम समय तक कोई भी विश्वास न कर पाता, वर्णन करने की बात को सहन न कर पाए।

जब मैंने अमरीका में बच्चों से कुकृत्यों की खबर समाचार पत्र में पढ़ी तो मुझे बहुत दुख हुआ। अमरीका जाने के लिए वायुयान में मेरे साथ की कुर्सी पर बैठी एक अमरीकन महिला इस बात पर हैरान थी कि मुझे इस खबर से सदमा क्यों पहुँचा! कहने लगी : ''मुझे बिल्कुल सदमा नहीं लगा, तर्कबुद्धि से यदि आप इसके विषय में सोचें तो आप जान जाएंगी कि ऐसे कार्य विश्व के हर स्थान पर हो रहे हैं। केवल अमरीकन समाचार पत्र ऐसे समाचार छापने से डरते नहीं हैं।'' सामूहिक विचार या अन्तर्दर्शन से सामूहिक पलायन के इन नए आयामों में वैयक्तिक औचित्य-स्थापन को तर्कसंगत परिणामों तक ले जाया गया है। ऐसे असावधानी पूर्ण, गैर जिम्मेदाराना विचारों का अर्थ है

भयानक विनाशशील मानवीय भूचालों से पलायन। इसका अर्थ सतर्कता एवं सम्मानपूर्वक संभाली गई पारम्परिक संस्कृति का ज्ञान न होना भी है। अब्राहम लिंकन यदि जीवित होते तो वे किस प्रकार ऐसे समाज के प्रति प्रतिक्रिया करते? परमात्मा का लाख-लाख शुक्र है कि ये सब महान आत्माएं शान्ति पूर्वक आराम कर रही हैं। केवल हम आधुनिक लोगों को ही, सदमा पहुँचाने को तत्पर अत्याधुनिक मीडिया के रक्त कैंसर रोग उत्पन्न करने वाले अतिवेगशील प्रतिक्रियात्मक अहं द्वारा आधुनिक जीवन का आघात, हर समय झेलना पड़ता है।

आजकल इन विकसित देशों में कोई भी मनुष्य सुरक्षित नहीं लगता। जिस अमेरीकन महिला की मैंने बात की, उसी की तरह से हिंसा को तर्कसंगत ठहराने के लिए हर मनुष्य अपनी तर्कबुद्धि लगाए हुए है। या फिर मीडिया, फिल्मों तथा सभी प्रकार के श्रव्य-दृाष्टिक (Audio-visual) केन्द्रों द्वारा हिंसा को मनोरंजन के रूप में निरन्तर प्रस्तुत करके जनता को निर्लज्जता पूर्वक अमानवीय रूप से संवेदनहीन बनाया जा रहा है, और जैसा हम देखते हैं, सभी प्रकार के भयानक माध्यमों द्वारा अपनी सृजनात्मकता प्रमाणित करके धनार्जन करने में लोग अत्यन्त निर्लज्ज रूप से प्रसन्न हैं। किसी अन्य चीज़ के विषय में उनके पास समय नहीं है। जिन लोगों के पास पर्याप्त धन है वे भी इतने लालची हो गए हैं कि उल्टे-सीधे तरीकों से अपने से अधिक सम्पन्न, या अपने से गरीब लोगों से भी, धन ऐंठना चाहते हैं।

परन्तु किसी भिन्न संस्कृति का व्यक्ति नशीले पदार्थों, विशेषतौर पर शराब, के सार्वजनिक दुरुपयोग के विषय में बात करना पाप मानता। प्राचीन अंग्रेजों एवं यूरोपीय प्रजातियों ने मद्यपान को महान धार्मिक प्रथा का दर्जा दिया है। वे धर्म के विषय में बातचीत नहीं करते, कि यह अच्छा है कि बुरा। मद्यपान ही उनकी उपासना है और मद्यपान न करने वाले लोग उनकी दृष्टि में अजीब या घिसे-पिटे हैं। ऐसे समाजों के प्रवक्ता, बुद्धिवादी एवं तथाकथित

उच्च प्रतिष्ठित लोग भी शराब पीने के बाद संयम खो बैठते हैं, विवेकशीलता की तो बात ही कैसे की जा सकती है! वे सामूहिक रूप से लैगर बीयर, स्पिरिट और सभी प्रकार के शराबों तथा नशीले पदार्थों में डूबे रहते हैं। निःसन्देह उन्होंने हज़ारों तर्क खोज निकाले हैं और सामूहिक रूप से मीडिया के माध्यम से इन आत्मघाती, विवेक पर पर्दा डालने वाली, आदतों को उचित ठहरा कर अपने बुद्धिकौशल का प्रदर्शन करते हैं। पारम्परिक रूप से शराब को प्लेग मानकर इससे बचने वाले देशों में भी,दुर्भाग्यवश, यह शराबी संस्कृति फैल गई है।

एक बार मैं एक सहेली के घर पर रुकी। उसके पति उच्च सरकारी अफसर थे, परन्तु दोनों पक्के शराबी थे। देखकर मैं हैरान हुई कि उनका घर कितना गन्दा था! घर में शराब पार्टियों में उपयोग होने वाली चीज़ों के अतिरिक्त कुछ भी न था। उनके पास मेरे लिए एक अतिरिक्त कम्बल तक न था। ऐसे बुद्धिजीवी और चोटी के लोगों ने शराब की संस्कृति से पूरी बाइबल बना दी है। इसका श्रेय सिद्धान्तहीन, विनाश की ओर बढ़ते हुए देशों के व्यापार कौशल को जाता है।

सड़े हुए अंगूरों के रस और सड़े हुए पनीर से अत्यन्त व्यवहारकुशल संस्कृति बनाने वाले फ्रांस के लोग अब हैरान हो रहे हैं कि उनके अंगूरों का रंग सफेद क्यों होता जा रहा है और उन अंगूरों का खमीरा क्यों नहीं उठता तथा पूरा देश रोगी जिगर एवं छिपकली जैसी चमड़ी की वजह से परेशान क्यों है! क्या उन पर ध्रुवत्व कार्य कर रहा है? क्या यही ध्रुवत्व उन्हें आर्थिक मन्दी का गहन आघात दे रहा है? एक अन्य ध्रुवत्व जो शान्त हो गया है वह ये है कि श्री.चिराक (Chirac) के चुने जाने के पश्चात् सरकार में उनके साथियों की एक लम्बी सूची समाचार पत्रों में छपी थी। उन्हें गिरफ्तार करके जेल में बन्द कर दिया गया था। परन्तु यदि वे शराब पीते हैं और शराबी उनके चहुँ ओर बने रहते हैं तो किस प्रकार अपने वेतन से खर्च चला सकते हैं? उनमें से अधिकतर को रखैलें रखने का शौक है जिन्हें वे फ्रांस सरकार में उच्च

पदों पर नियुक्त करना चाहते हैं।

कोई नहीं जानता कि अपने अर्थशास्त्र और अर्थव्यवस्था की शेखी बघारने वाले पश्चिमी देशों में मन्दी का दौर महामारी की तरह से क्यों फैल रहा है! इसका सूक्ष्म कारण बीयर, और मद्यपान है, जो वास्तविक स्वतन्त्रता को नष्ट करके कार्य करने और पवित्र जीवन का आनन्द उठाने की शक्ति और इच्छा को समाप्त करता है। यदि वे शराबखाने में जाकर शराब नहीं पी सकते या छुट्टी नहीं मना पाते तो उनके जीवन में निरन्तर संकट बना रहता है जिससे मुक्त होने का कोई उपाय नहीं है। ईसा ने कहा है कि शराब लम्पटता की ओर ले जाती है, मैं कहती हूँ कि आधुनिक युग में यह आर्थिक मन्दी तक पहुँचा देती है।

ईसा-स्मरणोत्सव (Holy Communion) के अवसर पर भी चर्चों में ये आध्यात्मिक हित के लिए उपासकों को सड़ी हुई किण्वित शराब देते हैं। इसका कारण ये बताया जाता है कि ईसामसीह ने कना (Cana) में विवाह उत्सव के समय जल से शराब बनाई थी। निःसन्देह दिव्य चैतन्य-लहरियों से आप जल को अंगूरों के रस में परिवर्तित कर सकते हैं। परन्तु ये दिव्य चैतन्य-लहरियाँ चेतना को नष्ट करके उपमानवीय स्तर पर ले जाने वाली किसी चीज़ की सृष्टि किस प्रकार कर सकती हैं! तर्क बुद्धि से भी यदि देखा जाए तो तुरन्त शराब कैसे बनाई जा सकती है? 'सर्वोत्तम' बनाने के लिए इसे काफी समय तक सड़ाना पड़ता है। परन्तु शराब की लत वाले आधुनिक लोगों की दृष्टि में वोडका (रूस की सबसे तेज़ शराब) के बिना ईसास्मरणोत्सव हो ही नहीं सकता क्योंकि साधारण शराब, शराबी या तेज शराब पीने वाले पर वह आध्यात्मिक प्रभाव नहीं कर सकती। अंग्रेज़ी भाषा में Spirit का अर्थ है शराब, मृत आत्मा और सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आत्मा (Alcohol, Dead Spirit and Atma))

मेरी समझ में नहीं आता कि ये लोग चेतनाविरोधी शराब के उपयोग के लिए ईसामसीह की आड़ क्यों लेते हैं? ईसामसीह तो तर्कबुद्धि की

सर्वसाधारण मानवीय चेतना से ऊपर उठाने में हमारी सहायता के लिए आए थे। ईसा-मसीह ने कना में तत्काल अंगूरों का रस (wine) बनाया था। उन्होंने अंगूरों के रस को सड़ने नहीं दिया। परन्तु फ्रांस के पादरियों द्वारा प्रेम से बनाए गए हितकारी तथा आशीष देने वाले सभी शराब (Benedicitine, that Blessed Liquor) सड़ाए जाते हैं और उनमें से सर्वोत्तम वही होते हैं जिनमें भयंकर दुर्गन्ध आती है और जो वास्तव में एक हज़ार वर्ष तक सड़ाए गए अंगूरों से बनती है। जिन भाग्यशाली लोगों ने उस शराब को चखा है वे कहते हैं: ''आह, स्वर्गीय!'' हाँ ये सच है। पृथ्वी पर उपलब्ध किसी भी अन्य चीज़ से इतनी दुर्गन्ध नहीं आती और इसे पिए हुए लोगों से सुअर से भी बुरी दुर्गन्ध आती है और शराब न पीने वाला व्यक्ति उनके समीप खड़ा भी नहीं हो सकता। फिर भी, विकसित देशों में, सभी लोग इस अवस्था को पा लेने की कामना करते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानों उनके नाकों में घ्राण कोशिकाएं (सूँघने की शक्ति) समाप्त हो गई हों। वैसे भी उनमें से दुर्गन्ध आती है क्योंकि फ्रांस में स्नान करने का रिवाज़ (Fashion) ही नहीं है। फ्रैंच स्नान का अर्थ है अल्कोहल युक्त सुगन्धियों का शरीर पर छिड़काव करना और मान लेना कि फ्रैंच संस्कृति महानतम है।

किसी भी बड़े स्वागत समारोह के अवसर पर व्यक्ति को पाँच सौ से भी अधिक ऐसे लोगों से हाथ मिलाने पड़ते हैं। एक बार जब वे शराब पीना शुरु करते हैं तो रात को दस या ग्यारह बजे तक पीते ही रहते हैं, चाहे समारोह छः बजे आरम्भ हुआ हो और आठ बजे समाप्त होना हो। केवल यही वक्त ऐसा होता है जब वे हर समय घड़ी को नहीं देखते रहते। आखिरकार जब उनके विदा लेने का समय आता है तो वे बेचारे मेज़बान-पुरुष या महिला का मनोरंजन करने पर बल देते हैं क्योंकि अभी तक वे बिना कुछ खाए-पिए घण्टों से खड़े होकर उन्हें धीरे-धीरे बेहोश होते देख रहे थे। ये अतिथि अपने मेज़बान से हाथ मिलाते हैं, उन्हें भींचते हैं, गले लगाते हैं, उनके हाथों को

मरोड़ते हैं और ये सब तब तक चलता है जब तक उनमें लगभग बेहोशी नहीं आ जाती। बेचारे मेज़बान पहले तो लगातार आते हुए अतिथियों से हाथ मिलाने में लगे रहते हैं और आने वाले अतिथियों का स्वागत करके अभी वो कुछ क्षणों के लिए बैठकर चाय-पानी आदि से अपनी थकान भी दूर नहीं कर पाते कि जाने वाले अतिथियों को नमस्कार कहने के लिए उन्हें लग जाना पड़ता है क्योंकि इससे अधिक पीने की शक्ति अब उन अतिथियों में नहीं होती। कुछ मुस्लिम देशों को छोड़कर, जहाँ पुरुषों को महिलाओं से हाथ मिलाने की आज्ञा नहीं है, बाकी सभी देशों में उनकी सेवा में सहज उपलब्ध सत्कारिणी (मेज़बान महिला) को सदमा पहुँचाने के भिन्न तरीके हैं। पश्चिमी समाज के गरिमामय मनोरंजन के भिन्न पक्षों में से यह एक है।

इस प्रकार के सनकी व्यवहार को न्यायोचित ठहराने के लिए लोग तर्क देते हैं कि यह आधुनिक शैली नहीं है, यह तो पारम्परिक शैली है, अतः मेरे विचार से यह अच्छी होनी चाहिए। परन्तु तनिक से भी व्यवहारविवेक वाले व्यक्ति के लिए यह स्पष्ट रूप से धन और शक्ति की बर्बादी है। ऐसे समारोहों में उपस्थित लोगों को आप कभी भी उनके काम धंधे या किसी भी विवेकशील चीज़ के विषय में बातचीत करते हुए नहीं सुनेंगे। प्रायः ये लोग अपवादों (Scandals) की बात करते हैं या व्यर्थ बकवास करते हैं। यदि आप ऐसे समारोह करने की स्थिति में हैं तो फ्रांस के लोगों से विशेष तौर पर सावधान रहें क्योंकि वे सत्कारिणी को दोनों गालों पर चूमते हैं, मेज़बान पुरुष को चाहे वो न चूमें। आजकल जबकि इतने संचरणशील रोग हैं, मेरे विचार से, यह भयानक प्रथा समाप्त कर दी जानी चाहिए।

इन सब गतिविधियों का एक अधिक गम्भीर पक्ष भी है। इस प्रकार की शराबबाज़ी से निजी तथा राष्ट्रीय संसाधनों का भयंकर ह्रास अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यदि सम्भव हो तो इस प्रकार के समारोहों, पार्टियों तथा नियमित मद्यपान पर खर्चे गए धन तथा इनसे प्राप्त सकारात्मक परिणामों के

सांख्यिक सर्वेक्षण की हर देश की संसद में चर्चा होनी चाहिए। विकसित विश्वसमाज द्वारा अधिक से अधिक देर तक नशे में रहने के लिए राष्ट्रीय आय का इतना बड़ा भाग खर्चना उनकी मूर्खता का चिन्ह् है। कूटनीतिक सम्बन्धों को बनाए रखने के लिए विकासशील देशों को भी ऐसे ही समारोहों के प्रलोभन देना अक्षम्य है। भारतीय दूतावास भी इस प्रकार की शराब पार्टियाँ करने में काफी दक्ष प्रतीत होते हैं। बर्तानवी प्रशिक्षण का प्रताप है कि भारतीय कूटनीतिक मेज़बान और खानसामे जो टेलकोट और नैक्टाई पहने हुए एक से लगते हैं, स्कॉच, व्हिस्की और सफेद शराब (Vermouth) के विषय में सब कुछ जानते हैं।

हमें स्वीकार कर लेना चाहिए कि इंग्लैण्ड, निश्चित रूप से, शराब की परम्परा में धँसा हुआ है। गाँव के अन्दर सबसे सुन्दर एवं प्रभावशाली भवन निश्चित रूप से शराबखाना ही हो सकता है। वे कहते हैं कि ''यह'' गाँव का सामाजिक केन्द्र है। परन्तु जो लोग वहाँ मिलते हैं वो या तो पहले से नशे में धुत्त होते हैं या वहाँ जाकर जितना शीध्र हो सके नशे में डूब जाना चाहते हैं। किसी से मिलने से पूर्व उन्हें शराब के एक प्याले की आवश्यकता होती है क्योंकि इसके बिना वे एक दूसरे से बातचीत आरम्भ नहीं कर सकते। अपने सम्बन्धियों की मृत्यु को भी वे शैम्पेन पीकर मनाते हैं। इसके लिए उनका बहाना ये होता है कि इसी प्रकार आप अपनी भावनाओं से मुक्त हो सकते हैं। जितनी अधिक शराब पी जाती है, एक-दूसरे के प्रति भावनाएं उतनी ही कम होती चली जाती हैं और वे सम्बन्धों के मूल्यों तथा प्राकृतिक नैतिकविवेक खोने लगते हैं। ''शराब संस्कृति'' के अभिन्न अंग लोगों की एक वर्तमान उदाहरण ये है कि अस्सी वर्ष की एक दादी माँ अपने अट्ठारह वर्ष के पोते को प्रेम-पत्र लिखती है और इन्हें समाचार पत्रों के मुख्य पृष्ठ पर छापा जाता है-मानो यह कोई महान घटना हो! सम्बन्धों के विषय में इस प्रकार की भ्रान्ति शराब का ही परिणाम है। शराब का निरन्तर उपयोग नैतिक विवेक को

कुन्द कर देता है। वास्तव में यह एक ऐसा विष है जो महान मानवीय पारस्परिक भावनाओं को जड़ करके शनै:शनै: नष्ट कर देता है। फिर भी इन देशों में शराब का इतना सम्मान है कि मैं कनाडा में एक दर्शनशास्त्र के ऐसे विद्वान से मिली जिसे ''शराब के माध्यम से आध्यात्मिक उत्थान'' विषय की जटिल व्याख्या करने के लिए इंग्लैण्ड में डॉक्टर की उपाधि दी गई।

परन्तु मानवीय चेतना और आचरण पर शराब का प्रभाव लोगों के जीवन के चारित्रिक गुणों का संशोधन करके उनका चेतना स्तर किसी भी प्रकार उन्नत नहीं कर सकता। जैसा अपने कार्य में मैंने अनुभव किया है, अत्यधिक शराबी या व्यसनी लोगों को आत्मसाक्षात्कार दे पाना बहुत कठिन है। वास्तविक सत्य की खोज में निराशा हाथ लगने के कारण कुछ तो शराबी बन गए हैं। आत्मसाक्षात्कार के अतिरिक्त किसी अन्य तरीके से यदि उनकी इस लत को ठीक भी किया जाए तो उनमें से अधिकतर अविलम्ब किसी अन्य दुर्व्यसन में फँस जाते हैं, जैसे जूआ, महिलाओं या पुरुषों के पीछे भागना या नशीले पदार्थों का सेवन। इसका कारण ये है कि शराब उच्च जीवन, विचार, उच्च चेतना, आध्यात्मिक और नैतिक उन्नति के लिए नैतिक क्षमता, इच्छा और सन्तुलन को नष्ट कर देती है।

पश्चिमी समाज में मद्यपान को धार्मिक कर्म की तरह से माना जाता है। परन्तु मैं कहूँगी कि वे लोग उन रास्टाफेरियन (Rastafarians) से भिन्न नहीं हैं, जिन्हें कर्मकाण्ड के रूप में नशीले पदार्थों का सेवन करना पड़ता है और जो प्राय: भूतबाधित अवस्था में होते हैं। आज कल अधिकतर अपराध या तो शराब के नशे में होते हैं या फिर शराब और नशीले पदार्थों की लत को पूरा करने के लिए। परन्तु ''पराआधुनिक युग'', जिस युग का अब आरम्भ हो रहा है, इसमें जिन लोगों की जागृति होगी वे इन बाध्यकारी, विनाशशील व्यसनों से मुक्त हो जाएंगे। मैं जानती हूँ कि बहुत से लोग इन घातक व्यसनों को त्यागना नहीं चाहेंगे क्योंकि यह इतने संस्कारित हैं कि आप यदि शराब नहीं

पिलाना चाहते तो किसी को रात्रिभोज के लिए निमन्त्रित नहीं कर सकते। व्यक्ति को शब्दकोश का अध्ययन करना पड़ता है। महारानी विक्टोरिया के एक मित्र नौकर का विश्वास था कि जिस पुरुष में मद्यपान न करने की दुर्बलता हो वह पूर्ण पुरुष हो ही नहीं सकता।

मराठी भाषा में एक कहावत है: ''घर के एक दरवाजे से यदि बोतल अन्दर आती है तो धन की देवी 'लक्ष्मी' दूसरे दरवाजे से बाहर चली जाती है।'' जो व्यक्ति होश में ही न हो उससे पत्नी, बच्चों, समाज या देश के लिए कर्त्तव्यविवेक की आशा किस प्रकार की जा सकती है? वह न तो ठीक से कार्य कर सकता है और न ही सामान्य सम्बन्धों और उत्तरदायित्वों का आनन्द ले सकता है। उसका चित्त इतना भटका हुआ होगा और जिग़र इतना खराब होगा कि वह उग्रस्वभाव का व्यक्ति बन जाएगा।

एक शराबी के विषय में जो सत्य है, निश्चित रूप से आधुनिक युग में वह पूरे पश्चिमी समाज के विषय में सत्य है। मद्यपान संस्कृति द्वारा सृजित मन्दी के अतिरिक्त, (जिसने उन्हें महान विपदा की तरह से चोट पहुँचाई है) पारम्परिक रूप से आश्रय देने वाली और नैतिक तथा सामाजिक सम्बन्धों को बढ़ावा देने वाली मूल्य प्रणाली को महत्वहीन बना देना एक अन्य विपदा है। ऐसा प्रतीत होता है कि शराब की पार्टियों में सम्मिलित होना और शराब खानों में जाना पुरानी प्रथा है, परन्तु यह सब नियन्त्रित रूप से होता होगा। यहाँ तक कि फ्रांस के लेखक मोपासां, मोलिरे, एम्लीज़ोला (Maupassant, Moliere, Emiliezola) ने भी शराब पीने की लत का मज़ाक उड़ाया है, इसकी खिल्ली उड़ाई है। आधुनिक समय में किसी भी चीज़ की कोई सीमा नहीं है। शालीनता, मर्यादा और जीवन के प्रति सम्मान की सभी सीमाओं को लाँघना ही विकसित आधुनिक लोगों की वास्तविक उपलब्धि प्रतीत होती है।

ऐसे समाज में लोगों की बुद्धि और विवेकशीलता पर न केवल शराब,

परन्तु अश्लील उत्तेजना की लगातार गोलाबारी से, उन्हें निरन्तर सम्वेदनाविहीन बनाया जा रहा है। समाचार पत्रों में स्तम्भ लेखकों की मिथ्या बकवास और घिसे-पिटे षड्यन्त्रों द्वारा समाचार-पत्रों की सुर्खियों में सरासर झूठी और निर्लज्ज अभद्रता के भरपूर उपयोग से यौन प्रवृत्ति, हिंसा और भय के अविश्वसनीय आक्रमण द्वारा सामान्य मानव बुद्धि तथा उत्तरदायित्व विवेकविरोधी सभी चीज़ों का निरन्तर आडम्बरपूर्ण प्रदर्शन करके मीडिया उन उत्तेजनाओं की सृष्टि करने और उन्हें तीव्र करने के नैपुण्य को पूर्णता के स्तर पर ले आया है। अनियन्त्रित और अनदेखे यह दूरदर्शन के प्रचलित और विश्वसनीय माध्यम से लोगों के घरों तक रेंग कर पहुँच जाता है।

इन समाजों में महिलाओं ने जिस प्रकार अपना चित्रण करने की आज्ञा दे दी है वह अधमतम चीज़ है। आत्मसम्मान, विवेक, विनम्रता, शालीनता, जिन्हें विश्वभर की माँ बनने वाली महिलाएं महत्वपूर्ण मानती हैं, इन गुणों को पाश्चात्य समाज व्यर्थ मानता है। महिलाएं चाहे अपने गले में ईसा के प्रतीक चिन्ह 'क्रास' को पहने रहें या नियमित रूप से चर्च जाती रहें, परन्तु उन्हें अब भी अहं से परिपूर्ण निर्लज्ज रूप से अश्लील या आक्रमक होना पड़ता है अन्यथा उन्हें दुर्बल और उन्नति के लिए अक्षम माना जाता है। तर्कयुक्ति के दुरुपयोग द्वारा पारम्परिक महिला को दुर्बल करार दिया जाता है परन्तु जब परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करने का वक्त आएगा तो उन्हें विवेकशील माना जाएगा।

अब पश्चिम में इन सब चीज़ों को देखने के पश्चात् मैं समझ सकती हूँ कि मोहम्मद साहब ने महिलाओं को अपने सिर और शरीर ढके रखने के लिए क्यों कहा। वे एक पैगम्बर थे, उन्होंने पाश्चात्य् महिलाओं का भविष्य देख लिया होगा, क्योंकि पश्चिम में महिलाओं को सभी प्रकार से अपने शरीर प्रदर्शन करने से रोकने के लिए शालीनता एवं मर्यादा के कोई नियम नहीं हैं। ऐसा लगता है कि इन समाजों में घटिया फैशनों की सृष्टि करने वाले तथा हज्जाम ही सर्वसम्पन्न हैं। जिस प्रकार लोग बालों की शैली से या किसी अन्य

प्रदर्शनीय फैशन के कारण प्रेम में फँसते हैं और फिर अगले दिन ही बालों की शैली बदल जाने के कारण या नए वस्त्र आ जाने के कारण प्रेम टूट जाता है, उससे लगता है कि उन्होंने ही प्रणयसौन्दर्य को नष्ट कर दिया है।

आजकल भद्‌दी शैलियाँ और भद्‌दे दिखावे, जिन्हें तथाकथित संस्कारित लोग ''अनौपचारिक'' या ''फैशन में'' कहते हैं, प्रचलित हैं और बेचारे हज्ज़ाम और वेशभूषा रूपांकनकार, जब तक गँजे सिर के लोगों और लगभग पूरे शरीर का प्रदर्शन करने के लिए रिब्बनों से बनी हुई वेशभूषाओं का सृजन नहीं कर लेते, तब तक परेशानी में फँसे रहते हैं।

पश्चिम की महिलाओं को, यदि वे बुद्धिमान हैं तो, तर्क विवेक के अनुसार आक्रमक होना पड़ेगा, विशेष तौर पर यदि वे आजीविका कमाने वाली या राजनीतिज्ञ हैं। राजनीति में उनका भय ऐसा होगा मानो वो चमगादड़ हों। सामाजिक जीवन में उन्हें आकर्षक होते हुए भी भयावह होना पड़ता है, अर्थात् उन मॉडलों की तरह जो एकटक देखते तो हैं परन्तु मुस्कराते नहीं, या उन फिल्मी सितारों की तरह जिनमें से अधिकतर धनार्जन करने के लिए वेश्याओं की तरह से कार्य करती हैं।

आकर्षक प्रतीत होने के लिए, (किसे आकर्षित करने के लिए?) अपने शरीर का प्रदर्शन करना और अपनी टाँगे दिखाना और इस प्रकार बलात्कार को आमंत्रित करना उनके लिए आवश्यक है क्योंकि उनकी मुखाकृति बिल्कुल भावशून्य होती है। उनका तर्कशास्त्र केवल धन बटोरने वाले समाज तक ही सीमित है। यदि वे बलात्कार के योग्य भी नहीं हैं (ऐरे-गैरे को आकर्षित करना एक भयानक खेल हो सकता है), तो आकर्षणकारी महिलाओं के रूप में उनका विज्ञापन किस प्रकार होगा और अपनी शारीरिक सम्पदा का लाभ वे किस प्रकार उठाएंगी और किस प्रकार अपनी कीमत वसूल करेंगी? मोहम्मद साहब ने जब इस बात पर बल दिया था कि महिलाएं

शालीन एवं गरिमामय वस्त्र पहनें तो अवश्य उन्हें इस प्रकार की महिलाओं का पूर्व ज्ञान होगा, ऐसी महिलाओं का जिन्हें अपने पावित्र्य, अपनी गरिमा का कोई सम्मान नहीं और जो पशुवत् होने के लिए प्रयत्नशील हैं। उन्हें ये बात महसूस नहीं होती कि पशु तो प्राय: चार टाँगों पर खड़े होते हैं, अपने शरीर का प्रदर्शन करने के लिए दो टाँगो पर खड़े नहीं होते।

'वृद्ध होने का भय' पश्चिमी समाज का एक अन्य अभिशाप है। किसलिए पुरुष और महिलाएँ इतनी उग्रता से युवा दिखाई देने का प्रयत्न करते हैं? उनका तर्कशास्त्र उन्हें बताता है या सम्भवत: विज्ञापन के मॉडल, कि यदि आप वृद्ध हैं तो न तो कोई आपकी ओर देखता है और न आपकी चिन्ता करता है। अत: किसी अजनबी के एक अपवित्र दृष्टिपात के बदले, ऐसा लगता है कि वे अपने पावित्र्य के सौन्दर्य को बलिदान करने के लिए तैयार हैं। इस प्रकार के ओछे विचारों का प्रचलन समाज को परिपक्व नहीं होने देता।

ऐसे समाज के सदस्य, जिन्हें अपनी आयु तथा अपने गुप्तांगों का सम्मान नहीं है, इस प्रकार आचरण करते हैं कि विदेशी संस्कृति के विवेकशील नए आए व्यक्ति को, उनके व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन ऐसे प्रतीत होते हैं मानो वे बनावट और मूर्खता के समरूप जड़बुद्धि हों।

शालीनता, विनम्रता, गरिमा और विवेक, धर्म के शाश्वत मूल्यों पर आधारित पारम्परिक समाज की प्राकृतिक देन है। परन्तु पश्चिम में इन गुणों पर आक्रमण किया जाता है और इनसे घृणा की जाती है क्योंकि लोग अब सहज, प्राकृतिक और सामान्य का सम्मान नहीं करते। यह प्रवृत्ति स्वाभाविक तथा अन्तर्जात गुणों के पतन का लक्षण है, परन्तु प्लास्टिक जैसे तत्व का सभी पदार्थों और पश्चिमी समाज के सभी पक्षों में चुपके से प्रवेश कर जाना कृत्रिमता की अनुरूप विजय (Corresponding Triumph of artificiality) है। जीवन को स्वस्थ बनाए रखने में प्लास्टिक किसी भी प्रकार से सहायक नहीं

है। इसका निरन्तर उपयोग सभी प्रकार के चर्म एवं श्वास सम्बन्धी रोगों का कारण बनता है क्योंकि ये प्राकृतिक नहीं है।

किसी जमाने में बुद्धिचातुर्य प्राचीन अंग्रेजों के मस्तिष्क की गर्वपूर्ण सम्पदा होती थी (अमरीका में इटली के लोगों को आदिमानव कहकर इन लोगों ने उन्हें सताया)। यह बुद्धिचातुर्य अब इतना विकृत हो गया है कि अब उनकी समझ में नहीं आता कि क्यों वे असाध्य स्नायविक तथा मानसिक रोगों से पीड़ित हैं! गरीब देशों में जाकर शारीरिक भोगवासनाओं के लिए बेशुमार धन उन्हें देकर वे इन रोगों को एशिया में भी फैला रहे हैं। उनके अपने देशों में बाल यौनशोषण अपराध हैं, परन्तु इस भयानक अपराध को करने के लिए वे थाइलैण्ड तथा अन्य पूर्वी देशों में चले जाते हैं। यदि वे विवेकमय पथप्रदर्शन में कार्य करते, जो अन्य मनुष्यों को सम्मान एवं विनम्रता प्रदान करता है, तो उनके जीवन में सन्तुलन होता और वे शारीरिक एवं मानसिक रोगों के शिकार न होते।

लोगों के जीवन के चारित्रिक गुणों, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के बीच गहन सम्बन्धों की चर्चा आगे आने वाले एक अध्याय में की जाएगी, जब मैं मशीनीकरण, स्वचालन और अन्ततः कम्प्यूटीकरण द्वारा पश्चिमी समाज में लाए गए विस्तृत भौतिकवाद तथा औद्योगिक विकास द्वारा खड़ी की गई चरम समस्याओं के प्रभावों का अवलोकन करूंगी। जैसा कि हम देखेंगे, मूल समस्या ये है कि मानसिक प्रक्षेपण स्वयं को सीमाबद्ध करने का अन्तर्रचित विवेक नहीं है और इसके परिणाम में सन्तुलन भी नहीं होता। यह उस चरम सीमा तक अपना समर्थन किए चला जाता है जब तक ध्रुवत्व स्वयं को अभिव्यक्त, करके इसको धराशायी न कर दे। तथाकथित, 'विकसित' विश्वसमाज में यही सब घटित हो रहा है। तर्कवाद आधुनिक समय का अभिशाप प्रतीत होता है क्योंकि समाज का पतन असीमित औचित्य-स्थापन का परिणाम है, जो पहले इसकी सृष्टि करता है और बाद में इसे तर्क-संगत ठहराता है।

अध्याय 2

चयन की स्वतन्त्रता
(Choices)

आप यदि किसी आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति से पूछें, ''आप अपने लिए क्या लेना चाहेंगे?'', तो सम्भवतः वह सोचने लगेगा: ''मेरी आवश्यकता क्या है?'' उसके पास पहले से ही सभी कुछ है, वह सोचेगा, ''यदि मुझे वास्तव में खरीददारी करने के लिए जाना हो तो मैं ऐसी चीज़ें खरीदूं जिनके द्वारा दूसरों के प्रति अपने प्रेम की अभिव्यक्ति कर सकूं।'' आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति किसी चीज़ को केवल उसके आध्यात्मिक मूल्य के कारण ही खरीदेगा क्योंकि मानव ने ऐसी बहुत सी सुन्दर चीज़ों की सृष्टि कर दी है जिनसे दिव्य शीतल चैतन्य लहरियाँ निकलतीं हैं और वे आत्मानुभवी लोगों को आराम पहुँचाती हैं। विकल्प के रूप में, कलात्मक चीज़ों की सृष्टि करके जीविकार्जन करने वाले किसी कलाकार या निर्धन व्यक्ति को वह सहारा देगा। तो उसकी खरीदारी के पीछे, ''मुझे यह पसन्द है'' का सिद्धान्त न होकर ''मेरी आत्मा इसका आनन्द लेती है'' का सिद्धान्त है।

पसन्द की गई जिन चीज़ों के पीछे ''यह मुझे पसन्द है'' का स्वरगुँजन है उनमें व्यक्ति को भौतिक पदार्थों के अटपटे टुकड़ों के कचरा संग्रह के अतिरिक्त कुछ नहीं मिलता। इस कचरे का अव्यवस्थित संग्रह आपको बहुत परेशान करता है; आपको स्वयं पर ही क्रोध आने लगता है कि अवांछित वस्तुओं पर आपने इतना धन नष्ट किया और अब इसे उठवाकर कूड़े के ढेर पर फिकवाने के लिए और धन नष्ट करना पड़ेगा। मानव की संग्रहप्रवृत्ति वस्तुओं का संग्रह किए चली जाती है। परन्तु जब इच्छाओं का ध्रुवत्व अपनी अभिव्यक्ति करता है तो वही चीज़ें, जिन्हें प्राप्त करने के लिए व्यक्ति ने इतने प्रयत्न किए होते हैं और बहुत सा धन खर्च किया होता है, उसे सताने लगती

हैं। व्यक्ति की समझ में नहीं आता कि उनका क्या करे! उसके मस्तिष्क को ये चीज़ें इतनी भिन्न लगने लगती हैं कि वह सोचने लगता है: ''मैं यह तो नहीं चाहता था, मेरी समझ में नहीं आता कि मैंने ये कचरा किस प्रकार खरीद लिया! ''आपको ये भी नहीं समझ आता कि किसको ये वस्तुएं दें क्योंकि अब फैशन में न होने के कारण कोई अन्य भी इन्हें लेना नहीं चाहता।

चयन करने की यह स्वतन्त्रता फैशनेबल चीज़ों के नज़रिये को जन्म देती है और यह नज़रिया अन्य लोगों की स्वतन्त्रता को कुचल देने की आज्ञा देता है। उदाहरण के रूप में आप किसी के घर जाएं, वहाँ मज़े से बढ़िया सा प्याला चाय या कोई अन्य पेय पीकर अपना मुँह खोलें और अपनी राय प्रकट करें: ओह, ''मुझे ये कालीन पसन्द नहीं है'' या ''मेरी समझ में ये नहीं आता कि इस चित्र (Painting) में आपको क्या खूबी दिखाई दी'', या ''तुम्हारे पर्दे मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं हैं,'' या '' यह दीवार-घड़ी मुझको बिल्कुल पसन्द नहीं है,'' या ''यह पुष्पसज्जा मैं सहन नहीं कर सकता'', या ''आपकी दीवारों पर लगे कागज़ को मैं बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकता, आदि-आदि।

''नि:सन्देह अन्य लोगों को चोट पहुँचाने के लिए अक्खड़तापूर्वक अपने विचारों को व्यक्त करना आजकल फैशन में है। पारम्परिक मूल्यों के अनुसार यदि हम चलें तो ऐसा करना अत्यन्त आक्रामकता और असभ्य व्यवहार है। अपने मेज़बान को आप केवल अपने विचारों से आहत ही नहीं करते, उन चीज़ों को खरीदने वाले व्यक्ति पर तीखे व्यंग्य करके उसे पूरी तरह भ्रमित भी कर देते हैं।

इस प्रकार प्रतिष्ठाहीन ढंग से जब आप आनन्द ले रहे होते हैं तब आपको चाहिए स्वयं से प्रश्न पूछना चाहिए ''किसी अन्य को आहत करने के लिए इस तरह की बातें कहने वाले आप कौन है?'' किसी अन्य ने यदि आपको यही बात कही होती तो आपको कैसा लगता? वास्तविकता ये है कि अपनी वर्तमान पाश्चात्य मानव अवस्था में बिना अपने अहं का उपयोग किए

आप किसी भी चीज़ का महत्व नहीं कर सकते। अत: इस प्रकार का हर कार्य, जो कि अहं से परिपूर्ण और कष्टदायी होता है आपको अहंकार की भयानक शक्ति प्रदान करता है और आप अपने अहं का अनन्त आनन्द लेते हैं। इस अहं का सौन्दर्य ये है कि अहंकारी व्यक्ति को इसका पता ही नहीं चलता। वह केवल अपनी अक्खड़ता तथा अन्य लोगों को आहत करने की शक्ति का आनन्द लेता है और यह अहं बढ़ता ही चला जाता है, जब तक बहुत बड़ा गुब्बारा बनकर, वास्तविकता का आधार खोकर यह हवा में उड़ने नहीं लगता और अन्ततोगत्वा अचानक फट जाता है। तब व्यक्ति को लगता है कि किसी गोल-मटोल (Humpty-Dumpty) व्यक्ति की तरह उसका भी अधोपतन हो गया है। वस्तु संग्रह के कार्य में अहं मिश्रण की समस्या ये है कि मुनष्य अधिक से अधिक विविधता चाहता है ताकि श्रीमान अहं (Mr.Ego) यह दर्शा सकें कि वे कितने चतुर एवं अद्धितीय व्यक्ति हैं!

इससे भी बुरी बात ये है कि हर मनुष्य अपनी व्यक्तिगत अद्धितीय पसन्द चाहता है। आप यदि किसी अमेरिकन कार में बैठने लगें तो कार में बैठने से पूर्व समझ लें कि इसका दरवाज़ा कैसे खुलेगा क्योंकि इसकी भी विविध तकनीक हैं। हर अमेरिकन कार में भिन्न प्रकार के मुट्ठे या दरवाज़े की चटकनियाँ हो सकती हैं जिन्हें आप विशेष प्रशिक्षण के बिना उपयोग नहीं कर सकते। किसी कार दुर्घटना में यदि आप फँस गए तो कार का स्वामी जब तक जीवित न होगा और मिल न जाएगा, चाहे जितने प्रयत्न करें, आप कार से बाहर नहीं निकल सकते। अमेरिका के स्नानगृहों के विषय में भी यही सत्य है। इनमें प्रवेश करने से पूर्व इन्हें उपयोग करने की विधि समझ लेनी आवश्यक है क्योंकि सभी स्नानगृहों की अपनी ही विशेषताएं हैं और कहीं यदि आप भोले-भाव दरवाजे से स्नानगृह में प्रवेश कर गए तो आप तरण-ताल में भी गिर सकते हैं। कभी-कभी तो आप स्वयं को विस्फोटक स्थिति में भी पा सकते हैं जैसे जल आतिशबाजी का प्रदर्शन! बत्ती का बटन खोजते हुए

हो सकता है आप फव्वारे (Shower) का बटन दबा दें!

वैयक्तिकता दर्शाने की फ्राँस के लोगों की अपनी ही शैली है। उनकी नालियाँ प्राय: उलटे ढंग से कार्य करती हैं, इसलिए फ्राँस के स्नानगृहों के उपयोग के बारे में समझ पाना बहुत ही चुनौतीपूर्ण कार्य है, यद्यपि, कहा जाता है कि स्नानगृह संस्कृति में वे अत्यन्त निपुण हैं। फ्राँस के लोग भारत जैसे किसी अन्य देश में यदि कार्य करेंगे तो वे इसे इतना जटिल बना देंगे कि विकासशील देशों के लोग उनके द्वारा लगाए गए उपकरणों का उपयोग ही न कर पाएंगे। उदाहरण के रूप में फ्राँस ने भारत में ऐसी दूरभाष (Telephone) प्रणाली स्थापित की है कि उसके संचालन के विषय में केवल वे ही लोग जानते हैं। घर तो भिन्न होने चाहिएं परन्तु उनकी कार्यशैली एक विशेष प्रकार की ही होनी चाहिए। आपको यदि अपने अतिथियों का ज़रा सा भी ध्यान है या चिन्ता है तो, मेरे विचार से स्नानगृहों को उपयोग करने का ढंग अत्यन्त सहज होना चाहिए। आपके घर को खरीदने वाले लोगों का भी आपको ध्यान रखना चाहिए। इंग्लैण्ड में मैं एक घर खरीदना चाहती थी जिसमें पाँच सामान्य स्नानगृह और एक बहुत बड़ा स्नानगृह था। मालिक ने कहा कि ''यदि आप चार-पाँच लोगों के लिए चाहती हैं तो वो आसानी से इसका उपयोग कर सकते हैं''। आदम (Adam) द्वारा बनाए गए जोर्जिया के एक घर में मुझे जाना पड़ा। मैंने पूछा, ''स्नानगृह कहाँ है?'' उत्तर मिला, ''इन दिनों वे अपनी खिड़कियाँ उपयोग करते।'' आज तक मैं यह नहीं समझ पाई हूँ कि कैसे? किसी प्रकार जीवन-पर्यन्त एक ही घर में रहने वाले लोग तो निसन्देह विशिष्ट प्रणाली को सहन कर सकते हैं परन्तु अतिथियों के लिए या हर समय यात्रा करने वाले लोगों के लिए तो यह प्रणाली अच्छी नहीं है।

नि:सन्देह व्यक्ति के वस्त्रों में कुछ विविधता होनी चाहिए और यह विविधता केवल हाथ से बनाई हुई वेशभूषाओं में ही मिल सकती हैं। पाश्चात्य देशों में यदि फैशन बन जाए तो सभी लोग दाढ़ी-मूछ रख लेंगे और

एक ही प्रकार के वस्त्र पहनेंगे। वर्ग-चेतना (Class Consciousness) के कारण निसन्देह, कुछ लोग तो केवल Saville Row या Pierr Cardin के ही वस्त्र पहनेंगे तथा कुछ अन्य लोग केवल महंगी और विशिष्ट पट्टियों (Lable) वाली दुकानों के ही वस्त्र पहनेंगे। मैंने ऐसे लोग देखे हैं जो महंगे वस्त्र बनाने वाले नाम की पट्टियाँ अपने वस्त्रों के बाहर की ओर लगाते हैं। परन्तु समस्या ये है कि जब सभी लोग एक जैसे लगेंगे तो अपराध में लिप्त व्यक्ति को पहचान पाना भी कठिन हो जाएगा। वे सब पूर्णत: एक जैसे लगते हैं क्योंकि सभी के चेहरे या तो लाल हैं या पीले। केवल ये दर्शाने के लिए कि वस्त्र बनाने की महान निपुणता द्वारा मानव बिल्कुल एक जैसा कैसे दिखाई दे, बहुसंख्या में विविध प्रकार के वस्त्र लगा दिए गए हैं और गज़ों के गज़ कपड़ा तथा टनों निपुणता खर्च कर दी गई है!

सर्वोपरि अब ये लोग स्त्री-पुरुषों के लिए एक ही से वस्त्र बनाने लगे हैं जिसके कारण पुरुषों और महिलाओं में भेद कर पाना कठिन हो गया है। कहा जा सकता है: ''फिर क्या? इसमें क्या दोष है?'' यह गलत है: सर्वप्रथम क्योंकि इसके कारण आँखों को अच्छी लगने वाली स्वाभाविक विविधता को बढ़ावा नहीं मिलता। दूसरे, यह लोगों में अन्तर नहीं करती, ऐसा करना व्यवहारिक आवश्यकता है। तीसरे स्थान पर पुरुष यदि स्त्रीसम लगता हो तो इसके कारण बहुत बड़ी गलतफ़हमी या भ्रम हो सकता है। समलैंगिक यौन का विचार ही सम्भवत: ऐसे ही किसी संयोग के कारण हुआ हो जिसमें चार्ली की चाची (Charlie's Aunt) नामक कामेडी (Comedy) की तरह कोई पुरुष दूसरे पुरुष को महिला समझकर भ्रमित हो गया हो! इसके विषय में एक छोटा सा चुटकला है। एक भद्र पुरुष हवाईपत्तन पर प्रतीक्षा कर रहा था। वहाँ उसने लड़के सी लगने वाली एक युवती को देखा। उसके विषय में सच्चाई जानने के लिए अपने साथ खड़े व्यक्ति से उसने पूछा, ''आप क्या सोचते हैं, यह लड़की है या लड़का?'' उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, ''यह मेरी बेटी है।'' यह

भद्र पुरुष बहुत लज्जित हुआ और कहा ''मुझे खेद है, मैं नहीं जानता था कि आप उसके पिता हैं।'' उस व्यक्ति ने उत्तर दिया, ''वास्तव में मैं उसकी माँ हूँ।''

आजकल इस प्रकार की भ्रमपूर्ण चीज़ें हो रही हैं। पुरुषों और महिलाओं की भूमिका के विषय में पूर्ण भ्रम की स्थिति है और लोग नहीं जानते कि पुरुष होने का अर्थ क्या है और महिला होने का अर्थ क्या है। परमात्मा ने अच्छे कार्य के लिए दो लिंग बनाए हैं और मैं सोचती हूँ कि ये दोनों लिंग रथ के दो पहियों के समान हैं। नि:संदेह दोनों के मध्य कुछ फासला है और समान और एक से होते हुए भी वे समरूप नहीं हैं। एक पहिया बाईं ओर का है और दूसरा दाईं ओर का। बाईं ओर के पहिए को यदि आप दाईं ओर, और दाईं ओर के पहिए को यदि आप बाईं ओर लगाएंगे तो ये कार्य नहीं करेगा। इसके अतिरिक्त यदि आप एक पहिए को छोटा या कम महत्वपूर्ण बनाएंगे तो यह रथ को आगे बढ़ने से रोकेगा और रथ एक ही जगह पर गोल-गोल घूमता रहेगा। अत: स्त्री पुरुष की भूमिकाओं में अन्तर भी परमात्मा द्वारा सृजित विविधताओं का एक भाग है। पूरे विश्व में हर पत्ता दूसरे पत्ते से भिन्न है। परमात्मा ने यह सूक्ष्म अन्तर विविध सौन्दर्य सृजन के लिए बनाया है, परन्तु अपनी पसन्द की स्वच्छंदता और तर्कयुक्ति की मूर्खता के कारण हम सभी मनुष्यों को एक ही जैसा दिखाई देने, एक ही चाल-ढाल का, एक ही तरह की बातचीत करने वाला बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं, उनके लिंग, संस्कृति और आयु का भी हमें ध्यान नहीं है। सैन्य दल सा यह आचरण अन्तत: आपको मानव के प्रति पूर्णत: उदासीन कर देता है।

अब, उदाहरण के रूप में, भारतीय महिलाएं पाश्चात्य वेश-भूषा अपना रही हैं। अपनी पारम्परिक साड़ी के स्थान पर वे फैशनेबल दर्ज़ियों द्वारा बनाई गई पैन्टें पहनती हैं। ये साड़ियाँ-जिनमें से हर एक अपनी ही प्रकार की कला एवं सौंदर्य की कृति है-सर्व साधारण ग्रामीण लोगों द्वारा बनाई जाती है, जब वर्ष में पाँच-छ: महीने उनके पास खेती का काम नहीं होता। इस प्रकार

वे अपनी कृषि द्वारा की गई आय को बढ़ा सकते हैं और दो प्रकार के कार्यों से अपने जीवन को सन्तुलित कर सकते हैं। उनकी बुनती को यदि आप देखेंगे तो हैरान रह जाएंगे कि कितनी बारीकी से वो इस कार्य को करते हैं! ऐसी कलात्मक चीज़ें पश्चिमी देशों में नहीं बन सकतीं। वे तो इस कला के समीप भी नहीं पहुँच सकते। तथाकथित विकसित देशों में बनावटी चीज़ों से लोग तंग आ गए हैं और हस्तकला की चीज़ों का वहाँ सम्मान होता है। परन्तु दुर्भाग्यवश तथाकथित आधुनिक हिन्दुस्तानी जो कि, नकलची टट्टू हैं, इन चीज़ों की सराहना नहीं कर सकते क्योंकि इनमें निहित सौन्दर्य-सिद्धांत को देख पाने की गहनता उनमें नहीं है। ये साड़ियाँ सर्व-साधारण किसान बनाते हैं। यही दस्तकारी उनकी जीविका का साधन है और यही कारण है कि वे अपना पूरा चित्त और श्रेष्ठ कला इन चीज़ों में उड़ेल देते हैं।

ग्रामीणों द्वारा बनाई गई हस्तकला की ये वस्तुएं उनके जीवन के आनन्द का प्रतिबिम्ब है। आनन्द एवं ताल-मेल की उनकी गहन भावना की सराहना करना यदि हम सीख लें तो हम जान जाएंगे कि अपने साधारण जीवन में भी वे कितने सम्पन्न हैं। ये साधारण कलाकार महसूस करते हैं कि उनके आसपास परमात्मा ने जो सौन्दर्य बिखेरा है, जिस सौन्दर्य से उनके मस्तिष्क का पोषण किया है वह प्राकृतिक संसार, फूल, पत्ते और रंग जो वे अपने आस-पास देखते हैं, उन वस्त्रों में उतार दिया जाए जिन्हें सुन्दर महिलाएं अपने शरीर पर धारण करेंगी और अपने सौन्दर्य को और सुन्दर बनाएंगी। वे जानते हैं कि शरीर का सृजन परमात्मा ने किया है और मानव सृजित सुन्दर वस्त्रों से इसे अलंकृत किया जाना चाहिए। ये साधारण लोग जब अपने कार्य का वर्णन करते हुए बोलते हैं तो उनकी काव्यात्मकता आश्चर्यचकित करने वाली होती है। हाथ से बने सुन्दर वस्त्रों की गुणवत्ता कहीं अच्छी होती है और इनका जीवन भी बहुत अधिक होता है। ऐसे वस्त्रों की शोभा और तन्तु-विन्यास (Texture) मानव शरीर पर अत्यन्त सराहनीय एवं सुखद होती है।

पोलिस्टर और रेयन के वस्त्रों की अपेक्षा गर्मियों और सर्दियों में सूती या रेशमी वस्त्र पहनना कहीं अधिक सुखदायी है। पोलिस्टर और रेयन के वस्त्र तो शरीर से चिपककर चिपचिपी गर्मी तथा रुग्ण अनुभूति उत्पन्न करते हैं।

प्राकृतिक पदार्थों से, हाथ से बनाए हुए वस्त्र अत्यन्त सस्ते होते हैं और उनका रखरखाव भी बहुत आसान होता है। प्राय: उनके बदले में कुछ अन्य खरीदने की आवश्यकता नहीं पड़ती क्योंकि ये बहुत लम्बे समय तक चलने के बाद फटते हैं। आप यदि साड़ी पहनें तो सिलाई पर आपको अपना धन नहीं बर्बाद करना पड़ता। यह एक सामान्य वस्त्र है जिसे गरिमामय वेशभूषा के रूप में बहुत सुन्दर ढंग से बहुत कम समय में बाँधा जा सकता है और इसका उपयोग कई अन्य कार्यों के लिए भी किया जा सकता है। साड़ी जब पुरानी हो जाए तो लड़कियों के नृत्य की वेशभूषा के रूप में इसका उपयोग कर सकते हैं। भारत एक ऐसा देश है जिसमें पावित्र्य को महिला की शक्ति माना जाता है। महिलाएं नदी में या खुले स्थान पर स्नान करने के लिए साड़ी का उपयोग करती हैं जो तौलिए के रूप में उनके शरीर को पूरी तरह से ढक लेती है। साड़ी का उपयोग कमरे में फर्नीचर को ढकने के लिए या दिवार सजाने और कमरा विभाजक के रूप में भी किया जाता है। भारत में साड़ी का उपयोग घर के आँगन में या बाहर छाया करने के लिए तिरपाल के रूप में भी कर लेते हैं। अत: हाथों से बनाए गए इस वस्त्र की गुणवत्ता, सौन्दर्य और व्यवहारिकता के कारण इसे दिव्य वस्त्र भी कहा जा सकता है।

दुर्भाग्यवश जिन देशों में हाथ से साड़ियाँ बुनी जाती है वहाँ लोगों के मस्तिष्क में भी मीडिया (विज्ञापन) के माध्यम से पाश्चात्य उद्यमी ऐसे विचार भर रहे हैं कि ये लोग अब सोचने लगे हैं कि दो सुन्दर रेशमी साड़ियों या चार सूती साड़ियों के स्थान पर उसी मूल्य में मशीनों से बनी दस नाइलान की साड़ियाँ क्यों न खरीद ली जाएं। इस प्रकार भारत जैसे विकासशील देश भी दुर्भाग्यवश इन विनाशशील विचारों से संक्रमित (Infected) होने लगे हैं

कि महान सौन्दर्य एवं मूल्य की थोड़ी सी चीज़ों के स्थान पर बहुत सी मूल्यहीन चीज़ें खरीद लेना अच्छा है। यदि हम सावधान न हुए और हाथ से बनी वस्तुओं को त्यागकर बहुउत्पादित वस्तुओं को स्वीकार किया तो इसके परिणाम स्वरूप इतनी सुन्दर साड़ियाँ बनाने वाले किसान कलाकार समाप्त हो जाएंगे और उनकी सृजनात्मकता सदा के लिए लुप्त हो जाएगी।

आधुनिकवाद में हमने सीधी रेखाओं और अत्यन्त विषमताओं से परिपूर्ण निर्जीव (Static) कृतियों की सृष्टि अपने घरों तथा वेशभूषाओं की रूपरेखा में की है और इन्हें हमने 'सादा', 'व्यवस्थित' या 'निश्छल' का नाम दिया है। परन्तु ऐसी सभी कृतियाँ वास्तव में इतनी नीरस, इतनी कठोर और इतनी विकृत होती हैं कि इन घरों में रहने से लोगों को मानसिक रोग हो जाते हैं जो अन्तत: उन्हें पागलखाने पहुँचा देते हैं। ऐसा भी यदि न हो तो ये फैशनेबल कपड़ें, जिनमें केवल पट्टी को ही देखा जाता है और वस्त्रों के महंगा होने का दिखावा करने के लिए पट्टी बाहर की ओर लगाया जाता है, पहनने वाले लोग कुण्ठा एवं महत्वहीनता के शिकार हो जाते हैं।

जिन पदार्थों में से दस्तकारी और साज-सज्जा की वस्तुओं की सृष्टि की जा सकती है उनकी विविधता का मुकाबला कोई मशीन नहीं कर सकती। शीशा, मिट्टी, चन्दन की लकड़ी, हाथी दाँत, शंख, नारियल, लकड़ी, ऊन, रुई (कपास), पीतल, चाँदी, और सोना आदि को भिन्न चीजें.बनाने के लिए उपयोग किया जा सकता है। बहुत से भिन्न पदार्थों का उपयोग किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त पर्यावरण चक्रण भी है। हाथ से बनी वस्तुओं पर पृथ्वी माँ के बहुत अधिक पदार्थ खर्च नहीं होते, मानव श्रम द्वारा बनाए जाने के कारण इन पर प्राकृतिक रोक लग जाती है जो अत्याधिक कच्चे माल और मानव श्रम का उपयोग होने से रोकती है। दस्तकार के हाथों से प्रदूषण नहीं उत्पन्न होता जो हमारी सुरक्षा के लिए आवश्यक ऊर्जा संरक्षण करने वाली ओज़ोन (Ozone) की परत में छेद कर सके। इसके साथ केवल एक ही

समस्या है कि आपके पास अच्छी-अच्छी चीजों.का बहुत बड़ा भण्डार हो जाएगा। अपने घर को सुन्दर बनाने के लिए , अपने और आपसे मिलने वाले लोगों के जीवन को सुव्यवस्थित बनाने के लिए यदि आप इन सब वस्तुओं की देखभाल कर सके और अपने घर में इन्हें उचित स्थान दे सकें तो बहुत अच्छा होगा। हाथ से बनी कुछ वस्तुएं, जिन्हें आप स्वयं उपयोग नहीं कर सकते, खरीद कर यदि किसी ऐसे व्यक्ति को उपहार के रूप में दे सकें जो प्लास्टिक या मशीनों से बनी वस्तुओं की अपेक्षा इनकी अधिक सराहना कर सके और इनका आनन्द ले सके तो अच्छा होगा। ये वस्तुएं अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, स्वाभाविक रूप से अपने ही प्रकार की, अद्वितीय और अपने आप में सुन्दर।

आधुनिक वास्तुकला की आलोचना आजकल बहुत बढ़ रही है। विशेष रूप से कहा जा रहा है कि वास्तुकार उन लोगों की वास्तविक अवस्थाओं का ध्यान नहीं रख रहे हैं जो चलती हुई और अच्छे आकार की इमारतों की पंक्तियों से घिरे रहना चाहते हैं और जो आधुनिक इमारतों की कठोर पंक्तियों के कारण वास्तविक प्राकृतिक संसार से कटकर बन्दियों की तरह से नहीं रहना चाहते। घर बाजार (House Market) को यदि आप देखें तो बिल्कुल स्पष्ट हो जाता है कि लोग बहुत समय पूर्व बनाई गई इमारतों को खरीदना पसन्द करते हैं क्योंकि उस समय बनाई गई इमारत प्रकृति को आधार बनाकर सुन्दर आकार की बनायी गयी थी। पारम्परिक भवनों के एक-एक इंच को और उनकी मूल वास्तुकला को सुरक्षित रखा गया है। यद्यपि वे अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हैं फिर भी उनका बहुत सम्मान होता है और उनके उच्चतम मूल्य प्राप्त होते हैं।

उदाहरण के रूप में, एक बार मैं अपने परिवार के साथ यूरोप के एक प्रसिद्ध महान एतिहासिक नगर में गई। वहाँ हमें एक सुन्दर होटल में रखा गया जो कि बहुत महँगा था। बड़े गर्व के साथ हमें बताया गया कि यह होटल सन् 1760 ई. के लगभग बना था। लेकिन कठिनाई ये थी कि इसमें कुछ ऐसी मूल

समस्याएं थीं कि हमें दो दिन के अन्दर ये होटल छोड़ देना पड़ा। ज्योंही हमने दरवाजा खोला, दरवाजे की हत्थी निकलकर हमारे हाथ में आ गई। हमें बड़ा संकोच हुआ और हमने सोचा कि हमें नई हत्थी का मूल्य चुकाना होगा। लेकिन नीचे से एक भद्र पुरुष ऊपर आया और कहने लगा, चिन्ता मत कीजिए, ये आसानी से पुनः वहीं लगाया जा सकता है, मानों वहाँ का हर मुट्ठा, कैंजा और कील पहले गिर चुका हो और हज़ारों बार दोबारा लगाया गया हो। पूरा स्थान ही लक्ष्यविहीन प्राचीन वस्तुओं का अजायबघर है। फिर भी वे लोग अत्यन्त सफलतापूर्वक इसका उपयोग एक मँहगे होटल की तरह कर रहे हैं! दरवाजे के मुट्ठे के नाटक के पश्चात् हमने गुसलखाने में नल खोलने की कोशिश की तो नल निकलकर हमारे हाथ में आ गया और गुसलखाना पानी से भर गया। जो भी लोग वहाँ ठहरे होंगे, सम्भवतः उन सबके साथ ऐसा ही हुआ होगा, फिर भी उनकी यह शैली चल रही है और उनके पास अतिथि आते ही रहते हैं क्योंकि लोग ऐसे स्थानों पर रहने के लिए बहुत सा धन खर्चने को तैयार हैं जो चाहे अत्यन्त कष्टदायी हों, जहाँ का फर्नीचर चाहे जीर्ण शीर्ण अवस्था में हो, साज सज्जा मलिन हो परन्तु वहाँ पर उन्हें सहज रूप से अधिक चैन और शान्ति मिलती हो।

कोई भी व्यक्ति वास्तव में अजायबघर में नहीं रहना चाहता। परन्तु वास्तुकार यदि पारम्परिक वास्तुकला से उनकी अच्छाईयां लेकर आधुनिक एवं स्वर संगत प्राकृतिक घर बनाएंगे तो वे न केवल जीविका अर्जन करेंगे परन्तु निश्चित रूप से उन घरों के मालिकों के साथ न्याय करेंगे और वे मालिक पारम्परिक घर का सम्पूर्ण आराम, विविधता और सौन्दर्य का आनन्द ले सकेंगे। यह सत्य सर्वविदित है कि समुद्री जहाज पर लोग ऊब जाते हैं क्योंकि वहाँ की हर चीज़ की सजावट एक ही प्रकार की और एक ही प्रकार के रंगों से की जाती हैं। हर जगह एक से पर्दे होते हैं और हर रोज़ एक ही प्रकार का खाना होता हैं। हर रोज की ये एक ही प्रकार की शैली अभागे यात्रियों को

बहुत जल्दी उबा देती है। एक बार यदि आप समुद्री जहाज में फँस जाएं तो समस्या का समाधान असम्भव है क्योंकि वहाँ कोई हल होता ही नहीं। परन्तु हम लोग, जो तट पर हैं, पृथ्वी माँ पर, क्यों विशाल स्तर पर बनाए गए बेढबे घरों में रहना बर्दाशत करें-ऐसे घरों में जहाँ न तो हमें चैन मिलता है और न ही हम अपने जीवन का आनन्द ले सकते हैं?

अत: एक ओर हमें लगता है कि हम अपनी पसंद की चीज़ चुनने के लिए स्वतन्त्र हैं: डबलरोटी के स्लाइस पर भुने हुए बीन या मछली और चिप्स या पीजा और पास्ता (Pizza and Pasta)। ये पसन्द भिन्न प्रकार के बिस्कुटों और चॉकलेटों की भी हो सकती हैं। अब हमें स्वयं से प्रश्न करना चाहिए कि यदि हम रोज़मर्रा के खाने की चीज़ों पर ही चित्त रखेंगे और भिन्न प्रकार के उपलब्ध बिस्कुटों का स्वाद लेते रहेंगे तो क्या हमारे जीवन की गुणवत्ता का पतन हो जाएगा? परन्तु दूसरी ओर बात जब महत्वपूर्ण चीज़ों की आती है, जिनका हमारे जीवन में बहुत महत्व है, जैसे रहने के लिए हमारे घर, पहनने के लिए वस्त्र, नगरों की योजना- तब हम एकदम समझ जाते हैं कि इन सब चीज़ों में विविधता आवश्यक है।

किसी ऐसे व्यक्ति को लें जो निरन्तर यात्रा करता रहता है। वो चाहे सां जोस (San Jose), कैलिफोर्निया में हो और अगले दिन सुबह यूरोप के किसी अन्य स्थान पर उसकी नींद खुले, वह जब खिड़की में से झाँकेगा या नीचे गली में चलेगा तो बता नहीं सकेगा कि वह सां जोस में है या यूरोप में, क्योंकि ये दोनों एक ही से लगते हैं और स्थान के विषय में जानने के लिए उसे अन्य लोगों से पूछना पड़ेगा कि वह कहाँ है। कुछ समय पश्चात् सम्भवत:, इन वास्तुकारों और योजना बनाने वालों की मेहनत-घटाओ मानकीकरण (Standardization) के कारण, विश्व भर के पूरे देश एक ही से प्रतीत होंगे और एक ही जैसे प्रतीत होने वाले शहरों में जब हम जाएंगे तो उन्हें पहचानने के लिए हमें डायरी रखनी पड़ेगी। आधुनिक वास्तुकारों ने वास्तविक

विविधता पर इतनी सीमाबन्दी कर दी है।

जैसा हमने पहले वर्णन किया है, फैशन एक अन्य क्षेत्र है जिसमें उद्यमियों ने अत्यन्त कुशलतापूर्वक लोगों को बेवकूफ बनाया है। उदाहरण के रूप में हाल ही में मैं हेलसिंकी में एक महिला से मिली। उसके सारे वस्त्र फटे हुए थे और फटे हुए वस्त्रों में से झांकते हुए अंगों के कारण वह बड़ी अजीब और लज्जाजनक दिखाई दे रही थी। उसके बाल आदिवासियों जैसे थे, आधे कतरे हुए और आधे फुहड़ों की तरह से अस्त-व्यस्त। उसके शरीर में से दुर्गन्ध सी आ रही थी। मैंने सोचा कि वह इतनी गरीब है कि अच्छे वस्त्र नहीं खरीद सकती। मैंने उसे अच्छे साफ-सुथरे वस्त्र देने चाहे। मुझे लगा कि वह इतनी समझदार न थी जिसे इस बात का ज्ञान हो कि यदि किसी सन्त को मिलने जाना हो तो आपका शरीर स्वच्छ होना चाहिए। मैंने जब उससे पूछा कि क्या वह स्नान करना चाहेगी तो उसने ये कहते हुए इन्कार कर दिया कि 'आजकल स्नान करने का अब फैशन नहीं है।' जो वस्त्र मैंने उसे भेंट किए थे, उसके अनुसार वे भी फैशन में नहीं थे और जो वस्त्र उसने पहन रखे थे वे अत्याधुनिक थे। धनी परिवारों की अधिकतर लड़कियां ऐसे ही वस्त्र पहनती हैं और पीली रक्तहीन शक्लों पर काले वस्त्र पहनकर वे सदैव शोक की स्थिति में प्रतीत होती हैं। रात्रि के समय जब वो मुस्काती है, केवल तभी उनके सफेद दाँतों के कारण आप उनके चेहरे देख सकते हैं, दिन के समय तो वे बेरंगी भूतनी सी लगती हैं!

मुझे प्रतीत हुआ कि एक बार फिर यहाँ ध्रुवत्व का नियम अपना प्रभाव दिखा रहा है। मैंने सोचा कि ये महिला अपनी तथा-कथित पसंद करने की स्वतन्त्रता के कारण गुलामों की तरह से फैशन की नकल करने की शिकार हो गई है। जीवन की भिन्न अवस्थाओं में उसने सभी प्रकार के फैशनेबल वस्त्र पहने होंगे और अब वह एक ऐसी स्थिति में पहुँच गई थी जहाँ उसे लगा कि अभी तक जो भी वस्त्र उसने खरीदे थे वो बेकार थे क्योंकि बहुत ही तेजी से

इन सब वस्त्रों का फैशन समाप्त हो गया था। उसे लगा कि कोई ऐसे वस्त्र पहनना अच्छा होगा जो फटे-पुराने हों और पुरातन हो चुके हों और जिनके अपने फटे हुए नमूने बन चुके हों। मेरे आश्चर्य की सीमा न रही जब मुझे ये पता लगा कि जो वस्त्र उसने पहने हुए थे वे बहुत ऊँची कीमत पर एक वस्त्रों की दुकान द्वारा बेचे गए थे। ये पत्थरधुलाई रूपान्तरित वस्त्र थे जिन्हें आवश्यकतानुसार तार-तार करके फाड़ा गया था और इन वस्त्रों को अत्यन्त अद्वितीय एवं विशिष्ट कहकर बेचा जा रहा था। उन्हीं की तरह से हेलसिंकी की इस महिला को भी विश्वास था कि वह अपनी पसन्द (Choice) की स्वतन्त्रता का पूरा-पूरा उपयोग कर रही है, परन्तु वास्तव में ऐसा करना एक प्रकार के दासत्व से मुक्त होकर दूसरे प्रकार के दासत्व का शिकार होना है। उसका मामला कोई असाधारण नहीं है, इस प्रकार की बहुत सी सृजनात्मकता की अभिव्यक्ति हम अपने चहुँ ओर देखते हैं। अपने आक्रमक आचरण और भिखारियों जैसे वस्त्रों के कारण इस प्रकार के लोग भद्र लोगों को उलझन में डाल देते हैं।

अभी कुछ समय पूर्व एक फैशन था कि अपने बालों को हरा रंगवा कर अपने सिर को अजीबो गरीब नमूने की अलंकृत झाड़ी की तरह से मुंडवाना और इसके लिए लोगों को बहुत ही ऊँची कीमत देनी पड़ती थी जिसे प्राय: वे उधार लेकर चुकाते थे। अब छिनाल औरतों को ही लें, वे कहती हैं कि आप घिसे-पिटे हो। तो आज का फैशन क्या है? ये कह पाना असम्भव है क्योंकि उद्यमी इतनी तेजी से फैशन की चीज़ें ला रहे हैं। आज की पीढ़ी को शिक्षा दी जा रही है कि फैशन के अनुसार चलना है और इसकी गति को अपनाना है। यदि वे ऐसा नहीं कर सकते तो तुरन्त उनका समाज उन्हें घिसा-पिटा कहकर त्याग देगा। अत्याधुनिक या फैशनेबल कहलाने वाली चीज़ें चालाक उद्यमियों द्वारा बनाई गई चीज़ें होती हैं जिन्हें आप रोज़ खरीदते हैं ताकि उनकी मशीनें चलती रहें। कितना विवेकहीन (BlindFold) दासत्व है!

पूरा फैशन उद्योग मात्र धन लूटने वाले ठगों का समूह हैं। अहं को बढ़ावा देने का शानदार तरीका ये कहना है कि फलाँ शैली ने मिलान, पैरिस या टिम्बक्टू की फैशन परेड में पहला इनाम जीता और अपनी पसन्द की स्वतन्त्रता का उपयोग करने के इस नए अवसर का उपयोग करने और पहले खरीदे हुए अपने महंगे कपड़ों को कूड़ा-कर्कट की तरह से फेंकने के लिए आप लोग दीवाने हो जाते हैं। एक बार जब आपको फैशन की लत पड़ जाती है तो आपकी समझ में नहीं आता कि उन उद्यमियों के साथ कहाँ तक चलें जो आपकी मूर्खता एवं दुर्बलता को, अत्यन्त कृपा करके, एक नया आयाम देते हैं! परिवर्तन की इस प्रकार की मजबूरी के कारण हम लोग बनावट के बाण की नोंक पर बने रहते हैं और हमारा चित्त सदैव यही निर्णय करने में फँसा रहता है कि कौन सी बेकार की चीज़ को खरीदा जाए, उसका मालिक बना जाए और उसका प्रदर्शन किया जाए।

अपनी पसंद की चीज़ें प्राप्त करने के लिए कच्चे माल की अनावश्यक मांग द्वारा हम अत्यधिक संसाधन खर्च कर रहे हैं और इस प्रकार पृथ्वी माँ को खाली कर रहे हैं और साथ ही साथ वर्तमान तथा भविष्यत् काल के लिए भयानक पर्यावरण सम्बन्धी समस्याओं की सृष्टि कर रहे हैं। अपने शरीर को ढकने के लिए आपको कुछ सारगर्भित एवं विवेकशील वस्त्र चाहिएं। नि:सन्देह विविधता सौन्दर्य प्रदान करती है, इसमें कोई सन्देह नहीं, बशर्तेकि इस विविधता का सृजन कलाकारों ने किया हो उद्यमियों ने नहीं, क्योंकि उद्यमी तो सदैव धन खर्चने वाले लोगों की खोज में ही लगे रहते हैं।

अपने स्वाभाविक विवेक को त्यागकर फैशन का दास बनने वाले लोगों के साथ क्या होता है, इसका यह एक अन्य भयावह उदाहरण है। मैंने देखा कि जब तंग वस्त्र पहनने का फैशन शुरु हुआ तो मच्छरों जैसी लगने वाली या क्षयरोगी प्रतीत होने वाली महिलाएं भी तंग वस्त्र पहनकर स्वयं को बहुत सुन्दर समझने लगीं। इन कष्टदायी वस्त्रों के कारण बाद में उनकी नाड़ियों में भयंकर सूजन रोग हो गया, यद्यपि उन्होंने अपने गर्व के कारण इसके विषय में

किसी को कुछ नहीं बताया। उनके लिए यह परम पावन रहस्य था। इसके पश्चात् वस्त्रों में एक अन्य फैशन चला जिसमें वस्त्र बनाते हुए सुराख कर दिए जाते थे और इन्हें महान (छिद्रिल) सुराखों वाली पतलूने कहा जाता था। इंग्लैंड की आर्द्र और तेज हवाओं वाली जलवायु में इन छिद्रिल पैन्टों को पहनकर गर्वपूर्वक चलते हुए बहुत से लोगों को देखा जा सकता है जिनके कारण जीवन के बाद के वर्षों में उन्हें जोड़ों के दर्द और गठिया जैसे रोग हो जाते हैं।

यह समझ पाना असम्भव है कि आजकल हम इतना अधिक प्लास्टिक क्यों उपयोग करते हैं! हमारे पुरखे केवल एक पीतल या चाँदी की प्लेट उपयोग करते थे, जबकि आजकल पश्चिम में प्लास्टिक की बहुतायत और पोलिस्टर के वस्त्रों ने एक गुब्बारे सम जीवन को जन्म दिया है। गुब्बारा, जिसमें कोई सार नहीं है, केवल थोड़ी सी हवा इसमें हैं जो इसे कहीं भी उड़ने के काबिल बनाती है। प्लास्टिक बनाने वाले और प्लास्टिक की वस्तुओं का सृजन करने वाले लोग स्वयं को अरबपति बना रहे हैं। मस्तिष्क विहीन खरीददारी प्लास्टिक के पहाड़, बनाए जा रही है। किसी की समझ में नहीं आता कि मानव द्वारा बनाए गए ये पहाड़ जो केवल देखने में ही कुरूप नहीं हैं बल्कि अपने अस्तित्व के कारण पूरे वातावरण को भी नष्ट कर रहे हैं, इनसे किस प्रकार मुक्ति प्राप्त की जा सकेगी। प्लास्टिक की वस्तुओं और बनावटी वस्तुओं का अत्यधिक उत्पादन, नि:सन्देह, मजबूरन खरीददारी का कारण है जिसे फैशन की आड़ में बढ़ावा दिया जा रहा है।

फैशन के पीछे दौड़ने वाला किस प्रकार स्वतंत्र व्यक्ति हो सकता है, क्योंकि उसे तो अत्याधुनिक आज का फैशन ढूँढने के लिए फैशन पत्रिकाओं को पढ़ने की लत पड़ जाएगी, मानों आप किसी स्पर्धा-दौड़ में भाग ले रहे हों और ये जानना आपके लिए आवश्यक हो कि आपसे आगे कौन निकला है!

पश्चिमी देशों में बच्चों को बिना प्रेम तथा दुलार के अकेले छोड़ दिया

जाता है। परिणामत: वे बहुत अकेले और गुम-सुम हो जाते हैं। माता-पिता के पास धन का बाहुल्य होने के कारण वे बच्चों को उद्यमियों के हाथ छोड़ देते हैं। दूरदर्शन द्वारा निरन्तर नई-नई चीज़ों के विज्ञापन बेचारे बच्चों को प्रभावित करते रहते हैं। अब तो उन्होंने ऐसी गुड़ियाँ बना दी हैं जिनका अपना जन्म दिवस होता है, ऐसे भालू बना दिए हैं जिनकी वंशावली है और जिनके पिता, दादा, चाचा और पूरे वंश के नाम हैं। विज्ञापनकर्ताओं के प्रलोभनों के कारण इन गुड़ियाओं तथा भालुओं के सभी सम्बन्धियों को सामूहिक रात्रि-भोज के लिए निमन्त्रित करना आपके लिए आवश्यक हो जाएगा। इन सम्बन्धियों को एक स्थान से दूसरे स्थान की यात्रा करनी पड़ेगी। माता-पिता होने के नाते यदि आप इसके लिए सहमत नहीं होते तो आज के बच्चे इस प्रकार से आपकी जान के पीछे पड़ जाएंगे कि अन्त में शहर के किसी भाग में हर महीने उनकी पार्टियों के आयोजन के लिए, आपको और अधिक धन खर्च करना पड़ेगा। विज्ञापन के माध्यम से इस प्रकार उद्यमी अवांछित और अवास्तविक आवश्यकताओं की सृष्टि कर रहे हैं। केवल उद्यमी ही आपके कठोर परिश्रम द्वारा की गई कमाई का आनन्द ले रहे हैं।

ऐसे बच्चे का अपने माता-पिता या दादा-दादी से बिल्कुल कोई सम्बन्ध नहीं है। स्पष्ट रूप से वे ये भी नहीं जानते कि उनके अपने चाचा-चाची, मामा-मामी कौन हैं, परन्तु प्लास्टिक की गुड़ियों तथा भालुओं के बनावटी रिश्तेदार उन्हें ज़बानी याद हैं। विकसित देशों के लोगों के घर आजकल इन्हीं चीज़ों से भरे हुए हैं ताकि बच्चे माता-पिता की अपेक्षा अपनी गुड़ियों तथा भालुओं में ही लिप्त रहें। उस दिन मैंने हवाई अड्डे पर देखा कि सुरक्षा-कर्मी इस बात पर जोर दे रहे थे कि एक नन्ही बच्ची की गुड़िया को भी एक्सरे मशीन में से गुजरना होगा, परन्तु वो बच्ची इस गुड़िया के साथ इतनी लिप्त थी कि गुड़िया के साथ वह भी मशीन के अन्दर जाना चाहती थी। सुरक्षा-कर्मियों ने जब इसकी आज्ञा न दी तो वह जोर-जोर से रोने लगी और

सभी लोगों को खिन्न कर दिया। बच्चों का अन्तर्जात स्वभाव न होते हुए भी किस प्रकार बच्चे अपने खिलौनों से इतना मोह करने लगते हैं! सामान्य रूप से बच्चे खिलौनों से खेलते हैं और जी भर जाने पर इन्हें छोड़ देते हैं। परन्तु फैशन तथा प्रलोभनों में फँसे होने के कारण बहुत से माता-पिता के पास अपने बच्चों के लिए समय ही नहीं होता। ऐसी स्थिति में बच्चे अपना सारा प्रेम अपने खिलौनों पर उड़ेल देते हैं और उन्हें सुरक्षा तथा सुख देने में लग जाते हैं। माता-पिता को बच्चों से प्रेम न होने के कारण बच्चों को भी माता-पिता के स्थान पर बाज़ार से खरीदे गए खिलौनों से प्रेम हो जाता है। इस प्रकार व्यक्ति प्रेम का मूल्य चुकाता है।

कारखानों का उत्पादन, विज्ञापन गतिविधि और खपत, ये सभी एक प्रकार की मशीनी अनिवार्यताएं हैं, परन्तु हमें ये महसूस करना होगा कि मशीनें हमारी स्वामी नहीं हैं। हम मशीनों के रचयिता हैं, अतः हम ही इन्हें वश में रख सकते हैं। धन का सृजन भी मनुष्य ही करता है, तो किस प्रकार पैसा इतनी हद तक मनुष्य पर हावी हो सकता है? अपनी सनक के अनुसार कोई भी कार्य करना यदि आप स्वतन्त्रता मानते हैं तो मैं सोचती हूँ कि स्वतन्त्रता का ये अर्थ नासमझी है। वास्तव में स्वतन्त्रता बन्धनों से मुक्त होना है। परन्तु इसके विपरीत विकसित देशों में व्यक्ति को विवश किया जाता है, अवांछित और अनावश्यक चीज़ें खरीदने के लिए विवश, सभी प्रकार का कचरा आस-पास इकट्ठा करके जीने के लिए विवश और अन्ततः इस कचरे से मुक्ति पाने के लिए अपना धन खर्च करने के लिए विवश।

उन लाखों परिवारों के विषय में सोचें जो इन आधुनिक उत्पादों से घिरे हुए एवं प्रताड़ित हैं तथा इनसे मुक्ति पाकर बदले में कुछ नया लाने के लिए बुरी तरह से छटपटा रहे हैं। व्यापार में निपुण समाज द्वारा दी गई बहुत सी चुनौतियों तथा बहुत सी वस्तुओं की उपलब्धियों के कारण यह समस्या खड़ी हुई है।

भिन्न अनावश्यक उत्पादों को बाजार में उतारने की उद्यमियों की निपुणता अमेरिका में शिखर पर है। आप एक ही प्रकार की दो टाईयां नहीं खरीद सकते क्योंकि हर टाई दूसरी से भिन्न होनी चाहिए। दरवाजे का हर कैंज़ा या कार का हर ताला एक-दूसरे से भिन्न होता है। हर कालीन की शैली भिन्न होनी चाहिए। इस प्रकार छाँटने के लिए बहुत कुछ उपलब्ध है। परन्तु यह चयन भ्रामक है क्योंकि यह सारी विविधता मूलत: एक ही प्रकार की चीज़ से बनाई गई है। चमचमाहट से आश्चर्यजनक रूप से लुभाने वाले ये सारे उत्पाद अधिकतर मानवरचित हैं अर्थात् इनको बनाने के लिए बनावटी चीज़ों का उपयोग किया गया है। सिन्थैटिक द्वारा बनाए गए इन सुंदर-सुंदर कालीनों पर आप कभी नंगे पांव चलें तो आपको लगेगा कि आपके पैर जल रहे हैं। इनके बनाए हुए सुन्दर वस्त्रों से आपके पूरे शरीर पर चकत्ते हो सकते हैं। बुरी बात तो ये है कि लोग इसकी परवाह नहीं करते। मेरे ख्याल से शरीर पर चकत्ते होना भी आजकल का फैशन बन गया है। कारों में ऐसे अजीबोगरीब दरवाजों के ताले लगे हुए हैं कि आग लगने या दुर्घटना की स्थिति में, यदि आप विदेशी हैं तो, आप कार का दरवाजा भी नहीं खोल सकते और इस प्रकार सनक वश बनाई गई चीज़ों के कारण भयंकर मानसिक दबाव आप पर बना रहता है।

बनावटी पदार्थों से बनाई गई तथा विस्तृत रूप से विज्ञापित ये वस्तुएं हमें और अधिक भ्रमित करती हैं तथा हमें अपने ही विश्व से विमुख करती हैं। किसी कार या रेलगाड़ी पर चढ़ने से पूर्व विनम्रतापूर्वक बिना किसी संकोच के यह पूछ लेना अच्छा होगा कि इसका दरवाजा किस प्रकार खुलता है। सम्भवत: इसका इंजन विशेष प्रकार का हो जो कि एकदम से फैशन बन गया हो। इस आधुनिक युग में अपनी अनभिज्ञता का संकोच न करना बेहतर होगा। उदाहरण के रूप में आजकल हवाई जहाज़ में आपकी सीट के समीप अत्यन्त कोमल बटन लगे होते हैं। प्रथम दर्जे में विशेष रूप से बहुत से वृद्ध

लोग यात्रा करते हैं। परिचारिका (Air Hostess) से इन बटनों को चलाने के विषय में सहायता ले लेना सदैव अच्छा होता है, चाहे आपकी अनभिज्ञता पर वह आपका मजाक ही क्यों न करे।

चयन के लिए बहुत अधिक चयन और अनावश्यक वैचित्र्य जहाँ होता है वहाँ मानकीकरण (Standardization) नहीं होता और कोई नहीं जानता कि क्या घटित हो रहा है। लोगों की सुरक्षा के लिए कोई मापदण्ड तो आवश्यक है। परन्तु जब वे मानकीकरण करने लगते हैं तब भी मूर्खता की सीमा तक चले जाते हैं। उदाहरण के रूप में भारत जैसे देश में दरवाज़ों के कब्ज़े बनाने के लिए पारम्परिक तकनीक के स्थान पर उन्होंने मशीनों का उपयोग करने का निर्णय किया और अब इन कब्ज़ों वाला दरवाजा खोलने के लिए पहलवान की ज़रूरत पड़ती है और पुन: बंद करने के लिए दो पहलवानों की। यह समझ पाना असम्भव है कि सर्वसामान्य व्यक्ति के लिए इतने कठोर कब्ज़ों बनाने की क्या ज़रूरत थी? उत्तर मिला कि उत्पादन विधि को सामान्य बनाने तथा मशीनों का उपयोग करके कब्ज़ों के नाप का मानकीकरण करने के लिए ऐसा किया गया। भारत में पीतल से बने हुए, बहुत ही सस्ते तथा आसानी से खुलने वाले अति सुन्दर कब्ज़े उपलब्ध हैं, यद्यपि उनके विशेष नाप तोल नहीं हैं। परन्तु आजकल क्योंकि बनावटी पदार्थों से विशाल स्तर पर दरवाजे बनाए जा रहे हैं, उनके स्वाभाविक या प्राकृतिक वैचित्र्य की भी सीमा होना आवश्यक है और परिशुद्धता (Precision) की खातिर मशीनों द्वारा कब्ज़े लगाए जाना आवश्यक है। अत: न चाहते हुए भी हमें ये मशीनों द्वारा बने हुए कब्ज़े अपनाने पड़ते हैं जो दरवाज़े को न तो खुला रखते हैं न बंद (जब तक किसी पहलवान को इस कार्य में सहायता के लिए न रखा जाए)।

अत: इन विचारों के प्रतिक्रियापूर्ण स्वभाव-गलत स्थान पर सूक्ष्मता और आवश्यक स्थान पर मानकीकरण का अभाव-उद्यमियों के भ्रमित मस्तिष्क की देन है, एक ऐसे मस्तिष्क की जो प्रतिदिन नई चीज़ों के विषय में

सोच-सोचकर विक्षिप्त हुआ जा रहा है। परिणामतः बहुत से ऐसे लोगों की सृष्टि हो रही है-उत्पादक, विज्ञापनकर्ता और उपभोक्ता-जो पूरी तरह से भ्रमित हैं और ये भी नहीं जानते कि दो जमा दो कितने होते हैं। धीरे-धीरे चरित्र का पतन होना और लोगों में आनन्द उठाने के गुण का ह्रास होना तथाकथित चयन की स्वतन्त्रता के ही मूर्खतापूर्ण परिणाम है।

अन्य अनावश्यक स्वतन्त्रताओं का भी हमारे पास बाहुल्य है। दफ़नाने के लिए अपने शव के लिए वस्त्र छांटने की स्वतन्त्रता इनमें से एक है। अपने लिए शव पेटी चुनने की स्वतन्त्रता भी है। किसी भी समझदार व्यक्ति को ये बात बड़ी अटपटी लगेगी, परन्तु मरने वाले लोगों से अधिक से अधिक धन एकत्र करने की उद्यमियों की स्वतन्त्रता का ये एक अन्य उदाहरण है।

इसके अतिरिक्त, चरित्रहीन जीवनयापन करने की स्वतन्त्रता आधुनिक समय की निकृष्टतम स्वतन्त्रता है। आप एक व्यक्ति से विवाह कर सकते हैं, दूसरे के साथ सो सकते हैं, तीसरे के साथ चोंचलेबाज़ी कर सकते हैं और चौथे से बच्चे उत्पन्न कर सकते हैं। हाल ही में कुछ आश्चर्यजनक आंकड़े छापे गए हैं कि, विशेषकर पाश्चात्य देशों में, एक पुरुष प्रतिवर्ष औसतन 6.9 स्त्रियों से यौन सम्बन्ध बनाता है। ये पूर्णतया पागल विचार भी इसी दृष्टिकोण की देन हैं कि व्यक्ति को सदैव कुछ नया तलाशते रहना चाहिए। एक महिला जिसे एक पुरुष वृद्ध समझता है, दूसरे पुरुष के लिए युवा हो जाती है और इस मूर्खतापूर्ण विचार के कारण व्यक्ति अपने वस्त्रों की तरह से स्त्रियाँ बदलने लगता है और इस तरह से जाल में फँसता चला जाता है। नए साथी की कभी न खत्म होने वाली तलाश, जो कि अपने घनिष्ठ सम्बन्धियों में भी की जाती है, आपकी सारी शक्ति को क्षीण कर देती है। इसके अतिरिक्त इस तलाश से और भी भयानक समस्याएं खड़ी हो जाती हैं: भावनात्मक, मानसिक, और शारीरिक। स्वच्छन्द सम्भोग यदि स्वाभाविक, सामान्य या अच्छा कार्य होता तो लोग जानलेवा रोगों के शिकार क्यों

होते? ये रोग इस प्रकार की स्वच्छन्द जीवन शैली का ही परिणाम हैं। ईर्ष्या किस कारण से? उन्मुक्त आचरण के पक्षधर समाचारपत्र प्रतिदिन हिंसा के समाचारों से भरे पड़े होते हैं: महिलाओं ने अपने पतियों की हत्या की, पतियों ने अपनी पत्नियों की हत्या की, प्रेमी ने प्रेमिका के प्रेमी की हत्या की। पारस्परिक विनाश चलता चला जा रहा है। उन्मुक्त यौन यदि हमारे स्वभाव के अनुरूप होता तो हम हिंसा करके इसका विरोध क्यों करते? विवाहित या अविवाहित किसी पुरुष या स्त्री से प्रेम खिलवाड़ करना या उसके प्रति कामुक और अपवित्र दृष्टि का विकास, किस प्रकार की स्वतन्त्रता है? समय के साथ-साथ ऐसी दृष्टि अबोधिता को भी नहीं देख पाती और अब तो व्यस्क व्यक्तियों से वे उत्तेजित ही नहीं होते, अपनी अपवित्र दृष्टि उन्होंने नन्हें बच्चों पर लगा ली है। आज बाल-कदाचार की इतनी घटनाएं हमारे सामने हैं कि विश्वास ही नहीं होता, कभी-कभी तो माता-पिता ही इस जघन्य कार्य को करते हैं। शताब्दियों के सभ्य जीवन के परखे हुए पारम्परिक रीति-रिवाजों को दुत्कारना आधुनिकता का एक अन्य अपमानजनक पतित पक्ष है। इस दुर्गुण से मानव पशुओं से भी निकृष्ट बन गया है।

यह बिल्कुल स्पष्ट है कि उन्मुक्त यौन सम्बन्ध दुख, रोग और मृत्यु की ओर ले जाते हैं और इसे रोकने के लिए हमें कुछ करना पड़ेगा। परन्तु समस्या ये है कि कानून और शिक्षा इस मामले में बहुत कम सफल हो सकती है। लोगों को अपनी सीमाएं जाननी होंगी। परन्तु यह नियन्त्रण, यह अनिवार्यता अन्दर से आनी चाहिए अर्थात् आपको आध्यात्मिक जागृति पानी होगी। आपके चित्त को आत्मप्रकाश से ज्योतित होना होगा। आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति किसी भी ऐसी चीज़ को पसन्द नहीं करता जो उसे अति तक ले जाए। आत्मसाक्षात्कारी वास्तव में वह व्यक्ति है जिसका व्यक्तित्व सन्तुलित है। वह सदैव मध्य में होता है क्योंकि जब भी उसका चित्त असन्तुलित होता है, आत्मा का प्रकाश चित्त को मध्य में वापस ले आता है। ऐसा व्यक्ति पृथ्वी

पर दृढ़ता पूर्वक खड़ा हुआ है। अपने स्वभाव के कारण ऐसा व्यक्ति व्यवहारिक, तत्ववेत्ता, विवेकशील और निर्लिप्त होता है। ऐसा व्यक्ति न तो आदतों में फँसता है और न ही मूर्खता पूर्ण, विवेकहीन और विनाशकारी चीज़ों को अपनाता है। चीज़ों के चयन में वह समय नहीं बर्बाद करता। उपलब्ध वस्तु का आनन्द लेना वह जानता है।

चयन का यह रिवाज़ जब विवाह क्षेत्र में प्रवेश करता है तो विशेष रूप से भयानक और विनाशशील हो उठता है। आजकल अनियन्त्रित अहं द्वारा ही विवाह तय किए जाते हैं, माता-पिता या शुभचिन्तक समाज न तो इन्हें नियन्त्रित करते हैं और न ही अपना पारम्परिक प्रभावशाली पथ-प्रदर्शन प्रदान करते हैं। केवल अहं, कामुकता और लालच वैवाहिक साथी का चयन करने के मुख्य आधार हैं। ऐसी परिस्थितियों में विचारों का तनिक सा भी मतभेद वैवाहिक जीवन में समस्या उत्पन्न कर सकता है। परिवार टूट गए हैं, अट्ठारह साल की आयु तक पहुँचते ही बच्चे अपने रहने के लिए घर या फ्लैट ढूंढने के लिए माता-पिता का घर छोड़ देते हैं या अनाधिकृत रूप से कब्ज़ा करने वाले लोगों के साथ मिलकर किसी अन्य के घर पर कब्ज़ा कर लेते हैं।

आज स्थिति ये है कि बच्चे माता-पिता को सहन नहीं कर पाते और माता-पिता अपने बच्चों को, क्योंकि उनका वैवाहिक जीवन संतोषजनक नहीं है। व्यक्तित्व विकसित करने और पहचान बनाने के नाम पर वे अपने बच्चों को कठोर परिश्रम करने के लिए बाध्य कर देते हैं। नौ साल की एक नन्ही लड़की को प्रतिदिन साइकिल पर आकर समाचार पत्र फेंकते हुए मैंने देखा है। एक दिन मैंने उससे पूछा कि तुम्हारे माता-पिता कौन हैं? तो उसने हमारे पड़ोसियों का नाम बताया और कहा, ''मुझे स्वयं अपने लिए पैसा कमाना है और अपने पैरों पर खड़ा होना सीखना है।'' इतनी छोटी आयु में तो वह अभी अपने पैरों पर खड़े होने के काबिल भी न हुई थी! ऐसी नन्हीं बालिका का यदि रास्ते पर बलात्कार हो जाए या धोखे से उसे लूट लिया जाए

तो इसके लिए कौन जिम्मेदार है? ऐसी घटना क्या उसे अपने पैरों पर खड़े होने में सहायक होगी?

विवाह का उद्देश्य सुरक्षित तथा सन्तुलित वातावरण में वंश को आगे बढ़ाने तथा बच्चों की परवरिश ऐसे ढंग से करना होता है जिससे वे आत्मविश्वास से परिपूर्ण प्रतिष्ठित व्यस्क बन सकें। जीवन-पर्यन्त यदि आप दुल्हन बने रहना चाहती हैं (अर्थात् निरन्तर रसविलास में लगे रहना चाहती हैं) तो बेहतर होगा के आप बिल्कुल विवाह न करें और किसी ऐसे स्थान पर चली जाएं जहाँ अपने शरीर से आप कुछ धन कमा सकें तथा सभी लोगों को आपकी असलियत का पता हो। विवाह उन स्त्री-पुरुषों के लिए है जो अपने होने वाले बच्चों को सामंजस्य पूर्ण वातावरण प्रदान करते हुए विवेकशील जीवन बिताना चाहते हैं। निवास स्थान जब घर बनता है तो रोमांच ओर आँख मटक्की समाप्त होनी आवश्यक है। बहुत सी चीज़ें वैवाहिक सम्बन्धों को समाप्त कर सकती हैं। परन्तु कौन सी चीज़ें वैवाहिक जीवन में प्रणय (Romance) की हत्या करती हैं? बहुत सी बनावटी चीजें. इसके लिए दोषी हैं। एक आधुनिक कारण यदि मैं आपको बताऊंगी तो आप हैरान हो जाएंगे। ये है केश सज्जा करने वाले (Hair Dressers)। बहुत से मंगेतरों ने अपनी स्त्रियों को इसलिए छोड़ दिया क्योंकि उन्हें उनकी बदली हुई केश-शैली पसन्द न थी।

विवाह बहुत सी जिम्मेदारियां लाता है और यह केवल परिपक्व और स्वच्छ व्यक्तित्व के लोगों के लिए है। बाल-अपराध तथा बाल कदाचार के आंकड़े जिस प्रकार दर्शाते हैं उनसे स्पष्ट होता है कि गैर जिम्मेदार, घटिया तथा आक्रमक माता-पिता के हाथों में बच्चे सौंपना सुरक्षित नहीं है। ऐसे लोगों को महसूस नहीं होता कि माता-पिता बनना तो एक विशेष कृपा है जिसकी अपनी जिम्मेदारियाँ होती हैं और माता-पिता के हृदय में यदि बच्चों के प्रति प्रेम नहीं है तो उन्हें बच्चे उत्पन्न करने की स्वत: स्वतन्त्रता नहीं होनी चाहिए।

इस स्थिति में विवाह के मामले में चयन की ये स्वतन्त्रता बच्चों के विनाश तथा उनकी हत्या का कारण बन सकती है। बच्चे या तो नि:स्सहाय होकर मर जाते हैं या आत्मघातक आदतों में फँस जाते हैं क्योंकि माता-पिता न तो बच्चे चाहते हैं और न ही उन्हें बच्चों की देखभाल करने की समझ होती है। उनके सम्मुख केवल एक ही स्पष्ट विकल्प होना चाहिए, कि उन्हें अहं से परिपूर्ण रोमांचमय जीवन चाहिए या उन्हें अपनी जिम्मेदारियों को स्वीकार करना है जो तथाकथित स्वतन्त्रता को उचित सीमा में बाँधती हैं और बच्चे उत्पन्न करके उनकी देखभाल करने को कहती हैं।

समस्या और अधिक गंभीर हो जाती है क्योंकि अपना साथी बदलने के अधिकार का विचार विवाह के पश्चात् भी बना रहता है। कानून तलाक का पक्षधर है और जो भी व्यक्ति अपने विवाह को बनाए नहीं रखना चाहता वह बिना किसी समस्या के अपने पति-पत्नी से अलग हो सकता है। विकसित देशों के जोड़े विवाह सूत्र में रहते हुए भी एक दूसरे के प्रति वफ़ादार नहीं बने रहना चाहते। इसके विपरीत अपने पति या पत्नी के प्रति वफ़ादार स्त्री या पुरुष को पिछड़ा हुआ माना जाता है। पर-पुरुष या पर-स्त्री के प्रति, अपने जीवनसाथी के लिए नहीं, आकर्षक होने के लिए व्यक्ति को अत्यन्त कामातुर (Sexy) होना आवश्यक है। आप यदि ऐसे नहीं हैं तो आपको इस आधुनिक संसार के योग्य नहीं समझा जाता।

निर्धारित आकर्षण का यह विचार भी एक प्रकार से नया है तथा इन्हीं दुष्ट प्रतिभाशाली लोगों तथा उद्यमियों की देन है। यही लोग आकर्षक महिला तथा आकर्षक पुरुष की लुभावनी मूर्ति की सृष्टि करते हैं। परन्तु वेश्याओं की तरह से हर पुरुष या स्त्री को आकर्षक प्रतीत होने के लिए क्यों संघर्ष करना चाहिए? उद्यमियों द्वारा वर्णित आकृति, कद, कमर, नितम्ब, और टांगे प्राप्त करने का प्रयत्न करने की हमें क्या आवश्यकता है? इसके विषय में सोचकर सही चयन के लिए अपनी शक्ति बर्बाद करने के लिए क्या हमारे पास अपना

मस्तिष्क नहीं है? हमारे पास यदि स्वतंत्रता तथा विवेक हैं तो क्यों न हम सोचें कि परमात्मा ने जो शरीर हमें दिया है वह हमारी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काफ़ी है? इसके अतिरिक्त क्यों हम ऐसे लोगों की इच्छा करें जो हमारे शरीर के लिए हमारे पीछे दौड़ते रहें? निःसंदेह ऐरे-गैरे, नत्थू-खैरे को अपने पीछे लगाए रखने का आनन्द न उठाने का विचार बहुत से लोगों के लिए घिसा-पिटा है क्योंकि, विचित्र बात है, इस प्रकार के अटपटे आनन्दविहीन अनुनय (Pursuit) का लोग आनन्द उठाते हैं।

यह धारणा कि आपके पास अनियन्त्रित चयन की स्वतन्त्रता होनी चाहिए, तेज़ी से बढ़ते हुए अश्लील साहित्य की उपलब्धि में स्पष्ट रूप से प्रवेश कर गई है। मैंने ऐसी पुस्तकें देखी हैं जो कुछ लोगों की विकृत काम-वासना को शान्त करने के लिए बच्चों का दुरुपयोग करती हैं। यद्यपि इन पुस्तकों को पढ़ने का साहस मुझमें न था फिर भी मैं जानती हूँ कि ये पुस्तकें अत्यन्त लोकप्रिय हैं और लेखक तथा प्रकाशक के लिए बेशुमार धन बना रही हैं। स्वार्थ से परिपूर्ण निकृष्ट वासनाओं को शान्त करने के लिए जब अबोधिता का उपयोग किया जाए तो समाज या संस्कृति को जीवन प्रदान करने वाले पारम्परिक मूल्यों से समाज का सम्बन्ध स्पष्ट रूप से टूट जाता है। वैवाहिक सम्बन्धों तथा अबोध बच्चों के प्रति सम्मान की भावना का होना आवश्यक है। विवाह का उद्देश्य तथा महत्व खोजने के लिए हर व्यक्ति को चुस्त तथा सावधान हो जाना चाहिए क्योंकि विवाह नन्हें बच्चों की सुरक्षा के लिए बल-पूर्वक उनका दुरुपयोग रोकने के लिए बना है। परन्तु आधुनिक समाज में माता-पिता क्रूर, समझदारी-विहीन, अत्याचारी बन गए हैं जो बच्चों को प्रेम करने एवं उनकी रक्षा करने की जिम्मेदारी से जी चुराते हैं या ऐसे माता-पिता हैं जिन्हें बच्चे निर्दयी व्यवहार की चटपटी चटनी के साथ पत्तागोभी की तरह से खा सकते हैं। संक्षिप्त रूप से यह सब स्थायी विवाह के महान महत्व को न समझ पाने के कारण है। जिसके परिणामस्वरूप

तथाकथित विकसित समाज नष्ट हो गए हैं। माता-पिता प्रेमपूर्वक बच्चों का पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकते क्योंकि वे स्वयं उद्यमियों द्वारा रचित बनावटी आदर्शों के पीछे दौड़ रहे हैं। बच्चे बचपन में ही स्नेह और प्रेम से वंचित हो जाते हैं तथा दूसरे बच्चों के सहचर्य की इच्छा करने लगते हैं। प्रेम की उत्कट इच्छापूर्ति के लिए बाल्यावस्था में ही वे चरित्रहीनता के गर्त में गिर जाते हैं। प्रचार माध्यम (Media), विशेषकर दूरदर्शन, भी उनके मस्तिष्क में काम वासना के महत्व के अटपटे विचार भर देता है। जिस समाज में प्रचार माध्यमों को बच्चे का ध्यान यौनगतिविधियों की तरफ केन्द्रित करने की आज्ञा नहीं होती वहाँ विद्यालयों में बच्चों को यौन शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं होती। भारत में अभी तक ऐसा नहीं किया गया है और मुझे आशा है कि ऐसा किया भी नहीं जाएगा क्योंकि इसकी आवश्यकता नहीं है। बच्चों के सामने उन सब चीज़ों को दिखाए जाने की क्या ज़रूरत है जिनका अस्तित्व ही नहीं है (दूरदर्शन और वीडियो पर बच्चों को कामुकता से बचाते हुए दिखाया जाना)! इतनी कोमल आयु में, जबकि बच्चों को अपने जीवन और अबोधिता का आनन्द लेना चाहिए, बच्चों के मस्तिष्क में इतने भयानक विचार भर देना, शिक्षाविदों द्वारा अपनी शक्तियों का भयानक दुरुपयोग करना है। सात-आठ साल की नन्हीं उम्र में अबोधिता की सुन्दर आयु को समाप्त कर देना असामयिक है तथा क्रूर भी। खेलने व आनन्द लेने के अबोधितापूर्ण सुन्दर दिनों में बच्चों की चेतना में ज़बरदस्ती घुसेड़ी गई जीवन की तथाकथित सच्चाईयों को सह पाने की शक्ति नहीं होती।

इस प्रकार आधुनिकतावाद ने मानव की एक ऐसी पीढ़ी की सृष्टि की है जिसने अपने, अपने परिवारों के, अपने बच्चों के तथा अपने माता-पिता के जीवन नष्ट कर दिए हैं। प्रेम एवं शान्ति का पोषण प्रदान करने वाले पारम्परिक स्रोतों को पूरी तरह से नष्ट कर दिया गया है। आजकल एक दादी माँ अपने पोते-पोतियों की देखभाल इसलिए नहीं कर सकती क्योंकि युवा

प्रतीत होने के लिए उसे केश-सज्जा के लिए जाना होता है। यदि वह युवा दिखाई नहीं देती तो उसे मृत-सम समझा जाता है।

हज्जाम के गन्दे हाथों में सिर दिए बिना कोई आपको चैन से जीने नहीं देगा। मैं स्वयं कभी केश-सज्जा के लिए नहीं जाती। बहुत से लोग मुझे असंस्कृत परिवार की देहाती महिला समझते हैं। परन्तु अब जब मैं उन लोगों की ओर देखती हूँ, जो मेरे बारे में ऐसा सोचते थे, तो मेरी आयु में वे सब या तो गंजे हो गए हैं या झुर्रियों से परिपूर्ण चेहरे वाले सफेद सिर के। धीरे-धीरे उनकी स्वाभाविक मुस्कान, माधुर्य और मृदु अभिव्यक्तियाँ समाप्त हो गई हैं। श्रृंगार प्रसाधकों का यही उपहार है।

आपके सामने एक अन्य विकल्प भी है, अपनी त्वचा या पूरे चेहरे को उभार दिलवाना (facelift)। परन्तु एक देश में मैंने देखा है कि वहाँ के राष्ट्रपति की पत्नी अपने चेहरे पर सदैव मुस्कान बनाए रखती है। पूरी कोशिश के बावजूद भी मेरे लिए यह समझ पाना असम्भव था कि हँसते हुए या रोते हुए वह महिला किस प्रकार अपनी मुस्कान बनाए रखती थी! बाद में मुझे पता चला कि उसने स्विटज़रलैंड में अत्यन्त कठोर चेहरा-उभार-उपचार (Face Lifting Treatment) का कष्ट झेला था जिसके द्वारा उसने यह स्थायी अभिव्यक्ति प्राप्त की थी।

परिपक्व व्यक्ति समझता है कि बढ़ती हुई उम्र के साथ व्यक्ति को वृद्ध होना ही है, परन्तु इस अवस्था में भी वह आकर्षक, गरिमामय एवं शान्त बना रह सकता है। परन्तु आधुनिक समाज में चीज़ें इतनी भौतिकवादी हो गई हैं कि व्यक्ति का एक पैर जब कब्र में होता है तब भी उसे आकर्षक प्रतीत होना चाहिए। इसी कारण से लोग उद्यमियों के हाथों में खेल रहे हैं। अन्तिम समय में भी आपकी भाव-भंगिमाओं को सभी लोग देखेंगे ताकि विश्वस्त हो सकें कि नवीनतम फैशन के साथ चलते हुए आप आधुनिकतम बने रहें।

उपभोक्ता समाज, जिसमें आपकी चयन की स्वतन्त्रता इस तरह सावधानीपूर्वक बढ़ाई जा रही है कि आपका पूरा धन खर्च हो जाए, का महान सिद्धान्त ये है कि आपकी बहुमूल्य शक्ति देखने और दिखाने में खर्च हो जाए। चयन आरम्भ करने से पूर्व ही यह आचार संहिता आप पर थोप दी जाती है!

जब हम लन्दन नए-नए आए थे तो हमारे पास शराब आदि पेश करने के लिए उपयुक्त गिलास न थे। हमें साफ-साफ बता दिया गया था कि यदि हम आगन्तुकों को शराब नहीं पिलाएंगे तो कोई हमारे घर नहीं आएगा। आसव और शराब के प्रति मेरी स्वाभाविक घृणा और संकोच के बावजूद भी मुझे ऐसा करना पड़ा। तब मैंने अपने पति से प्रार्थना की कि वे इन कार्यों की जिम्मेदारी संभालें क्योंकि इतना कठोर कार्य मैं न कर पाऊंगी। वे मुझे आदर्शवादी कहते हैं और कहते हैं कि मैं व्यवहारिक नहीं हूँ परन्तु उन्हें शराब तथा आसवों की बारीकियाँ समझने के लिए शब्दकोश पढ़ने पड़े। तब हमें पता चला कि अनगिनत पुस्तकें ऐसी लिखी गई हैं जिनमें वर्णन किया गया है कि शराब किस तरह से पेश की जाए और कैसे गिलास आदि उपयोग किए जाएं। अध्ययन का यह एक नियमित पाठ्यक्रम था। तब हम पति के एक मित्र को साथ लेकर बाज़ार गए ताकि वह बारह लोगों के मनोरंजन के लिए पर्याप्त शराब के गिलास खरीदवा सकें। आप हैरान होंगे! यह बात 1974 की है। इंग्लैंड में तब हमें बारह लोगों के लिए गिलास खरीदने पर नौ सौ पौंड खर्चने पड़े क्योंकि इनका शानदार और विशेष प्रकार का होना अत्यन्त आवश्यक था। मैं आश्चर्यचकित थी कि भिन्न प्रकार की शराबों तथा आसवों को पेश करने के लिए इतने महँगे गिलास होना आवश्यक है! भारत में तो अतिथियों को शीतल पेय पिलाने के लिए प्रति अतिथि एक गिलास या चाँदी के गिलास से काम चल जाता है। जो लोग शराब के कुछ प्याले पीने के बाद मदहोश हो जाते हैं उनके लिए इतने कलात्मक मणिभ (Crystal) गिलासों की क्या

आवश्यकता है? उन्हें साफ करना, ठीक प्रकार से रखना और यह याद रखना कि कौन सा गिलास किस लिए उपयोग होगा, बहुत ही जटिल कार्य था। भारत में क्योंकि हमारे यहाँ नौकर होते हैं, मेरे पति ट्रे उठाना भी न जानते थे। परन्तु क्योंकि मैं यह कार्य करने के लिए तैयार न थी, उन्हें एक के बाद एक ट्रे उठाकर ऊपर की मंजिल में, जहाँ अतिथि बैठकर मद्यपान कर रहे होते थे, ले जानी पड़ती थी। कई बार हमारे यहाँ आने वाले अतिथि रास्ता भटक जाते और चार बजे दोपहर के खाने के लिए पहुँचते और हमें उन्हें खाना खिलाना पड़ता। जितनी अधिक शराब हम उनके गिलासों में उड़ेलते उतनी अधिक वे पीते (निःसन्देह उपयुक्त गिलासों से) और एक घंटे के पश्चात् वे ठीक से होश में न होते। बार-बार वो एक ही बात को दोहराते रहते, परन्तु इससे कोई फर्क न पड़ता था क्योंकि उनकी तरफ किसी का ध्यान ही नहीं होता था।

मैं स्वीकार करती हूँ कि मैं एक ऐसे परिवार से सम्बन्धित हूँ जो सदैव मद्यपान विरोधी थे, परन्तु मैं यह न जानती थी कि लन्दन में जिस प्रकार की गृहणी की भूमिका मुझे निभानी पड़ी उसके लिए मैं बिल्कुल भी तैयार न थी, उससे पूर्णतः अनभिज्ञ थी। मैं किसी भी शराब का रंग न जानती थी। कैसे मैं मदिरा पेश करती? इसीलिए मैंने अपने पति से कहा कि अपना यह धार्मिक कर्तव्य स्वयं निभाएं। उनके इस महान कार्य में सहायता करने के लिए उन्होंने दो चीनी बैरे रख लिए जो हमारे लिए वरदान साबित हुए। उन्हें भिन्न प्रकार की मदिराओं का तथा इन्हें पेश करने का काफी ज्ञान था। उनके इस ज्ञान तथा निपुणता के बदले हमें काफी पैसा खर्चना पड़ा। वे मदिरा और आसव के भण्डार को देखते और ध्यान रखते की भोज पर आने वाले अतिथियों के लिए यह पर्याप्त है या नहीं। आवश्यकता की अन्य चीज़ों की भी वे सूची बनाते। चिवास रीगल (Chivas Regal) व्हिस्की की बोतलें तथा कुछ अन्य आसव खरीदने के लिए मेरे पति को स्थानीय विपणन केन्द्र भागना पड़ता। चीनी बैरों द्वारा बताई गई अन्य चीज़ें भी खरीदी जातीं। अब हमें विश्वास हो गया था

कि हम पूरी तरह से तैयार हैं। फिर भी जब मेहमान आते और उन्हें मदिरा पेश की जाती तो हमारे सामने अचानक कोई समस्या खड़ी हो जाती जिसका मदिरापान के अज्ञान के कारण हमने पहले से अन्दाज़ा न लगाया था। एक व्यक्ति ने वोरसेस्टर चटनी (Worcester Sause) के साथ मदिरा पेय मांगा। पी.जी.वुडहाऊस (P.G.Woodhouse) के उपन्यासों में मैंने एक चरित्र का नाम पढ़ा था। जिसका नाम उच्चारण करने पर ऐसे आवाज़ निकलती थी- व्यूस्टर (Wooster)। चटनी का ऐसा नाम कभी न सुना था। किसी भी प्रकार से, हमारे भारतीय खानों में वॉरसेस्टर चटनी की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही कभी यह चटनी हमारे घर में थी। हमारे अनुभवी बैरों ने भी अपनी सूची में यह नाम नहीं लिखा था। हम क्या करते? मेरे पति ने उस अतिथि से क्षमा माँगी, परन्तु उसे अच्छा नहीं लगा। अनमने मन से उसने दूसरा मदिरापेय स्वीकार किया परन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता गया वह प्रसन्न चित्त हो गया। अशिष्ट अतिथिओं की अटपटी माँगे कई बार मुझे स्वयं पर ज़्यादती लगतीं और मुझे परेशान कर देतीं। ऐसा लगता मानो विशेष प्रकार के पेय की माँग करना उनका जन्मसिद्ध अधिकार हो!

ये समझ पाना मेरे लिए बहुत कठिन है कि कार्य संचालन अधिकारी, जिन्हें अपने देश के लिए बहुत जिम्मेदारी के कार्य करने होते हैं, उन्हें मदिरा की इतनी भयानक लत क्यों है! यह पश्चिमी देशों की एक मात्र संस्कृति बन गई है अतिथियों को बिना मदिरा पान करवाए आप न तो उनसे बातचीत कर सकते हैं न ही घनिष्ठता बना सकते हैं। समस्या ये भी है कि मदिरा के आते ही वह सारी घनिष्ठता अर्थहीन हो जाती है, कूटनीतिक समाज में भी ऐसा ही होता है। मुझे लगता है कि सभी देशों के जासूस तथा देशद्रोही, मदिरा का उपयोग लोगों को फँसाकर, उनकी बुद्धि भ्रष्ट करके और उनसे रहस्य उगलवाने के लिए करते होंगे। सामान्य रिश्वत तथा भ्रष्टाचार के लिए भी मदिरा बहुत अच्छा माध्यम है। आप यदि जान जाएं कि अधिकारी व्यक्ति

को कौन सी मदिरा या आसव पसन्द है तो उसका हृदय जीतना बहुत आसान है।

एक बार हमने अपने स्थानीय रेलवे स्टेशन के स्टेश्न मास्टर पर ये उपयोग किया। वह ऐसा अधिकारी था जो बहुत से कार्य करता था, टिकट खिड़की पर भी वह कार्य करता था। जब-जब भी मैं टिकट खरीदने जाती तो किसी न किसी बहाने से वह अभद्र व्यवहार करता। मेरे पास यदि पूरे-पूरे खुले पैसे न होते तो वह भाव-भंगिमा से या शब्दों से अपनी नाराज़गी दर्शाता। सम्भवत: पारम्परिक वस्त्र पहने भारतीय महिला को वह सहन न कर सकता हो! हमारी समझ में न आता था कि किस प्रकार उसको विनम्र बनाया जाए या उसका हृदय जीता जाए। मेरे पति ने सलाह दी कि बची हुई चिवास रीगल की बोतलों की अब हमें कोई आवश्यकता न होगी, क्यों न किसी त्यौहार के मौके पर हम दो बोतलें उसे भेंट कर दें। हमारे घरेलू नौकर ने ये बोतलें स्टेशन मास्टर को पहुँचा दीं। उसने पूछा: ''क्या ये आपका कोई धार्मिक त्यौहार है?'' ''जी हाँ,'' हमारे आदमी ने उत्तर दिया। स्टेशन मास्टर अत्यन्त प्रसन्न हुआ। प्रसन्नता पूर्वक उसने व्हिस्की की बोतलें स्वीकार कीं और हमें हार्दिक धन्यवाद कहलवाया। पहले की तरह से अगले दिन जब मैं स्टेशन पर गई तो मुझसे बहुत ही सम्मान और शिष्टतापूर्वक व्यवहार किया गया मानो मैं कोई स्थानीय जागीरदारनी थी। इस पूर्ण परिवर्तन पर मैं बहुत हैरान थी। उस स्थान पर हम चार वर्ष तक रहे परन्तु इसके पश्चात् हमें उससे कोई समस्या न हुई। मेरे पति ने जितनी फालतू बोतलें व्हिस्की खरीदी थी उन सबका बहुत अच्छा उपयोग हो गया। हर वर्ष हम उसे बोतलें भेजते परन्तु इसकी तिथियाँ बदल जातीं क्योंकि पुरानी तिथियों का हमारे पास कोई हिसाब न होता था। वह हमसे पूछता कि आपके त्यौहार की तिथियाँ इतनी भिन्न कैसे हो जाती हैं? मेरी समझ में नहीं आता कि किस-प्रकार उत्तर दूँ! तब उसने मुझे कहा कि मेरे एक भारतीय दोस्त ने बताया है कि भारतीय लोग चन्द्र-पंचांग को मानते हैं सूर्य पंचांग को नहीं।

आधुनिक समय की मुख्य बात यह है कि प्रतिदिन व्यक्ति के पास कुछ नया होना चाहिए। प्रतिदिन कुछ परिवर्तन होना चाहिए, सम्भवतः पत्नी या बच्चों का भी, क्योंकि आधुनिक व्यक्ति बहुत जल्दी ऊब जाता है। प्रायः बहुत से विकल्पों में से उसके मस्तिष्क को चयन करना पड़ता है जिसके कारण उसका मस्तिष्क थक जाता है और जब वांछित समझी जाने वाली चीज़ उसे मिलती है तो उसे लगता है कि वह उससे भी ऊब गया है। उद्यमी इस रहस्य को भली भाँति समझते हैं। चयन के लिए बहुत सारी चीज़ें बनाकर पहले तो वो आपको प्रलोभन देते हैं और फिर इन चीज़ों से उबाकर आपके लिए और अधिक नई-नई चीज़ों की रचना करते हैं क्योंकि केवल इसी प्रकार उनकी मशीनों को निरन्तर कार्य मिल सकता है। उद्यमी जानता है कि किस प्रकार आपके अहं को बढ़ावा दिया जाए और यह मशवरा भी देता है कि आपको चीज़ें छाँटने या स्वीकार करने की स्वतन्त्रता है। उदाहरणतः इंग्लैंड में यदि आपको कोई सम्पत्ति बेचनी या खरीदनी है तो टूटे-फुटे, बिना सजे घर, जिसकी तरफ अभी तक ध्यान नहीं दिया गया है और जिसे भाग्य के सहारे छोड़ा हुआ है, का मूल्य सजे-सजाए घर से अधिक मिलेगा। इसका कारण ये है कि बिना सजा घर, खरीदने वाले के अहं को शान्त करता है क्योंकि वह इसे अपनी इच्छानुसार सजाना चाहेगा। इस प्रकार व्यक्तिगत चयन इस बात का मापदण्ड बन जाता है कि आपके लिए सर्वोत्तम क्या है। परन्तु यह स्वतन्त्रता अहं के खेल पर आधारित है और यदि कोई उद्यमी चतुराई पूर्वक यह देख सके कि दूरदर्शन, समाचारपत्र आदि में या खिड़की प्रदर्शन (Window display) द्वारा विज्ञापन करके वह खरीदारों को मूर्ख बना सकता है तो बहुत कम समय में आसानी से वह बेशुमार धन एकत्र कर सकता है।

उद्यमी यदि राजनीतिज्ञ भी हो तो वह सत्ता में बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति बन सकता है- केवल इसीलिए कि उसके पास तीक्ष्ण मस्तिष्क है और

कामयाब होने की हर विधि वह जानता है। जबकि उपभोक्ता समझता है कि उसे चयन की महान स्वतन्त्रता है। वह सोचता है, ''मैं जो चाहे छाँट सकता हूँ, मैं बहुत बड़ा स्वामी हूँ, मुझे चयन करने का अधिकार है।'' परन्तु शनैः शनैः चयन की इसी स्वतन्त्रता में वह खो जाता है और भ्रमित हो जाता है क्योंकि चयन की इस स्वतन्त्रता की तीखी धार पर बैठकर वह बनावटी जीवन से जी रहा है। अपनी गहराइयों में जाकर वह समझ नहीं पाता कि उसे वास्तव में किस चीज़ की ज़रूरत है। वह केवल जादुई शब्द बोलता है: ''मुझे ये पसन्द है।'' उसे लगता है कि उसकी एक पहचान है, एक विशेष व्यक्तित्व है जिसके माध्यम से वह अपनी इच्छा को बलपूर्वक कह सकता है और विश्व में अपने अस्तित्व की अभिपुष्टि कर सकता है।

व्यक्ति जब उद्यमियों के हाथों में खेलता है तो वह अपनी सारी मेहनत और शक्ति उपभोक्तावाद में बेकार करता है। हम पृथ्वी माँ को अपवित्र करने लगते हैं और पर्यावरण की समस्याएं उत्पन्न कर लेते हैं। दुर्भाग्यवश मनुष्य जितना चाहे स्वयं को ऊँचा मान ले वह भौतिकतत्व का सृजन नहीं कर सकता। भौतिक तत्व से वह जीवन का भी सृजन नहीं कर सकता। निर्जीव पदार्थों से वह केवल निर्जीव वस्तुओं की रचना कर सकता है। इस प्रकार नए फैशन, नई चीजें, नए अहं की रचना करने की उन्मत्त और निरन्तर दौड़ में वे पृथ्वी माँ को खाली करते हैं। व्यक्ति को उतना ही खरीदना चाहिए जितना आवश्यक है। रोज़मर्रा के उपयोग के लिए भी सारवान, विवेकशील एवं कलात्मक वस्तुएं ही खरीदनी चाहिएं।

मिथ्या अभिमानवश कुछ महिलाएं कटारी की नोक सम तीखी एड़ी वाले ऐसे जूते पहनती हैं जिनसे वे छः इंच लम्बी दिखाई दें। रुककर वो ये भी नहीं सोचतीं कि इस प्रकार का दिखावा करने के स्वभाव के कारण उनके टखनों में मोच आ जाएगी या उन्हें साइएटिका (Sciatica) या रीढ़ से सम्बन्धित ऐसे कष्ट हो जाएंगे जिनके कारण न तो वे चल सकें न बिस्तर से

उतरकर इन चीज़ों का चयन कर सकें। जब आप अनैतिक उद्यमियों के हाथ में पड़कर अपना सर्वनाश कर रहे हैं तो यह विश्वास करने में तनिक भी विवेक नहीं है कि आप इच्छानुसार चयन करने के लिए या कार्य करने के लिए स्वतन्त्र हैं।

आजकल उद्यमियों के पास उपभोक्ताओं के लिए समस्या उत्पन्न करने का एक और तरीका भी है। पश्चिमी देशों में बहुत कम लोग ऐसे हैं जो सोने-चाँदी की चीज़ें खरीदने में समर्थ हैं, परन्तु हैरानी की बात है कि विकासशील देशों में सभी घरों में कुछ न कुछ सोने चाँदी का है। इसका जो कारण मुझे समझ आया है वह ये है कि पश्चिमी देशों में हर चीज़ को नकद मूल्य से तोला जाता है। अतः जो भी कुछ आप खरीदते हैं वह पुनर्विक्रय के काबिल होना चाहिए। चाँदी का एक चम्मच भी आप खरीदते हैं तो इस पर हॉलमार्क होना जरूरी है। यदि ये बिना हॉलमार्क है तो पुनः इसे बेचा नहीं जा सकता। इस प्रकार चम्मच को उपयोग के लिए तथा पुनर्विक्रय के लिए खरीदा जाता है। कभी ये नहीं सोचा जाता कि ''यह चम्मच मेरे बच्चों तथा नाती पोतों तक पहुँचेगा।'' हॉलमार्क बहुत आवश्यक है, किसी अन्य प्रकार की चाँदी आपको नहीं मिल सकती। उदाहरण के रूप में चाँदी में यदि कुछ अन्य चीज़ मिला दी जाए तो यह कम दामों में मिल सकती है, परन्तु ऐसी चीज़ बाजार में बिकेगी नहीं।

इसके विपरीत, जहाँ तक सोने का सम्बन्ध है, पश्चिमी देशों में सोना बहुत ही निम्नतम गुणवत्ता का होता है-नौ कैरेट शुद्धता का। गहनों में सोना तो बस नाम मात्र का होता है। परन्तु हॉल मार्क लगा होने के कारण आप इसको पुनर्विक्रय कर सकते हैं। जबकि चीन और भारत जैसे विकासशील देशों में लोग बाईस से चौबीस कैरेट शुद्धता का सोना उपयोग करते हैं ताकि आभूषणों में सोना पर्याप्त मात्रा में हो। कठिनाई के दिनों में, कलात्मकता के कारण यदि आभूषण न भी बेचे जा सकें तो भी कम से कम उनमें शुद्ध सोना

तो हो जो बिक सके या जिसे गिरवी रखकर बाद में छुड़ा लिया जाए। तो विरोधाभास ये है कि वस्तु को खरीदते हुए आपको ज्ञान होना चाहिए कि उसका वास्तविक मूल्य क्या होना चाहिए। यदि ये चाँदी है तो आपको यह जानना आवश्यक है कि इसमें कितनी मिलावट है। इसमें चाँदी की मात्रा से ही इसका वास्तविक मूल्य आँका जा सकता है। अतः खरीदते और बेचते हुए तत्व की शुद्धता का ध्यान रखा जाना महत्वपूर्ण है। परन्तु विरोधाभासी चिन्हों (Paradoxical Markings as Hall Mark) के कारण व्यक्ति नहीं समझ पाता कि कौन सी चीज़ खरीदी जानी चाहिए और कौन सी नहीं। पारम्परिक विवेक जानता है कि अच्छे हृदय के लिए चाँदी महत्वपूर्ण है क्योंकि चाँदी हृदय को ठीक बनाए रखने में सहायक है और सोना इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह बदरंग नहीं होता। प्रतिदिन के उपयोग में यदि थोड़ा सा सोना पहना जाए तो सूक्ष्म ढंग से यह अच्छे परिणाम प्राप्त करने में आपकी सहायता करता है। इसकी चर्चा मैं बाद में करूंगी।

अतः पारम्परिक संस्कृतियों में, जो कि आधुनिकतावाद तथा उपभोक्तावाद के कुप्रभाव से बच गई हैं, द्रव्य के सूक्ष्मतत्वों का ज्ञान तथा सम्मान है। इन तथाकथित भौतिकवादी समाजों में पदार्थ के सारतत्व का सम्मान न होना एक विरोधाभास (Paradox) है।

पश्चिम में आप यदि किसी आधुनिक घर में घुसेंगे तो आपको बेशुमार चीज़ें मिलेंगी, उनमें से बहुत सी प्लास्टिक की होंगी। जिस सोफे पर आप बैठेंगे, हो सकता है वह भी प्लास्टिक हो, जिस मेज पर आप खाना खाएंगे वह भी प्लास्टिक की बनी हो सकती है। खिड़कियों की चौखटों को आप यदि छुएंगे तो हो सकता है यह भी प्लास्टिक की बनी हों। प्राकृतिक पदार्थों, जैसे कपड़ा या शीशा या परमात्मा द्वारा बनाया गया कोई अन्य पदार्थ, यदि प्लास्टिक के साथ उपयोग किया जाए तो, प्लास्टिक से बनी वस्तुओं में प्राकृतिक पदार्थों में प्रवेश करने की विलक्षण क्षमता होती है। यह शक्ति

इतनी अधिक होती है कि दूषित होकर प्राकृतिक पदार्थ अपना महत्व खो देते हैं। सस्ता होने के कारण आप प्लास्टिक खरीदते चले जाते हैं और सभी घरों में प्लास्टिक तथा प्लास्टिक मिश्रित पदार्थों से बनी बहुत सी त्यागने योग्य चीज़ें होती हैं। यहाँ तक कि खाने की प्लेटें भी प्लास्टिक की होती हैं। पीतल से बनी बढ़िया प्लेटें खरीदना उन्हें क्यों नहीं भाता? प्लास्टिक प्लेटों की बेशुमार विविधता के स्थान पर हाथ से बनी कुछ वस्तुएं क्यों न इस्तेमाल की जायें? पृथ्वी के निस्सार पदार्थों से मशीनों द्वारा प्लास्टिक बनाया जाता है, अत: इसमें हमारे विनाश के सभी तत्व विद्यमान हैं।

हस्तकला की कोई वस्तु यदि आपके पास हो और बहुत हंगामा किए बिना यदि आप इसका उपयोग करते हैं तो इसका और इसकी उपयोगिता का आनन्द ले सकते हैं। आपके पास यदि अच्छी बनी हुई थोड़ी सी सुन्दर प्लेटें हों तो उनसे आपको बहुत संतोष मिलता है और अधिक प्लेटें खरीदने पर आप अपना समय व्यर्थ नहीं करते। तब आप वास्तव में स्वतन्त्र व्यक्ति होते हैं। परन्तु यदि आप फैशन के पीछे भागते हैं तो रोज़ खरीददारी में अपना समय बर्बाद करेंगे। किसी के घर पर जाकर आप कहेंगे, ''ओह! उसके पास फलां वस्तु है, वह बड़ी अच्छी है।'' बाहर जाकर आप वही चीज़ खरीदेंगे क्योंकि आपको वह चीज़ भा गई थी। परन्तु कौन किसके साथ खिलवाड़ कर रहा है? चाबी कौन घुमा रहा है? नि:सन्देह उद्यमी, वे आपको तथा आपके बच्चों को भी बिगाड़ रहे हैं। बच्चों के कार्यक्रमों के शिखर पर उनके प्रलोभित करने वाले विज्ञापन आते हैं: ''यह अच्छी चीज़ बनाई गई है। गुड़ियाँ जिनका जन्मदिन होता है, रीछ जिनकी वंशावली होती है।'' परन्तु ये सारी चीजें.तो केवल मशीनों को चालू रखने के लिए हैं।

चयन करने और मन चाहे ढंग से अपना धन खर्च करने के अपने अधिकार को उपयोग करके हम केवल स्वार्थी उद्यमियों के हाथों में खेल रहे हैं। सदैव याद रखें कि वे आपको आपसे भी अधिक जानते हैं। व्यक्ति को

याद रखना है कि मशीनें हमारी सेवा के लिए बनी हैं, हम मशीनों की सेवा के लिए नहीं बने। मशीनों से उपभोक्ता वस्तुओं के अनावश्यक उत्पादन का कारण हमारी वास्तविक आवश्यकताएं नहीं। इसके विपरीत ऐसी वस्तुओं के अनावश्यक उत्पादन के कारण हम कष्ट उठाते हैं क्योंकि इनसे पृथ्वी माँ के संसाधन बर्बाद होते हैं और कड़ी मेहनत से कमाया गया हमारा धन भी बर्बाद होता है, क्योंकि इसे हम मजबूरन उन चीज़ों पर खर्च करते हैं जो न हमारे लिए आवश्यक हैं और न ही अच्छी। मैंने बहुत से घर ऐसे कबाड़े से भरे हुए देखे हैं और इस कबाड़े को इकट्ठा करने के लिए जिन मालिकों ने कठोर परिश्रम किया था वे हृदय रोग से पीड़ित हैं।

मिथ्या एवं असंगत चीज़ों का चयन करने की योग्यता को स्वतन्त्रता मान बैठना केवल उन अज्ञानी लोगों का कार्य है जो, स्वतन्त्रता का छल रूप धारण किए प्रतिदिन नए प्रलोभन लाने वाली, निहित शक्तियों को देख पाने में असमर्थ हैं। नि:सन्देह व्यक्ति को कार्य करने की तथा स्वतन्त्रता की अभिव्यक्ति करने की, स्वतन्त्रता होनी चाहिए, परन्तु यह स्वतन्त्रता कभी भी अनियन्त्रित नहीं होनी चाहिए। आपको समझ होनी चाहिए कि आपको क्या करना है और कहाँ रुकना है। आपकी कार में यदि गतिवर्धक (Accelerator) तो है परन्तु ब्रेक नहीं है तो चालक का क्या अंजाम होगा? इसी प्रकार आपके पास यदि स्वतन्त्रता है तो आपको यह ज्ञान भी होना चाहिए कि आप स्वतन्त्रता के इस सनकीपन को एक बिन्दु पर रोकने के लिए भी स्वतन्त्र हैं।

साम्यवादी प्रशासन में रहने वाले लोग नियन्त्रित हैं परन्तु वह नियन्त्रण उन पर थोपा गया है। उन्हें जब आज़ाद किया जाएगा तो आप देखेंगे कि उनकी अपूर्ण इच्छाएं स्वतन्त्र देशों के नागरिकों की इच्छाओं से कहीं अधिक तेज़ी से भड़क उठेंगी। अत: यह नियन्त्रण आन्तरिक होना चाहिए और उसके लिए आध्यात्मिक जागृति होना आवश्यक है, अर्थात आत्मा का विवेक

आपके चित्त में आना चाहिए। किसी ज्ञानी या सहजयोगी से यदि आप पूछें कि ''आपको क्या अच्छा लगता है? क्या आपको गर्म चीज़ें अच्छी लगती है?'' वह कहेगा:''वास्तव में मुझे कुछ भी अच्छा या बुरा नहीं लगता। सिवाए अति की अवस्था के, जो भी कुछ उपलब्ध हो मैं उसका आनन्द लेता हूँ। चीजों.के चयन में कौन समय बर्बाद करेगा? जो भी कुछ उपलब्ध है उसका आनन्द लो।'' कोई चीज़ यदि बहुत अधिक गर्म, खट्टी या बहुत अधिक ठण्डी होगी तो इसे बहुत थोड़ा सा खाएगा क्योंकि यह अति की सीमा तक पहुँच गई है।

दुर्भाग्यवश चयन की यह स्वतन्त्रता उग्र रूप धारण करती चली जा रही है (विवाह आदि के मामलों में भी)। अहं द्वारा बढ़ाई जाने वाली चयन की स्वतन्त्रता की इच्छा को आत्मा द्वारा नियन्त्रित किया जा सकता है क्योंकि आत्मा का विवेक जब चित्त में आता है तो यह आपको अपने अनुभव के शक्तिशाली सौन्दर्यबोधी आयाम को समझने की योग्यता प्रदान करता है। तब अहं को भौतिक पदार्थों के लोभ की अभिव्यक्ति करने की आज्ञा देने के स्थान पर यह चित्त भौतिक पदार्थों के दिव्य सौन्दर्य का आनन्द लेने लगता है। आत्म-साक्षात्कारी व्यक्ति जानता है कि जब वह किसी भौतिक चीज़ का उपहार किसी अन्य व्यक्ति को देता है तो पदार्थ (Matter) उसे प्रेम-अभिव्यक्ति करने का अद्‌भुत मार्ग प्रदान करता है। जब आप किसी सुन्दर चीज़ को देखते हैं तो आपमें आनन्द-भावना प्रेरित होती है, कि यह वस्तु आपके अमुक प्रिय व्यक्ति को अच्छी लगेगी। उदाहरण के रूप में एक बार एक व्यक्ति किसी सहजयोगी के साथ दुकान पर गया और उसे कोई चीज़ बहुत अच्छी लगी-एक कलाकृति। परन्तु उस समय धनाभाव के कारण वह उसे खरीद न सका। उसका सहजयोगी मित्र बाद में उस दुकान से वह कलाकृति खरीद लाया। कुछ समय इसे अपने पास रखा और अपने उसी मित्र के जन्मदिन के अवसर पर वह कलाकृति उसे भेंट की। इस भावना और प्रेम

की इस गहन अभिव्यक्ति ने दूसरे व्यक्ति पर जादू कर दिया और यह जानकर कि इस कलाकृति के साथ कितनी सुन्दर भावना जुड़ी है, उसकी खुशी दुगुनी हो गई।

तो एक ओर तो आत्मा के दिव्य विवेक में चित्त का स्थित होना आपके लालच, स्वार्थपरता, स्वामित्वभाव और असंतुष्ट मस्तिष्क को नियंत्रित करता है और दूसरी ओर खरीदे जा सकने वाले भौतिक पदार्थ से किसी अन्य व्यक्ति को प्रसन्न कर सकने का ज्ञान अचानक आपके अन्दर उदित हो जाता है और अपने प्रेम की अभिव्यक्ति तथा दूसरे व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए चयन की आपकी स्वतन्त्रता का उपयोग करने का क्षेम भी यह आपको प्रदान करता है।

अध्याय 3

प्रजातन्त्र
(Democracy)

अब्राहम लिंकन के महान आगमन ने अमरीका में प्रजातन्त्र के अद्वितीय, सच्चे सिद्धान्त को लाकर इसे वास्तविकता प्रदान की। उन्होंने विशेष रूप से कहा कि सरकार ''लोगों की'' (of the people) होनी चाहिए। फिर भी आज हम देखते हैं कि प्रजातन्त्र कहलाने वाले अधिकतर देश राक्षसतन्त्र (demon-o-cracies) हैं। यहाँ पर धनलोलुप या सत्तालोलुप लोगों का शासन है। आधुनिकयुग में प्रजातन्त्र का मुख्य लक्ष्य-'जनहित'-पूर्णत: लुप्त हो गया है। सत्तारूढ़ लोगों को जनहित की बिल्कुल भी चिन्ता नहीं है। बहुत से लोगों ने दावा किया है, और सम्भवत: वे बिल्कुल गलत भी नहीं हैं, कि आजकल अमेरिका में धनवान लोगों, बड़े-बड़े व्यापारियों या सिनेमा के अभिनेता-अभिनेत्रियों का राज है। बाकी के विकसित देशों में भी आजकल बैंकों, उद्यमियों, समाचार माध्यमों तथा अपराधी वर्ग का शासन है।

इस प्रकार महान सन्तों और पैगम्बरों के सिद्धान्तों की तरह से अब्राहम लिंकन का सिद्धान्त भी पूर्णत: विकृत हो गया है क्योंकि प्रजातन्त्र ने हमारे धनलोलुप आधुनिक समाज का पतित रूप धारण कर लिया है। आरम्भ में जिन उदार सिद्धान्तों की घोषणा की गई थी, वे सब प्रजातन्त्र की समस्याओं को सुलझाने के लिए विश्व भर में बुलाई सभाओं की हिंसात्मक एवं वादविवादपूर्ण धुंध में खो गए हैं। उच्च चारित्रिक मूल्यों की स्थापना, जो कि मूलत: सभी प्रजातान्त्रिक देशों की मुख्य प्राथमिकता थी, अब उनकी कार्य सूची से पूर्णत: गायब है।

उदाहरण के रूप में महान स्वतन्त्र देश अमेरिका अब बिना किसी

हिचकिचाहट या पश्चाताप के वर्तमान राष्ट्रपति की नीतियों के पक्षधर किसी भी देश का पक्ष लेता है। ऐसा तब भी होता है जबकि उस देश में किसी तानाशाह का राज्य हो, जिसके मन में प्रजातन्त्र के प्रति तनिक सा भी सम्मान न हो। उदाहरणत: प्रजातन्त्र कहलाने वाले अमरीका तथा यूरोपियन देशों ने हथियार बनाकर सद्दाम हुसैन प्रशासित इराक को दिए। इस प्रकार बहुत से प्रजातन्त्र उसे शक्तिशाली तथा युद्धोन्मत्त बनाने में जुट गए क्योंकि ऐसा करना उनकी नीतियों के अनुकूल था।

वास्तविक प्रजातन्त्र केवल तभी सम्भव है जब लोग प्रजातान्त्रिक सिद्धान्तों को ग्रहण कर लें तथा सर्वोपरि मान कर चारित्रिक मूल्यों का सम्मान करें। सत्ता के भूखे लोग जो किसी भी प्रकार से धनार्जन करना चाहते हैं उनमें वांछित प्रजातान्त्रिक सिद्धान्त नहीं हो सकते। लालची, चरित्रहीन तथा स्वार्थी लोग प्रजातन्त्र नहीं चला सकते। व्यभिचारी, राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाते हुए मदिरापान करने वाले लोग वास्तव में अपने देश तथा पूरे विश्व के लिए समस्याओं का स्रोत होते हैं।

राजनीतिज्ञों को जन-कल्याण के प्रति समर्पित होना चाहिए, परन्तु कई बार राजनीति शतरंज के खेल की तरह बन जाती है जिसमें जहाँ तक हो सके गद्दी पर बने रहना मुख्य लक्ष्य बन जाता है। राजनीतिज्ञ तब तक अपनी कुर्सी से चिपके रहते हैं जब तक उन्हें हार मानने के लिए विवश न कर दिया जाए। जीवन की अन्तिम सांस तक वे राजपद में डूबे रहना चाहते हैं। केवल उसी अवस्था में वे पद त्यागते हैं जब उनका एक पैर कब्र में होता है। ऐसे घटिया लोग वास्तविक प्रजातन्त्र के लिए कुछ नहीं कर सकते। प्रजातन्त्र के लिए अत्यन्त श्रेष्ठ, सम्माननीय, विद्वान और करुणामय स्वप्न-दृष्टाओं की आवश्यकता होती है जिनका लक्ष्य लोक-कल्याण हो तथा जो प्रजातन्त्र के सिद्धान्तों के प्रति पूर्ण समर्पित हों।

ऐसा प्रजातान्त्रिक देश कहाँ है जिसके शासकों का इतना उच्च चरित्र हो जो ऐसे स्वच्छ एवं धर्मपरायण प्रजातन्त्र को कायम रख सकें जिसका स्वप्न अब्राहम लिंकन ने देखा था? तृतीय विश्व में जहाँ राजनीतिज्ञ इन महान विकसित देशों के उदाहरण की धार्मिकतापूर्वक नकल करते हैं, वे प्रजातन्त्र की मूल्य प्रणाली का और भी अधिक अपमान करते हैं। भारत में, उदाहरण के रूप में, सत्तारूढ़ लोग गरीबी को नहीं हटाना चाहते क्योंकि थोड़ा सा पैसा देकर वे गरीब लोगों के वोट खरीद सकते हैं या वे किसी अल्पसंख्यक समूह का पक्ष लेकर वोट बैंक के रूप में उसका दुरुपयोग कर सकते हैं। इस प्रकार इन विकासशील देशों में गरीबी वास्तव में इस प्रकार के राक्षसतन्त्र (Demonocracy) को बनाए रखने में सहायता करती है।

विश्व में कहीं भी ऐसी प्रजातान्त्रिक सरकार नहीं है जो ''लोगों की, लोगों के लिए और लोगों के द्वारा'' (of the people, for the people and by the people) हो। वास्तविकता में यह देखने को मिलता है कि सत्तारूढ़ लोगों में न तो चारित्रिक मूल्यों के प्रति सम्मान है और न ही उन लोगों के हित की कोई चिन्ता जिनकी उन्हें सेवा करनी चाहिए। राजनीतिक शक्ति को पूँजी निवेश की तरह से माना जाता है जिसका लक्ष्य अधिक से अधिक धन उत्पन्न करना होता है, जैसे व्यापार में। किसी भी अन्य सन्त की तरह से अब्राहम लिंकन की दृष्टि सम्पूर्ण मूल्यों पर थी। वे न जानते थे कि लोग अभी तक प्रजातन्त्र जैसे महान सिद्धान्त के लिए तैयार नहीं हैं और उनमें से अधिकतर सामूहिक कल्याण के प्रति समर्पण के सीधे एवं संकीर्ण मार्ग से भटक कर स्वार्थपरता की सुगम एवं विशाल सड़क अपना लेंगे! सत्ता में चुने गए लोगों को मूलत: जनहित की चिन्ता होनी चाहिए और सेवाभाव से कार्य करने का विवेक उनमें होना चाहिए।

दार्शनिक राजा (जैसा सुकरात ने कहा है) के रूप में हितैषी शासक, सरकार का मुखिया बनने के लिए आदर्श व्यक्ति है। ऐसे व्यक्ति को अत्यन्त

विवेकशील, निर्लिप्त, काम, सत्ता और धनलोलुपता से मुक्त होना चाहिए। हाल ही में ऐसे कई लोग हो चुके हैं जैसे महात्मा गाँधी, अतातुर्क केमाल पासा, अनवर अल सादत, लाल बहादुर शास्त्री, होचिमिन्ह, मार्टिन लूथर किंग, नेल्सन मंडेला, दाग हैमर्स जिल्ड, मुजीबुर्रहमान तथा कई अन्य।

आज के युग में राजनीतिक विवेक के विषय में बात करना बड़ा अजीब लगता है। ऐसा लगता है कि विवेक का प्रश्न ही नहीं रहा क्योंकि तार्किकता ने बहुत समय से विवेक का स्थान ले लिया है। केवल तर्कयुक्ति के सीमित रेखीय तर्क पर निर्भर करते हुए सत्तारूढ़ लोगों के कार्यों को न्यायोचित ठहराने के लिए पूर्णतः अहंकेन्द्रित समाधान सुझाए जाते हैं। (निःसन्देह ये समाधान सभी सत्तारूढ़ अहंकेन्द्रित लोगों को अच्छे लगते हैं)। इस प्रकार नकारात्मक विचारों का भाईचारा बना हुआ है और ये लोग संसदों, विधानसभाओं तथा राज्य सभाओं में एक दूसरे का साथ देते हैं। यही कारण है कि लोगों के उत्थान के लिए वास्तव में उपयोगी कोई कार्य नहीं हो पाता। इसके विपरीत इन प्रजातन्त्र देशों के राजनीतिज्ञ अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए या अपने निरंकुश विचार अन्य लोगों पर थोपने के लिए, सभी उपलब्ध साधन लगा देते हैं।

प्रजातन्त्र में स्वतन्त्रता के नाम पर मिला ये लाइसेंस उन्हें अपनी शक्ति का दुरुपयोग की सीमा तक इस्तेमाल करने का अधिकार दे देता है। अपनी स्वतन्त्रता को ये लोग सभी प्राकृतिक सीमाओं एवं बन्धनों से परे ले गए हैं। इस प्रकार ऐसे राजनीतिज्ञों ने न केवल बेशुमार धन एकत्र करके स्वयं को उन लोगों से दूर कर लिया है जिनकी उन्हें सेवा करनी चाहिए थी परन्तु उन्हें बाज़ार में महान वैभवशाली कहकर भी पुकारा जाने लगा है। इतनी महान आशाओं के साथ चुने गए इन लोगों के बारे में सुनने से व्यक्ति का सिर शर्म से झुक जाता है।

अब लेखा-जोखा करने का समय आ गया है और उनकी अपराधिता

का पर्दाफाश हो रहा है। यह प्रजातन्त्र और इनके राजनीतिज्ञ सम्भवत: अब अपने देशों में ध्रुवत्व (Polarity) की अवस्था तक पहुँच गए हैं और कुछ बाकी के शनै: शनै: इसकी ओर बढ़ रहे हैं। राजनीतिज्ञ आएंगे और जाएंगे परन्तु उनका स्थान लेने के लिए अन्य लोग सदैव लाइन लगाए खड़े हैं। थोड़े से वर्षों के पश्चात् नए लोगों के सत्ता में आने को रोकने का कोई मार्ग नज़र नहीं आता और ये लोग निश्चित रूप से पहले सत्तारूढ़ लोगों से भी कहीं बद्तर होते हैं। इस प्रकार अधिकतर प्रजातान्त्रिक देश आपसी रज़ामंदी से पूर्णत: अधिकारवादी, जाति एवं भौतिकवादी हो गए हैं। जो लोग ऐसा नहीं कर पाए हैं वे भी ऐसा बनने के लिए प्रयत्नशील हैं। धन ने सच्चे प्रजातन्त्र के सिद्धान्त को पूरी तरह से गौण कर दिया है। जिनके पास धन है वे बिना जनहित की भावना के और बिना प्रजातन्त्र की मूल्य प्रणाली के प्रति सम्मान के शासन कर सकते हैं। आसानी से देखा जा सकता है कि जब पैसा परमात्मा बन जाता है तो सभी चारित्रिक मूल्य एक ओर धकेल दिए जाते हैं।

प्रजातन्त्र में, नि:सन्देह लोगों के मत महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के रूप में यदि महिलाएं बहुसंख्या में हों तो उनके मत विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाते हैं और सत्ता में आने के इच्छुक राजनीतिज्ञों की नीतियाँ निर्वाचन क्षेत्र के उस समूह के अहंवादी विचारों के अनुरूप बनाई जाएंगी। इस प्रकार स्विटज़रलैंड जैसी ठण्डी जलवायु में भी महिलाओं को अर्धनग्न घूमने का कानूनी अधिकार है जबकि, व्यवहार विवेक तथा शालीनता की माँग ये है कि वे अपने शरीर ढक कर रखें। फ्रांस जैसे अन्य देशों में महिलाओं को गर्वपूर्वक चरित्रहीन व्यवहार करने का अधिकार है-जैसे वेश्यावृति व्यापार करने का अधिकार और कानून इसके लिए उनका सहायक एवं पक्षधर है। निर्वाचन क्षेत्र में यदि उनकी बहुसंख्या होगी तो न तो उन्हें कोई प्रभावित कर पाएगा और न ही नियन्त्रित। वे स्वयं कानून बनाती हैं। जिसे भी मतदान करने का अधिकार प्राप्त हो जाता है वह महत्वपूर्ण व्यक्ति बन जाता है जिसे राजनीतिज्ञ

चापलूसी करके रिझाना चाहते हैं।

सुकरात का आदर्श-जनहित के लिए लोकसेवा-का आज कोई अस्तित्व नहीं है। इसके विपरीत इस आदर्श की आलोचना करते हुए लोग कहते हैं कि सुकरात व्यवहारिक नहीं था। नि:सन्देह सभी महान सन्त और पैगम्बर आदर्शवादी थे, व्यवहारिक नहीं। आज के अधिकतर प्रजातन्त्र उन लोगों के कब्ज़े में हैं जिनके पास सम्माननीय या चारित्रिक विचारों का पूर्ण अभाव है। बहुत कम समय में वे जान जाते हैं कि सत्ता उन्हें वैभव दे सकती है और यह धन-शक्ति उनके दुष्कर्मों पर सफेदी पोत कर उन्हें धुंधला करके उनके संदिग्ध व्यवहार को छुपा सकती है। दुर्भाग्यवश यह झूठा लाइसेंस अब उनके भेजों में,एक पक्के विचार की तरह बैठ गया है और परमात्मा से डरे बिना वे चरित्रहीन व्यवहार किए चले जा रहे हैं और इस प्रकार प्रजातन्त्र की सम्पूर्ण मूल्यप्रणाली को क्रूरतापूर्वक नष्ट कर रहे हैं। जैसे इटली में हुआ, वे ऐसा वर्षों तक कर सकते हैं, जब तक कि ध्रुवत्व का नियम या दैवी प्रतिशोध उनका पर्दाफाश नहीं कर देता। परन्तु ऐसा होने से पूर्व, दुर्भाग्यवश, ऐसे शासक, शासित लोगों के लिए आदर्श बन जाते हैं और शनै:शनै: रोज़मर्रा के जीवन में चारित्रिक पतन आरम्भ होकर एक पतनोन्मुख विनाश की ओर बढ़ते हुए प्रजातान्त्रिक समाज की सृष्टि करता है।

जैसा मैंने कहा जनहित के कार्य करने के लिए चुने गए लोग आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति होने चाहिएं जिनके आचार विचार अब्राहम लिंकन जैसे हों तथा जिनके चारित्रिक मूल्य महात्मा गाँधी सम हों। सम्भवत: इन आधुनिक नेताओं के मानव द्वेषी राजनीतिक कौशल का लक्ष्य ये है कि लोग निजी जीवन में स्वयं को बर्बाद कर सकें। सरकार लोगों के निजी जीवन में हस्तक्षेप क्यों करे? जो भी व्यक्ति निजी जीवन से छेड़-छाड़ करने की कोशिश करेगा उसे लोगों के वोट नहीं मिलेंगे। आधुनिक राजनीतिज्ञ कहते हैं कि लोग यदि स्वयं को नष्ट करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसा करने का पूर्ण

अधिकार एवं स्वतन्त्रता है। तो ऐसे राजनीतिक विचारों से क्यों छेड़छाड़ की जाए? प्रजातन्त्र एवं साम्यवादी देशों में एक ही प्रकार की नीति है। जब तक मतदाता सुखप्रद गद्दियों पर सत्तारूढ़ लोगों को निकाल फेंकने के लिए प्रयत्न नहीं करते तब तक ये राजनीतिज्ञ अत्यन्त विश्वस्त हैं (ये राजनीतिज्ञ अपना उल्लू सीधा करने के लिए पदों से चिपके हुए हैं)।

धन हथियाने की राक्षसी गतिविधियों के परिणामस्वरूप बहुत सी अन्य भयानक गतिविधियाँ शुरु हो जाती हैं। उदाहरण के रूप में फ्रांस का अलिखित कानून, जिसके विषय में पहले भी बताया है, एक घरेलू महिला को अंशकालिक वेश्या बनने की इजाज़त देता है। इस बात को तर्कसंगत ठहराया जा सकता है कि महिला को किसी भी प्रकार से धनार्जन करने का पूर्ण अधिकार है।

ये भी कहा जाता है कि फ्रांस रोमन कैथोलिक चर्च की सबसे बड़ी बेटी है। इस प्रकार की चरित्रहीनता को सहन करने का, चाहे तर्कयुक्ति द्वारा इसे न्यायोचित ही क्यों न ठहरा दिया जाए, हमारे पास क्या जवाब है? सम्भवत: इसका उत्तर ये है कि कानून की व्याख्या करते हुए न्यायालयों को धर्म का बिल्कुल भी ज्ञान नहीं होता। आँखें बन्द करके वे फ्रॉयड के सिद्धान्तों का अनुसरण किए चले जाते हैं तथा सम्मानपूर्वक मनोविश्लेषकों की राय को स्वीकार करते हैं। यद्यपि फ्रॉयड के सिद्धान्तों का पूरी तरह से पर्दाफाश हो गया है और इनकी भर्त्सना हुई है फिर भी मानसिक रोगियों के अपराधों का निर्णय करते हुए अधिकतर प्रजातान्त्रिक देशों में इन सिद्धान्तों को आधार बनाया जा रहा है। विकसित देशों में सर्वसाधारण लोगों के दृष्टिकोण पर फ्रॉयड का सूक्ष्म प्रभाव अत्यन्त गहन और सदैव विध्वंसक है। यह वर्णन भी नहीं किया जा सकता है कि फ्रॉयड के सिद्धान्तों ने पूरे पाश्चात्य समाज की कितनी हानि की है! सबसे बुरी बात तो ये है कि फ्रॉयड के सिद्धान्त को वेद-वाक्य (Gospel Truth) मान कर लोगों ने आत्मसम्मान की भावना खो दी है।

अब समाचार माध्यमों (Media) के, विशेषतौर पर फिल्मों, दूरदर्शन, वीडियो के निरन्तर प्रभाव के कारण लोग लज्जा तथा पावित्र्य की स्वाभाविक भावनाओं को या तो आकस्मिक रूप से अनदेखा कर रहे हैं या उन्हें बिल्कुल नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं। पारम्परिक समाजों में लज्जा तथा पावित्र्य ही नैतिकता एवं पारिवारिक तथा निजी सुख शान्ति का आधार थे। विकासशील देश भी ये सारे विध्वंसक तरीके अपनाना चाहते हैं क्योंकि कुछ बुद्धिवादियों का ये कहना है कि यदि आपको आर्थिक विकास की आवश्यकता है जो आपको आँखे बन्द करके यह पागल संस्कृति (Go-Go Culture) अपनानी पड़ेगी।

उदाहरण के रूप में, हाल ही में, मैंने समाचार पत्रों में एक लड़की के विषय में समाचार पढ़ा जो अभी व्यस्क भी नहीं हुई परन्तु कैबरे और डिस्को आदि में जाती थी। अचानक माता-पिता को पता चला कि वह वेश्या-सम हो गई है। ये जानकर उन्हें कितना कठोर सदमा लगा होगा? जब वह अच्छा खासा कमाकर माता-पिता को अपना खर्च दे रही थी और जब तक कानून के दायरे में था तब वे विरोध न कर सके। बाद में उस लड़की की किसी गुप्त (यौन-प्रसारित) रोग के कारण 21 वर्ष की आयु में मृत्यु हो गई। गरीब देशों में इस तरह के आचरण को सैद्धान्तिक रूप से तो न्यायोचित ठहराया जा सकता है परन्तु वास्तव में गरीब देशों में माता-पिता का अपने बच्चों पर चरित्र के मामले में कहीं अधिक नियन्त्रण होता है। उनके समाज की नैतिक एवं पारम्परिक मूल्यों में काफ़ी निष्ठा होती है, सम्भवत: इसलिए कि परमात्मा की शक्ति में उनका सच्चा विश्वास होता है और या इसलिए कि अभी तक वे धन के मायाजाल में नहीं फँसे।

जिस प्रकार हम समाचार पत्रों में पढ़ते हैं, सम्पन्न देशों में शराब और सिगरेट पीने की आज्ञा देकर माता-पिता बच्चों को नष्ट करने की योजना बनाते हैं। अत्यन्त छोटी आयु में बच्चों को गर्भ निरोधक उपायों के बारे में शिक्षा देकर माता-पिता उनके अन्दर स्वच्छन्द यौनप्रवृत्ति को प्रचण्ड करते हैं

और ऐसी फिल्में तथा वीडियो देखने की उन्हें आज्ञा दे देते हैं जिनका लक्ष्य उन सभी पावन चीज़ों को नष्ट करना है जिनका मानव स्वाभाविक रूप से सम्मान करता है। ऐसे समाजों में न तो परिपक्वता का विकास होता है और न ही सम्मान।

वैभवशाली परिवारों में स्थिति और भी बद्तर है। मात्र स्वयं को नष्ट करने के लिए युवा लोग अपनी स्वतन्त्रता का आनन्द उठाना चाहते हैं। माता-पिता का या राज्य का कोई प्रभावशाली नियन्त्रण नहीं हैं कि किशोर लड़कियों को गर्भधारण करने से या स्वच्छन्द यौन के कारण संचारित रोगों का शिकार होने से रोक सकें। कुन्दन सी दमकती स्वच्छन्द युवतियाँ घर से निकल पड़ती हैं, एक साथी से दूसरे साथी को सौंप दी जाती हैं, वेश्यालय के नर्क में झोंक दी जाती हैं, या अनधिवासी (Squatters) के रूप में उनका अन्त होता है।

यदि हम अपने चहुँ ओर चल रही गतिविधियों के वास्तविक आशय का स्पष्ट विश्लेषण करने का साहस कर सकें तो यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है कि प्रजातान्त्रिक समाजों की गहन विचार-धाराओं का लक्ष्य आत्म-नाश है। केवल स्विटज़रलैंड, नार्वे और डेनमार्क में ही लोग एक-दूसरे से आत्महत्या करने में मुकाबला नहीं कर रहे परन्तु सभी विकसित देशों में युवा लोग सामूहिक रूप से आत्मघातक आदतों को अपना रहे हैं। मनुष्य समझ नहीं पाता कि क्यों इतने ऊँचे स्तर के विकसित प्रजातन्त्रों में भी युवा लोग आसानी से झूठे सम्प्रदायों, सनक तथा व्यसनों, (जिन्हें परमेश्वर प्रदत्त अधिकार माना जाता है) जैसे मदिरापान या समलैंगिकता आदि अन्य चीज़ें जो आत्मनाश का निश्चित मार्ग हैं, उन्हें अपना लेते हैं! शराब तथा नशे की आदत तो यकीनन नरक का पारपत्र (Passport) हैं फिर भी अधिक से अधिक लोग इनके लिए लाइन लगाए खड़े हैं। सभी प्रकार की अवर्णनीय कामविकृतियाँ एड्स तथा अन्य भयंकर रोगों की ओर ले जा रही हैं। परन्तु ऐसा क्यों है कि अहंकारपूर्वक समलैंगिकता या स्वच्छन्द कामुकता की डींगे

मारने वाले लोगों को, एड्स के भयानक खतरे के बावजूद भी, शूरवीर माना जाता है। बहादुर सिपाहियों की तरह से अपनी कब्रों की ओर चलने वाले उन महान लोगों की, इस रोग के कारण, मृत्यु को महान बलिदान के रूप में पेश किया जा रहा है! इतने बुद्धिमान लोग भी उनकी विनाशकारी आदतों के अधिकार पर प्रश्न क्यों नहीं उठाते? सभी मनुष्य जानते हैं कि सहज एवं स्वाभाविक शालीनता क्या है और उन्हें इसकी आवश्यकता है तथा अपनी गहराइयों में वे इसकी आकांक्षा करते हैं। कहीं विकसित देशों के लोग इस मूल आवश्यकता से निरन्तर निराश होने के कारण ही तो आत्महत्या करने के लिए उद्यत नहीं हो रहे?

जहाँ तक आनन्द लेने का प्रश्न है, जिसे आधुनिक पॉपसंगीत में, इस आत्मघाती समय में लोग अपनी असुरक्षा तथा कुण्ठा की अभिव्यक्ति अपने प्रति अपमानजनक आचरण के माध्यम से कर रहे हैं, मानों वे स्वयं से ही घृणा करते हों या अपना ही तिरस्कार करते हों! उद्यमी लोग धनार्जन करने के लिए पॉपसंगीत का सृजन करते हैं। अत्यन्त चालाकी से मानवीय दुर्बलताओं को हवा देकर वे युवा लोगों को निरन्तर ऐसी मन:स्थिति में ढकेल रहे हैं जो शान्ति, सामंजस्य और आनन्द तो प्रदान नहीं कर सकती परन्तु उनके अन्दर भयानक उथल-पुथल, असन्तोष एवं कुण्ठा-भाव पैदा करती है जिसे वे पॉपसंगीत के अगले समूह में हल्का करते हैं। थोड़ी सी राहत देने वाले इस पॉपसंगीत को पैसा बनाने वाली सेनाएं सुगमता से आड़ोलित कर लेती हैं। ऐसी अपरिपक्व युवा पीढ़ी जिनका सन्तुलन असन्तुलित भाववेगों के कारण सदैव बिगड़ा रहता है, एक ओर तो निराश एकान्तवासी बन जाते हैं, जिनका किसी से वास्तविक सम्बन्ध नहीं बन सकता या दूसरी ओर आवारा हिंसात्मक गुण्डे जो अन्य लोगों की शान्ति को नष्ट करने पर अमादा होते हैं। क्या प्रजातन्त्र के महान आदर्श से हम वास्तव में यही आशा करते हैं?

आधुनिक प्रजातन्त्रों का आरम्भ अट्ठारहवीं शताब्दि में हुआ, परन्तु

उसी समय विज्ञान की प्रगति के कारण औद्योगिक क्रान्ति की अभिव्यक्ति भी आरम्भ हुई। औद्योगिक तथा वाणिज्यिक मूल्यों का उद्भव भी औद्योगिक तथा तकनीकी समाज के आगमन के कारण हुआ। हम जानते हैं कि, विज्ञान पूर्णत: निर्नैतिक है। मानवीय मूल्यप्रणाली द्वारा बनाए गए नियमाचरणों का यह पालन नहीं करता। विज्ञान तो भौतिकतत्वों का ज्ञान है जिसके अपने ही आन्तरिक नियम होते हैं। भौतिकतत्वों में मानव की तरह से स्वतन्त्र इच्छा नहीं होती जिसके द्वारा वह अपने लिए नैतिक मूल्यप्रणाली की स्थापना कर सके। शुद्ध विज्ञान में, जो कि निर्नैतिक है, प्रौद्योगिकी के माध्यम से व्यवहारिक प्रयोगिक क्षेत्र में यह गुण पहुँचाया गया और किसी का भी ध्यान इसकी ओर नहीं गया। इस प्रकार उद्योग और (इसके सामीप्य के कारण) वाणिज्य भी पूर्णत: निर्नैतिक बन गए।

पूर्ण मानवीय वातावरण में अपने कौशल का उपयोग करते हुए जब मनुष्य कार्य करता है तो कार्य और नैतिकता साथ-साथ चलते हैं। परन्तु प्रौद्योगिकी और उद्यम (जिसका अर्थ मानव के हित में किया जाने वाला उत्पादक कार्य हुआ करता था) कि कोई अन्तर्जात मूल्य प्रणाली नहीं है, इसलिए इन पर कोई आन्तरिक नैतिक बन्धन नहीं है। परन्तु यहाँ भी ध्रुवत्व का नियम कार्य करता है और विकसित राष्ट्रों के उद्यमों का दोलक (Pendulam) अब विपरीत दिशा में चला गया है। नैतिक मूल्य प्रणाली या धर्म के मानवीय प्रभाव से परे उद्यमों का अनियन्त्रित विकास इसका कारण है। इसे हम पूरे विश्व में देख सकते हैं, विशेष रूप से, अति विकसित प्रजातन्त्र देशों में। वहाँ निरन्तर बढ़ती हुई गहन आर्थिक मन्दी है। ऐसा लगता है मानो उद्यमों की पूरी मशीनें खराब हो गई हों, क्योंकि किसी ने यह देखने की कोशिश नहीं की कि ये वांछित सीमाओं में चल रही है या नहीं।

सरकारें अब अपने मुख्य उद्यमों में बनावटी तरीकों से प्राण संचार करने का प्रयत्न कर रही हैं। इसके लिए वे न केवल ब्याज की दरों में परिवर्तन ला

रही हैं परन्तु विकासशील देशों या पूर्वीगुट (Eastern Block) विशेष रूप से रूस और चीन को पश्चिमी विज्ञापन प्रचार के माध्यम से, पूरी शक्ति लगाकर फुसलाने का प्रयत्न कर रही हैं ताकि वे मन्दी के शिकार इन देशों के फालतू उत्पादों को खरीद लें। बेचारे विकासशील देशों पर एक बार फिर इन तथाकथित महान विकसित प्रजातन्त्रों के शोषण का शिकार बनने का खतरा हो गया है। अत्यन्त खेद का विषय है कि इन विकसित राष्ट्रों के सभी तथाकथित महान नेता, प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति, आयातित वस्तुओं के सम्मोहन में अभी तक फँसे हुए, उन देशों में अपनी वस्तुएं बेचने के लिए हाथ-पैर मारते हुए घूम रहे हैं। यह भयंकर नैतिक और आर्थिक शोषण है। रूस में बहुत सी अमेरिकी तथा जर्मनी की अवांछित वस्तुएं उन लोगों को बेची जा रही हैं जिनके पास बिल्कुल भी विदेशी मुद्रा नहीं है। मन्दी की चपेट में आए इन औद्योगिक देशों में जो कबाड़ा बिक नहीं सका उसे अब एकत्र किया जा रहा है और यह भारत जैसे देश में भी पहुँच रहा है। राजनीतिक नेताओं तथा उद्यमों के महान कप्तानों की शानदार यात्राएं होती हैं और इनके माध्यम से वे विकासशील देशों को अपने मन्दी के संकट का साझेदार बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं। परन्तु इस प्रकार वे कितना कुछ प्राप्त कर लेंगे? अभी भी वे सब मृगतृष्णा के पीछे दौड़ रहे हैं। बाहर से देखने पर व्यक्ति को आश्चर्य होता है कि किस प्रकार इस मन्दी पर काबू पाया जाएगा, क्योंकि इसकी जड़ें तो ऐतिहासिक गहराइयों में हैं और ध्रुवत्व के नियम से बचा नहीं जा सकता! तुर्की इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। वहाँ पर सर्वोत्तम खाने हैं, सर्वोत्तम वस्त्र हैं, गहने हैं और कालीन हैं। इसके बावजूद भी वहाँ ये सब चीजें.जर्मनी से आयात की जा रही हैं। जर्मनी के उद्यमियों ने तुर्की के लोगों को उनकी अपनी हस्तकला की वस्तुओं तथा स्वादिष्ट व्यंजनों के प्रति अन्धा कर दिया है। तुर्की के लोग जर्मन रोटी और जर्मन गुल्मा (sausages) खाते हैं। परिणामस्वरूप वे अत्यन्त निर्धन हो गए हैं और उस गर्म जलवायु में भी जीन पेन्ट्स पहनते हैं। ये कष्ट तो उन्हें उठाने ही थे।

सर्वप्रथम तो साम्राज्यवादी विचारों की बढ़ोतरी के साथ अधिकतर देश विश्वभर में निर्लज्जता पूर्वक अपना साम्राज्य फैलाने के लिए चल पड़े। अपने साम्राज्यों में लूट-खसूट, धोखा-धड़ी और कत्ले-आम करके पहले तो वे लोग वैभवशाली हो गए और बहुत से वर्षों तक इस पाप की कमाई का आनन्द लिया। बाद में औद्योगिक विकास होने पर उन्होंने इन साम्राज्यों का उपयोग सस्ती दरों के कच्चे माल तथा सस्ते मजदूरों के लिए तथा अपनी वस्तुओं को बेचने के लिए बने बनाए दास बाज़ार के रूप में किया। परन्तु औद्योगिकरण अब अपनी नियत प्रक्रिया पूरी कर चुका है और विकसित देशों के उद्योग लक्ष्य से अधिक उत्पादन करने लगे हैं, ये फालतू के उत्पाद न तो उनकी अपनी जनता खपा सकती है और न ही उनके पूर्व साम्राज्य, क्योंकि साम्राज्यवादी युग की शाखाओं के रूप में पनपे नए स्वतन्त्र देशों (जिनके कच्चे माल तथा सस्ते मज़दूरों का लाभ उठाने के लिए वहाँ स्थानीय उद्यम लगाए गए थे) में अब इतनी मशीने उपलब्ध हैं कि वे ये सभी वस्तुएं अपने पूर्व साम्राज्यवादी आकाओं द्वारा बनाई गई वस्तुओं की कीमतों से कहीं कम कीमत पर बना सकते हैं। तो अपनी मन्दी पर काबू पाने के लिए विकसित देश अब किसका शोषण करेंगे? इन बनावटी और निर्नैतिक उद्यमों के पास अपने उत्पादों को बेचने के लिए पर्याप्त बाजार उपलब्ध नहीं है। फालतू वस्तुओं को बेचने के लिए बाजारों के अतिरिक्त भी बहुत हानि हुई है। फालतू के अनौपचारिक वस्त्र (Casual dresses) सभी बाज़ारों में घुस गए हैं क्योंकि न तो इन्हें धोना पड़ता है और न ही इस्त्री करना पड़ता है। श्रीलंका, ताइवान, मलेशिया तथा बहुत से अन्य गर्म देशों में भी इन वस्त्रों को बहुत शान के साथ पहना जाता है। यद्यपि इनको पहनने वाले लोगों से दुर्गन्ध एवं सड़न की बू आती है और उन्हें फुंसियाँ हो जाती हैं, फिर भी पश्चिमी विक्रेताओं के अनुसार वे अत्यन्त आकर्षक और फैशनेबल हैं।

विकासशील देशों को अपनी विक्रयकला से वे कब तक बेवकूफ बना

सकते हैं? दोनों, साम्राज्यवादी तथा साम्यवादी प्रणालियों, में उद्यमों के विकास के कारण शनैःशनैः मानव भौतिक पदार्थों का दास बन गया है और ये पदार्थ उन पर हावी होने लगे हैं। इसका गम्भीरतम प्रभाव ये है कि मानवीय स्तर की मूल्यप्रणाली अब मात्र भौतिकता की अवस्था तक पतित हो गई है। यद्यपि मानव वास्तव में विकास का सारतत्व है और सम्भाव्यता में अमानवीय संसार का स्वामी है, परन्तु यह बात भी स्पष्ट है कि आधुनिक मानव नए प्रकार के मानव की तस्वीर को दर्शाता है जिस पर भौतिक पदार्थ, उसका शरीर तथा पाशविक प्रवृत्तियाँ हावी हैं। हालात इतने बिगड़ चुके हैं कि उच्च मानवीय मूल्यों के विषय में बात करने वाले व्यक्ति को सनकी या पागल समझकर व्यवहार किया जाता है। ऐसा लगता है कि लोगों के लिए यह समझ पाना असम्भव है कि किस सीमा तक वे भौतिकता और पाशविक प्रवृत्तियों के शिकंजे में फँस चुके हैं! भौतिकता के मानव पर धीमी गति से हावी होने के साथ-साथ हमें फ्रॉयड जैसे महान विचारक एवं विद्वान भी प्राप्त हुए जिन्होंने मानव को केवल यौन-बिन्दु के रूप में पतित कर दिया है।

भौतिकता क्यों मानव पर शासन करती है? विकास प्रक्रिया के दौरान मानव भिन्न अवस्थाओं में से गुज़रा है और सत्य ये है कि भौतिकता ही हमारी प्रथम तथा मूल प्रकृति है। जड़ पदार्थ से हम जीवन्त अवस्था तक पहुँचे और फिर शनैःशनैः इस पशु अवस्था से उन्नत हुए। हज़ारों वर्ष पूर्व भारत में मानव ने वेद, उपनिषदों और गीता जैसे महान विकसित और आधुनिक आध्यात्मिक दर्शन का सृजन किया। हज़ारों वर्ष तक लोग मानवीय श्रेष्ठ दृष्टि के अनुसार चले। आज के आधुनिक विश्व में जो हम देख रहे हैं, वह, स्पष्ट रूप से, मानव का उत्थान के माध्यम से प्राप्त की गई अपनी उच्चावस्था से अधोपतन है। "Planet of the Apes" (वानरों का ग्रह) नामक एक फिल्म है जिसमें स्पष्ट रूप से दर्शाया है कि विकास यदि पीछे की ओर, अर्थात् (पतन की ओर) चल पड़े तो क्या होगा।

केवल इतना ही नहीं, आधुनिक काल में दो विश्वयुद्धों ने अत्यन्त शान्त, भले और गरिमामय साधारण लोगों की बहुत बड़ी संख्या में हत्या की। इसके कारण जीवन की नैसर्गिक अच्छाइयों और शाश्वत् मूल्यों के अस्तित्व में लोगों के विश्वास को आघात पहुँचा। आधुनिक युद्ध कला के प्रकोप के कारण लाखों महिलाएं विधवा हो गईं और लाखों बच्चे यतीम। युद्ध करने वाले ये राष्ट्र, न केवल अपने उद्यमों में, परन्तु अपने जीवन में भी, पूर्णतः अशक्त हो गए। इन विध्वंसकारी युद्धों के परिणामस्वरूप उनके आगामी जीवन बंजर भूमि सम हो गए जिनके ठीक होने की कोई आशा न थी। जैसा हमने युद्धों के बाद के दशकों-साठ, सत्तर के तथा आज के भी में देखा, सर्वसाधारण मानव के लिए नैतिक मूल्यों को त्यागकर घटिया उथली जीवन शैली अपना लेना अत्यन्त सुगम था। सांस्कृतिक जीवन में भी इन वर्षों में तथाकथित आधुनिक प्रवृत्तियों के पारम्परिक विधानों और मूल्यों पर बढ़ते हुए विनाशकारी आक्रमणों का विशेष रूप से बाहुल्य रहा। शनैःशनैः पिछले सत्तर वर्षों में लोगों की चेतना का आम स्तर सर्वसाधारण सम्भावनाओं से भी नीचे गिर गया है। शान्तिपूर्वक एवं निष्पक्ष दृष्टि से मानव की स्थिति को देखने वाले व्यक्ति के लिए यह बात स्पष्ट है कि बिना चेतना की उच्चतर अवस्था में प्रवेश किए, बिना उच्चतम मूल्यप्रणाली को अपनाए, भौतिकता एवं पाशविक प्रवृत्ति के दास बनकर अपनी बनाई हुई दल-दल तथा आत्म-विनाश से हम निकल नहीं सकते।

इन प्रजातन्त्रों में जहाँ मानव की स्वतन्त्रता को पूर्ण पुष्पित एवं गरिमामय माना जाता है, वहाँ भी भयंकर अन्तर्विरोध है जिसके कारण विकास का यह भेदन अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है । इसके साथ-साथ प्रजातन्त्रों में अन्य लोगों की आलोचना तथा उन्हें पथभ्रष्ट करने की स्वतन्त्रता का मौलिक अधिकार है। वास्तव में स्वतन्त्रता के सच्चे अर्थ में अन्तर्जात जिम्मेवारी की भावना सम्मिलित है जो विवेकशीलता पर

आधारित है तथा चरित्रहीनता, स्पर्धा और घृणा की आज्ञा नहीं देती। वास्तविक स्वतन्त्रता का अस्तित्व हमें अपने उच्चतम नैतिक स्वभाव को पहचानने तथा हमारे अपने और पूरे विश्व के हित के लिए इसकी सेवा और विकास करने की योग्यता प्रदान करने के लिए है।

परन्तु इसके विपरीत, आधुनिक प्रजातन्त्र तो नैतिकता और करुणा की बात ही नहीं करना चाहते क्योंकि वे इन्हें लोगों का निजी मामला मानते हैं। व्यक्ति के अन्त:करण के अधिकार की श्रेष्ठ धारणा को विकृत करके प्रजातन्त्र देशों की सरकारें अपनी जनता तथा राष्ट्रीय सम्बन्धों में आत्मसम्मान तथा धर्मपरायणता की भावना उत्पन्न करने से जी चुरा रहे हैं। उनकी सैद्धान्तिक धारणाएं चाहे जो भी रही हों, स्पष्ट रूप से वे विश्वास नहीं कर सके कि वास्तव में सभी मनुष्यों का विश्व एक ही है और एक ही जाति है, अन्यथा उन्होंने मानव की उच्च प्रकृति की सेवा करने का कोई भी अवसर न खोया होता, जिस प्रकार प्रत्यक्षत: उन्होंने किया है।

जब सार्वजनिक नैतिकता का प्रश्न आता है तो इसमें बहुत सा पाखण्ड भी जुड़ गया है। किसी प्रजातन्त्र देश के मन्त्री या प्रधानमन्त्री का प्रेमसम्बन्ध यदि किसी अन्य महिला से हो तो जनता की दृष्टि में यह फटकारने योग्य गम्भीर अपराध है। परन्तु देश के अन्य पुरुष चाहे जितने अवैध सम्बन्ध कितनी भी दुष्चरित्र महिलाओं से रखें! आजकल आम धारणा ये है कि इन बातों को सुधारने या इनकी आलोचना करने का कोई उपाय नहीं है। जबसे फ्रॉयड ने अपना वेद-वाक्य प्रकट किया, प्रत्यक्ष रूप से ये माना जा रहा है कि अधिकतर मानव अपनी निकृष्ट प्रकृति के रहमोकरम पर हैं। फिर भी प्रधानमन्त्री या राष्ट्रपति सबसे भिन्न होना चाहिए। नैतिक रूप से उसे सम्पूर्ण व्यक्ति होना चाहिए। हम सोच सकते हैं कि कम से कम ये आशा तो अत्यन्त मूल्यवान है। परन्तु सच्चे नैतिक दृष्टिकोण का ये अन्तिम अवशेष वास्तव में इस मृत आदर्श के प्रति सम्मान का दिखावा करना है। यह दर्शाता है कि इस

अकेले व्यक्ति से पूर्णता की माँग समाज को प्रभावित नहीं कर सकती और न ही इससे ये आशा की जानी चाहिए। बेरोक-टोक कुछ भी करने की व्यक्ति की स्वतन्त्रता के झूठमूठ के सम्मान जो उन्हें भी मनचाही इच्छाओं की पूर्ति की स्वतन्त्रता प्रदान करता है, की आड़ में सत्तारूढ़ लोग लोगों के निजी जीवन में हस्तक्षेप नहीं करना चाहते। लज्जा और अनौचित्य की भावना के समाप्त हो जाने के कारण अब ये सभी निजी जीवन, सामाजिक और जन-जीवन बन गए हैं और प्रजातान्त्रिक ढाँचे के पथ प्रदर्शन में चलने वाले सभी समाज ध्रुवत्व के कष्ट से पीड़ित हैं।

वो इस तरह से व्यवहार करते हैं मानों प्रजातन्त्र में नैतिकता केवल उन्हीं लोगों के लिए हो जिन पर जनता की दृष्टि है, बाकी सब जहाँ चाहे जाने को स्वतन्त्र हैं और उनके स्वयं को नष्ट करने से कोई अन्तर नहीं पड़ता। ध्रुवत्व के नियम के कार्यरत होने के कारण प्रजातन्त्र देशों में निजी स्वतन्त्रता सामूहिक पतन द्वारा समाज को नष्ट कर देगी और ऐसा लगता है कि इसके मूल कारण को दूर करके इस समस्या को दूर करने के लिए कोई भी कुछ नहीं करना चाहता। धन और सत्ता लोलुप धर्म, करुणा की केवल बातें करते हैं। नैतिक पतन और आर्थिक विनाश की ओर तीव्रता से बढ़ते हुए अपने समाज के लिए वास्तव में न तो वे कुछ कर सकते हैं और न ही करना चाहते हैं।

पश्चिमी देशों के निर्वाचित शासक प्रजातान्त्रिक होने का दावा तो करते हैं परन्तु धर्मान्ध और जातिवादी होने के कारण वे विकासशील देशों के किसी व्यक्ति या वहाँ बनाई गई किसी वस्तु को अपने देश में आने की आज्ञा नहीं देंगे क्योंकि वहाँ की वस्तुएँ सस्ती होती हैं और जल्दी बिकती हैं। वे इसकी आज्ञा नहीं देते चाहे वर्षों तक साम्राज्यवादियों के रूप में इन्होंने इन गरीब देशों का शोषण किया है। अपने देश वासियों के जीवन के गिरते हुए स्तर को रोकने के लिए वे कोई कानून नहीं बनाना चाहते। जिन लोगों को उन्होंने हवा दी है और जिनके तथाकथित व्यक्तिवाद को इस सीमा तक बिगाड़ा है कि वे

एक ही तरह के पतित विज्ञापनों तथा मॉडलों का जीवन बिताना चाहते हैं, उन को छेड़कर वे नहीं चाहते कि इनमें सामाजिक क्रोध भड़के और ये प्रदर्शनों पर उतारू हो जाएं। शब्दजाल द्वारा वे स्वयं को लोकप्रिय बनाते हैं। बहुत से आधुनिक तरीकों से उन्हें चुप कराया जा सकता है, परन्तु जब तक उनकी गद्दियाँ बरकरार हैं, राजनीतिज्ञ बिल्कुल चिन्ता नहीं करते कि आम आदमी किस प्रकार अपने को नष्ट कर रहा है। इसके विपरीत अपने निजी जीवन को चलाने के लिए पूर्ण स्वच्छंदता प्रदान करके वे अपने मतदाताओं के अहं एवं दुर्बलताओं को बढ़ावा देते हैं। नैतिकता को बनाए रखने और प्रोत्साहित करने के लिए वे कभी कानून नहीं बनाते। उन्हें विश्वास है कि कभी भी उन्हें अनैतिक लोगों के क्रोध एवं कुण्ठा का सामना नहीं करना पड़ेगा।

स्वच्छंदता के इस लाइसेंस की एक अन्य देन क्रूर एवं पागल हिंसा है क्योंकि लोगों में गलत चीज़ों के प्रति सम्वेदना का अभाव है और एक क्षण के लिए भी उनके मस्तिष्क में प्रतिफल (Retribution) की सम्भावना का भय नहीं आता। देवदूतों की नगरी लॉस एंजलिस में एक बार मैं कार में जा रही थी। चालक ने मुझे सलाह दी कि मैं खिड़की के शीशे बन्द करके अपना सिर नीचे कर लूँ। उसने बताया कि एक सप्ताह पूर्व इस गली में ग्यारह लोगों की हत्या कर दी गई थी। मैंने उससे इसका कारण पूछा। अमेरिकन अंग्रेजी में उसने जवाब दिया ''केवल हत्या के लिए'' (Just for the heck of it)। हत्या के लिए हत्या जैसी हिंसा को वर्णन करने के लिए यह देखना आवश्यक है कि हत्यारों ने अपने परिवार, मित्रों या विज्ञापनों, विशेष रूप से दूरदर्शन, वीडियो, फिल्मों तथा विज्ञापनों में छिपे जातिवाद तथा घृणा से क्या ग्रहण किया।

स्वतन्त्रता के नाम पर प्रजातन्त्र भयंकर फिल्मों और वीडियो की आज्ञा देते हैं। सत्तारूढ़ लोगों की आलोचना किए बिना फिल्में कुछ भी अभद्र, अनैतिक एवं हिंसात्मक दृश्य दिखा सकती हैं। ये फिल्में लोगों के आचरण के लिए आदर्श बन जाती हैं और परिणामस्वरूप आज के समाज में ये

काल्पनिक हिंसात्मक एवं क्रूर कार्य वास्तविकता बन गए हैं। हमारे नगरों तथा घरों में ये भूतिया एवं भयावह वास्तविकता बन गए हैं और इन सामयिक भयावह दृश्यों को पुनः प्रस्तुत करने वाले लोगों को निर्णायक सर्वोच्च इनाम देते हैं! उदाहरण के रूप में हाल ही में एक फिल्म बनी थी जो बहुत लोकप्रिय हुई। इसमें एक मनोविकृत नरभक्षी को विषय-वस्तु बनाया गया था कि किस प्रकार वह मनुष्यों का वध करके उन्हें खाता था। ये सब दर्शा कर लोगों का मनोरंजन करने का प्रयत्न इस फिल्म में किया गया। किसी भी गरिमामय उन्नत समाज में ऐसी फिल्म कभी भी न बनाई जाती और किसी पथ-भ्रष्टता के कारण यदि यह बन भी जाती तो इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया होता। परन्तु आलोचकों ने इस फिल्म की प्रशंसा की और इसका स्वागत किया। वो कह सकते हैं कि ये असाधारण विषय है। परन्तु मनुष्य के शरीर का गोश्त खाने के इच्छुक व्यक्ति से परिचित मानव मस्तिष्क द्वारा यह कैसा असाधारण चित्रण है, जबकि वह नरभक्षी बोस्नियां के लोगों की तरह अकाल-पीड़ित भी नहीं है! यह फिल्म अत्यन्त लोकप्रिय एवं प्रभावशाली फिल्म कहलाई क्योंकि इसने वर्ष की सर्वोत्तम फिल्म का इनाम जीता। कहने का अभिप्राय यह नहीं है कि कला जीवन के नकारात्मक तथा विनाशकारी पक्षों को प्रस्तुत नहीं कर सकती। आधुनिक जीवन की अधोगति तथा विघटन की समस्याओं को दर्शाना अच्छा विचार है, परन्तु सृष्टा कलाकार को आधुनिक विश्व की इन मुख्य समस्याओं का समाधान भी सुझाना चाहिए। यदि वे अच्छे कलाकार हैं तो मानव की प्रसन्नता तथा हित को बढ़ावा देने वाले सार्वभौमिक सच्चे-मूल्यों (True Values) से सम्बन्धित सभी विचार प्रस्तुत कर सकते हैं।

इस विचार के साथ एक अन्य समस्या भी जुड़ी हुई है कि कला सामयिक समाज के निकृष्ट एवं भ्रष्टतम पक्षों को भी प्रतिबिम्बित कर सकती है। अपने समाज का कोई अत्यन्त विकृत मामला यदि आप दर्शाते हैं तो लोग, विशेष कर पश्चिम के, खलनायक की केवल अश्लीलता और

आक्रामक क्रूरता को ही देखेंगे। उनसे स्पष्ट हितकर नैतिक शिक्षा लेने के स्थान पर वे लोग उसकी नकल करने का प्रयत्न करेंगे जो उन्होंने देखा। ऐसे प्रदर्शन केवल संस्कारगत प्रतिक्रिया बन गए हैं और सबसे बुरी बात तो यह है कि अब इनका लोगों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

अठारहवीं शताब्दि की प्रजातान्त्रिक क्रान्तियों तथा ज्ञानोदय के समय से ही पश्चिम में एक प्रवृत्ति बन चुकी है कि फिल्मों, पुस्तकों, समाचार-पत्रों तथा जहाँ से भी मिल सकें सारे अधर्म, अपवित्रता, अमंगलता और अश्लील तथा विध्वंसकारी चीज़ों को ग्रहण करना है। स्वयं आसुरी शक्तियाँ बनने के लिए लोग चुनौतियाँ स्वीकार करते हैं। अब लोगों को निर्णय करना होगा कि इस प्रजातान्त्रिक अवपथन (Derailment) को रोकने के लिए क्या किया जाना चाहिए। जिस विकास पर पश्चिम गर्व करता है वह उसे पूर्ण विनाश की ओर ले जा रहा है क्योंकि मानव स्वर्ग या नर्क में जाने के लिए स्वतन्त्र है और उसमें अपने विनाश को न्यायोचित ठहराने के लिए अथाह शक्ति है।

संभवतः पहली बार इसे पढ़कर कुछ पश्चिमी धर्मान्धों को आघात लगे, कुछ को सदमा पहुँच सकता है, परन्तु अधिकतर लोग उस दिव्य शक्ति की चिन्ता को समझ पाएंगे जो परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति द्वारा सृष्टि को बनाए रखने की इच्छुक हैं।

अध्याय 4

जातिवाद
(Racialism)

जातिवाद स्वयं मानव द्वारा बनाया गया निकृष्टतम अभिशाप है। आकर्षक सौन्दर्य की सृष्टि करने के लिए सर्वशक्तिमान परमात्मा ने भिन्न रंगों तथा विविधताओं पूर्ण इस विश्व की सृष्टि की है, परन्तु ये विविधताएं गहन नहीं हैं। कहते हैं कि बहुत समय पूर्व बर्तानिया के कुछ उर्वर लेखकों ने अफ्रीका के काले लोगों के विषय में कुछ भयानक बातें लिखीं जिन्हें श्वेत वर्ण (White Skinned) कहलाने वाले लोगों ने पूरी तरह से स्वीकार कर लिया और उन लोगों को समाप्त करने के लिए निकल पड़े जिनकी चमड़ी का रंग कोई और था। उदाहरण के रूप में गलती से कोलम्बस अमेरिका जा पहुँचा, स्पेन के लोग अपना साम्राज्य फैलाने लगे और बहुत से लाल अमेरिकनो को अपने ही देश से निकाल फेंका गया। निःसन्देह उनमें से कुछ ऊँचे पर्वतों में जा छिपे और अपनी रक्षा की। यह समझ पाना कठिन है कि क्यों किसी दूसरे के देश में ये लोग घुसे। आरम्भ में यह नए साम्राज्य खोजने का साहसिक कार्य था परन्तु बाद में इन आक्रान्ताओं ने यह मान लिया कि यह भूमि उनकी अपनी सम्पति है। उन्होंने सोचा कि काले रंग या उनके अपने रंग से भिन्न रंगों के लोगों से घृणा करना या उनकी हत्या करना और सदा के लिए उनकी भूमि हथिया लेना उनका अधिकार है।

प्रकृति द्वारा बनाई गई शरीर, शक्ल और चमड़ी की भिन्नता बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसके बिना सभी लोग एक से प्रतीत होते। तब ये विश्व एक जैसी उबाऊ शक्लों की एक सेना बन जाता है। दुर्भाग्य की बात है कि अश्वेत लोगों को असभ्य कहा गया और श्वेत को विकसित माना गया। चमड़ी के रंग के आधार पर मनुष्यों में भेद करना असह्य अक्खड़पन है। सभी

में एक सा हृदय है, एक सी भावनाएं हैं और प्रेम एवं घृणा की एक सी अभिव्यक्तियाँ हैं। सभी लोग एक ही तरह से मुस्कराते और रोते हैं। जिन देशों में अश्वेत जन्म लेते हैं उनके अपने ही देश होने चाहिए। चाहे वे अशिष्ट या पिछड़ें हुए हों, परन्तु किसी भी विदेशी या श्वेत वर्ण व्यक्ति को निहत्थे मूल निवासियों के विरुद्ध बन्दूकों और तोपों का इस्तेमाल करके ज़बरदस्ती उनकी भूमि कब्जा लेने का कोई अधिकार नहीं। उस अत्याचार की कल्पना करें जब श्यामवर्ण लोगों को गुलाम समझा जाता था। यद्यपि दास प्रथा समाप्त कर दी गई थी फिर भी साम्राज्यवादी श्वेत शक्तियों ने अपने साम्राज्यों के सीधे और गरीब लोगों पर अवर्णनीय अपमान तथा यन्त्रणाएं चालू रखीं। सच्चाई एवं यथार्थतापूर्वक यदि अफ्रीका, एशिया और लैटिन अमरीका में साम्राज्यवादी शासन का इतिहास लिखा जाए तो श्वेतवर्ण शासकों द्वारा मानवजाति पर किए गए अपराधों की घोरता को देखकर आघात लगेगा। भारत में बर्तानवी साम्राज्य के समय मुझे भी कुछ ऐसे अनुभव प्राप्त हुए। बिना किसी प्रवेश पत्र या वीज़ा के बर्तानवी लोग भारत में घुस गए और लगभग 300 वर्षों तक यहाँ बने रहे। अब उचित वीज़ा और प्रवेश पत्र लेकर बर्तानियाँ जाने वाले भारतीयों से जिस प्रकार वहाँ के हवाई पत्तन अप्रवास अधिकारी पूछताछ करते हैं वह अनुभव प्राय: अत्यन्त भयावह होता है। एक वरिष्ठ कूटनीतिज्ञ की पत्नी होने के नाते मेरे पास राजनयिक प्रवेश पत्र था फिर भी मुझसे अत्यन्त अभद्र एवं अपमानजनक प्रश्‍न पूछे गए, केवल इसलिए क्योंकि मैं एक भारतीय थी और अश्वेत वर्ण। एक बार तो उन्होंने मुझे अकारण शारीरिक तलाशी के लिए विवश किया। स्पष्ट जातिवाद के अतिरिक्त इसका कोई अर्थ नहीं था। श्वेत प्रजातियों के लोग, ऐसा लगता है, ये विश्वास कर बैठे हैं कि निष्कपट अश्वेत जातियों से अभद्रता तथा अपमानजनक व्यवहार करने का उन्हें दैवी अधिकार है।

'जातिवाद' अमेरिका की सबसे बड़ी सामाजिक समस्या है। जिस

प्रकार अधिकारी वर्ग तथा आम श्वेत लोग श्यामवर्ण लोगों से व्यवहार करते हैं वह बहुत ही गलत है और पूर्णत: पापमय । इस अपराधिक दृष्टिकोण ने अब्राहम लिंकन जैसे महान आत्माओं को हिला दिया और उन्होंने कानून द्वारा जातिवाद को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु कानून की पुस्तक में ऐसे कानून होते हुए भी वहाँ प्राय: श्वेत और श्यामवर्ण के लोगों में भयानक दंगे होते हैं। गुण्डावाद समाज के अन्दर प्रवेश कर गया है और शहरी क्षेत्रों के लोग निरन्तर भय की अवस्था में जीवन गुज़ार रहे हैं। जिन लोगों ने जातीय हिंसा के बीज बोए थे वे स्वयं अब अव्यवस्थित हिंसा की फसल काट रहे हैं और इसमें किशोर भी क्रूरतापूर्वक भाग ले रहे हैं। जैसे सभी क्रियाओं की प्रतिक्रिया होती है, पूरे विश्व में यह प्रतिक्रिया इतने घिनौने और अनुचित रूप से अति की उस सीमा तक पहुँच गई है कि श्वेत और अश्वेत लोगों में प्रेमसम्बन्ध पुन: स्थापित करना असम्भव प्रतीत होता है। श्वेत लोगों में यदि थोड़ा सा भी विवेक होता तो वो जान जाते कि श्यामवर्ण लोग बहुत से क्षेत्रों में उनसे श्रेष्ठ हैं। उदाहरण के रूप में श्वेतवर्ण लोग काले लोगों की तरह से गा नहीं सकते। उनमें लय का प्राकृतिक वरदान उतना नहीं है। शव को ले जाते हुए भी काले लोगों को बैण्ड बजाते और नाचते हुए मैंने देखा है। शवयात्रा में सम्मिलित सभी लोग लयपूर्ण नृत्य जैसी मुद्रा में चलते हैं। उन्हें समझने और उनकी प्रशंसा करने के लिए व्यक्ति को सूक्ष्म होना होगा, यह महसूस करने के लिए कि उन पर कितनी दैवीकृपा है, हमें विनम्र होना होगा। खेलों में काले लोगों की प्रतिभा को मात देना सुगम नहीं है। जिन खेलों में शक्ति और चुस्ती की आवश्यकता होती है काले लोग उन्हें शेष सभी लोगों से अच्छा खेलते हैं। बास्केट बॉल और बेसबाल खेलों में श्यामवर्ण खिलाड़ी सर्वोच्च हैं और उनकी कुशलता तथा अपरिहार्यता के कारण गोरे लोग अपने दलों में उन्हें समान मानते हैं। खेलों का यह अप्रजातीय दृष्टिकोण पूरे समाज में क्यों नहीं फैला दिया जाता? हमें स्वीकार करना होगा कि अधिकतर महान गायक श्यामवर्ण हैं। नि:सन्देह कुछ श्वेत लोग भी सफल हो रहे हैं परन्तु वे

पश्चिमी श्यामवर्ण गायकों को मात नहीं दे सकते क्योंकि वे इतनी मधुर एवं सुन्दर लय में गाते हैं कि बसन्त ऋतु की घोषणा करने वाले पूर्णतः काले रंग के भारतीय पक्षी कोयल की याद आती है। अन्य पक्षियों के मुकाबले कोयल का रंग भी बहुत काला होता है। बसन्त ऋतु में कोयल मधुर संगीत गाने लगती है। बागों में यह बसन्त ऋतु के आगमन की घोषणा भी करती है। पक्षियों में रंग भेद की इस प्रकार की मनोग्रन्थि नहीं पाई जा सकती। भिन्न रंगों के होते हुए भी वे सब परस्पर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक रहते हैं।

विश्व के सभी लोग जानते हैं कि बच्चों को जन्म देने के समय सभी माताएं एक ही प्रकार की प्रसव पीड़ा अनुभव करती हैं, चाहे वे श्याम, श्वेत, भूरे या नीले रंग की हों। यह ऐतिहासिक सत्य है कि निकृष्ट सम्वेदनशीलता वाले लोगों की मानसिक गतिविधियों द्वारा रंगभेद की धारणा की सृष्टि हुई। यह मानसिक गतिविधि श्वेतवर्ण लोगों की देन है जो स्वयं को बहुत विवेकशील समझते हैं। इस प्रकार की मूर्खतापूर्ण मानसिक गतिविधि पूरे विश्व के लिए बहुत बड़ी समस्या बन गई है।

मस्तिष्क सृजित ग्रन्थियों के बिना, वास्तव में यदि हम देखें तो ये देखना बहुत अच्छा लगेगा कि कितने गहन प्रेमपूर्वक एक माँ अपने बच्चे को जन्म देती है! प्रसव पीड़ा के समय कई माताओं को बहुत कष्ट भुगतना पड़ता है परन्तु बच्चे का जन्म होते ही आम माताएं, चाहे वे जिस मर्जी रंग की रहीं हों, गहन प्रेम से ओत प्रोत हो जाती हैं और अपने कष्ट को भूल जाती हैं। ऐसा नहीं है कि श्वेत माताएं नाक से या मुँह से बच्चे उत्पन्न करती हैं। सभी माताओं की एक ही शैली है। एक ही प्रकार से वे गर्भ धारण करती हैं और एक ही प्रकार से बच्चे को जन्म देती हैं। दुर्भाग्य की बात है कि अश्वेत परिवार में अपने बच्चों के लिए जितना प्रेम होता है वह श्वेत लोगों में नहीं होता। विशेष रूप से भारतीय लोगों में अपने बच्चों के लिए जो प्रेम होता है उसका मुकाबला श्वेत लोग नहीं कर सकते। निःसन्देह भारतीय लोग अपने

बच्चों को अनुशासित करते हैं परन्तु बच्चों के प्रति उनका प्रेम महान है। यह आपको परम पिता परमात्मा की याद दिलाता है जो अपने हम सब बच्चों को अत्यन्त सावधानी और निरन्तर सत्कारपूर्वक प्रेम करते हैं।

दिल्ली में मेरे घरेलू नौकरों में एक महिला धोबिन थी। इस महिला के 9 बच्चे थे जिनमें से कुछ बड़े हो चुके थे और उसके कामकाज में मदद करते थे। कुछ बच्चे बहुत छोटे थे और सबसे छोटा मुश्किल से 2 वर्ष का था। यह घर में रेंग भर सकता था। माँ को उससे कोई सहायता प्राप्त नहीं होती थी, इसके बावजूद भी उस महिला को उस पर बहुत सी शक्ति और समय लगाने पड़ते थे। पश्चिमी देशों में इस तरह की कोई भी महिला तंग आ जाती। एक दिन उस महिला तथा उसके पति द्वारा धोये गए कपड़ों को लगाए जाने के लिए उबलते हुए माँड की कढ़ाई में बच्चा जा गिरा। उस समय मैं दिल्ली में न थी। वापिस आने पर मैंने उस महिला की करुण कथा सुनी। उस धोबिन को जब मैंने बुलाया तो वह मुझसे मिलने आई। वह निरन्तर रोए जा रही थी और एक ही महीने में बहुत पतली हो गई थी। उससे पहले वो काफी स्वस्थ और प्रसन्न हुआ करती थी। मैंने उसे बिठाया और पुचकार कर कहा कि अब वह रोए नहीं क्योंकि बच्चा तो मर चुका है। एक महीना गुज़र चुका था परन्तु वह केवल रोती रही, न तो मेरे किसी प्रश्न का उत्तर दिया और न ही बोली। 6 घण्टे तक लगातार ऐसा होता रहा परन्तु उसने रोना न बन्द किया। हैरानी की बात यह थी कि उसके सभी बच्चों में से ये बच्चा काले रंग का था। उसके बड़े बच्चों का रंग काफी साफ था परन्तु यह लड़का अत्यन्त श्यामवर्ण का था। जब मैंने इस महिला को बच्चे के लिए इतना रोते हुए देखा तो मुझे लगा कि हमारी सृष्टा आदिशक्ति माँ भी अपने सभी बच्चों को इतनी ही सावधानी, और प्रेम से, इतनी ही गहनता से प्रेम करती होंगी चाहे वे काले हों, पीले हों, भूरे हों या श्वेत।

जब मैं कोलम्बिया गई तो मैंने पाया कि वहाँ के लोगों को हमारे उत्थान के लिए जिम्मेदार सूक्ष्म प्रणाली का ज्ञान पहले से ही था। यह ज्ञान उन्हें पृथ्वी

में दबी हुई मिट्टी की मूर्तियों तथा बर्तनों की खुदाई से प्राप्त हुआ। जितने प्रतीकात्मक तरीके से उन्होंने इस प्रणाली तथा परमात्मा से योग प्रदान करने वाली शक्ति के ज्ञान की अभिव्यक्ति की, वह आश्चर्य चकित कर देने वाली थी। वे लोग ये न बता सके कि हज़ारों वर्ष पूर्व इस सूक्ष्म ज्ञान को वे किस प्रकार पा सके। यद्यपि श्वेत लोग उन्हें अपरिष्कृत मानते हैं।

उस देश में जहाज़रानी के लिए गरुड़ पक्षी उनका प्रतीक (Emblem) है। जब मैंने उनसे पूछा कि जहाजरानी के लिए गरुड़ ही उनका प्रतीक चिन्ह क्यों है, तो उन्होंने मुझे आश्चर्यचकित करते हुए बताया कि उनके पूर्वजों ने विष्णु नामक देवता की बात की थी, जो भारत, मेरे देश, से उनकी भूमि पर आए थे। वे गरुड़ पर सवार होकर आए थे। जब उन्होंने मुझे ये बात बताई तो मैं हक्की-बक्की रह गई! मेरे पति ने भी ये बात सुनी और वो भी समझ न पाए कि किस प्रकार ये भारतीय देवता श्री विष्णु के बारे में बात कर रहे हैं और जैसा पौराणिक कथाओं द्वारा हम जानते हैं, वे गरुड़ की सवारी करते हैं। जिस व्यक्ति से हमने बात की थी वह बहुत अधिक पढ़ा-लिखा व्यक्ति नहीं था परन्तु अपने देश के दर्शन और संस्कृति का उसे काफी ज्ञान था। मैंने इन लोगों को अत्यन्त करुण, भद्र एवं सुसंस्कृत पाया। जिस प्रकार ये कार्यों को करते हैं वह अमरीका में श्वेत लोगों के पहुँचने से पूर्व के अति सुसंस्कृत समाज का स्मरण कराता है। उदाहरण के रूप में जब वे आपको पानी का गिलास पेश करते हैं तो अपने दाएं हाथ के साथ बायाँ हाथ छुआते हैं, जैसे हम भारत में करते हैं, सम्मान दर्शाने के लिए कि पानी का गिलास दो हाथों से पेश किया जा रहा है, अभद्रतापूर्वक एक हाथ से नहीं। भारत में अत्यन्त महत्वपूर्ण सभ्य संकेत माने जाने वाले बहुत से आचरण आदर्श मुझे वहाँ मिले। वे लोग अत्यन्त सहज एवं अबोध हैं। ऊँची पर्वत शृंखलाओं में छिप जाने के कारण उनकी शक्लें मंगोलिया के लोगों जैसी हो गई थीं और बिना किसी बनावट (Permutations and Combinations) के उनके हाव-भाव अत्यन्त सुन्दर थे।

ये अत्यन्त पावन और सहज हृदय लोग हैं जो बोलीविया के ऊँचे पर्वतों में रहते हैं। सौभाग्यवश उत्थान की सूक्ष्म प्रणाली का ज्ञान प्राप्त करने के लिए मुझे मिलने आए इनमें से कुछ लोगों से मेरी घनिष्ठता हो गई है।

लॉस एंजलिस में कुछ मूल निवासी बहुत परेशान थे क्योंकि बहुत समय पूर्व जो भूमि उनकी थी, उसे वे वापिस लेना चाहते थे। मैंने उनसे पूछा, ''इस भूमि में ऐसा क्या विशेष है? आपने तो पूरा अमरीका ही खो दिया है। इस भूमि के लिए ही आप क्यों चिन्ता करते हैं?'' उन्होंने मुझे बताया, 'यह हमारी पावन भूमि है जहाँ सेज (Sage), पावन पौधा, उगता है। हम बहुत पहले से जानते हैं कि ये हमारी पावन स्थली है और हम वहाँ हर महीने की एक विशेष तिथि को प्रार्थना के लिए जाते हैं। पूरे अमरीका से लाल अमेरिकन वर्ष में एक बार सर्वशक्तिमान परमात्मा से प्रार्थना करने के लिए वहाँ आते हैं। दुर्भाग्यवश धनलोलुप समाज के एक भारतीय ने यह भूमि हथिया ली थी। उन्होंने मुझसे कहा: ''भारत जैसे प्राचीन देश से सम्बन्धित होने के कारण आप हमारी प्रार्थनाओं को भली भांति समझ सकती हैं। क्या आप उस भारतीय से बात करके उसे बता सकती हैं कि यह पावन भूमि केवल उन लोगों के लिए होनी चाहिए जो हज़ारों की संख्या में आकर यहाँ प्रार्थना-अर्चना करना चाहते हैं।'' उनके विश्वास को सुनकर मैं हैरान थी कि मेरा ये देशवासी अवश्य धार्मिक व्यक्ति होगा और यह भूमि वह इसके मूल स्वामियों को वापिस कर देगा, उन लोगों को जिनके लिए ये पावन है। स्पष्ट है कि ये लोग नहीं जानते कि विदेशों में रहने वाले बहुत से भारतीय भी केवल धन के पुजारी बन गए हैं। उन्होंने अपनी प्राचीन जड़ों और संस्कृति को खो दिया है। अब वे जड़विहीन हो गए हैं। उदाहरण के रूप में इटली में भारतीय लोग परस्पर बातचीत में भी कोई भारतीय भाषा नहीं बोलते। मैं जानती थी कि यह भारतीय किसी कीमत पर इस भूमि का एक इंच भी नहीं लौटाएगा क्योंकि ये भूमि उसने अमेरिका सरकार से खरीदी थी। अमेरिका के मूल निवासियों के

संघर्ष की कहानी बहुत लम्बी और हृदयविदारक है। एक बड़े मैदान की दीवार के पीछे एकत्र होकर वे लोग प्रार्थना करते हैं, वहाँ बैठकर सोचते हैं कि परमात्मा के आशीर्वाद से चैतन्यित ये भूमि कार्यशील होकर उनकी प्रार्थना को सुनेगी। मैं उनके साथ सहमत हूँ क्योंकि मैं इस सत्य से परिचित हूँ कि कुछ स्थानों से विशेष रूप से चैतन्य बहता है, और यदि उन्हें विश्वास है कि उस स्थान से चैतन्य बहता है तो ये बात सत्य ही होगी क्योंकि उन्हें सम्वेदनहीन श्वेतवर्ण के लोगों द्वारा लूटी और चुराई गई अन्य भूमियों में कोई दिलचस्पी नहीं है। वे तो केवल यही भूमि चाहते थे। मेरी समझ में नहीं आया कि किस प्रकार अमेरिका सरकार से इस विषय पर बात की जाए और किस प्रकार वे लोग इस बात को समझेंगे क्योंकि वे तो अन्य देशों की समस्याओं एवं युद्धों को देखने में व्यस्त हैं? मूल निवासी सारे ही भूरे रंग के लोग थे। उनकी सुन्दर,सम्वेदनशील आँखों में मैंने इस भूमि को प्राप्त करने की इच्छा के गहन भाव देखे। मैंने उन्हें बताया कि मैं उन्हें वह भूमि दिलवाने की स्थिति में न थी। तो उन्होंने कहा, ''आप सन्त हैं और यदि आप परमात्मा से प्रार्थना करेंगी तो हमें यकीनन ये भूमि मिल जाएगी।'' उन सुन्दर हृदय वाले लोगों की इस गहन इच्छा ने मेरे हृदय में गहन आन्दोलन कर दिया, परन्तु उनकी इस इच्छा को श्वेत चमड़ी से ढके हुए कान कभी न सुन पाएंगे। उनके लिए मेरा हृदय रो पड़ा। मैं वास्तव में चाहती हूँ कि एक दिन ऐसा आए कि जब उन्हें वह भूमि तथा उससे निकलने वाली दिव्य चैतन्य लहरियाँ प्राप्त हो जाएं। उन्होंने मुझे बताया, ''ऐसे बहुत से उदाहरण हैं कि प्राचीनकाल में यहाँ आकर परमात्मा से प्रार्थना करने पर बहुत से लोग रोगमुक्त हो गए।''

जब मैं अमेरिका के मूल निवासियों से मिली तो उनके प्रति मुझमें गहन प्रेम एवं सम्मान उमड़ा। बहुत ही शालीन एवं गरिमामय वेश-भूषा पहनकर वे मुझसे मिलने आए। अत्यन्त सहज हृदय और देवदूतों सम आचार-व्यवहार वाले वे लोग हाथ जोड़कर मेरे सम्मुख पृथ्वी पर बैठ गए। वे अन्दर से

अत्यन्त शान्त थे। केवल उनकी महिलाएं बात कर रही थीं। उस पावन भूमि पर अधिकार की उनकी इच्छा किसी भी प्रकार से भौतिकता न थी। अपनी ही भूमि पर यतीम बनाए गए उन लोगों में मैंने परमात्मा के प्रति गहन श्रद्धा देखी। इस भूमि के प्रति उनकी श्रद्धा विस्मयकारी थी। इस भूमि को वे किसी आर्थिक उद्यम या धनार्जन का साधन बनाने के लिए नहीं माँग रहे थे। यह तो उनके हृदय की वैसी ही भावना थी जैसी हम भारतीयों के हृदय में गंगा नदी के लिए है। उन्हें लगता था कि इस पावन भूमि की तीर्थ यात्रा यदि वे हर साल नहीं करेंगे तो स्वयं को परमात्मा के प्रति समर्पित नहीं मान सकते। परमात्मा के विषय में उनके विचार सुनकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। जो भी कुछ उन्होंने कहा वह पूर्ण सत्य था।

जो लोग स्वयं को अन्य मनुष्यों से श्रेष्ठ मानते हैं वे जातिवाद को स्वीकार करते हैं और अपना लेते हैं। इस प्रकार की सोच द्वारा वे मानसिक गतिविधियों में फँस रहे हैं। मस्तिष्क में इस प्रकार के विचारों के रहते हुए, उनके लिए सत्य को समझ पाने का कोई तरीका नहीं होता। लोगों का कोई समूह जब स्वयं को अन्य लोगों से श्रेष्ठ मान लेता है तो जो भी पाप वो करते हैं उनका मस्तिष्क इन कर्मों को न्यायोचित मानता है। मुड़कर वे कभी नहीं देखते कि जो भी कर्म वे कर रहे हैं नैतिकता की दृष्टि से ये पूर्णतः गलत हैं। वास्तविकता के ज्ञान के पूर्ण अभाव के कारण जातिवाद पनपता है। उदाहरण के रूप में यूरोप में यदि कोई घुटनों तक लम्बे स्कर्ट पहने तो वे उस व्यक्ति से प्रश्न करते हैं और उससे घृणा करते हुए कहते हैं कि ''क्या आप तुर्क हैं ?'' मानों लज्जा केवल तुर्की लोगों का ही गुण हो! परन्तु यदि आप केवल 6 इंच ऊँचा स्कर्ट पहने तो आपको फैशनेबल और व्यवहारकुशल कहा जाता है, चाहे इस वेशभूषा से आपको शिरा रोग (Varicose Veins) शीत्शोथ (Chilblains) या गठिया रोग (Arthritis) ही क्यों ना हो जाए।

अफ्रिका में लोग अत्यन्त गहन एवं सूक्ष्म हैं। फलित ज्योतिष के माध्यम

से बहुत समय पूर्व वे एक सितारे के बारे में जानते थे जो बृहस्पति (Jupiter) के इर्द-गिर्द घूमता है। भारत में ज्योतिष शास्त्र चन्द्रमा पर आधारित है सूर्य पर नहीं। हज़ारों वर्ष पूर्व भविष्यवाणी की गई थी कि एक विशेष समय पर, एक विशेष नक्षत्र हमारे विश्व में प्रकट होगा। सूर्यग्रहण के समय, और दिशा की भी अत्यन्त शुद्ध रूप से भविष्यवाणी की जाती थी। ऐसे ग्रहणों के उत्तरप्रभावों का भी स्पष्ट वर्णन किया जाता था। पूर्ण स्पष्टता से बहुत सी अन्य चीज़ों के विषय में भी बताया गया है और भविष्यवाणी की गई है।

खगोलीय गतिविधियों का अध्ययन करने के लिए पाश्चात्य गणित ज्योतिषविदों द्वारा लगाई गई अत्याधुनिक मशीनों से की गई गणना से ये भविष्यवाणियाँ आश्चर्यजनक रूप से मेल खाती हैं। पश्चिमी वैज्ञानिकों ने भारत के खगोल ज्ञान में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई है। अब कुछ पाखण्डियों ने आयुर्वेदिक दवाइयों का बहुत बड़ा व्यापार शुरु किया है, परन्तु इन लोगों की चैतन्य लहरियाँ खराब होने के कारण ये यूरोप के लोगों का भला करने के स्थान पर उनके स्वास्थ्य को नष्ट ही करेंगे। फिर भी लोग आयुर्वेद के पीछे पागल हैं और इन विपणन विशेषज्ञों (Marketing Experts) के हाथों में खेल रहे हैं। आयुर्वेद के बहुत से डाक्टरों तथा वैद्यों को मैं जानती हूँ। ये लोग इलाज के लिए बिल्कुल पैसा नहीं लेते। उनके पास इलाज हैं परन्तु कभी उन्हें विदेशों में बेचा नहीं जाता। अमरीका के कानून के अनुसार किसी भी वैकल्पिक पद्धति (जो ऐलोपैथिक नहीं है) से इलाज नहीं किया जा सकता। भगवान ईसामसीह भी अमेरिका में यदि किसी व्यक्ति का इलाज करते तो उन्हें भी गिरफ्तार कर लिया गया होता! औषधियों के मूल्य के अतिरिक्त इन विद्वान वैद्यों को कुछ भी नहीं देना पड़ता क्योंकि ये लोग तपस्वी जीवन जीते हैं। हरिद्वार में मैं एक ऐसे व्यक्ति से मिली जो संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित थे। ये जानकर मैं हैरान हुई कि वे ऐलोपैथी के उपाधि प्राप्त चिकित्सक थे परन्तु उन्होंने भारतीय चिकित्सा पद्धति को अपना लिया था और आयुर्वेद

चिकित्सा की प्राचीन विधियों पर शोध कर रहे थे! वे इतने समझदार व्यक्ति थे कि नब्ज देखकर रोग का पता लगा लेते थे और व्यक्ति को बता देते थे कि उसके साथ क्या समस्या है।

बीमार होने पर श्वेत लोग जब ठीक होने की सारी आशा खो देते हैं केवल तभी वे विकल्प खोजने लगते हैं। तब वे ये नहीं देखते कि डॉक्टर की चमड़ी का रंग क्या है। इंग्लैण्ड में मैंने देखा है कि वहाँ बहुत से भारतीय चिकित्सक हैं। अमेरिका में भी बहुत से प्रसिद्ध और अत्यन्त योग्य भारतीय डॉक्टर हैं। इससे प्रकट होता है कि ज्ञान प्राप्ति के लिए मानव की चमड़ी के रंग का कोई महत्व नहीं। पश्चिमी देशों में डॉक्टर शनिवार, रविवार या छुट्टियों के दिन अपने रोगियों की जिम्मेदारी नहीं लेते। उनके लिए छुट्टियों के दिन पावन दिन होते हैं और मद्यपान गोष्ठियों में शराब पीकर छुट्टियाँ मनाना उनके लिए अधिक आवश्यक है। परन्तु आज भी आप भारतीय डाक्टरों को अपने कार्य के प्रति समर्पित पा सकते हैं। करुणा के संस्कारों के कारण भारतीय डॉक्टर अपने चिकित्सकीय कर्तव्यों के प्रति अत्यन्त चेतन हैं। शेष लोग जीवन की भौतिक उपलब्धियों के विषय में चिन्तित हैं क्योंकि उनके अपने देश में करुणा की परम्परा नहीं है।

श्यामवर्ण लोगों की पीड़ा को मैंने समझा और महसूस किया है, उन लोगों की पीड़ा को जिन्होंने श्यामवर्ण होने के कारण भयानक यातनाएं सही हैं। रंग पर आधारित भेदभाव सर्वत्र इतना अधिक है कि व्यक्ति समझ नहीं पाता कि व्यक्तिगत स्तर पर भी किस प्रकार मानव रंग और स्वरूप के आधार पर स्वयं को श्रेष्ठ मान सकता है! काली चमड़ी होने के कारण यदि कोई किसी का मजाक उड़ाता है तो यह सर्वशक्तिमान परमात्मा के सम्मुख बहुत बड़ा अपराध है। परमात्मा ने ही इस वैचित्र्य का सृजन किया। लोग जब भेद-भाव उत्पन्न करने और अपने लिए श्रेष्ठता का वातावरण तैयार करने के लिए इस वैचित्र्य का उपयोग करते हैं तो वे नहीं जानते कि वे ऐसा अपराध

कर रहे हैं जिसे परमात्मा भी क्षमा नहीं कर सकते। भिन्न रंग की चमड़ी के आधार पर किसी का अपमान करने का या उसे तुच्छ मानने का अधिकार हमें नहीं है। निरन्तर इस पीड़ा का शिकार होने के कारण श्यामवर्ण लोग अत्यन्त हिंसक हो गए हैं। इस हिंसात्मकता को न्यायोचित ठहराया जा सकता है, परन्तु ऐसा होना कोई अच्छी बात नहीं है।

उदाहरण के रूप में भारतीय लोग पश्चिमी देशों में जाति भेद के कारण किए गए अपने अपमान को दिल से नहीं लगाते। वे मानते हैं कि आप यदि अप्रवासी हैं तो यह आपको सहना ही होगा। प्राय: वे अपने समूह बनाते हैं और 'गोरे' कहलाने वाले श्वेत लोगों से सरोकार नहीं रखते। भविष्य के संसार तथा संतति के विषय में यदि हमने सोचना है तो श्वेत और श्याम के बीच इस घृणा का अन्त करने के लिए जी जान से कार्य करना होगा। मैं नहीं जानती इस अपराध का हल ढूँढने के लिए कि संयुक्त राष्ट्र के स्तर पर क्या किया जा रहा है। व्यक्ति को महसूस करना होगा कि मानव के सम्मुख मुँह बाए खड़ी समस्याएं जातिवाद से उत्पन्न घृणा की देन हैं। परमात्मा करे कि एक दिन ये कट्टर लोग शान्त हो जाएं और उनके हृदय में हम शान्ति का प्रकाश देख सकें। परन्तु अन्य मुनष्यों के प्रति इस प्रकार की घटिया और उथली मानसिकता को परिवर्तित करना बहुत कठिन है। एक बार जब ये गोरे लोग साक्षात्कार (ज्योति) को पा लेंगे और आत्मा के प्रकाश से आशीर्वादित हो जाएंगे तो वे जान जाएंगे कि सभी मानव सर्वशक्तिमान परमात्मा ने बनाए हैं तथा किसी से भी घृणा करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि परमात्मा सत्य हैं और प्रेम हैं। किसी से घृणा करना अत्यन्त अनैतिक कार्य है। भारत में हम किसी से नहीं कहते ''मैं तुमसे घृणा करता हूँ।' ऐसे शब्द बोलना अत्यन्त अभद्र, अनैतिक और असामाजिक होगा। पश्चिमी समाज में किसी भी प्रकार की भाषा बोलने पर कोई रुकावट नहीं, चाहे राजदूत हो, मन्त्री हो, राष्ट्रपति या प्रधानमन्त्री हो, उनमें से कुछ लोग

अत्यन्त निकृष्ट स्तर की भाषा का उपयोग करते हैं। ये भी नहीं सोचते कि अशुभ क्या है? रोजमर्रा के सामाजिक जीवन में लोग एक दूसरे को कहते हैं ''मैं तुमसे घृणा करता हूँ, मैं तुमसे घृणा करता हूँ।'' आरम्भ में मेरे भारतीय देहाती मस्तिष्क के लिए यह वास्तव में अत्यन्त आघातकारी था। चमड़ी के रंग के आधार पर घृणा अपने आप में केवल एक बुराई ही नहीं है, यह व्यक्ति के अहं के गुब्बारे को फुला कर उसे हिंसक अपराधों में धकेल सकती है।

मैं एक महासचिव को जानती हूँ जिसे कुछ विकसित देशों ने अत्यन्त चालाकी से दोषी ठहराकर परेशान किया और निकाल फेंका। उस पर जो आरोप लगाए गए थे वे इतने तुच्छ थे कि कोई भी व्यक्ति समझ सकता था कि उसे निकालने की पूरी योजना के पीछे षड़यन्त्र है। निश्चित रूप से वह व्यक्ति एक विशाल हृदय मुसलमान था। उसने बहुत से भारतीय ग्रन्थों का भिन्न भाषाओं में अनुवाद किया जिसके कारण पूरे विश्व की दृष्टि भारतीय विवेक पर पड़ी। मुसलमान होते हुए भी वह साहित्य और धर्म के सभी ग्रन्थों का सम्मान करता था। उस पर लगाए गए आरोपों में से एक यह था कि उसकी पत्नी सरकारी कार में ब्रसल्ज़ गई। मुझे पता लगा कि उस महासचिव के देश का बैल्जियम स्थित राजदूत अचानक चल बसा और उसकी पत्नी को एकदम पैरिस से ब्रसल्ज़ जाना पड़ा। क्योंकि उस समय वायुयान की कोई उड़ान न थी और उस महिला को अपनी मित्र (मृत राजदूत की पत्नी) को सांत्वना देने के लिए जाना आवश्यक था इसलिए इस संकट के समय यात्रा के लिए उसने सरकारी कार का उपयोग किया। परन्तु नियमानुसार उसने दफ्तर को सूचित किया। मैं नहीं जानती कि इसमें क्या एतराज़ था? परन्तु वे लोग इतने पतित हो गए कि कहने लगे कि उस महिला को टैक्सी भाड़े पर ले लेनी चाहिए थी।

जातिवाद बहुत से देशों में दासत्व का कारण बना है। अफ्रीका के बहुत से लोगों को बन्धक बनाकर लाया गया और दासों के रूप में कार्य करने के लिए बेच दिया गया। एक शताब्दी पूर्व यह दास प्रथा बहुत पनपी थी। कहते

हैं कि बरमुडा त्रिकोण (Bermuda Triangle) समुद्री जहाज़ों को चलाने के लिए बहुत ही भयंकर है तथा वहाँ पर बहुत से जहाज़ डूब चुके हैं। कहा जाता है कि अमेरिका में लाए गए बहुत से दासों ने यहाँ पर आत्महत्या कर ली थी और यही पीड़ित आत्माएं वहाँ से निकलने वाले जहाज़ों को तंग करती हैं। हो सकता है कि ये बात सत्य न हो परन्तु एक बात तो सत्य है कि किसी व्यक्ति पर यदि आप बहुत अधिक अत्याचार करेंगे तो ये अत्याचार स्वत: सूक्ष्म रूप से विनाशकारी शक्ल धारण करके उन अत्याचारों के लिए जिम्मेदार होंगे जो आमतौर पर नहीं किए जाते।

उदाहरण के रूप में यूरोप में, विशेष रूप से इंग्लैण्ड में, मुझे कुछ भूत-बाधित व्यक्तियों को देखना पड़ा। उन्हें इतने अधिक गर्म भारतीय भोजन खाने की सनक थी जिसे हम लोग भी नहीं खा सकते। अमेरिका में मैंने पाया कि अन्तर्ज्ञात ध्यान धारणा (Transcendental Meditation) करने वाले लोग भी भारतीय भोजन के शौकीन थे और सप्ताह में कम से कम एक बार भारतीय रेस्तराओं में जाया करते थे। उनकी भाषा में कुछ भारतीय शब्द भी थे। यह आश्चर्य की बात थी। मुझे लगा कि राजनीतिक और आर्थिक साम्राज्यों में गोरे लोगों ने जिन भारतीयों का वध किया, उन्होंने भूत बनकर इन गोरों में प्रवेश कर लिया, अन्यथा ये बता पाना कठिन है कि श्वेत चमड़ी वाले लोग क्यों अत्यन्त मसालेदार और गर्म भारतीय भोजन पसन्द करेंगे!

हाल ही में मैं शिकागो में थी और हरे कृष्णा पंथ के मुखिया मुझसे मिलने आए। उस दिन बहुत ठण्ड थी और, मेरी हैरानी की सीमा न रही, वह व्यक्ति पतली सी धोती पहने हुए था! धोती वह वस्त्र है जिसे भारतीय लोग कमर से नीचे के शरीर को ढकने के लिए पहनते हैं। उसने सिर मुंडवाया हुआ था और सिर पर केवल चोटी दिखाई दे रही थी। इतनी तेज ठण्ड थी कि सभी लोग काँप रहे थे और यह व्यक्ति इतनी महीन धोती पहने हुआ था जो भारत की सर्दी के लिए भी काफी न थी। कहने लगा कि उसके गुरु ने उसे बताया है

कि यदि तुम धोती पहनोगे तो स्वर्ग प्राप्ति आसान हो जाएगी, तथा ये भी कहा कि तुम अपना सिर मुंडवा कर रखो ताकि देवदूत तुम्हें पहचान सकें और निर्वाण के लिए स्वर्ग ले जाएं। मैंने उसे बताया कि हमारे देश में अस्सी प्रतिशत लोग गर्म क्षेत्रों में रहते हैं और धोती पहनते हैं। प्राचीन काल से हमारे यहाँ धोती पहनी जाती है। हरे कृष्णा सिद्धान्त के अनुसार धोती पहनने वाले इन सभी लोगों को निर्वाण प्राप्त हो जाना चाहिए था।

तब मैंने मोक्ष प्राप्ति के लिए सिर मुंडवाने की बात की। महान कवि कबीर ने इसके विषय में कहा था : ''यदि सिर मुंडवाने से निर्वाण प्राप्त होता है तो वर्ष में दो बार मुंडने वाली भेड़ों को भी निर्वाण मिल गया होता।'' मेरी बात सुनकर हरे कृष्णा का अगुआ मुझसे नाराज हो गया। मैंने कहा, 'आप मुझ पर क्यों नाराज होते हैं, मैं आपकी माँ हूँ। मैं तो आपसे केवल ये कह रही हूँ कि इतने ठण्डे मौसम में आप ये महीन धोती न पहनें क्योंकि इससे आपकी टाँगो में तकलीफ हो जाएगी।'' उसने कहा : ''मैं इसलिए नाराज हूँ क्योंकि आपने मेरे गुरु की आलोचना की है।'' मैंने कहा, ''मैं उनकी आलोचना नहीं कर रही हूँ। मैं तो केवल आपसे एक तर्कसंगत प्रश्न पूछ रही हूँ।'' अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि इन भोले-भाले लोगों को इनके गुरु ऐसे वस्त्र पहनने की शिक्षा देते हैं जो भारत की गर्म जलवायु के लिए तो उपयुक्त हैं लेकिन अमेरिका की ठण्डी जलवायु के लिए बिल्कुल उपयुक्त नहीं हैं। वह व्यक्ति अत्यन्त बुद्धिमान था। गीता का उसे बहुत ज्ञान था और इसके विषय में बातें भी करता था। परन्तु मैंने उसे बताया कि गीता में कहीं भी नहीं लिखा कि आप धोती पहनों या अपना सिर मुंडवाओ।

हैरानी की बात है कि इन पश्चिमी लोगों ने अचानक भारतीय पहनावे अपना लिए हैं। क्या यह भी जातिवाद की प्रतिक्रिया थी? जातिवाद की प्रतिक्रिया के फलस्वरूप क्या यह ऐसी धारणाओं की उत्पत्ति है कि लोग इस प्रकार के कार्य करना चाहते हैं जो प्राय: गोरे लोगों ने नहीं किए थे, या यह

सभ्यताविरोधी आन्दोलन के चिन्ह् हैं जो समय-समय पर पनप उठते हैं? अत्यन्त आसानी से देखा जा सकता है कि घृणा और आन्तरिक शान्ति के अभाव के कारण पश्चिम के लोग अत्यन्त भ्रमित हैं। कोई भी उन्हें मूर्ख बना सकता है। पैरिस और मिलान में उद्यमी कोई भी फैशन आरम्भ कर सकते हैं जिसे निष्ठापूर्वक अपना लिया जाता है और फैशन के परिवर्तन के साथ हर साल इसे बदल दिया जाता है।

आरम्भ में मैंने इंग्लैण्ड में सात हिप्पियों पर कार्य किया और उन्हें ये समझाने का प्रयत्न किया कि किस प्रकार वे अपना उत्थान प्राप्त करें? चार वर्षों तक मैं उनके साथ जूझती रही। मैंने पाया कि उनमें भयंकर आक्रामकता और अशान्ति के संस्कार विकसित हो चुके थे। ये सभी लोग गोरे थे और यद्यपि कठोर पश्चिमी नियमों द्वारा संचालित प्रणाली के विरुद्ध उन्होंने विद्रोह कर दिया था, फिर भी उनके हृदय में श्यामवर्ण लोगों के लिए घृणा अब भी बनी हुई थी।

उदाहरण के रूप में इंग्लैण्ड की महारानी की दावतों में भाग लेने के लिए व्यक्ति को पीछे की ओर लटकता हुआ लम्बा कोट (Tail Coat) पहनना पड़ता है। महारानी की दावतों को अद्वितीय और सम्मानजनक उत्सव माना जाता है और इसके लिए भेजे गए निमन्त्रणों को बहुमूल्य यादगार मानकर सम्भाला जाता है ताकि आने वाली पीढ़ियाँ उन पर गर्व कर सकें। मैं हैरान थी कि दावत में भाग लेने के लिए लोगों से इस प्रकार का शाही कोट पहनने की आशा की जाती थी! परमात्मा का धन्यवाद है कि वहाँ जाने के लिए हमें अपने राष्ट्रीय वस्त्र पहनने की आज्ञा थी। धनवान राजदूतों के अतिरिक्त अन्य लोगों में क्योंकि ये शाही कोट सिलवाने की सामर्थ्य नहीं होती इसलिए अधिकतर लोग इन्हें मॉस ब्रदर्स (Moss Brothers) नामक दुकान से किराये पर लेते हैं। हर वर्ष सैकड़ों शाही कोट किराए पर लिए जाते हैं। किराए पर लेने वाले किसी-किसी व्यक्ति को यह कोट पूरा आता है, बाकी लोगों को या तो ये तंग होता है या ढीला। इन्हें पहनने वाले लोग या तो बहुत प्राचीन दिखाई

पड़ते हैं या अजीबोगरीब। मैं जिन लोगों को जानती थी वो भी पहचाने न जा रहे थे क्योंकि उनकी चाल ही बदल गई थी। या तो वे बहुत ही अटपटी धीमी गति से चल रहे थे और या फिर चार्ली चैपलिन की तरह से ढीली चाल में और कुछ लोग तो उन पुराने वस्त्रों की वजह से चिन्तित थे कि कहीं वे फट न जायें।

वास्तव में ये शाही कोट सोलहवीं शताब्दि के बादशाह के पीठ के पीछे निकले हुए कूबड़ को छिपाने के लिए एक दर्जी की चालाकी थी। इस प्रकार की बेवकूफ़ी को स्वीकार करते हुए लोगों को जब मैंने देखा तो मेरी समझ में न आया कि किस प्रकार अपनी हँसी को रोकूँ? परमात्मा का शुक्र है कि सभी राष्ट्रों के लोगों की अपनी राष्ट्रीय वेशभूषा में आने की इजाज़त थी। काँगों, इथियोपिया तथा अन्य अफ्रीकी देशों के लोग जिस प्रकार अपने वस्त्र पहनकर आए, वह वास्तव में आनन्ददायी था। इससे पूर्व इस प्रकार की वेशभूषाएं मैंने कभी न देखी थी। इन्होंने पूरे उत्सव को सुन्दर वैचित्र्य प्रदान किया। जो लोग अपने राष्ट्रीय वस्त्र पहनकर आए थे वे अत्यन्त सुखद स्थिति में थे और उन्होंने संगीत का पूरा आनन्द लिया, परन्तु मॉस ब्रदर्स से किराए पर ली हुई बेढब वर्दियाँ पहने लोग अत्यन्त चिन्तित थे और उनसे सहज रूप से बातचीत कर पाना भी कठिन था। सम्भवत: वे स्वयं को पुरातन कालीन महाराज (Lords) समझ रहे थे या महिलाओं से बात करते हुए उन्हें घबराहट हो रही थी।

पश्चिमी देशों में वर्ग-चेतना (Class Consciousness) जातिवाद से मिलती जुलती एक अन्य समस्या है। इंग्लैंड में उच्च वर्ग के लोग अपने पद के प्रति बहुत जागरूक हैं, निम्न वर्ग के लोगों से वे घुलते-मिलते नहीं हैं। हैरानी की बात है कि जर्मनी के लोगों के बारे में भी ये बात सत्य है। वो भी यही मानते हैं कि उच्च कोटि की जीवन कला में वे ही सिद्धहस्त हैं। स्वर्णसज्जित रोजेंथ़ल (Rosenthal) या कैसर क्रोकरी के बिना उनका काम नहीं चलता। उच्च वर्ग की इन चीज़ों के प्रति जागरूकता को आसानी से नहीं समझा जा सकता, क्योंकि उनके बच्चे वर्षों तक प्रयत्न करने के पश्चात भी सुगमतम

(O'Level) प्रारंभिक स्तर की परीक्षा भी उत्तीर्ण नहीं कर सकते!

स्वयं को अत्यन्त परिष्कृत समझने वाले फ्रेंच लोग, जहां तक कूटनीतिक समाज का सम्बन्ध है, अब ये समझ रहे हैं कि उनकी संस्कृति ने विनाश के अतिरिक्त उन्हें कुछ नहीं दिया। मदिरा पान विषय पर फ्रेंच भाषा में एक के बाद एक पुस्तक लिखी गई है। एमिली जोला, मोपासां, मोलियर और कुछ अन्य महान लेखकों के अतिरिक्त वहाँ किसी ऐसे लेखक को खोज पाना कठिन है जिसने महिलाओं के आत्मसम्मान को देखा हो। एक समय था जब कूटनीतिक सेवाओं के लोगों में फ्रांस के लोगों को अत्यन्त परिष्कृत माना जाता था। मैं नहीं जानती कि किस प्रकार लोग ये बात समझ गए कि यह तथाकथित श्रेष्ठता उथली है और ये कार्य भी नहीं करती। अब फ्रांस के लोग स्वयं अपनी संस्कृति की आलोचना करते हैं क्योंकि ये, जैसा कि हम जानते हैं, अत्यन्त कामुकतापूर्ण, निर्लज्ज और शराबी है। मैंने सुना है कि आजकल फ्रैंच लोग अपने मीडिया के माध्यम से केवल नग्न महिलाएं ही नहीं दिखाते, वे नग्न पुरुष भी दिखाते हैं। निःसन्देह सभी फ्रैंच फिल्मों में स्नानागार दृश्य तो निश्चित रूप से होते ही हैं। वीडियो, सिनेमा या दूरदर्शन के पर्दे पर अपने (Skinny) पीले रंग के त्वचीय शरीरों को नंगा प्रदर्शित होते हुए देखकर कभी-कभी फ्रांस के पुरुष परेशान दिखाई पड़ते हैं। फ्रांस के नए राष्ट्रपति श्री.चिराक की कृपा से शायद फ्रैंच लोग कूटनीतिक प्रभुत्व का पुनःप्रचलन प्राप्त कर सकें, क्योंकि प्रशान्त महासागर में अणुबम विस्फोट करके वह फ्रैंच प्रभुत्व को स्थापित करने का प्रयत्न कर रहा है। फ्रांस में बहुत से श्यामवर्ण लोग भी हैं जो अधिकतर फ्रांस के पूर्व साम्राज्यों से हैं। भूतकाल में उठाए गए कष्टों के कारण वे धर्मान्ध हो गए हैं और फ्रांस की संस्कृति पर आक्रमण कर रहे हैं। प्रजातिवाद का यही अन्तिम फल होता है।

जर्मनी जब खुल्लमखुल्ला अनैतिक हो गई तो कुछ ही वर्षों में हिटलर ने भी इसी प्रकार से फौजें एकत्र कर ली थीं। वह स्वयं भी प्रजातिवाद की ही

देन था। जो क्रूरता और अत्याचार उसने किए उन्हें वह स्वयं अवश्य तर्कसंगत मानता होगा, नहीं तो मानव को नष्ट करने की अपनी युक्तियों का उपयोग वह कैसे करता? जैसा कुछ लोगों ने उसके विषय में कहा है, वह शैतान से भी बदतर था, परन्तु हमें समझना चाहिए कि लोग किस प्रकार श्रेष्ठता के अपने विचारों में खो जाते हैं। ये अहंकारी लोग दर्शाना चाहते हैं कि वे पूरे विश्व के प्रभारी हैं और सोचते हैं कि किसी न किसी बहाने या तर्क के अनुरूप उन्हें अन्य लोगों के प्रति क्रूर होने का अधिकार है। हिटलर ने भी कभी ये जानने का प्रयत्न नहीं किया कि वह यहूदियों से क्यों घृणा करता है। उसके अपने जीवन में भी ये दर्शाने के लिए कोई प्रमाण नहीं है कि जर्मनी में रहने वाले किसी यहूदी ने उसे पीड़ित किया या हानि पहुँचाई। जर्मन चरित्रहीन परिस्थितियों का उसने पूरा लाभ उठाया। उन दिनों, जर्मनी में लोग अत्यन्त पतित एवं अभद्र तरीके से रहते थे। ये समझा जा सकता है कि उसके हृदय का विद्रोह उस समाज के लिए था जो महिलाओं को विलास के लिए उपयोग करता था। दूसरी ओर महिलाएं भी अपनी इच्छा से वैभवशाली तथा सशक्त पुरुषों को उपलब्ध थीं। धार्मिक और नैतिक कहलाने वाले यहूदी लोग अत्यन्त लालची भी थे। भयानक सूद की दरों पर वे धन उधार देते और कष्ट पहुँचाते हुए ऋणी व्यक्ति का पूरा जीवन पीछा करते।

यह एक अन्य प्रकार का अत्याचार है जिसमें व्यक्ति पतनोन्मुख समाज से धन एकत्र करके जीवन के ऐशो आराम पर मर्यादाविहीनता पूर्वक खर्च करता है। ऐसे समाज में, जहाँ कामुकता ही लोगों की जीवन शैली बन जाती है, कुकुरमुत्तों की तरह से लालची लोग पनप उठते हैं और दूसरे लोगों की कमजोरियों का फायदा उठाते हैं। परिणामस्वरूप भावना, प्रेम और करुणा विहीन लोग धनलोलुप बन जाते हैं। हिटलर जब सत्ता में आया तब भी जर्मनी में यहूदी ऐशोआराम के लिए उनसे ऋण लेने वाले लोगों से बेतहाशा पैसा बना रहे थे। हिटलर के मन में अपने देश के प्रति गहन भावना थी और उसे

लगता था कि उसका देश गहन संकट में है। उसने निष्कर्ष निकाला कि उसे इन लोभी यहूदियों को समाप्त करना होगा, क्योंकि उसके अनुसार ये जर्मनी के दुष्चरित्र मूर्ख लोगों का खून पी रहे थे। घृणा के इस विषय का तानाबाना अपने मस्तिष्क में बुनने का उसने निर्णय किया और इसे प्रभावशाली आकार में विकसित किया ताकि घृणा के इस नमूने के माध्यम से वह यहूदियों को नष्ट कर सके। इस कार्य के लिए उसने युवा जर्मन पीढ़ी को चुना। ऐसे सभी लोग सद्-सद्-विवेकहीन युवावर्ग के आदर्शवाद से खिलवाड़ करते हैं। जर्मनी के युवावर्ग ने हिटलर की बेतुकी योजनाओं के वास्तविक स्वभाव को न समझा,क्योंकि वे सब भी अत्यन्त अहंकारी लोग थे। युवा लोगों के मस्तिष्क को परिवर्तित कर लेना बहुत आसान था क्योंकि उनके मस्तिष्क में यहूदियों के प्रति घृणा करने का कुण्ठित विचार पहले से ही भरा हुआ था। उन्होंने यह कभी नहीं महसूस किया कि हिंसा से हिंसा बढ़ती है। यहूदियों की हत्या करने की अपेक्षा हिटलर ने चरित्रहीन,पतित समाज को सुधारने की बात क्यों नहीं सोची? दुर्भाग्यवश ऐसे महाअहंकारी व्यक्ति के मस्तिष्क में इस प्रकार के रचनात्मक विचार कभी नहीं आ सकते।

सर्वप्रथम तो वे सोचते हैं कि उन पर आश्रित लोगों, समाज तथा विश्व की रक्षा करने की जिम्मेदारी उनकी है। ऐसा मस्तिष्क ये कभी भी नहीं देख पाता कि इस प्रकार की सोच उनके अपने देश के लिए तथा अन्य लोगों के लिए भयंकर है। समाज की नैतिकता को पुन: प्राप्त करने के लिए किसी का वध करने का अधिकार हिटलर को बिल्कुल न था। कहा जाता है कि तिब्बत के दलाई लामा, जिन्हें उन दिनों आध्यात्मिक मुखिया चुना गया था, उनके पथ प्रदर्शक थे। इन दलाई लामाओं का चुनाव भी अत्यन्त रहस्यमय है। आजकल दलाई लामा पूरे वर्ष भर सारे संसार से विशेष तकनीक से धन की याचना करता रहता है। हिटलर कैथोलिक चर्च का भी पक्षधर था और चर्च ने अन्तत: हिटलर का पक्ष लिया। हिटलर के अनुसार दो हज़ार वर्ष पूर्व यहूदियों

ने ईसामसीह की हत्या की थी, इसलिए उसे यहूदियों का वध करना पड़ा। संयोग की बात है कि इस समय यूरोप के राष्ट्र मन्दे की चपेट में थे और इस कारण हिटलर के प्रयत्नों के माध्यम से जर्मनी में होने वाली घटनाओं के प्रति उनमें जड़वत् उदासीनता समा गई थी। अपने विचारों के अनुरूप आन्दोलन खड़ा करने में हिटलर को कई वर्ष लगे। आश्चर्य की बात है कि मानव प्रेम एवं सूझ-बूझ की अपेक्षा घृणा को कितनी सुगमता से अपना लेता है! कठोर अनुशासन एवं नैतिकता के प्रचार के माध्यम से उसने जर्मन युवकों को खड़ा किया। सर्वप्रथम उन्हें अपने सिर मुंडवाने पड़ते थे। आज भी अमेरिका तथा यूरोप में बहुत से सिरमुंडे लोग हैं। इसके पीछे, सम्भवत: विचार ये है कि सिर मुंडवाने से व्यक्ति स्वयं को बदशक्ल कर लेता है तथा नैतिकता का प्रतीक बनकर चरित्रहीनता और कामुकता के शिकार विनष्ट लोगों को आकर्षित करता है। भारतीय कुगुरुओं के विषय में भी ये बात अति सत्य है। मैं एक व्यक्ति से मिली, वह तस्कर था और बन्दी बना लिया गया था। जेल से बाहर आते ही वह तुरन्त 'सन्त' बन बैठा। उसने अपना सिर मुंडवा लिया और गेरुए रंग के वस्त्र पहनने लगा।

भारत में सभी साधक तथा सन्त बनने के इच्छुक लोग अपने सिर मुंडवाकर हिमालय में चले जाते थे और निर्वाण प्राप्ति की इच्छा से वहाँ पर एक टाँग पर खड़े होकर तप किया करते थे। ऐसा प्रतीत होता है मानो अनैतिकता के उद्देश्य से कुछ लोग अपने मुंडे हुए सिर या बालों की शैली का उपयोग भिन्न लिंगियों का ध्यान आकर्षित करने या उनका चित्तविक्षेप करने के लिए करते हैं। भिन्न लिंग के प्रति आकर्षक प्रतीत होने के लिए पुरुष और महिलाएं अपनी केश सज्जा का उपयोग करते हैं। केश सौन्दर्य के माध्यम से आकर्षक प्रतीत होने के लिए प्रसाधनों की दुकान पर जाकर लोगों को बेशुमार पैसे खर्चते देखा जा सकता है। हम कह सकते हैं कि मानव व्यक्तित्व की दो पराकाष्ठाएं हैं: पहली सभी प्रकार की शारीरिक और मानसिक

विलासिताओं में डूब जाना और दूसरी, सभी प्रकार के सुखों को त्याग कर अत्यन्त शुष्क, क्रोधी एवं आक्रामक बन जाना। आवश्यक नहीं है कि बाहर से अत्यन्त शुष्क एवं आक्रमक व्यक्ति अन्दर से बहुत चरित्रवान हो। हो सकता है सिर मुंडवाकर, सिर के भार खड़े होकर या सभी प्रकार के कर्मकाण्ड, त्याग और तपस्याओं द्वारा लोग अपनी अनैतिक गतिविधियों पर पर्दा डाल रहें हों या अपने अनैतिकता एवं भ्रष्टाचारपूर्ण जीवन के रहस्य को छुपा रहे हों। हमारे सामने ऐसे बहुत से कुगुरु हैं जिन्होंने श्रद्धावान लोगों पर उन चालाकियों का उपयोग किया और बाद में पता चला कि ये कुगुरु अत्यन्त क्रूर एवं दुराचारी थे।

हिटलर के आलोचक उसे अत्यन्त मूर्ख और विक्षिप्त व्यक्ति मानते हैं। यदि आप स्वयं अहंकारी नहीं हैं और किसी अहंकारी व्यक्ति को यदि आप सुने या देखें तो निश्चित रूप से उसकी बातों तथा आचरण की मूर्खता को स्पष्ट देख सकेंगे। परन्तु यदि आप स्वयं अहंकारग्रस्त हैं तो ये कहकर आप उसका विरोध करेंगे कि वह अपने अहं को जतला रहा है। एक अहंकारी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के अहंकार को आसानी से देख सकता है। परन्तु यदि आप अहंकारियों से डरने वाले व्यक्ति हैं तो या तो आप उनकी मूल्य प्रणाली को स्वीकार कर लेंगे या उस क्रूर व्यक्ति की क्रूरता तथा दासत्व स्वीकार कर लेंगे। कोई भी विकसित मानव किसी मूर्ख की बक-बक को साक्षी भाव से देखेगा और इस मूर्खतापूर्ण नाटक की विनोदशीलता का आनन्द लेगा।

हिटलर के विचारों ने इन दोनों प्रकार के लोगों को प्रभावित नहीं किया। उसने एक तीसरी प्रकार के लोगों के मस्तिष्क पर कब्जा किया जो अत्यन्त अबोध, सरल, अविकसित एव पूर्णतः अपरिपक्व थे : युवा लोग, जिन्हें उसने वर्षों तक तैयार किया। इन लोगों के लिए हत्या करना महान नैसर्गिक आनन्द बन गया। प्राचीन काल में लोग पशुओं का शिकार करने के लिए जंगल में जाया करते थे, विशेष रूप से चीते के शिकार के लिए।

परिणामस्वरूप चीते नरभक्षी बन गए तथा शेर मनुष्यों पर आक्रमण करने लगे तथा इन हत्याओं को स्वीकार करना पड़ा। यद्यपि पर्याप्त भोजन उपलब्ध न होने की स्थिति में पशुओं का मांस खाना तर्कसंगत था फिर भी जंगल में शिकार के लिए जाने वाले लोग ये हत्याएं केवल अपनी खुशी के लिए करते थे। इस भयानक इच्छा का परिणाम अत्यन्त भयंकर हो सकता है। जर्मनी में यहूदियों के विरुद्ध एक वीभत्स युद्ध छिड़ गया और यहूदियों को गैस कक्षों में मरना पड़ा क्योंकि वे अत्यन्त लालची और चालाक थे तथा हिटलर के विचारानुसार उन्होंने ईसामसीह की हत्या की थी। इन लालची लोगों को नियंत्रित करने के और भी बहुत से तरीके हो सकते थे।

नाज़ी आन्दोलन द्वारा युवा वर्ग पर पूर्ण नियन्त्रण कर लेने के पश्चात केवल एक समाधान जिसकी घोषणा हिटलर ने की, वह था यहूदियों का वध। समझ नहीं आता कि किस प्रकार जर्मनी के लोग अन्धे हो गए! हिटलर जैसे लोग अपने भाषणों में एक विशेष प्रकार का जोश उत्पन्न कर देते हैं। पहले से घृणा से परिपूर्ण लोगों के मस्तिष्क में उनके शब्द विस्फोटक का कार्य करते हैं। और यह अत्यन्त संक्रामक रोग है। एक बार जब यह आरम्भ हो जाता है तो इतनी तेजी से बढ़ता है कि व्यक्ति के पास सोचने का भी समय नहीं होता। प्रसारित होने के लिए प्रेम की शक्ति के मुकाबले घृणाशक्ति की गति बहुत तेज़ है।

विश्व के अन्य क्षेत्रों पर कब्जा करने वाले लोगों ने सोचा कि ये उनका अधिकार है कि वे अपने देश के नाम पर ऐसा करें, इसे उन्होंने देश के प्रति कर्तव्य माना। अपने देश के ध्वज को फहराना देशभक्ति के लिए बलिदान का प्रतीक बन गया। अपने आसुरी कार्य को हिटलर ने भी देशभक्ति का गहरा रंग प्रदान किया। आश्चर्य की बात है कि वह जर्मन जैसे देश में ही क्यों पैदा हुआ, जहाँ उसे अपने कार्य के लिए पतित समाज मिल गया और उसकी रणनीतियों को मानने के लिए युवा लोग मिल गए! सभी अहंकारी

अपनी बुद्धि-भागफल (I.Q.) का बहुत जल्दी विकास कर लेते हैं। वे जानते हैं कि अन्य लोगों पर रोब जमाकर अपनी योजनाओं को किस प्रकार कार्यान्वित करना है अपने अहंकार को किस प्रकार तर्कसंगत ठहराना है और जनता में अपने अहंकारलोलुप विचारों का प्रसार किस प्रकार करना है। इस प्रकार दैत्य की तरह उनका बुद्धि-भागफल (I.Q.) भयानक गति से विकसित होता है और उनके अन्तर्जात विवेक को धोखा देता है। स्वयं को तर्कसंगत ठहराकर जब व्यक्ति स्वयं को ही धोखा देने लगता है तो अपने अहं की जलती हुई अग्नि के कारण उसके चेहरे का रंग अग्नि के लाल रंग के तेज की तरह से चमक उठता है।

भारत में धर्मशाला में रहने वाले तिब्बत से आए शरणार्थी लोग इसका उदाहरण हैं। वे दलाईलामा के अनुयायी हैं जो विश्वभर में उनके लिए भीख माँगने में लगा रहता है। उनके चेहरों का रंग लाल है और वे अत्यन्त प्रसन्न प्रतीत होते हैं। अधिकतर अहंग्रस्त लोग महाप्रसन्न होते हैं परन्तु कपटबुद्धि के कारण उनमें से कुछ ऐसी जीवन शैली खोज सकते हैं जो अत्यालोचक (Hypercritical) होती है और यह दर्शाती है कि वे बहुत दुखी हैं। उनमें से अधिकतर महान त्रासदियाँ या विरह गीत पढ़ते हैं या ऐसी कहानियों का आनन्द लेते हैं जो किसी भी व्यक्ति को रुला दें। ऐसा प्रतीत होता है मानों वे शराब के प्रभाव में आँसू छलका रहे हों। वे स्वयं को बहुत दुखी दर्शाते हैं और गमभरी कविताएं उन्हें पसन्द होती हैं। सन्देह लाभ उन्हें देने के लिए कहा जा सकता है कि सम्भवत: उनका अहं दोलक की तरह से उन्हें दुख की तरफ दोलित करता है या हो सकता है कि उनका हृदय बिना ये बात समझे बिलख रहा हो कि वे भावनात्मक असंतुलन के कारण रो रहे हैं। वास्तव में ऐसे लोग अन्य लोगों को कहीं अधिक रुलाते हैं। किसी फिल्म में यदि ये किसी पात्र को सताकर पीड़ा देते हुए देख लें तो यही लोग अन्य लोगों को पीड़ा देने की योजना बनाते हैं। अपनी तुलना वे खलनायक से नहीं करते जो सारे दुखों और

कष्टों का कारण होता है। इसके विपरीत वे सोचने लगते हैं कि उनका भाग्य भी फिल्म में सताए गए व्यक्ति जैसा है। उनके मन में भ्रम बना रहता है कि वे अत्यन्त पीड़ित और दुखी लोग हैं। उत्तरी भारत में बहुत से लोग गज़ल संगीत का आनन्द लेते हैं। गज़लें उर्दू कविता होती हैं जो टूटे हृदय व्यक्तियों की भावनाओं, जुदाई की पीड़ा तथा कठोर हृदय महिलाओं द्वारा पहुँचाए गए कष्ट का वर्णन करती है। प्राय: शराबी लोग, जो अपने ही सोच-विचारों तथा काल्पनिक संसार में रहते हैं और कानूनी तौर पर विवाहित पत्नियों के प्रति जिनके हृदय में बिल्कुल प्रेम नहीं है, ही ऐसे संगीत का आनन्द लेते हैं। किसी समय पूरे विश्व पर शासन की इच्छा करने वाले प्राचीन यूनानी लोगों द्वारा लिखी गई यूनानी त्रासदियों के मूल में भी यही धारणाएं हैं।

मानव सूक्ष्म अन्तर्विरोधों का एक अजीब मिश्रण है, यदि वह जान जाए कि वह कितना क्रूर है तो सम्भवत: वह पृथ्वी पर न रह सकेगा। वृद्धावस्था तक भी अपने कर्मों को समझे बिना, मुनष्य, जीवन में इसी प्रकार के आदर्शों को अपनाए रहता है। बुद्धि-भागफल (I.Q.) परीक्षण द्वारा श्रेष्ठता का निर्णय अब गलत साबित हो चुका है और अब लोग भावना-भागफल (E.Q.) की बात करने लगे हैं क्योंकि इसके बिना बुद्धि भागफल असंतुलित एवं भयानक है।

भारत में अशोक नाम का एक राजा हुए जो युद्ध एवं हत्याओं में रत रहते थे। युद्ध में मारे गए लोगों के रक्त से पूर्ण नदी को जब उन्होंने देखा तो उन्हें आघात लगा और आश्चर्यचकित रह गये कि किस प्रकार वे इस तरह से विनाश किए जा रहे हैं! परिणामस्वरूप उन्होंने बुद्ध धर्म अपना लिया और इस करुणामय धर्म का प्रचार पूरे पूर्वी एशिया में करने का प्रयत्न किया। ऐसे हृदय परिवर्तन बहुत ही दुर्लभ होते हैं परन्तु भविष्य के लिए यह अत्यन्त ऐतिहासिक एवं आशीर्वादमय होते हैं। आशा करनी चाहिए कि निर्दयतापूर्वक हत्याएं करने वाले ये सभी भयानक लोग एक दिन सामूहिक स्तर पर देवदूतों में परिवर्तित हो जाएंगे। हिटलर से समय में यद्यपि हिंसा का

प्रकोप था, परन्तु यह अग्नि अब शान्त हो चुकी है। आप देख सकते हैं कि यह अग्नि अभी पूरी तरह से नहीं बुझी, राख के नीचे सुलग रही है। इस बुझी हुई अग्नि के प्रभाव पूरे विश्व में कभी-कभी नज़र आते हैं। विनाश के शोलों में परिवर्तित होने वाले मानव के व्यक्तिगत या सामूहिक क्रुद्ध स्वभाव को हम किस प्रकार पूरी तरह से समाप्त कर सकते हैं? पूरे विश्व में इस प्रकार के विस्फोट की समाप्ति क्या सम्भव है? यदि मानव समझ और जान लें कि सृष्टि के कण-कण में व्याप्त सर्वव्यापी परमेश्वरी प्रेम जो मानव की विकास प्रक्रिया के माध्यम से कार्य करता है तो ऐसा होना सम्भव है। मानव का चित्त यदि आत्मा के प्रकाश से ज्योतिर्मय हो जाए तो वे अपनी करुणा तथा आध्यात्मिक जीवन के उच्च मूल्यों का आनन्द लेने लगेगें। यह शाश्वत आनन्द है जो हिंसा प्रदत्त प्रसन्नता से कहीं श्रेष्ठ है। सम्भवत: आज ये घटित न हो सके परन्तु शान्ति का सन्देश पूरे विश्व की जनता में फैलने लगा है। शान्ति पुरस्कारों से इसे पूर्ण नहीं किया जा सकता। इन संस्थाओं को चलाने वाले तथा इन पुरस्कारों को पाने वाले लोगों को अपने अन्दर झाँककर देखना चाहिए कि क्या उनके अपने अन्दर वांछित प्रकाश है? व्यक्ति का परमेश्वरी व्यक्तित्व में पूर्ण परिवर्तन आवश्यक है, ऐसा व्यक्तित्व जिसे क्षमा का ज्ञान हो और अन्य लोगों की समस्याओं के समाधान खोज सके। हज़ारों सत्य साधकों में जब लोग ये परिवर्तन देखेंगे तो जनता में से बहुत से लोग उत्क्रान्ति की इस अन्तिम विधि को अपना लेंगे। तब वे साक्षात्कारी आत्माओं का अनुसरण करेंगे और ये आत्माएं उन्हें प्रेरित करेंगी और उनके मस्तिष्क में बसे हिटलर का वध करेंगी। हमें इस बात का ज्ञान नहीं है कि मूलत: हमारी शुद्ध इच्छा आनन्दमय अस्तित्व की उच्च चेतना को प्राप्त करना चाहती है।

बहुत से प्रजातन्त्र देशों में हत्याओं द्वारा हिंसा बहुत बड़ी समस्या है। सरकारें यदि दयावान और प्रजातान्त्रिक होंगी और जनहित के कानून व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आधारित होंगे तो बहुत से लोग, जिन्हें स्वतन्त्रता

की धारणा से जुड़े उत्तरदायित्वों की समझ नहीं होती, इन कानूनों को नहीं मानेंगे। प्रजातान्त्रिक देशों में सभी प्रकार की अव्यवस्था आरम्भ हो जाती है और व्यक्ति हैरान होता है कि ये प्रजातन्त्र कैसा बन गया है! इसे महान मान लेने मात्र से ही हिंसा की इस अन्तर्प्रवृत्ति की समस्या को नहीं सुलझाया जा सकता। हमें यदि भविष्य की चिन्ता है, हमें यदि इस बात की चिन्ता है कि हमारी आने वाली अबोध पीढ़ियों पर इसका घातक प्रभाव पड़ेगा तो अवश्य हमें उचित समाधान, उचित मार्ग खोजना चाहिए।

अमेरिका में एक ग्यारह वर्ष का बच्चा है जिसे कत्ल करने में विशेषज्ञ माना जाता है। इतनी छोटी उम्र में वह बहुत से लोगों की हत्याएं कर चुका है। भिन्न विधियों से ये हत्याएं भी बहुत सूक्ष्म हो सकती हैं। उदाहरण के रूप में मुस्लिम देशों में, जैसे उत्तरी भारत में, आप पुरुषों के इस प्रकार के अहंकारग्रस्त प्रभुत्व के प्रभावों को स्पष्ट देख सकते हैं। यहाँ पुरुष सोचते हैं कि महिलाओं पर प्रभुत्व जमाने और कष्ट देने का उन्हें पूर्ण अधिकार हैं। विशेष रूप से उत्तरी भारत में, कभी-कभी तो पुरुष अपनी महिलाओं के प्रति अत्यन्त वहशी एवं क्रूर हो उठते हैं। वे अपने आचरण को न्यायोचित ठहराए चले जाते हैं और पत्नियों के प्रति किए जाने वाले अत्याचार से अपना ध्यान हटाने में लगे रहते हैं। विवाहित महिलाओं के लिए वातावरण असुरक्षापूर्ण है। ये पुरुष स्वयं को श्रेष्ठ मानते हैं और सोचते हैं कि कानूनी रूप से उनकी विवाहिता पत्नियों की उचित भावनाओं तथा आकांक्षाओं को कुचलने का उन्हें पूर्ण अधिकार है, जबकि पत्नियाँ सहिष्णु होती हैं फिर भी उन्हें पीड़ा एवं दमनमय कठोर जीवन को मौनपूर्वक सहना पड़ता है। हो सकता है कि पुरुष बहुत योग्य हों या राष्ट्रीय मामलों के अधिकारी, वे दोहरा जीवन जीते हैं। जन जीवन में वे पूरे विश्व की कूटनीतिक सूझबूझ का प्रदर्शन करने का प्रयत्न करते हैं परन्तु अपने निजी जीवन में वे अपनी पत्नियों को सताते हैं और इसका उन्हें कोई अफसोस नहीं होता। पत्नियों की महत्वाकांक्षाओं का वे

वध कर देते हैं। तिरस्कारपूर्वक जब वे पत्नियों से व्यवहार करते हैं तो इसका कुप्रभाव बच्चों पर पड़ता है और बच्चे भी माँ का सम्मान नहीं करते। पिता क्योंकि अपने अहं में ही व्यस्त होता है उसके पास बच्चों के लिए समय नहीं होता। अपने बच्चों से उसे पूरा सम्मान मिलता है परन्तु बच्चे भी पिता की तरह से या उससे भी बद्तर जंगली बन जाते हैं। अच्छी माँ वही है जो समाज के लिए अच्छे नागरिकों का सृजन करे। पश्चिम में महिलाओं के अधिकारों की रक्षा करने के लिए बहुत से कानून हैं। परन्तु बहुत से विकासशील देशों में ऐसा कोई भी कानून नहीं। पश्चिमी महिलाओं ने क्योंकि अपने परिवार तथा समाज के प्रति जिम्मेदारी का प्रदर्शन नहीं किया इसलिए रूढ़िवादी लोग इन सुरक्षात्मक कानूनों को चुनौती दे रहे हैं।

व्यक्तिगत मामलों में स्थिति सुधार से परे की बात है। परन्तु उत्तर में जीवन की इसी शैली को स्वीकार कर लिया गया है। जापान में स्थिति और भी खराब थी परन्तु हाल के वर्षों में वहाँ महिलाओं की स्थिति वास्तव में सुधरी है। परन्तु अमेरिका में पारिवारिक संस्कृति दूसरी पराकाष्ठा तक पहुँच गई है। वहाँ महिलाएं पुरुषों पर शासन करती हैं और उन्हें सनकी बना देती हैं। भारत में महान सत्यनिष्ठ और चरित्रवान सामाजिक कार्यकर्ता हुए हैं जिन्होंने महिलाओं की स्थिति को सुधारने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु अब भी दयनीय बात यह है कि अपने आत्मसम्मान, परिवार, बच्चों के हित और पतियों के सम्मान की चिन्ता करने वाली महिलाएं इन अहंकारग्रस्त क्रूर पतियों के हाथों भयंकर पीड़ा उठा रही हैं! विश्वभर में महिलाओं के प्रति अमानवीय अत्याचार के असंख्य मामले हैं। मैं ऐसी बहुत सी महिलाओं को जानती हूँ जिन्होंने मुझे बताया कि किस प्रकार उनके पतियों ने जीवन में उनसे हिटलर की तरह से व्यवहार किया परन्तु वे खुलकर इस विषय पर बात करने का साहस भी नहीं कर सकतीं, अन्यथा उन्हें पहले से भी अधिक सताया जाएगा।

यह एक बार की हत्या नहीं है, परन्तु पत्नी के मानवीय व्यक्तित्व की

शनैः शनैः हत्या है। ऐसे परिवारों के बच्चे या तो माँ पर जाते हैं या पिता पर। यदि ये पिता पर जाते हैं तो भविष्य में विश्व के क्रूर लोगों के प्रतिनिधि बन जाते हैं। इस प्रकार समाज न केवल पुरुषों, परन्तु जिस प्रकार अमेरिका में है, दमनकारी महिलाओं से भी भर जाता है। स्पष्ट रूप से पति-पत्नी का अत्यन्त सन्तुलित समाज ही मानव के लिए सर्वोत्तम मार्ग है। ऐसा तभी सम्भव है जब हमारे नेता, राजनीतिज्ञ और अधिकारी पूर्णरुपेण संतुलित हों। ऐसा होना तभी सम्भव है जब जनकल्याण अधिकारीवर्ग अपनी विकास प्रक्रिया में उत्क्रान्ति को पा कर एक दूसरे का सम्मान करें। हर मानव में यदि सर्वशक्तिमान परमात्मा को प्रतिबिम्बित करने वाली आत्मा का निवास है तो यह मनुष्य के व्यक्तित्व में चमक सकती है तथा प्रेम एवं करुणा से दूसरे व्यक्ति को भी परिवर्तित कर सकती है। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् यदि कोई आक्रान्ता महसूस कर ले कि अब तक वह सुबुद्धिहीन जीव की तरह से व्यवहार करता रहा तो वह पूर्व आचरण को त्याग देगा और अत्यन्त सुन्दर, दिव्य व्यक्तित्व मानव बन जाएगा। डॉक्टर जैकिल (Dr.Jekyll) और श्री.हाइड (Mr.Hyde) की कहानी दो भिन्न पक्षों में विखण्डित व्यक्तित्व के पुरुष की कहानी है-श्री.हाइड के रूप में बुराई और डॉक्टर जैकिल के रूप में अच्छाई। श्री.हाइड, डॉक्टर जैकिल पर हावी हो जाते हैं और डॉक्टर जैकिल झुक जाते हैं तथा श्री.हाइड पूरा नियंत्रण कर लेते हैं। बुरी प्रवृत्तियों वाला व्यक्ति अपनी वृद्धावस्था में और बुरा हो जाता है तथा भयानक हो उठता है।

युवावस्था में परिर्वतन सुगम होता है। बड़ी आयु के लोग प्रायः निष्ठुर धूर्त बन जाते हैं, परिवर्तन उन्हें स्वीकार्य नहीं होता। ऐसे लोग सन्तों को गालियाँ देते हैं और भद्दे नामों से उन्हें बुलाते हैं। इस प्रकार का बुरा व्यक्ति किसी माफिया का मुखिया हो सकता है, विश्व स्तर की किसी संस्था का अध्यक्ष हो सकता है या किसी राज्य का प्रधान। ऐसे लोग सोचते हैं कि वे

आधुनिक उद्धारक हैं। वे नहीं जानते कि वे भी ध्रुवत्व के शिकंजे में फँस जाएंगे।

हमारे सम्मुख महाकाव्य रामायण के रचयिता महान सन्त वाल्मीकि का बहुत सुन्दर उदाहरण है। वे एक डाकू तथा अत्यन्त आक्रमक व्यक्ति थे। एकान्त सड़कों पर यात्रियों को लूटकर उस लूट के माल से अपने परिवार को पालना उनका पेशा था। एक दिन दिव्य पुरुष नारद को उन्होंने पकड़ लिया और उनका वध करना चाहा। महर्षि नारद ने उनसे पूछा, 'क्यों तुम इतने जघन्य कार्य करते हो? ''पैसे के लिए किसी की जान लेना अपराध है।'' वाल्मीकि ने उत्तर दिया, ''मेरा परिवार बहुत बड़ा है और मेरे पास उसे पालने का इसके अतिरिक्त कोई साधन नहीं।'' नारद ने उनसे पूछा, ''वे लोग तुम्हारे लिए क्या कर सकते हैं?'' वाल्मीकि ने उत्तर दिया, ''कुछ भी, जो मैं उनसे कहूँ।'' वाल्मीकि ने अत्यन्त विश्वास के साथ उत्तर दिया, ''निःसन्देह वो लोग मेरे लिए अपनी जान भी दे देंगे।'' नारद ने उन्हें कहा, ''तुम अपने मृत होने का स्वांग रचो और मैं प्रमाणित कर दूंगा कि कोई भी तुम्हारे लिए जीवन देने के लिए तैयार नहीं होगा। वे सब अत्यन्त स्वार्थी लोग हैं। सभी तुम्हारी पाप की कमाई खाना चाहते हैं।' डाकू इसके लिए तैयार हो गया। नारद ने उसके शरीर को उठाया और उसके परिवार तक ले गए तथा उसके मृत होने का नाटक किया। शोकाकुल परिवार के सदस्यों को नारद ने कहा, ''जो भी व्यक्ति इनके बदले अपनी जान देने को तैयार हो वह आगे आ जाए, उसकी जान के बदले में मैं वाल्मीकि को जीवन दे सकता हूँ। ये तो आप सब लोगों के लिए इतने चिन्तित रहते थे। केवल आप सब लोगों के पेट भरने के लिए इन्होंने बहुत से लोगों का वध किया, उन्हें लूटा और जघन्य अपराध किए।'' सभी ने बारी-बारी से कोई न कोई कारण बताया जिसकी वजह से अभी वो अपनी जान देने को तैयार न थे। मृत होने का नाटक करते हुए वाल्मीकि ने यह सब सुना। वह उठकर खड़ा हो गया और अपना पूरा परिवार त्यागकर आध्यात्मिक जीवन अपना लिया।

ये घटना यदि एक व्यक्ति के लिए सच है तो सभी के लिए सच हो सकती है। सन्त वाल्मीकि में वास्तव में महान सुप्त आत्मा थी। दुर्भाग्यवश आजकल हमारे मध्य कोई नारद नहीं है और न ही कोई वाल्मीकि। परन्तु सहजयोग के आगमन से हज़ारों लोगों में यह परिवर्तन आ गया है। ये परिवर्तन यदि विश्व की एक प्रतिशत जनसंख्या में भी हो जाए तो मुझे विश्वास है कि पीड़ित लोगों पर इसका बहुत अच्छा प्रभाव होगा और तब यह आक्रान्ताओं तक भी पहुँच जाएगा। अन्ततोगत्वा आक्रान्ता जान जाएंगे कि दूसरे लोगों को पीड़ा देना कोई विशेष आनन्ददायी कार्य नहीं है। इसके विपरीत आधुनिक समय में ध्रुवत्व के नियम के परिणामस्वरूप इस प्रकार के कार्य पलटकर आक्रान्ता को ही पीड़ित करते हैं।

मानव की लोभी प्रवृत्ति तथा बहुत सी वस्तुएं बटोर लेने की इच्छा भी लोगों को हिंसक अपराधों की ओर धकेल देती है। भूमि, सम्पत्ति, धन आदि का स्वामित्वभाव तथा लोगों पर शासन की भावना आदि भी इस प्रवृत्ति के कारण हैं- इस लालच एवं स्वामित्व भाव की मूर्खतापूर्ण धारणा के कारण व्यक्ति समाज, राज्य और राष्ट्र परस्पर लड़ते हैं। कहा जाता है कि जब हम पृथ्वी पर आते हैं तो हमारी मुट्ठियाँ बंद होती हैं, मुक्कों की तरह से। सम्भवत: इसका अर्थ ये हो कि आप पृथ्वी पर इसलिए अवतरित होते हैं कि जो भी सम्भव हो सके उसे हथिया लें,परन्तु जब आप संसार से जाते हैं तो हथियायी हुई सभी चीज़ें यहीं रह जाती हैं और आपको ख़ाली हाथ दूसरे विश्व में जाना होता है। मैं नहीं जानती कि कितने लोग स्वर्ग में जाएंगे और कितने नर्क में। इसी पृथ्वी पर स्वर्ग भी है और नर्क भी। कोई व्यक्ति किसी दूसरे को सताकर यदि उसके लिए नर्क बनाता है तो वास्तव में वह स्वयं उस नर्क में गिरता है क्योंकि हालातवश वह अभिशप्त हो जाता है। वह यदि समझ ले कि उसकी स्थिति उसके कर्मों का परिणाम है तो इसी पृथ्वी पर उसका उद्धार हो सकता है।

उदाहरण के लिए वास्तव में स्वतन्त्र व्यक्ति सभी पक्षियों को अन्दर आने की और सभी पशुओं को अपनी सम्पत्ति का चारा खाने की आज्ञा दे सकता है, बिना ये सोचे हुए कि इस प्रकार उसकी हानि हो रही है। परन्तु यदि उसमें उस भूमि के प्रति स्वामित्व भाव भरा हुआ है तो वह पशुओं और मनुष्यों का प्रवेश रोकने के लिए वहाँ पर बहुत बड़ी चारदीवारी खड़ी कर देगा। ऐसा व्यक्ति बहुत ही संकुचित मस्तिष्क, स्वार्थी व्यक्ति बनने लगता है। यहाँ तक कि वो अपने पिता,भाई, बहन, बचपन के दोस्त आदि को भी अपनी सम्पत्ति में प्रवेश नहीं करने देगा। नि:सन्देह वह विदेशियों से और उनके बच्चों से भी घृणा करेगा। इस प्रकार का स्वार्थ व्यक्ति विशेष तथा राष्ट्रों में भी चरम सीमा तक जा सकता है। तब यह हिंसा-भड़काऊ राष्ट्रीय धारणा भी बन सकती है। पश्चिमी देशों में आजकल एक अन्य सनक है कि पूर्वसाम्राज्यों के उन देशों को, जिन पर उन्होंने शासन किया, स्वामित्व जमाया और लूटा, अपने देश में आगमन करने की आज्ञा दें। सहचर्य के परिणाम स्वरूप उनके देश में आए हुए लोगों पर अब वे अप्रवासी की पट्टी (Label) लगाने का प्रयत्न कर रहे हैं। युगों तक वे उन देशों में रहे और अब वे बहुत पवित्र, विशुद्ध लोग बन गए हैं! अपने जीवन के सफेद कपड़ों पर अब वे विदेशी रक्त को सहन नहीं कर सकते। मेरी समझ में नहीं आता कि क्यों इतने भारतीय पश्चिमी देशों में बसना चाहते हैं? यदि आप उच्च पदारूढ़ अधिकारी नहीं हैं या आपके पास पाप की बेशुमार दौलत नहीं है तो वहाँ का जीवन अत्यन्त अपमानजनक है, बिल्कुल भिन्न संस्कृति का जीवन जिसमें कोई किसी का सम्मान नहीं करता।

इसके विपरीत भारत का समाज कहीं अधिक अनुकूल समाज है। भारत के लोग कहीं अधिक धार्मिक हैं और वे परम्परावश पृथ्वी माँ और अन्य सभी जीव जन्तुओं का सम्मान करते हैं। परन्तु आज भी बहुत से भारतीय अप्रवासी बनकर सभी देशों में कष्ट उठा रहे हैं। भारत में स्वतन्त्र जीवन का आनन्द

उठाने के स्थान पर वे धन कमाने तथा स्वयं को भारत में रहने वाले भारतीयों से ऊँचा होने की भावना के जाल में फँस जाते हैं। इंग्लैण्ड या अमरीका में बहुत ही कम भारतीय वास्तव में धनी हैं अधिकतर भारतीय बैंकों के णी हैं और उन्हें कमरतोड़ सूद चुकाना पड़ता है। कभी-कभी तो सूद की दरें इतनी बढ़ जाती हैं कि कर्ज़दार उन्हें दे भी नहीं पाता। तब बैंक कर्जद्वार की सम्पत्ति पर कब्जा करवा लेते हैं।

इटली में रहने वाले भारतीय बिल्कुल इटली के लोगों की तरह से उसी आधुनिक शैली में रहते हैं। उन्होंने पश्चिमी लोगों की अशान्त जीवनशैली को स्वीकार कर लिया है। वे यदि इटली के लोगों की तरह छुट्टी बिताने के लिए न जा सकें तो यह उनके लिए संकटावस्था होती है। परन्तु मैं कहूँगी कि आमतौर पर उन्होंने पश्चिमी लोगों का व्यभिचारमय जीवन नहीं अपनाया है। इसके विपरीत इटली में रहने वाले अत्यन्त पारम्परिक उत्तरभारतीय लोग अपनी पत्नियों को सताते हैं और अक्सर भारतीय लोगों की तरह से उनसे दुर्व्यवहार करते हैं। कनाडा में बहुत से गुजरातियों ने खुल्लमखुल्ला स्वीकार किया है कि वे समलिंगकामी (Homosexual) हैं। अमेरिका के अन्य समलिंगकामी लोगों से स्पर्धा करने के लिए वे बड़े-बड़े जुलूस निकालते हैं। कनाडा में रहने वाले भारतीयों की प्रगतिशीलता के रूप में वहाँ के मीडिया ने इसका प्रसारण किया। इन अप्रवासी भारतीयों का कोई आत्मसम्मान नहीं है। उन्होंने वहाँ रहने वाले भारतीयों को भी लज्जित किया है। उनमें गौरव और सम्मान का विवेक नहीं है। ये अप्रवासी लोग जब भारत आते हैं तो अपने माता पिता और देशवासियों को तुच्छ समझते हैं क्योंकि भारत में विदेशों के मुकाबले अच्छे स्नानगृहों, साफ़ सड़कों तथा घरों का अभाव है। अपनी झूठी धारणाओं से लोगों पर रौब जमाने के स्थान पर उन्हें चाहिए कि भारत की समस्याओं को समझें तथा भारत में रहने वाले अपने परिवारों को सफ़ाई का उपयुक्त उदाहरण देकर उनकी सहायता करने का प्रयत्न करें। उदाहरण के रूप

में एक व्यक्ति ने मुझे बताया कि भारत में भ्रष्टाचार की भरमार है और पंजाब में तो बहुत अधिक हिंसा भी है, इसलिए वह अपनी मातृभूमि नहीं लौटना चाहता। यदि सभी लोग इस देश की समस्याओं से दूर दौड़ेंगे और अपने देश को सँभालने की जिम्मेदारी से पलायन करेंगे तो उनका अन्य देशों में भी सम्मान नहीं होगा।

लोग सार्वभौमिक शान्ति की बात करते हैं। परन्तु हमें समझना होगा कि अभी तक लोगों में सार्वभौमिक चेतना का विवेक विकसित नहीं हुआ है। हमें समझना चाहिए कि संयुक्तराष्ट्र की भी सीमाएं हैं। यह सार्वभौमिक सरकार नहीं है, केवल बढ़ते हुए राष्ट्रों के प्रतिनिधियों की सभा है। आज जब हम दूसरी सहस्राब्दि से तीसरी सहस्राब्दि में प्रवेश कर रहे हैं तो ऐसे समय पर सार्वभौमिक सरकार का स्वप्न देखना क्या उचित न होगा?

यदि हम इस सरकार द्वारा सृजित की गई सार्वभौमिक शान्ति के विषय में सोच रहे हैं तो निश्चित रूप से इसे आध्यात्मिकता के साम्राज्य में प्रवेश करना होगा। इस सरकार के प्रतिनिधियों को आध्यात्मिकता से लैस होना होगा और उन्हें इसलिए चुना जाएगा क्योंकि अपने आन्तरिक सौन्दर्य और करुणामय पावन व्यक्तित्व के कारण वे प्रसिद्ध हैं। उनका चरित्र दिव्य प्रकाश से परिपूर्ण होना चाहिए। तब स्वाभाविक रूप से वे आत्मचालित होंगे, सत्ता और धन संचालित नहीं। अब भी ऐसे बहुत से लोग हैं और बहुत से और लोग आएंगे। परमेश्वरी शक्ति सभी नकारात्मक ताकतों को नष्ट करके इन आध्यात्मिक लोगों को मंच पर लाएगी। अपनी बाह्य और आन्तरिक शान्ति का आनन्द उठाना हर मानव का मौलिक अधिकार है। सभी शान्तिप्रिय राष्ट्र अपने अहं को त्याग कर परमात्मा की इच्छा का स्वागत करेंगे।

अध्याय 5

पाश्चात्य संस्कृति
(The Culture of the West)

संस्कृति किसी भी समाज के इतिहास, उसकी श्रद्धा, उसकी सोच-विचार, उसकी भावनाओं, उसकी आकांक्षाओं और उसके आदर्शों की देन होती है। लोगों की परस्पर बातचीत में तथा अन्य संस्कृतियों के लोगों से व्यवहार में यह प्रकट होती है। संस्कृति, सामाजिक शान्ति, विवेक और नैतिकता को दर्शाती है। अबोधिता एवं अध्यात्मिकता की अन्तर्जात संस्कृति, शान्ति, ईमानदारी एवं नैतिक विवेक का सृजन करती है। सर्वोपरि, अच्छी संस्कृति मधुर एवं भद्र भाषा तथा शान्त पारिवारिक जीवन तथा समाज प्रदान करती है।

आधुनिक युग के हम लोग जिन खतरों में से गुजरे हैं और उत्सुकतापूर्वक जिन आघातों का हम पूर्वानुमान करते हैं, वे सब स्वतन्त्र प्रजातान्त्रिक समाजों की मूल्यप्रणाली में अन्तर्निहित है। इस अनुज्ञात्मक (सभी कार्यों की आज्ञा देने वाली) समाज की संस्कृति मानव मस्तिष्क को असन्तुलित ढंग से प्रतिक्रिया करने को विवश करती है। गृहस्थ जीवन में क्योंकि निजी-जीवन तथा आन्तरिक आत्मविकास की गुणवत्ता को कोई महत्व नहीं दिया गया है, निजी-जीवन की बागडोर उन लोगों के हाथ में है जिन्होंने स्वतन्त्रता के नाम पर आदर्श संस्कृति की सारी रचनात्मक, पोषक एवं सहायक शक्तियों और अनुशासनों को त्याग दिया है। इस प्रकार पश्चिमी देशों के लोगों ने परस्पर अपने लिए, अपने शरीर के लिए, अपने मस्तिष्क के प्रति और जीवन के प्रति सारा सम्मान खो दिया है। मानव को निजी जीवन या अपने गुप्तांगों का भी सम्मान नहीं रहा है। अत्याधुनिक लोग सभी प्रकार के अटपटे फैशनों के साथ नग्नता एवं शरीर प्रदर्शन को अपना रहे

हैं। वे अत्यन्त अजीबोगरीब आचरण, असभ्य नृत्यशैली तथा सभी प्रकार के मूर्खतापूर्ण सम्प्रदायों और पंथों को अपना रहे हैं।

ये महसूस करना अत्यन्त आवश्यक है कि आधुनिक सौन्दर्य-शास्त्र में शालीनता (Aesthetics) और आत्मसम्मानभाव का कोई स्थान नहीं है और इसका कारण जानना भी कठिन नहीं है। कुगुरुओं द्वारा बनाई गई निर्लज्ज एवं मूर्खतापूर्ण संस्थाओं के जिस प्रकार हम अंग-प्रत्यंग बनते हैं, आनन्दोत्सव (carnivals) जैसे सनकी और मूर्खतापूर्ण त्यौहारों में भाग लेते हैं, चर्च के Halloween त्यौहार पर श्रद्धागीत गाते हैं और अर्थहीन मन्त्रोच्चारण करते हैं, यह सब देख पाना अत्यन्त भयानक है। आधुनिक लोग अपने मानवीय व्यक्तित्व के मूल्य के प्रति न तो कोई सम्मान दिखाते हैं और न जागरूकता। जिस प्रकार से जनता के सम्मुख वे अपने निकृष्टतम पाशविक गुणों को अभिव्यक्त करते हैं (जैसे शैतानी के बहाने निम्नतम और अपरिष्कृत आचरण को उत्साहित करने का पक्ष भिन्न पंथ लेते हैं) वे मूलत: सेड (Sade) या फ्रॉयड के सिद्धान्तों जैसे हैं कि मानव को साहसपूर्वक अपने निकृष्टतम स्वभाव की अभिव्यक्ति करनी चाहिए, उसे पाखण्ड नहीं करना चाहिए।

परन्तु मानव जीवन का लक्ष्य क्या है? इस महत्वपूर्ण विषय के प्रति वास्तव में कोई भी चिन्तित नहीं प्रतीत होता! मानव की ये सारी गतिविधियाँ एक ऐसी सीमा तक पहुँच गई हैं कि परिवार के लिए छोटे बच्चों को सँभालना भी असम्भव होता जा रहा है और अत्यन्त छोटी आयु में वे सभी प्रकार की विनाशकारी और स्वयं को प्रतिष्ठाहीन करने वाली गतिविधियों में फँस रहे हैं।

दस वर्ष पूर्व रोम में मैं एक प्रर्दशनी में गई जहाँ विकसित और विकासशील देशों की आधुनिक कलात्मक उद्यमों का प्रदर्शन किया जा रहा था। जब हम बतार्निया के मण्डप में पहुँचे तो हमने देखा कि वे भद्दे (Punk) रंग, भद्दे टोप, भद्दे वस्त्र और भद्दी टोपियाँ बेच रहे थे। मण्डप से आगे बहुत

से इटली के लोग खड़े हुए हँस रहे थे। मेरे साथ जो महिला थी उससे मैंने पूछा, ''ये लोग क्यों हँस रहे हैं?'' उसने उत्तर दिया, ''इटली के लोगों में अभी तक भद्देपन का विवेक है।'' भद्देपन की ये आधुनिक धारणा बहुत से लोगों के लिए हास्यास्पद है, इसमें कोई सन्देह नहीं। परन्तु बाद में मेरे कार्यक्रमों में जब वे बेतुकी पसन्द वाले लोग मुझे मिलने आए तो उन्होंने शिकायत की कि उनकी आँखों की देखने की शक्ति कम हो रही है। मैंने उन्हें बताया, ''अपने सिर पर इन रंगों (Dyes) का उपयोग मत करो। हो सकता है यही रंग आपकी दृष्टि को प्रभावित कर रहे हों।'' उन्होंने उत्तर दिया, ''समस्या क्या है? ज्यादा से ज्यादा हम अन्धे ही तो हो जाएंगे, इससे क्या फर्क पड़ता है?'' यह देखकर मैं वास्तव में हैरान थी कि कितनी भयंकर कीमत चुकाकर अपनी पहचान स्थापित करने के लिए वे इन कुरीतियोंपूर्ण सम्प्रदायों में लिप्त हो रहे थे! मेरी इच्छा थी कि उन्हें बताऊँ कि व्यक्तित्व की पहचान अन्तर-निहित है, बाहर आपके वस्त्रों और बालों में नहीं।

जब तक आप आत्मज्ञान नहीं प्राप्त कर लेते तब तक पहचान नाम की कोई चीज़ नहीं होती। आत्मज्ञान के बिना प्राप्त की गई पहचान केवल दिखावा मात्र होती है और ज्यों ही व्यक्ति जीवन की कोई अन्य शैली अपनाता है, ये पहचान समाप्त हो जाती है। मोहम्मद साहब ने भी कुरान में कहा है कि 'स्वयं को जाने बिना आप परमात्मा तक नहीं पहुँच सकते।'

यह बात समझ ली जानी चाहिए कि प्रजातन्त्र द्वारा लोगों को दी गई स्वतन्त्रता उनके निजी जीवन तथा पूरे सामाजिक जीवन को नष्ट करने के लिए नहीं है। समाज में मान्यता प्राप्त करने के लिए विनाशकारी निजी आचरण रिस-रिस कर समाज में आ जाता है। इस प्रकार प्रजातन्त्र देशों में विनाश का आरम्भ बाहर से न होकर अन्दर से है। इन देशों के लोगों में न तो कोई सम्मान है न निजी सम्बन्ध हैं और न अपने अस्तित्व की सूझ-बूझ, जो अत्यन्त गरिमामय और महान होती है और यदि इसे खोज लिया जाए तो यह

व्यक्ति को अपनी महानता का पूर्णदर्शन प्रदान करती है। सर्वप्रथम पारिवारिक जीवन में भयंकर समस्याएं खड़ी हो गईं क्योंकि विवाह उपरान्त भी साथी छांटने की स्वतन्त्रता है, तलाक की स्वतन्त्रता है और अकारण नौ-दस बार विवाह करने की भी स्वतन्त्रता है! अधिक से अधिक बार तलाक लेने का रिकार्ड तोड़ने की वे डींग मारते हैं!

समाचार पत्र में अमेरिका की एक महिला के विषय में मैंने पढ़ा जिसने आठवीं बार विवाह किया था और जो अपने से बहुत छोटे पुरुष के साथ हनीमून (मधुमास) मनाने जा रही थी। हनीमून के लिए उनका प्रस्थान देखने के लिए उनके उद्यान में चार हज़ार लोग थे। इसके अतिरिक्त दस हैलीकोप्टर उद्यान में उपस्थित मेहमानों पर पैराशूट से लोगों को उतार रहे थे। उनमें से कुछ तो पेड़ों पर उलझ गए! इन वयस्क लोगों का यह कितना मूर्खतापूर्ण आचरण है! वे किस प्रकार के व्यस्क हैं? जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण तो अत्यन्त बचकाना और उथला है! न उनके कोई मूल्य हैं और न ही उन्हें अपने समय का कोई सम्मान है! जीवन पर्यन्त चीज़ों को देखने की उनकी शैली भी अत्यन्त मूर्खतापूर्ण होती है।

हाल ही में एक पार्टी में झंझोड़ नृत्य (Shake Dance) के लिए आए अस्सी वर्ष से ऊपर की आयु के अभिनेताओं और अभिनेत्रियों के समूह को जब दूरदर्शन पर दिखाया गया तो युवाओं की तरह से आचरण करने का उनका दृश्य अत्यन्त वीभत्स था। अपनी कारों से जब वे उतरे तो पहले ही अपनी छड़ियों के सहारे कांप रहे थे। इन जर्जर हड्डियों वाले, आधुनिक वस्त्रों से ढके, झुर्रियों तथा काँपती हुई हड्डियों का प्रदर्शन करते हुए वृद्ध लोगों के लिए इस प्रकार के आडम्बरपूर्ण झंझोड़-नृत्य की व्यवस्था करने की कोई आवश्यकता नहीं थी।

मुकाबला इस बात का है कि किस प्रकार निरन्तर युवा बने रहें तथा

प्रतीत हों। कम से कम, युवा लोगों की तरह से व्यवहार करने की विधि सीख लेना। वास्तव में वृद्ध होना विवेक एवं परिपक्कता की स्थिति प्राप्त करना है। मनुष्य ने यदि वृद्धावस्था तक पहुँचकर भी अपने ज्ञान तथा सामान्य विवेक को बनाए रखा है तो उसे इस पर गर्व होना चाहिए। वृद्धावस्था का महत्व एवं इसकी गरिमा निश्चित रूप से युवावर्ग की रक्षा करेंगे। परन्तु यदि वृद्ध लोग भी आधुनिक समाज के पागलपन को अपनाना चाहते हैं तो कहा जा सकता है कि हर चीज़ की आज्ञा देने वाले समाज द्वारा दी जाने वाली स्वतन्त्रता के कारण स्वतन्त्रता की पहाड़ी ढलान की फिसलन से लुढ़क कर इन लोगों ने परिपक्कता खो दी है।

वृद्ध लोगों में आज विवेक के स्थान पर सठियापा (Senility) अधिक दिखाई पड़ता है। जिम्मेदार पदों पर आरूढ़ राजनीतिज्ञों जैसे लोगों में इसकी अभिव्यक्ति का कारण कभी न शान्त होने वाली तर्कसंगति (Rationality) का प्रभाव भी हो सकता है।

मैंने एक पत्रिका (Photographer's Journal July, 1994, "A great Message") में पढ़ा कि महिलाओं को ऐसे वस्त्र पहनने चाहिएं जो पत्रिकाओं के कामुक संस्करण बेचने में सहायक हों, परन्तु सर्वप्रथम उन्हें अपनी टाँगें उघाड़नी होंगी, कन्धे उघाड़ने होंगे और ऐसे वस्त्र पहनने होंगे जिनसे उनके शरीर का अधिकतम प्रदर्शन हो सके। ये सभी कुछ गलियों या पार्टियों में उपस्थित पुरुषों को आकर्षित करने के लिए है। पश्चिम की महिलाओं को ऐसे विचार स्वीकार करने की क्या आवश्यकता है जो आत्म सम्मान को नहीं दर्शाते? वेश्याओं की तरह से पुरुषों के पागल मनोवेगों का दास बनने की उन्हें क्या आवश्यकता है? क्या पावित्र्य की रक्षा करने के लिए अपने व्यक्तित्व का सम्मान करने का विवेक उनमें नहीं है? यह संस्कृति ऐसी महिलाओं को वेश्याओं के स्तर तक गिरा देगी। एक विशेष प्रकार का मीडिया दलालों का काम करता है जिन्होंने महिलाओं को शरीर के मूल्य के

प्रति चेतन कर दिया है, उस शरीर के मूल्य के प्रति जो परमात्मा का मन्दिर है। क्या इस शरीर का उपयोग पुरुषों की दुर्बलताओं को भड़काने के लिए महिलाओं के शोषण द्वारा होना चाहिए? पश्चिमी देशों में महिलाओं का शारीरिक शोषण आजकल बहुत बड़ा व्यापार है। वेश्याएं कहती हैं कि धनार्जन के लिए उन्हें ये सब करना पड़ता है, परन्तु सम्माननीय महिलाओं के पास क्या बहाना है?

विवाहित महिलाओं, माताओं, बेटियों और नानी-दादियों ने जीवन में किसी भी प्रकार की भूमिका निभाने के मामले में अपने पद तथा व्यक्तित्व की विश्वसनीयता खो दी है। जीवन पर्यन्त अपने शरीर को कठोर परिश्रम द्वारा प्रलोभन योग्य बनाए रखने वाली इन महिलाओं पर निर्भर समाज की सृष्टि करने के लिए कितनी चालाकी से महिलाओं को पतन के गर्त में ढकेला गया है, ये बात प्रशंसनीय है। चरित्रवान परिवार की सृष्टा के रूप में स्वयं को स्थापित करने के लिए, पुरुषों से लड़ने के लिए नहीं, महिलाओं को संगठित होना होगा। परिवार के रक्षक और प्रोत्साहक के रूप में उन्हें स्वयं को सिद्ध करना होगा। एक सुन्दर समाज का सृजन और उसका पोषण करना उनकी जिम्मेदारी है। आम जनता में नग्न या अर्धनग्न होने से वे अपनी अन्तर्जात पावन शक्तियों को खो रही हैं।

इसके विपरीत, नि:सन्देह, महिलाओं के प्रति इस्लामिक लोगों का दृष्टिकोण अत्यन्त भयानक है। महिलाओं को पावन जीवन प्रदान करने के लिए हज़रत मोहम्मद ने जो हितकर विचार प्रस्तुत किए थे, धर्माधिकारियों ने उन सब विचारों को उल्टी दिशा में घुमा दिया है। पैगम्बर के सन्देश का बिल्कुल गलत अर्थ निकाला जा रहा है। सारी अच्छाई और पावित्र्य का दायित्व महिलाओं को दे दिया गया है। पुरुष इससे मुक्त कर दिए गए हैं। माताएं तथा बहनें परिवार की नारी शक्तियाँ हैं। वे भय के साए में जीवित हैं। जहाँ माँ को पथप्रदर्शक और नियन्त्रक शक्ति होना चाहिए, क्योंकि पुरुष

अपने कार्य में व्यस्त हैं, इस प्रकार का वातावरण बना दिया गया है कि उनके पास बच्चों को देखने और मार्गदर्शन करने के लिए समय नहीं है। इस्लामिक देशों में दुराचरण के कारण पत्थर मारकर बहुत सी महिलाओं की हत्या कर दी जाती है।

महिलाओं का यदि सम्मान किया जाए तो वे सम्मानजनक बन जाती हैं। करुणामय महिलाएं समाज के लिए आभूषण बन सकती हैं। ऐसी महिलाएं ही समाज की परिरक्षक होती हैं। सारी कठिनाईयों के बावजूद भी वे परिवार को ठीक प्रकार से बनाए रखती हैं। वे अत्यन्त शान्ति प्रदायक होती हैं तथा उनका धैर्य उनके पुत्रों को उच्च स्तर के पुरुष बना सकता है। इसके विपरीत पश्चिमी देशों की महिलाएं अपनी चरित्रहीनता की डींग मारती हैं। वे अपनी लम्पटता की शेखी बघारती हैं और बताती हैं कि उन्होंने कितने पुरुषों को सम्मोहित किया। वे ये नहीं समझ पातीं कि वे स्वयं पुरुषों के हाथ पड़ने की कोशिश कर रही हैं। वे स्वयं को नष्ट करती हैं और पुरुषों को भी।

मैं एक अमेरिकी महिला को जानती हूँ जो लन्दन में मेरे पास आई और पूछने लगी कि क्या मैं मदिरालयों में जाती हूँ? मैंने कहा, ''मैं शराब नहीं पीती, अतः मदिरालय भी नहीं जाती?'' वह कहने लगी, ''मेरे पास मदिरालयों की एक सूची है। क्या आप जानती हैं कि लन्दन का सबसे अच्छा मदिरालय कौन सा है? मैंने कहा मैं नहीं जानती।'' उसने कहा, ''यहाँ पर एक मदिरालय है जिसे हैरोविक मदिरालय (Harrowich Pub) कहते हैं। यहाँ एक पुरुष की मृत्यु हो गई थी और वह आज भी वहाँ मौजूद है। उसकी बदबू, जाले (Cobwebs), शरीर के अतिरिक्त उसका सभी कुछ वहाँ भलीभांति सुरक्षित है। हम उस मदिरालय में गए और वास्तव में नशे में धुत्त होने का बहुत आनन्द आया।'' परन्तु उसने मुझे बताया कि वह बहुत ही खुले दिल की महिला है और अपने बेटों को भी शराब पीने की आज्ञा देती है। ''आप क्यों शराब नहीं पीतीं? आपको शराब पीनी चाहिए। मेरे दो बेटे हैं। एक चौदह वर्ष का और दूसरा बारह का। वे शराब पीते हैं और इस कार्य में मैं

उनकी सहायता करती हूँ, विशेषतौर पर उनके जन्मदिवस के अवसर पर।'' बाद में मैंने सुना कि छोटा लड़का मित्रों के साथ अपना जन्मदिवस मना रहा था और माँ ने उस दिन उन्हें बहुत सी शराब दी होगी। माता-पिता अपने कमरों में सो रहे थे, बच्चों ने किसी तरह से शराब बिखेर दी और पूरे घर में आग लग गई। पूरा परिवार जलकर मर गया और लड़के के बहुत से मित्र भी मृत्यु को प्राप्त हुए। हमारे कर्मों का यह एक बहुत ही दु:खद उदाहरण है। हमें ऐसा क्यों करना चाहिए?

संस्कृति अगर सफल हो तो यह स्वयं को बहुत सी सामाजिक विधियों से अभिव्यक्त करती है जैसे नैतिकता, परिपक्वता और दूरदर्शिता। आजकल सदाचार का अभाव है और हर समय घिनौनी भाषा का उपयोग किया जाता है। उच्चवर्ग की पार्टियों में इतने निम्नस्तर के घटिया मज़ाक किए जाते हैं कि ऐसा प्रतीत होता है मानो उन्होंने ये शब्द वेश्यालयों से लिए हों। फिल्मों में भी भयानक शब्दों का उपयोग होता है जो किसी भी शालीन व्यक्ति को आघात पहुँचाते हैं। ये घिनौने शब्द गंवारू या अपरिष्कृत लोग उपयोग नहीं करते। इनका उपयोग जीवन में उच्चपदारूढ़, सत्ताधारी राजनीतिज्ञ, अधिकारी वर्ग, विशेष रूप से कूटनीतिज्ञ करते हैं। न्यायालयों में भी भद्दी गालियाँ सुनी जा सकती हैं। आधुनिक युग में समाज का दर्पण कहलाने वाला साहित्य घृणास्पद सामग्री से भरा पड़ा है। छोटे-छोटे बच्चे भी अश्लील (Pornographic) पत्रिकाएं पढ़ना चाहते हैं क्योंकि वे यौन महाविज्ञान का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। स्कूलों में खुल्लमखुल्ला यौनशिक्षा द्वारा उत्पन्न की गई उत्सुकता का यह परिणाम है।

किसी ने मुझसे किशोर बच्चों के लिए कोई उपन्यास देने के लिए कहा। मुझे पुस्तकों की एक दुकान पर जाना पड़ा और वहाँ मैंने जिल्द पर बच्चों के सुन्दर चित्रों वाली एक पुस्तक देखी, जब मैंने इसे पढ़ना शुरु किया तो मुझे आघात लगा। वह पुस्तक दो महिलाओं के मध्य समलिंग यौन सम्बन्धों पर

लिखी गई थी, जिन्हें चाबी के छेद (Key Hole) में से एक छोटी लड़की देखती है!

नारकीय विचार खोजकर उन्हें छाप देने वाले लेखकों को अन्य लेखकों की अपेक्षा अच्छा माना जाता है। आश्चर्य की बात है कि उनमें से अधिकतर को पुरस्कार और धन दिया जाता है। अपने परिवार के लिए सभी प्रकार के दुष्कृत्य करने वाले किसी माफिया प्रमुख के जीवन को न्यायोचित ठहराते हुए कोई यदि पुस्तक लिख कर उसे गौरवान्वित करे, क्योंकि वह ये सब दुष्कृत्य अपने परिवार के लिए कर रहा है, तो वह लाखों रुपये प्राप्त कर सकता है!

जब मैंने ये जानना चाहा कि विवाहोपरान्त प्यार के विषय में इन लेखकों के क्या विचार हैं तो शोधकर्ताओं ने मुझे बताया कि अंग्रेजी, इटालियन, स्पेनिश और अमरीकन भाषाओं में ऐसी कोई पुस्तक उपलब्ध ही नहीं है, विवेकशील उपन्यासों में भी नहीं। बार्बरा कार्टलैण्ड (Barbara Cartland) की रोमांचकारी पुस्तकें यदि आप खरीदें तो वे भी नायक और नायिका के विवाह से पूर्व समाप्त हो जाती हैं।

इस संस्कृति का सारतत्व ये है कि पैसा ही बहुत महत्वपूर्ण है। इंग्लैण्ड में एक अवयस्क लड़की कैबरे एवं नग्न नृत्य करती थी और उसे पुलिस ने गिरफ्तार कर लिया। माता-पिता को बिल्कुल भी बुरा न लगा और उन्होंने भी उस पर बनाई गई वीडियो फिल्म को पूरे परिवार के साथ देखा। ''जब तक वो धन कमाती है, हमें क्या एतराज हो सकता है?'' वे इसे स्वीकार करते हैं। अमरीका में, विशेष रूप से, छोटी आयु के पुरुष अपने से बहुत बड़ी महिलाओं के साथ विवाह करते हैं, ऐसी महिलाओं से जिनका एक पैर चाहे कब्र में हो, परन्तु उनके पास बहुत धन हो! ये महिलाएं यदि विज्ञापन में ये बताएं कि उन्हें कोई असंक्रामक जानलेवा बीमारी है तो बहुत से करुणामय लड़के उन महिलाओं की रक्षा करने के लिए विवाह के आवेदन पत्र भेज देते हैं। पत्नी की यदि मृत्यु नहीं हो रही होगी तो वे तलाक ले लेंगे तथा निर्वाह

खर्च लेकर अमीर बन जाएंगे। बहुत सी किशोरियाँ भी बहुत वृद्ध पुरुषों से विवाह कर लेती हैं ताकि उनके वृद्ध पति की मृत्यु हो जाए और उन्हें कानूनी रूप से बहुत बड़ी जागीर प्राप्त हो जाए!

लोगों में एक असत्य धारणा है कि धन ही आनन्द का स्रोत है। पैसा अस्थायी प्रसन्नता प्रदान कर सकता है परन्तु खर्च हो जाने पर वही अप्रसन्नता बन जाती है। शाश्वत जीवन प्राप्त किए बिना व्यक्ति अच्छी तरह से सो भी नहीं सकता। सारी रात यही सोचता रहता है कि किस प्रकार लुटेरों या बैंक रूपी कृत्रिम लुटेरों से धन को बचाया जाए।

आशीर्वाद के रूप में जो धन मनुष्य को प्राप्त होता है वह दान, उदारता, सृजनात्मक कलाकारों, लेखकों, कवियों की कला का आनन्द लेने तथा ज़रूरतमंद लोगों की वास्तविक मदद करने के लिए होता है। इस प्रकार का खर्च पूरे विश्व की खुशियाँ प्राप्त कर सकता है, जबकि लालची धनवान इतिहास में समाज को काटने वाले शिकारी कुत्तों के नाम से जाने जाते हैं। जीवन में पापमय होने के कारण वे विनाश एवं दुख के शिकार हो जाते हैं। भारत के राजनीतिज्ञ इतने लोभी हैं कि वे अपनी दीवारों को भी नोटों से भर देना चाहते हैं!

आधुनिक युग के रोगी एवं पतनशील लोगों की यह कैसी संस्कृति है? कुछ लोग यदि इस अंधी चूहादौड़ से बाहर निकल सकें तो वो देख पाएंगे कि किस प्रकार सारा समाज नर्क में जा रहा है। उन्हें सोचना चाहिए कि उनके उन वंशजों का भविष्य क्या है जिन्हें इस संस्कृति के शिकंजों से निकलना है। जैसा हम देखते हैं, अधिकतर गोरों के बच्चे नहीं है, इसलिए उनका विकास भी न के बराबर है। तो जो धन उन्होंने एकत्र किया है उसका वे क्या करेंगे? अधिक से अधिक विनाशकारी आदतों में फंसकर वे स्वयं को, तथा पूरे राष्ट्र को नष्ट कर सकते हैं।

वास्तविकता में ही समग्रता (Totality) का निवास है। बहुत से सुन्दर

एवं रचनात्मक स्वप्न है। परन्तु यदि मानव अभद्रता और गन्दगी का इच्छुक है तो उसे बचाया नहीं जा सकता क्योंकि सुखद प्रजातन्त्र के साम्राज्य में मनुष्य को अपना सर्वनाश कर लेने की स्वतन्त्रता का आश्वासन प्राप्त है।

पाश्चात्य पुरुषों और महिलाओं के मस्तिष्क में सबसे बड़ा दोष ये है कि उनमें दिव्य विवेक नहीं है, अतः वे कोई भी प्रचलित चीज़ स्वीकार कर लेते हैं। पच्चीस वर्ष पूर्व कोई भी समुद्रतट पर छुट्टी के विषय में नहीं जानता था। परन्तु आजकल समुद्रतट पर सूर्य स्नान करने के लिए लोग पैसा जोड़ते रहते हैं, जबकि पौधा-घर-प्रभाव (Green House Effect) के कारण वे लोग अपने देशों में गर्मी से उबल रहे होते हैं। ऐसे लोगों को खोजने के लिए दूर जाने की ज़रूरत नहीं पड़ती जो पूर्णतया विश्वस्त हैं कि जो भी वे कर रहे हैं वह ठीक है। इस प्रकार की स्थूल सूझ-बूझ वाले लोगों के पास नहीं जाया जा सकता। आप यदि उनके हित की बात किए चले जाएं तो वे शीघ्र ही ऊब जाते हैं परन्तु अपने विनाश की बातें सुनने में उन्हें आनन्द आता है! आधुनिक मानव का यह दूसरा स्वभाव है।

इतना ही नहीं, इस प्रकार के तुच्छ व्यक्तियों के परिणाम स्वरूप यौन जीवन पर अत्यधिक बल दिए जाने के कारण, आजकल पाश्चात्य साहित्य में किसी छात्रवृत्ति की घोषणा नहीं की जाती। इसके विपरीत तथाकथित उच्च कोटि के समाचार पत्र भी सनसनीखेज पत्रकारिता में फँस रहे हैं। बहुत सी पुस्तकें भी लिखी गई हैं जो निश्चित रूप से नारकीय शैतानों द्वारा सृजित हैं। ये समझ पाना कठिन है कि किस प्रकार लोग इन विनाशकारी चीज़ों को अपना रहे हैं और इनका आनन्द ले रहे हैं। मानव जीवन के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा, इसका न तो नैतिक संवेदन है और न ही नैतिक सूझ-बूझ। सोमरसैट मॉम (Somerset Maugham) और क्रोनिन (Cronin) की पीढ़ी ने अत्यन्त सुन्दर एवं गरिमामय पुस्तकें लिखीं। इससे पूर्व भी हमारे सम्मुख बर्नार्ड शॉ (Bernard Shaw), रस्सेल (Russell) तथा बहुत से अन्य लेखक थे

जिन्होंने मानवीय गरिमा तथा जीवन के पावित्र्य के सौन्दर्य का वर्णन किया। आधुनिक लेखकों ने आरम्भ में आदर्श नायकों के विषय में लिखना छोड़ा, तत्पश्चात् चरित्रहीन नायकों के विषय में वर्णन किया जो स्वयं को बहुत अच्छा दर्शाने का ढोंग करते थे, परन्तु अब वे अत्यन्त निकृष्ट नायकों के विषय में लिखते हैं जो सफल तथा गौरवान्वित हुए।

सात या आठ वर्ष की कोमल आयु में यौनशिक्षा द्वारा आधुनिक विद्यालयों ने बच्चों के पावित्र्य पर वास्तविक गम्भीरता से आक्रमण आरम्भ कर दिया है। जिस यौन शिक्षा की हम बात कर रहे हैं उसका उन बच्चों को कोई लाभ नहीं जिन्हें प्रताड़ित किया जाता है, जिनके साथ बलात्कार किया जाता है या अधिकारी वर्ग जिन्हें कामविकृतियों का शिकार बनाता है। इसका कारण ये है कि शिक्षा उस बलवान कामवेग को नियंत्रित नहीं कर सकती जिसे दूरदर्शन और मीडिया हिंसा और काममंथन द्वारा निरन्तर उत्तेजित कर रहे हैं। आवश्यकता है स्वयं को गर्व से आधुनिक कहने वाली संस्कृति के गहन परिवर्तन की। वास्तव में यौवन-आरम्भ के पश्चात् माता-पिता को चाहिए कि एकान्त में सीधे-सीधे बच्चों को यौन के विषय में बताएं। एक महिला अपनी तरुण बेटी के लिए गर्भ निरोधक गोलियाँ खरीदना चाहती थी। लड़की क्योंकि आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर चुकी थी, मैंने उस महिला से कहा कि लड़की को मेरे पास भेज दो और तब मैंने उसे यौन सम्बन्धों के खतरों के विषय में बताया। बिना कोई गोली खाए ये लड़की और बहुत सी अन्य लड़कियाँ, जिन्हें मैं जानती हूँ, कुवाँरी हैं। भारत में विवाह पूर्व अधिकतर लड़कियां कुवाँरी होती हैं क्योंकि उनके माता-पिता एकान्त में उन्हें ये सब बताते हैं। यदि खुल्लमखुल्ला यौन शिक्षा दी जाएगी तो बच्चों के लिए यह एक सामाजिक विषय बन जाएगा जिस पर वे वाद-विवाद करेंगे और जिसके विषय में एक दूसरे से जानना चाहेंगे। आज यौन सम्बन्धों के अतिरिक्त उनके पास कोई अन्य विषय ही नहीं है! उनका पावित्र्य पूर्णतया नष्ट हो गया है।

अध्याय 6

धर्म
(Religion)

प्राचीन काल से ही सभी धर्मों ने कहा है कि धार्मिक गतिविधियों तथा धर्मपरायण जीवन द्वारा नर नारियों को अपने मस्तिष्क की शुद्धि करनी चाहिए। सभी धर्मों का लक्ष्य पूर्णरूपेण सन्तुलन स्थापित करके साधक के उत्थान के लिए मार्ग बनाना था। पुनर्जन्म, वली बनना, आत्मज्ञान, ज़ेनी अवस्था, गूढ़ ज्ञानवाद सभी आत्म-साक्षात्कार के ही नाम हैं। प्राचीन युग में जब लोग अपनी चेतना में ऊँचा उठना चाहते थे तो वे अत्यन्त सम्मानजनक और अच्छे होते थे। तब सभी कुछ ठीक था। संतों, पैगम्बरों और अवतरणों द्वारा कही गई सभी बातों को वे मानते थे तथा उन्हें करने का प्रयत्न किया करते थे।

भारत में सोलहवीं शताब्दि में बहुत से महान सन्त हुए जो कवि थे। बारहवीं शताब्दि में भी हमारे यहाँ बहुत से महान आध्यात्मिक लेखक हुए। इन सभी संतों का मुख्य विषय यह था कि उत्थान के लिए हमें अवश्य अपना शुद्धिकरण करना चाहिए। हमें स्वयं को पवित्र करना चाहिए। तो महानतम उपलब्धि जो हमें प्राप्त करनी है वह है हमारा पुनर्जन्म, हमारा आत्मसाक्षात्कार, हमारा मोक्ष। मानव जीवन का यही स्वीकृत लक्ष्य था।

ईसामसीह के विषय में मैंने एक पुस्तक में पढ़ा कि वे भारत में कश्मीर आए और शालिवाहन वंशज राजा से मिले। इस मिलन का वर्णन संस्कृत में लिखी किसी प्राचीन पुराण में है। लेखक को संस्कृत का ज्ञान न था। लिखा गया है कि शालिवाहन राजा ने ईसा से उनका नाम पूछा और उन्होंने उत्तर दिया कि, ''मेरा नाम ईसामसीह है।'' शालिवाहन ने उनसे पूछा, ''आप इस देश में क्यों आए हैं?'' उन्होंने उत्तर दिया, ''मैं ऐसे देश से आया हूँ जहाँ लोग

मलेच्छ हैं।'' मलेच्छ अर्थात् मल की इच्छा करने वाले, अभद्र एवं अनैतिक होने की इच्छा।'' उन दिनों भारत में विदेशियों को मलेच्छ कहा जाता था क्योंकि भारतीयों का मानना था कि इन विदेशियों को पावित्र्य या उत्थान का कोई विचार न था। जो भी हो, शालिवाहन और ईसामसीह के मध्य यह बात हुई। शालिवाहन ने उनसे पूछा कि आप वापिस अपने लोगों के पास जाकर उनका शुद्धिकरण करके उन्हें 'निर्मलतत्व' क्यों नहीं सिखाते? निर्मल तत्वं अर्थात पावनता का सिद्धान्त। इस प्रकार, मैं सोचती हूँ, ईसामसीह वापिस गए और साढ़े तीन वर्षों में ही रोमन लोगों ने उन्हें क्रूसारोपित कर दिया क्योंकि उन लोगों में मोक्ष प्राप्ति की जिज्ञासा न थी। जीन्स के सिद्धान्त का आश्रय लेकर जिस प्रकार अब इंग्लैण्ड का चर्च पादरियों के चरित्रहीन जीवन और गैर कानूनी विवाहों का पक्ष ले रहा है, इससे प्रकट होता है कि भारतीयों का पाश्चात्य लोगों को मलेच्छ कहना कितना ठीक था। पराविज्ञान नामक अध्याय में मैंने जीन्स के विषय में लिखा है।

फ्रांस के लोगों को भारतीय फिरंगी कहा करते थे अर्थात ''रंग बदलने वाले'' या ''अपनी लम्पटता को शान्त करने के लिए कृत्रिम व्यवहार करने वाले।'' बाद में बर्तानवी लोगों को साहिब कहा जाने लगा अर्थात् ''जिन्हें अपनी वेशभूषा पर गर्व है'', ''आध्यात्मिक चेतना-विहीन स्वयं को सर्व-शक्तिमान परमात्मा समझने वाले अहंकारी लोग।''

बाइबल के अनुसार जर्मिआ (Jeremiah) नामक अध्याय में शरीयत लिखी हुई है। ये कानून मोजिज़ ने यहूदियों को दिए थे क्योंकि जब वे दस-धर्मादेश ले कर लौटे तो उन्होंने यहूदियों को बहुत ही पतित अवस्था में पाया। उन्होंने सोचा कि चारित्रिक अनुशासन और पावनता तक पहुँचने के लिए इन लोगों को कठोर आचार संहिता की आवश्यकता है, इसके बिना ऐसे दुष्चरित्र लोग आध्यात्मिकता नहीं प्राप्त कर सकते। यहूदियों ने शरीयत को स्वीकार नहीं किया परन्तु बाद में मुसलमानों ने इसे स्वीकार कर लिया और

इस्लाम (अर्थात् परमात्मा के प्रति समर्पित) को मानने वाले लोगों पर इसे लागू किया। ये कहना कि हज़रत मोहम्मद साहब ने शरीयत लिखी, मेरे विचार से, गलत व्याख्या होगी। मोहम्मद साहब ऐसा नहीं कर सकते थे। जीवनपर्यन्त वे रहमत (करुणा) का उपदेश देते रहे। महिलाओं के लिए ऐसे कठोर नियमों की बात वे कैसे कर सकते थे?

जिस प्रकार ये हैं, इन सभी धर्मों का अनुसरण करना बहुत कठिन कार्य है। ईसा मसीह ने कहा है कि आपको अपना शुद्धीकरण करना होगा, चित्तनिरोध करना होगा और आत्मचिंतन द्वारा देखना होगा कि आपमें क्या कमी है तथा स्वयं को शुद्ध करने का प्रयत्न करना होगा। बाइबल में मैथ्यु (Matthew) द्वारा लिखे गए अध्याय में उन्होंने लिखा है कि, 'आपकी एक आँख यदि अपराध करे (किसी महिला को यदि आप दो बार देखते हैं) तो बेहतर होगा कि अपनी आँख निकाल दें। आपका हाथ यदि कोई पाप करता है तो अपने हाथ को काट दें।' उन्होंने कहा, ''कोई यदि आपके एक गाल पर थप्पड़ मारे तो अपना दूसरा गाल उसके सामने पेश कर दें।'' ईसाइयों के मुँह पर एक थप्पड़ सहन करने की कल्पना करें?

ईसाई राष्ट्रों में यदि ईसाई लोगों को आप देखें तो जिस प्रकार उन्होंने विश्व भर में मनुष्यों की हत्या की है उससे व्यक्ति हैरान होता है कि कौन से मापदण्ड से वे स्वयं को ईसाई कहते हैं! व्यक्ति अच्छी तरह से समझ सकता है कि इन सारे नियम बन्धनों का पालन करना इतने विकसित आधुनिक मानव के लिए बिल्कुल भी सम्भव नहीं। इन कठोर नियमों का प्रचार ईसामसीह ने नहीं किया होगा। सम्भवत: पॉल ने बाइबल में इन्हें लिख दिया हो क्योंकि अनाधिकार चेष्टा द्वारा उसने बाइबल का सम्पादन किया था। सहजयोग नियमों के अनुसार वह मिर्गीरोगी था। वह भूतबाधित था और ईसा मसीह के सबसे दुर्बल अनुयायी पीटर के माध्यम से उसने सभी प्रकार के झूठ बाइबल में लिखे। किस प्रकार ईसामसीह उसे सात पहाड़ियों पर चर्च बनाने

की चाबी दे सकते थे? इसके विपरीत उन्होंने कहा, ''शैतान तुम पर हावी होगा।'' यह शैतान कौन है? ईसाविरोधी लोग।

ईसाई धर्म के योग्य होना सबके लिए सम्भव नहीं है क्योंकि इसके लिए उन्हें संतों या देवदूतों की तरह से पापमय कार्यों के प्रति अत्यन्त संवेदनशील होना आवश्यक है। पूरे ईसाई साम्राज्य में मुझे एक भी व्यक्ति ऐसा दिखाई नहीं दिया जिसने अपना हाथ काट डाला हो या आँखें निकाल दी हों। इससे सिद्ध होता है कि ईसामसीह में उनका विश्वास केवल चर्च जाने और वहाँ पर एक ऐसे व्यक्ति का उपदेश सुनने तक सीमित है जो न तो आत्मसाक्षात्कारी है और न ही जिसे दिव्य बप्तिस्मा (Divine Baptism) प्राप्त हुआ है।

यह अत्यंत आश्चर्य की बात है क्योंकि इटली के हमारे मेयर ने मुझसे पूछा, ''कैसे इतने सारे लोग आपके कार्यक्रमों में घण्टों बैठे रहते हैं? वो कभी ऊबते नहीं। हम लोग जब चर्च में होते हैं तो 15 मिनट के बाद ही हम अपनी घड़ियाँ देखने लगते हैं और आधे घण्टे के बाद तो हम चर्च से भाग निकलते हैं। चर्च जाना तो मात्र एक सामाजिक घटना है परन्तु यह इतनी उबाऊ है कि भाषण के पश्चात् हमें लगता है कि तुरन्त पब चले जाएं, अन्यथा हम एक दूसरे से झगड़ने लगते हैं।'' त्रिदेवों (Trinity) के आशीर्वाद के पश्चात् क्यों उन्हें शराब पीकर धुत्त हो जाने की इच्छा होनी चाहिए?

इस प्रकार ईसाई देशों में लोगों का आचरण ईसामसीह द्वारा बताए गए आचरण के बिल्कुल विपरीत है। वे पावनता की सूक्ष्मता तक गए और कहा, 'आपकी दृष्टि भी अपवित्र नहीं होनी चाहिए।'' जबकि दस धर्मादेशों में केवल इतना कहा गया था कि ''आप परस्त्री गमन नहीं करेंगे।'' आप यदि सतर्क हैं तो यह देखकर आपको आघात लगेगा कि पश्चिमी देशों में एक भी ऐसा स्त्री-पुरुष खोज पाना कठिन होगा जिसकी दृष्टि अपवित्र न हो। अन्धे या अतिवृद्ध होने के कारण वो यदि प्रेम-खिलवाड़ कर पाने में असमर्थ हों तो

बात भिन्न है। कामुकता और लालच पूर्वक वे अपनी आँखे एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति पर मटकाते रहते हैं, किसी गुड़िया की तरह से जब तक मस्तिष्क के कुछ पेच ढीले न हों जाएं। इस तरह से अपने चित्त को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक ले जाने की बात समझ पाना असम्भव है। गुड़िया (खिलौना) की पुतलियाँ पेचों से नियंत्रित होती हैं। प्रेम खिलवाड़ करते हुए उनकी आँखें बहुत तेजी से चलने लगती हैं। ऐसे लोग दीवाने हो सकते हैं या किसी न किसी चीज़ से सम्मोहित। फलहीन लक्ष्य के पीछे दौड़कर किस तरह से मानवीय चेतना इतनी अधिक चंचल हो सकती है?

ईसामसीह के पश्चात् मोहम्मद साहब का अवतरण हुआ और सम्भवत: उन्हें लगा कि सारे नियम बन्धन, जो लिखे गए हैं वे केवल पुरुषों के लिए हैं, स्त्रियों के लिए कुछ भी नहीं। तो उन्होंने कहा कि महिलाओं के लिए भी कुछ नियम होने चाहिएं। परन्तु उन्होंने ऐसा भी नहीं कहा जैसे मुसलमान लोगों का विश्वास है कि महिलाओं को हर चीज़ से वंचित रखा जाए और उन्हें सताया जाए। मोहम्मद साहब ने केवल इतना कहा होगा कि महिलाएं यदि पूर्णत: नैतिक होंगी तो स्वत: पुरुष भी नैतिक हो जाएंगे क्योंकि महिलाएं ही पुरुषों का सृजन करती हैं। पवित्र महिलाओं का वे सम्मान करते थे। ईसा की माँ तथा पूरी महिला जाति के लिए उनके मन में बहुत सम्मान था। बाइबल में 'माँ मेरी' को सर्वसाधारण महिला बताया गया है। सम्भवत: पॉल ने ऐसा किया होगा क्योंकि वह महिलाओं से घृणा करता था। ईसा से पूर्व गैरईसाई धर्मों से मरिया (Madonna) का विचार उत्पन्न हुआ होगा। इसका उद्भव बाइबल से नहीं है, जिसे पॉल ने सम्पादित किया था। मोहम्मद साहब, जो कि आदिगुरु दत्तात्रेय के अवतरण थे, जानते थे कि ईसामसीह की माँ कौन थी। सहजयोग में उनकी पूजा महालक्ष्मी के रूप में की जाती है। वे नहीं चाहते थे कि महिलाएं चरित्रहीन हों और वेश्यावृत्ति अपनाएं। इस्लाम धर्म में विवाहित महिलाओं के लिए बहुत कठोर दण्ड की व्यवस्था है। कहा

जाता है कि कुरान में उन्होंने कहा था, ''महिला यदि चरित्रहीन है तो उसे जमीन में आधा गाड़कर पत्थर मारे जाएं,'' (कभी-कभी इस प्रकार महिला की मृत्यु भी हो सकती थी)। मुझे हैरानी होती है कि क्या वास्तव में मोहम्मद साहब ने ऐसा कहा या कुरान के सम्पादक मुवाया (Muvayya) ने ऐसा कहा! परन्तु जिस प्रकार इस्लामिक देशों में वे इस बात को मानते हैं और चरित्रहीन मानी जाने वाली महिलाओं को दण्ड दिया जाता है, वह वास्तव में अपराधमय है। जो भी हो, इस आधुनिक युग में मोहम्मद साहब द्वारा सोची गई संहिता के अनुरूप चरित्रवान लोग पाए जाना अत्यन्त कठिन है। केवल भय के कारण ही मुसलमान लोग चरित्रवान प्रतीत होते हैं।

मोहम्मद साहब ने बहुविवाह को स्वीकार किया क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि बिना विवाह के महिलाएं पुरुषों से सम्बन्ध बनाएं। उन दिनों कबीलों में परस्पर लड़े गए युद्धों में पतियों की मृत्यु के पश्चात् बहुत सी महिलाएं विधवा हो गई थीं। युद्ध में मोहम्मद साहब विरोधी कबीलों से युद्ध करते हुए असंख्य युवा पुरुष बलिदान हो गए थे और बहुत सी युवा लड़कियों के लिए विवाह का कोई अवसर ही न बचा था। उस समय मोहम्मद साहब ने जो भी किया वह समयाचार था। अत्यन्त शुद्ध एवं करुणामय लोगों की नई पीढ़ी का सृजन किया जाना अत्यन्त आवश्यक था। ईसा मसीह और मोहम्मद साहब, दोनों, केवल दिव्य ही नहीं थे, पृथ्वी पर उनके अवतरण का एक उद्देश्य था कि अहं एवं बन्धनों के त्याग द्वारा पृथ्वी को पवित्र किया जाए। सभी धर्मान्ध लोग जब स्वयं को सर्वोत्तम धर्मों का अधिकारी मान लेते हैं तो वे अत्यन्त अहंकारी एवं अन्धविश्वासी बन जाते हैं। वे धार्मिक होने का दावा तो करते हैं परन्तु वास्तव में वे धर्म के समीप भी नहीं होते।

पृथ्वी पर अवतरित दिव्य सन्तों ने सम्भवत: उन लोगों को नहीं समझा जिन्हें उन्होंने ये बहुमूल्य चेतावनियाँ दीं। तत्पश्चात इस्लाम या ईसाईमत के अनुयायी कहलाने वाले लोगों ने भिन्न प्रकार से प्रतिक्रियाएं कीं। आधुनिक

मानव के लिए क्या वास्तव में अपने चित्त या बुद्धि पर नियन्त्रण रखकर आत्मचिन्तन, प्रार्थना या नमाज़ द्वारा यह जान पाना सम्भव है कि उसमें क्या कमी है? समय के साथ-साथ विकसित हुई ये सब क्रियाएं मशीनी उपक्रम बन गईं। लोग ये नहीं समझते कि ये बात क्यों कही गई थी और ये कार्य क्यों किया जाना चाहिए। मनुष्य को चाहिए कि सर्वशक्तिमान परमात्मा को समझे तथा उसकी करुणा, उसकी महानता और उसकी दिव्यता का अच्छा प्रतिबिम्ब बनने का प्रयत्न करे। परमात्मा से योग प्राप्त किए बिना कही गई प्रार्थना बिना जुड़े टेलीफोन जैसी होती है। नमाज, आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति द्वारा कुण्डलिनी जागृति करके, अपने चक्रों को शुद्ध करने का एक मार्ग है।

आधुनिक समय में भिन्न प्रकार के मनुष्यों ने पृथ्वी पर जन्म लिया है। बिना धर्म के मूलतत्वों को समझे, आँखें बन्द करके धर्मादिशों को मानने वाले लोग धर्मान्ध कहलाते हैं। उन्हें स्वयं को समझना होगा कि वे क्या हैं और धर्म के माध्यम से उन्हें क्या बनना है? उन्हें ये देखना होगा कि अब तक उन्होंने कैसा समाज प्राप्त किया है। किसी चीज़ का अन्धाधुन्ध अनुसरण करने का प्रयत्न यदि वे करते हैं तो वे अपने लिए भी समस्या हैं और पूरे विश्व के लिए भी। उन्होंने सभी अवतरणों तथा सभी महान धर्मों को लज्जित किया है।

उदाहरण के रूप में चित्त पर यदि आपने नियन्त्रण प्राप्त करना है, अपने मस्तिष्क को यदि आपने समझना है, अपने अन्दर यदि आपको चिन्तन करना है तो अहंविहीन व्यक्तित्व को माध्यम के रूप में उपयोग करना होगा। अहंविहीन व्यक्तित्व ही व्यक्ति को स्वयं को नियन्त्रित करने एवं शुद्ध करने की शक्ति दे सकता है। परन्तु इस आधुनिक काल में लोग अपने बन्धनों तथा अहं-उद्यमों में बहुत व्यस्त हैं। उनका अहं बहुत शक्तिशाली है और एक बार जब वे अपने चित्त और मस्तिष्क पर नियन्त्रण करने लगते हैं और कर्मकाण्डों को भी धार्मिकता पूर्वक निभाते हैं (क्योंकि कर्मकाण्डों को धर्म का कार्य समझा जाता है) तो वे और अधिक अहंकारी हो जाते हैं क्योंकि यह सब

कार्य अहं तथा बन्धनोंवश किए जाते हैं। यही कारण है कि रूढ़िवादी लोग अपने तक सीमित होते हैं और अत्यन्त आक्रमक भी। मन, जो मात्र एक भ्रम है, अहं और बन्धनों का सृजन करता है और ये मस्तिष्क को उल्टी दिशा में नियन्त्रित करने का प्रयत्न करते हैं। अहं चित्त को वश में करने का प्रयत्न करता है और परिणामस्वरूप व्यक्ति में बड़ा, बहुत बड़ा अहं विकसित हो जाता है। यह विशाल अहं व्यक्ति को अन्धा कर देता है। बन्धन भी यही कार्य करते हैं। अहं और बन्धनों में फँसकर लोग स्वयं को सर्वोच्च मान लेते हैं, सोचते हैं कि वे परमात्मा के चुने हुए व्यक्ति हैं और उन्हें शेष सभी लोगों को पागलपन के अपने स्तर पर लाने का पूर्ण अधिकार है। बन्धनग्रस्त मस्तिष्क द्वारा सृजित यह अहं देखा नहीं जा सकता। यह अहं अन्य लोगों को कष्ट पहुँचाता है परन्तु अहंकारी लोगों को इससे कोई कष्ट नहीं होता। जब ये अहं सफल और तत्पश्चात सामूहिक हो जाता है तो इसे और बढ़ावा मिलता है। दिव्य साक्षात्कार प्राप्ति के लिए ऐसा सामूहिक अहं बहुत ही भयानक होता है। धर्म या परमात्मा के नाम पर लोग परमात्मा विरोधी सभी कार्य करते हैं।

इस्लामिक धर्मान्धता के साथ मुख्य समस्या ये है कि वे कहते हैं कि वे पाश्चात्य संस्कृति से युद्ध कर रहे हैं। सर्वप्रथम हमें ये समझ लेना चाहिए कि आज की पाश्चात्य संस्कृति ईसामसीह द्वारा बताई हुई संस्कृति के समीप भी नहीं आती। पश्चिमी देशों में चरित्रहीनता मनुष्य की जीवनशैली बन गई है। परन्तु अवसर प्राप्त होते ही मुसलमान लोग गोपनीयता पूर्वक जिस चरित्रहीनता में आसक्त होते हैं उसके विषय में क्या कहना चाहिए? वे लोग तो ईसाईयों से भी बद्तर हो सकते हैं।

किसी ईसाई राष्ट्र में यदि आप जाएं तो आपको यह देखकर आघात लगेगा कि धर्मनिरपेक्ष कहलाने वाले राष्ट्र एक विशेष प्रकार के ईसाई मत को मानते हैं। उदाहरण के रूप में इंग्लैण्ड का चर्च (Church of England) ही एकमात्र स्वीकृत धर्म है। फ्राँस कैथोलिक चर्च की बड़ी बेटी है। इटली की

बात तो समझ आती है, परन्तु जर्मनी के कुछ भाग, स्पेन, आस्ट्रिया, पुर्तगाल, बेल्जियम और आयरलैण्ड पर भी राजनीतिक तौर पर कैथोलिक चर्च का प्रभुत्व है, जिसने आज तक किसी को भी दिव्यत्व प्रदान नहीं किया। पैसे को ही दिव्यत्व की धारणा मान लिया गया। कृपया 'परमात्मा के नाम पर' (In God's Name) पुस्तक पढ़ें। जिस प्रकार फ्राँस प्रशान्त महासागर में विध्वंसकारी प्रयोग करने का प्रयत्न कर रहा है उससे पता चलता है कि उन्होंने कैथोलिक धर्म को कितना अपनाया है। इस देश में मैं बार-बार गई हूँ क्योंकि मुझे लगा कि नर्क का द्वार, जहाँ से चरित्रहीनता प्रवेश कर रही है, वह पैरिस नगर में है।

इन राष्ट्रों में या इनके निजी जीवन में या समाज में क्या ये लोग भगवान ईसा-मसीह द्वारा सिखाए गए गुणों को आत्मसात करने का प्रयत्न करते हैं? ये केवल नाम के लिए ही ईसामसीह के अनुयायी हैं। इन महान धर्मों के तत्व के बिना ही राजनीतिक नियन्त्रण के लिए ये धर्म का उपयोग करते हैं। ये सब पैसा बना रहे हैं तथा सभी धर्मों के स्रोत, पावन, शाश्वत, अन्तर्जात धर्म को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हैं। दिव्यत्व के माध्यम से चारित्रिक जीवन को समझने का उनका स्तर वास्तव में आघात पहुँचाने वाला है। उदाहरण के रूप में उन्हें बहुत अधिक शराब पीने में विश्वास है क्योंकि उनका कहना है कि ईसाई धर्म में शराब पीने की आज्ञा है क्योंकि ईसामसीह एक विवाह में गए और उन्होंने वहाँ जल से शराब बनाई। शब्द (Wine) इब्रानी (Hebrew) भाषा में केवल अंगूरों के रस या अंगूरों की बेल के लिए उपयोग होता है। वे ये व्याख्या किस प्रकार कर सकते हैं कि ईसामसीह ने Benedictine या French शराब या स्कॉच व्हिस्की बनाई? ये समझ लेना अत्यन्त सुगम है कि शराब को तुरन्त नहीं बनाया जा सकता। केवल सड़ाए जाने पर ही अच्छी शराब बन सकती है जिससे नशा हो। तीव्र गन्ध वाली युगों तक सड़ाई गई शराब ही ऊँचे दामों पर बिकती है। ईसामसीह ने ऐसी शराब नहीं बनाई थी। यह समझ लेना

बहुत सुगम है कि जीवनपर्यन्त वे उच्चचेतना की शिक्षा देते रहे। किस प्रकार वे शराब जैसी नशीली चीज़ जो स्वभाव से आत्मविरोधी होती है तथा जो चेतना को मूर्खता में परिवर्तित करती है, की आज्ञा दे सकते थे?

कनाडा में मैं एक विद्वान से मिली जिन्होंने किसी बर्तानवी विश्वविद्यालय से डॉक्टर की उपाधि प्राप्त की थी। ये जानकर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही कि उनके शोधप्रबन्ध का विषय ये था कि दिव्यत्व प्राप्ति के लिए शराब किस प्रकार उच्च चेतना का सृजन करती है। यूरोप के बहुत से लोगों का विश्वास है कि उत्क्रान्ति प्राप्त करने के लिए नशासेवन द्वारा व्यक्ति उच्च चेतना प्राप्त कर सकता है। यह सब मूर्खता की पराकाष्ठा है, परन्तु उन्हें कौन समझा सकता है? छः बजे के बाद वे आपसे बात नहीं कर सकते, विशेष रूप से फ्रांस में, क्योंकि शाम को वे जल्दी ही शराब पीने लगते हैं। यह समझ पाना असम्भव है कि धर्म के नाम पर तथा परमात्मा का परम प्रसाद लेते हुए भी ये लोग क्यों शराब पीने लगे हैं। अपनी भाषा में जिसे ये पावन परम प्रसाद (Holy Communion) कहते हैं वह भी शराब और एक प्रकार की सड़ी हुई रोटी (Bread) के साथ दी जाती है। व्यक्ति किस प्रकार विश्वास कर सकता है कि यह शराब जो कि मानव को रोगी बनाती है, बहुत से रोगों का कारण बनती है और जो बच्चों के लिए बहुत घातक है, उसका दिव्य उत्क्रान्ति से कोई सम्बन्ध है? उनका कथन है कि यह हमारे भगवान ईसामसीह का प्रसाद है (It is the Blood of Christ, our Lord)। अबोधिता के पावन अवतरण, नाद या ॐ (Logos or Om) रूपी ईसामसीह के जीवन का ये कितना घोर अपमान है!

जो भी हो, लन्दन में चर्चों और मद्यालयों के निकट निवास मेरे भाग्य में लिखा था। मैंने लोगों को मद्यालयों में घुसते हुए और गिरते-पड़ते निकलते हुए तथा अन्य लोगों को शराब पीने के लिए लाइन लगाकर खड़े हुए देखा ताकि वे भी अपनी जेबें खाली करके पहले वाले लोगों की तरह से गिरते पड़ते

बाहर आएं! विशाल कैथोलिक चर्च के पिछले प्रांगण में बीयर के अनगिनत ड्रम आते जाते रहते और रविवार के अतिरिक्त पूरा सप्ताह केवल यही गतिविधि होती। रविवार के दिन बहुत से शराबी पुरुष और महिलाएं इस चर्च की सीढ़ियों पर उदार ईसाइयों से शराब पीने के लिए भिक्षा मांगने के लिए बैठे होते। यह सब कार्य परमात्मा के नाम पर हैं। कुछ शराबी कहते कि चर्च में दफनाए गए प्रमाणित सन्तों और पादरियों से उनकी घनिष्ठता है। यही कारण है कि वे इस चर्च से जुड़े हुए हैं और आते जाते लोगों को बेवकूफ बनाते हैं क्योंकि यहाँ दफनाए गए पावन लोग उनके स्वप्नों में आकर उन सबको क्षमा करते हैं। 'हमारी तरह से शराब पीने वाले मुख्य पादरियों (Bishops) की आज्ञा से शराब पीने के लिए हम अन्य लोगों को लूटते हैं।' यहाँ पर खेदपूर्वक कहना पड़ता है कि चर्च ने बहुत से महान सन्तों को मान्यता नहीं प्रदान की, उनका तिरस्कार किया और उन्हें सताया, क्योंकि इन सन्तों का दिव्य प्रकाश चर्चों तथा मुख्य पादरियों की पोल खोलता था।

इस्लाम में मद्यपान वर्जित है परन्तु कुछ मुसलमान लोगों को यदि अवसर मिल जाए तो वे आयरलैण्ड, स्काटलैण्ड, आस्ट्रेलिया और रूस के लोगों से भी अधिक शराब पीते हैं, उन लोगों से भी अधिक जो सरकारी स्वागत समारोह में मुफ्त की शराब पीकर विदाई के समय सत्कारिणी महिला से हाथ मिलाते हुए उसके हाथ को इतना झंझोड़ते हैं कि उस स्थिति का सामना करने के लिए उस महिला को शराब पीकर स्वयं को जड़वत करना पड़ता है। परमात्मा का बहुत धन्यवाद है कि शराब पीकर भी कुछ मुस्लिम लोग याद रखते हैं कि उन्हें किसी महिला से हाथ नहीं मिलाना। कुछ पार्टियों में मैंने देखा कि मेरे पति और मैं ही मुसलमान थे, बाकी सब मुसलमान लोग शराब पी रहे थे। आश्चर्य की बात है कि किस प्रकार छुप-छुप कर ये लोग शराब पीते हैं! सम्भवत: ये लोग मानते हैं कि जो लोग शराब नहीं पीते या महिलाओं का शिकार करने के लिए नहीं दौड़ते, उनमें मर्दानगी नहीं है। परन्तु

जब महिलाएं शराब पी लेती हैं तो मदहोश होकर अपने विषय में बोलने लगती हैं और बताती हैं कि किस प्रकार मुस्लिम महिलाओं को सताया जाता है। मैं नहीं जानती कि इस प्रकार की महिलाओं के लिए भी कोई 'तवा निकाला जाता है या नहीं। भारत में आठ बच्चे हो जाने के पश्चात् भी बिना उसके जीवननिर्वाह का प्रबन्ध किए मुस्लिम महिला को तलाक दिया जा सकता है। कुछ पुरुष यदि शराब नहीं पीते, जबरदस्ती करके स्वयं को नियन्त्रित करते हैं तो वे अस्वाभाविक हो जाते हैं। वो सोचने लगते हैं कि वे महान धार्मिक मुसलमान हैं और सभी लोगों की हत्या करने का उन्हें अधिकार है। इस्लाम और दबी हुई नैतिकता के नाम पर वे घृणा और हिंसा की बात सोचते हैं। इससे किसी का हित नहीं हुआ क्योंकि स्वयं को पवित्र और चरित्रवान समझने वाले लोगों के लिए दबी हुई नैतिकता विष समान है। ये लोग अत्यन्त उग्र स्वभाव एवं अत्याचारी बनकर सन्तों एवं दिव्य लोगों के जीवन को खतरे में डाल देते हैं।

सूफी लोग वास्तव में आत्मसाक्षात्कारी थे। तुर्की में मैं बहुत से सत्यसाधकों से मिली। यूनूस एनरे (Yunus Einre) की कविताएं एकदम स्वर्गीय हैं। किस प्रकार वे सार्वभौमिक धर्म तथा परमेश्वरी प्रेम के बारे में बात कर पाए? मानव का वर्णन उन्होंने महानतम उन्नत जीव के रूप में किया है जिसे परमात्मा ने अपने ही रूप में बनाया है। भारत में निजामुद्दीन औलिया, अमीर खुसरो, मोइनुद्दीन चिश्ती, कबीरदास, शिरडी के श्री साईनाथ, कनीफनाथ, सभी ने सार्वभौमिक एकता के विषय में एक ही सत्य बताया।

पीछे एक दिन मैं सूडान के एक मुसलमान व्यक्ति का भाषण सुन रही थी। वह मक्का, मदीना से बोल रहा था, जहाँ हज पर गए मुसलमान लोगों की एक बहुत बड़ी सभा आयोजित की गई थी। अपने करतब दिखाते हुए इस वक्ता को सुनकर मैं घबरा गई। वह उपदेश दे रहा था कि पूरे विश्व को जबरदस्ती मुसलमान बना दिया जाना चाहिए। उसका चेहरा क्रोध से तमतमा

रहा था और उसके शरीर के हावभावों से अग्नि बरस रही थी। मेरे एक मित्र अरबी भाषा में पारंगत थे और सौभाग्यवश मेरे समीप बैठे हुए थे, उन्होंने इसका अनुवाद किया। वह सूडानी व्यक्ति इस प्रकार बोल रहा था मानो उसे सारी सच्चाई का ज्ञान हो तथा केवल वही व्यक्ति मोक्ष समारोह का अध्यक्ष हो और विश्व का यह रक्षक जानता हो कि अपनी विषैली धारणाओं से पूरे विश्व पर सत्ता जमा लेने का उसे अधिकार है। दो दिन पश्चात् ही हमें सुनने को मिला कि उसके भाषण के पश्चात् उस पावन-स्थल पर भगदड़ मच गई, जिसमें हज़ारों लोगों की जानें चली गईं। मुझे आशा है कि यह स्वयंभु मानवरक्षक घृणा का विष लोगों में उड़ेलने के लिए सुरक्षित होगा।

मैं तुर्की और उसके पश्चात् ट्युनीशिया गई। वहाँ मैंने पाया कि दो प्रकार के लोग रहते हैं। तुर्की में अतातुर्क कमाल-पाशा, जो कि एक महान व्यक्ति थे, ने महिलाओं की स्वतन्त्रता और जीवन की एक सम्पूर्ण दिव्य झलक स्थापित की। परन्तु परिणामस्वरूप पढ़ी-लिखी तथा धनी परिवारों की महिलाएं तथा पुरुष तुर्की में ही जर्मन लोगों की तरह से रहने का प्रयत्न करने लगे। जर्मन लोगों से वे इतने अधिक प्रभावित थे! उन्होंने बताया कि जर्मनी में ऐसे बहुत से तुर्क लोग हैं जो अच्छी मशीनें बनाने के लिए जर्मनी के लोगों की प्रशंसा करते हैं और इसी कारण से उन्होंने वहाँ की नई जीवन शैली भी आयात कर ली है। इसके विपरीत मुझे तो ऐसा लगता है कि तुर्की के लोग सभी प्रकार से सक्षम हैं।

बहुत समय पूर्व आक्रमण तथा कब्जा करने को बहुत बड़ी उपलब्धि माना जाता था। तब आधे यूरोप पर तुर्की के लोगों का शासन था। कला में भी वे बहुत गहन हैं और प्राचीन मुगल कला के तो वे आज भी विशेषज्ञ हैं। वे अत्यन्त उत्तम रसोइये तथा दर्ज़ी हैं। अत्यन्त आश्चर्य की बात है कि इतनी प्रतिभा के होते हुए भी कला को समझने की योग्यताविहीन, जर्मन संस्कृति उन्हें किस प्रकार इतना प्रभावित कर सकी! वे हेरेके (Hereke) नामक कालीन

बनाते हैं जो कि बुनती की कला की पराकाष्ठा है। उनके चाँदी के बर्तन, स्वर्ण तथा हीरों के गहने प्राचीन राजाओं तथा रूसी जारों (Czar) की प्रतिलिपि हैं। होटल में जिस महिला से मैं मिली थी वह एक विवाहोत्सव पर आई हुई थी। उनकी वेशभूषा उन अत्यन्त आधुनिक जर्मन, विशिष्टवर्गीय महिलाओं सी थी जो हर सम्भव सीमा तक अपने नग्नशरीर का प्रदर्शन करने को उत्सुक रहती हैं। पाश्चात्य संस्कृति का यह मुख्य सिद्धान्त है कि पुरुषों को आकर्षित करने के लिए महिलाएं हर सम्भव सीमा तक अपने शरीर का प्रदर्शन करें। पुरुषों को आकर्षित करना और उनका प्रेमपात्र बनना, सामान्य शब्दों में, वेश्याओं का व्यवसाय है। पुरुषों को आकर्षित करने और उनसे झूठी इश्कबाजी करने की क्या आवश्यकता है? पुरुषों का अनेक महिलाओं से प्रेमखिलवाड़ करना क्यों आवश्यक है? बाइबल, कुरान या किसी अन्य धर्मग्रन्थ में ऐसा करने का कोई धर्मादेश नहीं है। प्रेमखिलवाड़ करना पाप है और यह भ्रमित व्यक्तित्व की सृष्टि करता है। इस प्रकार के अधिकतर व्यक्तियों का चित्त अत्यन्त विचलित हो जाता है।

परिणामस्वरूप रूढ़िवादी लोग अपने देश की संस्कृति में इस प्रकार की पाश्चात्य घुसपैठ के विरुद्ध हैं। मैंने इन महिलाओं से बातचीत की और उन्हें बताया कि, 'आप अपने देश के लोगों जैसे वस्त्र क्यों नहीं पहनतीं?' तुर्की में पर्दा प्रथा नहीं है परन्तु रूढ़िवादी महिलाएं आज भी चादर या बुर्का ओढ़ती हैं। पाश्चात्य रंग में रंगी हुई महिलाएं उनसे डरती हैं। वे सोचती हैं कि अपने वस्त्रों के नीचे शायद वे छुरी या गन छिपाए हुए हैं। धार्मिक महिलाएं भी खून की प्यासी दिखाई पड़ती हैं। उनके चेहरों पर शान्ति बिल्कुल नहीं है। क्यों नहीं आप अपनी संस्कृति को अपनाते? जिस दिन आप पाश्चात्य संस्कृति को त्याग देंगे उसी दिन रूढ़िवादी लोग समाप्त हो जाएंगे। ये जानकर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही कि वे न केवल अपने कपड़े बल्कि केक और खाना भी जर्मनी से मंगाते हैं, जबकि तुर्की में विश्वभर से कहीं अच्छा खाना

और कपड़े बनते हैं! एक प्रकार की दास भावना के कारण ये लोग स्वयं को घटिया मानते हैं और इस कमी को तथाकथित जर्मन उच्च प्रजाति की नकल करके पूरा करने का प्रयत्न करते हैं। जबकि जर्मन लोगों में भावनात्मक भागफल (E.Q.) का पूर्ण अभाव है, किसी भी क्षण वे भटक सकते हैं। उनकी संस्कृति में नकल करने वाली कोई चीज़ मुझे दिखाई नहीं देती।

एक बार मैं म्यूनिक गई और वहाँ एक उद्यान देखा तथा लोगों से कहा कि मैं उस उद्यान को देखना चाहूँगी। कहने लगे कि, 'श्री माताजी आप वहाँ नहीं जा सकतीं।' मैं हैरान थी, उद्यान देखने के लिए मैं क्यों नहीं जा सकती? कहने लगे, 'क्योंकि बहुत से लोगों के लिए ये बाग, दिन को और रात को भी, खुला शयनकक्ष है। वहाँ पर यह सब सामूहिक रूप से चलता है और आप यह सहन न कर पाएंगी। आपको तो वहाँ उल्टी हो जाएगी। इस चेतावनी के लिए मैं उनकी धन्यवादी हूँ। इसके कारण मैं अंग्रेजी उद्यान कहलाने वाले उस बाग में नहीं गई। यदि मैं वहाँ चली जाती तो बहुत दिनों तक मेरी तबीयत खराब रहती।

पाश्चात्य संस्कृति बहुत अधिक यौनाभिमुखी है। उदाहरण के रूप में मैं स्विटज़रलैण्ड गई। वहाँ हम पिकनिक के लिए लोज़ान (Lauzanne) झील जा रहे थे। तभी एक लड़का दौड़ता हुआ मेरे पास आया और कहने लगा, ''श्री माताजी आप वहाँ न जाएं।'' मैं हैरान थी कि उसने ऐसा क्यों कहा और देखना चाहती थी कि वहाँ क्या हो रहा था। उन्होंने कहा, ''श्री माताजी, वहाँ सारी महिलाएं अधनंगी हैं।'' स्विटज़रलैण्ड में, आप कल्पना करें, वहाँ इतनी अधिक ठण्ड है और फिर भी वे अर्धनग्न हैं! इंग्लैण्ड में ब्राइटन नामक स्थान पर उन्होंने एक नग्न क्लब आरम्भ किया और वहाँ महिलाएं बर्फ से ठण्डे पानी में निर्वस्त्र घुसती थीं! दूरदर्शन के एक व्यक्ति ने उनसे पूछा, 'आपको कैसा लगता है?' कहने लगीं, 'हमें अत्यन्त गर्म और बहुत ही अच्छा लग रहा है' मैं हैरान थी! किस प्रकार ये नग्न महिलाएं इतना झूठ बोल सकीं कि वे

बहुत गर्म और अच्छा महसूस कर रही हैं! हो सकता है नंगेपन के अपने सम्प्रदाय को फैलाने के लिए वे ऐसा कर रही हों क्योंकि उनका विश्वास है कि मोक्ष प्राप्ति का केवल यही मार्ग है।

वैसे भी यदि आप देखें तो पाश्चात्य संस्कृति ईसामसीह को स्वीकार नहीं करती, यद्यपि उन्होंने लोगों के अपराधों के कारण अपना बलिदान दे दिया। स्वयं को ईसाई कहने वाले लोग ईसा विरोधी सभी कार्यों में संलग्न हैं। ईसा मसीह जब इस विश्व मे, परमात्मा के साम्राज्य में अवतरित हुए तो मनुष्य को तपस्या करनी आवश्यक थी। उस समय श्री बुद्ध और महावीर को भी यही करना पड़ा। परन्तु ईसाई तो ये भी नहीं जानते कि तपस्या और त्याग क्या होता है! वो तो दूसरों के लिए एक पैसा भी नहीं त्याग सकते। बातें बनाने तथा दूसरों का माल हथियाने में वे बहुत कुशल हैं। आर्थिक सहायता करने के लिए विकासशील राष्ट्रों में बड़ी-बड़ी सभाएं होती हैं। विकसित देश प्रस्ताव पास करते हैं और विकासशील देश इन सभाओं का खर्चा वहन करते हैं, और परिणाम ये होता है कि गरीब देशों के लिए कुछ भी नहीं हो सकता, जबकि इन गरीब राष्ट्रों के आतिथ्य लेने के लिए पश्चिमी लोग अपना धन खर्चते हैं।

केवल आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् ही व्यक्ति विश्व सामूहिकता को महसूस करता है, अन्यथा केवल पैसा ही धर्म है जिसकी पूजा होती है। धन अपने आपमें ही महत्वपूर्ण है। यह उत्तेजना वाद तथा उद्यमियों के प्रभुत्व से परिपूर्ण है। ये भी स्पष्ट है कि लोगों के पास अपने मस्तिष्क नहीं है। उदाहरण के लिए 25 साल पूर्व कोई भी छुटिट्याँ मनाने नहीं जाया करता था। अब वर्ष भर लोग वेतन कमाते हैं, शरीर का मोटापा दूर करते हैं, अपने शरीर को आकर्षक बनाते हैं और फिर समुद्र तट की ओर चल पड़ते हैं। इंग्लैण्ड के उत्तरी लोग दक्षिण में जाते हैं और दक्षिणी उत्तर में। फ्रांस में भी ऐसा ही है। फ्रांस में स्थिति सबसे खराब है। निर्लज्जता के मामले में उन्हें

कोई पराजित नहीं कर सकता। दक्षिणी फ्रांस तो कुछ विशेष ही है। लोग वास्तव में पगला जाते हैं। वे किसी स्कूल या कॉलेज से किराए पर ली गई महिला मित्र के साथ आते हैं और खुले आकाश के नीचे समुद्र का अपमान करते हैं और दुर्भाग्यवश समुद्र भी जहाज़ों से गिराए तेलों के कारण प्रदूषित हो रहा है। ये एक अन्य कहानी है। तेलवाहक समुद्री जहाज़ जानबूझकर दुर्घटनाएं करते हैं ताकि बीमा कम्पनी से बहुत सा पैसा वसूल कर सकें।

ये एक आम बात है कि आप शुक्रवार तथा रविवार को सड़कों पर यात्रा नहीं कर सकते क्योंकि घर से भागकर समुद्र तट पर जाने वाले पागल लोगों की असंख्य गाड़ियों की भीड़ सड़कों पर होती है। समुद्र तट पर जाकर वे नंगेबदन धूप में बैठे रहते हैं और परिणामस्वरूप अधिकतर चमड़ी के कैंसर का शिकार हो जाते हैं। ईसाई लोगों के लिए धर्मादेश है कि वे चर्च जाएं या कम से कम घर बैठकर मानव हित के लिए या कम से कम ईसाईयों के हित के लिए प्रार्थना करें। परन्तु वे शराब की बोतलें लेकर समुद्रतट पर जाकर पूरा दिन चिलचिलाती घूप में बैठते हैं। आजकल जर्मनी के लोग धूप के पीछे दौड़ रहे हैं और इसके लिए दक्षिण अफ्रीका तक यात्रा करते हैं। मुझे विश्वास है कि एक दिन वे धूप स्नान करने के लिए भारत आएंगे और चर्म कैंसर के शिकार हो जाएंगे। (भारतीय कैंसर विशेषज्ञों के लिए विदेशी यात्रियों से धनार्जन का एक अच्छा साधन)। पश्चिम में ये सब बहुत अच्छे से चल रहा है और निर्लज्जता, अभद्रता तथा वेश्यावृत्ति की ललक की कोई सीमा नहीं है।

विकासशील देशों से विदेश जाने वाले लोग पहले तो मनोरंजित होते हैं और फिर पश्चिमी लोगों की जीवन शैली की हरकतों में उन्हें अत्यन्त दिलचस्पी हो जाती है। भारत में बहुत से नगरों में आधुनिक संस्कृति का अभिशाप, नग्नता तथा अनैतिकता के रूप में स्पष्ट दिखाई पड़ता है। यह सब दैवी संस्कृति के विरुद्ध है परन्तु भारत में भी इसकी जड़ें काफी गहरी उतर चुकी हैं। भारत के लोग भी पश्चिम की स्नानागार संस्कृति को अपना रहे हैं।

वहाँ लोग केवल इत्रों तथा सुगन्धियों से ही स्नान करते हैं। भारतीयों में शारीरिक स्वच्छता का महान विवेक है। जो लोग अपने शरीर को स्वच्छ नहीं रख सकते वो अपने मस्तिष्क एवं हृदय को स्वच्छ रखने के विषय में कैसे सोच सकते हैं? पूर्ण प्रवृत्ति ही अधिक अस्वच्छ, अधिक अभद्र, अधिक निर्लज्ज बनने की ओर है तथा परमात्मा के प्रति अधिक असंगत व्यवहार करने की ओर। परिणामस्वरूप लोग रहस्यमय असाध्य रोगों से पीड़ित हैं परन्तु वे मूल-तथ्य को स्वीकार नहीं करना चाहते कि उनकी संस्कृति प्रकृतिविरोधी जीवनशैली की है।

अहं ईसा विरोधी है। जिस प्रकार वे अपना सम्मान नहीं करते वैसे ही उन्हें दूसरों का भी कोई सम्मान नहीं है। इस प्रकार पश्चिम के लोग अत्यन्त अहंकारमय तथा अक्खड़ हैं। विनम्र व्यक्ति को वे दुर्बल समझते हैं, जबकि ईसामसीह ने कहा था, ''विनम्र लोग ही पृथ्वी के उत्तराधिकारी होंगे।'' अपने अहं का वे खुल्लमखुल्ला विज्ञापन करते हैं और बताते हैं कि क्या चीज़ें उनके अहं की तुष्टि कर सकती हैं। मैंने धूम्रपान के विषय में विज्ञापन देखें हैं जो बताते हैं कि धूम्रपान आपको स्वाभिमानी तथा सुन्दर बनाता है। पश्चिमी देशों में अहम् विकसित करने के लिए बच्चों को प्रशिक्षित किया जाता है। आश्चर्य की बात है कि बच्चों को सिखाया जाता है कि दूसरों के साथ बाँटकर लेने के स्थान पर उनकी चीज़ें छीन लो। मैं प्रजातान्त्रिक देशों की बात कर रही हूँ जहाँ करुणा एवं विनम्रता की सूझबूझ नहीं है। ईसाई हो कर भी वे हमारे रक्षक ईसामसीह द्वारा सिखाए गए ईसाई धर्म का पालन नहीं करते।

तो अब ईसाई धर्म के रूढ़िवादी एक नए प्रकार के बन गए हैं जो लोगों की नई संस्कृति में विश्वास करते हैं। सिर मुंडवाकर वे चर्चों को जाते हैं और वापिस आकर विवाह सूचक कुमकुम लगाए हिन्दू महिलाओं का वध करते हैं। वे ईसामसीह की पूजा करते हैं और स्वयं को स्वच्छन्द विनोदशील (Dot Busters) कहते हैं और बेढबे, आवारा जैसे दिखाई देते हैं। अब वे सूट नहीं

पहनते और न ही शिष्ट वस्त्र पहनते हैं । पूरा वर्ष वो एक ही प्रकार के वस्त्र पहनते हैं और मीडिया तथा अन्य स्थानों पर उच्चपदों पर आरूढ़ हैं। जो लोग इस प्रकार की अटपटी बेढंगी और घृणास्पद वेशभूषा नहीं पहनते हैं, उन पर लोग हँसते हैं। व्यक्ति को ग्रामीण और आदि-ग्रामीण व्यक्ति की तरह से अबोध दिखाई देना चाहिए चाहे उसका मस्तिष्क अत्याधुनिक क्यों न हो! मुस्लिम रूढ़िवादी लोगों का विश्वास है कि वे इन सभी प्रकार के हास्यास्पद, आधुनिकतावाद में विश्वास करने वाले इन पाश्चात्य, आधुनिक रूढ़िवादियों से युद्ध कर रहे हैं।

यहाँ तक कि कला, लेखन तथा भिन्न प्रकार की साहित्यिक अभिव्यक्तियों में भी आपको लगता है कि लोकप्रिय पुस्तकें प्रायः विकृत, अत्यन्त अभद्र तथा अश्लीलता से भरी हुई हैं। सावधान रहकर, व्यक्ति को ये पुस्तकें नहीं पढ़नी चाहिएं क्योंकि इनके पढ़ने का परिणाम, स्नायविक रोग हो सकते हैं।

फ्रांस में इन विचारों की भरमार है। सम्भवत: ये सभी विचार फ्रांस से ही आते हैं जहाँ उच्च पदासीन राजनीतिज्ञों की रखेलें हैं जो प्रधानमंत्री बन सकती हैं। अनुसरण करने के लिए लोगों के सम्मुख कोई आदर्श नहीं हैं। मेरी अन्टॉयनैट (Marie Antoinette) के साथ ही आदर्शवाद समाप्त हो गया, उसे बनिया प्रवृत्ति की जनता ने स्वयं मार दिया। उनका पूरा जीवन परिवर्तित हो गया है और उन्होंने मध्यवर्गीय तौर तरीके अपना लिए हैं जिसकी वे भर्त्सना करते थे और जिसके कारण उन्होंने अपने राजा और रानी को फाँसी लगा दी थी। इस प्रकार वहाँ एक अत्यन्त लम्पट, निर्लज्ज एवं अभद्र लोगों का समाज है। पश्चिम में ईसामसीह ने आवश्यक गुण प्रदान किए थे परन्तु किसी ने उनकी चिन्ता नहीं की। फ्रांस के कुछ घबराए हुए सहजयोगियों ने अपने बच्चों को समाज की अनैतिकता से बचाना चाहा और कुछ थोड़े से बच्चे हमारे सहजयोग स्कूल में भेजे जहाँ पूरे विश्व से बच्चे आते हैं। परन्तु कैथोलिक

चर्च की एडफी (ADFI) नामक धर्मान्ध संस्था ने एक लड़के के कारण स्कूल को बहुत कष्ट दिया। परिणामस्वरूप स्कूल में कोई भी फ्रैंच बच्चा नहीं है। उन्हें भय था कि चरित्रवान बनकर फ्रैंच बच्चे कहीं कैथोलिक परम्पराओं के लिए पूर्णत: अनुपयुक्त न हो जाएं।

पूर्ण प्रजातान्त्रिक ईसाई समुदाय सर्वत्र अत्यन्त चरित्रहीन समाज का रूप धारण कर चुका है। इस ईसाई संस्कृति का सबसे बुरा प्रभाव मैंने ट्युनीशिया में देखा। वहां मैंने देखा कि महिलाएं बिल्कुल फ्रैंच औरतों की तरह से नाममात्र के पारदर्शी वस्त्र पहनती हैं। उन्होंने हमें बताया कि मुसलमान रूढ़िवादी उन्हें निरन्तर धमकियाँ देते रहते हैं। मैंने कहा, ''क्यों तुम फ्रांस की इन अभिशप्त औरतों का अनुसरण करती हों? फ्रांस की संस्कृति में ऐसा क्या महान है?'' कहा जाता है कि फ्रांस की गृहणियों को अंशकालिक समय में वेश्यावृत्ति का धन्धा करने की आज्ञा है। यदि ऐसा है तो क्यों आप ऐसी संस्कृति को अपनाएं जो आपके धर्म और आपके देश के बिल्कुल विरुद्ध हैं? ट्युनीशिया की महिलाओं ने वास्तव में ये बात समझी। मैंने कहा, ''यदि आप लोग ट्युनीशिया की महिलाओं की तरह से वस्त्र पहनें और सभ्य तरीके से व्यवहार करें तो रूढ़िवादियों के पास झगड़ा करने का कोई आधार न होगा।'' रूढ़िवादी मुसलमानों के पास यह कहने के लिए कुछ कारण हैं कि फ्रैंच संस्कृति को अपनाने वाले लोगों की वे हत्या कर देंगे। परन्तु उन्हें समझना चाहिए कि नैतिकता थोपने का सिद्धान्त, जो उन्होंने अपनाया है, वह पूर्णत: अनुचित है। इस प्रकार की धारणा से वे पाश्चात्य संस्कृति के आक्रमण को नहीं रोक सकते। गुप्त रूप से वे स्वयं भी अत्यन्त कामुक एवं विकृत जीवन बिता रहे हैं। नैतिकता का जूआ केवल महिलाओं पर है पुरुषों पर नहीं। श्रीमती तसलीमा नसरीन को जीन्स पहने हुए और सिगरेट पीते हुए देख मैं हैरान थी। महिलाओं की स्वतन्त्रता के विषय में क्या उसके यही आदर्श हैं? उसका सतही परिवर्तन मुस्लिम महिलाओं के प्रति होने वाले

अत्याचारों का विरोध करने के तरीके को न्यायोचित नहीं ठहराता।

सभी भली-भांति जानते हैं कि मुस्लिम महिलाएं बहुत ही आर्थिक दबाव में हैं। एक बार मैं औरंगाबाद जा रही थी और दौलताबाद के करीब मेरी कार खराब हो गई। दौलताबाद का अर्थ है वैभवशाली नगर। यहाँ पर मुस्लिम महिलाओं की एक भीड़ खड़ी हुई थी। ये महिलाएं एक टूटे हुए नल से पानी भर रही थीं। कार से उतरकर मैं इनसे बातचीत करने लगी। इन सब मुस्लिम महिलाओं को इनके पतियों ने तलाक दे दिया था। सभी के 7-7, 8-8 बच्चे थे और उन्हें बहुत ही तुच्छ रकम मेहर के रूप में दे दी गई थी। उनकी स्थिति भूखों मरने की थी। नल से पानी भरते हुए उन्होंने बताया कि कभी-कभी उन्हें नई सड़कें बनाने या पुरानी सड़कों को मरम्मत करने का काम मिल जाता है। एक टूटे हुए टीन की चादरों वाले तथा घास-फुंस और पत्थरों से बने घर में वो सब रहती थीं। कुछ घर तो केवल मिट्टी से ही बनाए गए थे। इतनी दयनीय स्थिति में वे सब रह रही थीं! उन्होंने बताया कि बारिश के दिनों में तो वे रेल के पुलों के नीचे सोती हैं। बेचारी दरिद्र महिलाएं, अधनंगे और भूखे बच्चों के साथ किसी तरह से जीवन काटने के प्रयत्न में लगी हुईं थीं। उन्होंने बताया कि उनके कुछ बच्चे तो मर चुके हैं, परन्तु उनके पतियों ने उन्हें कुछ भी नहीं दिया। पति तीन बार तलाक, तलाक, तलाक कह देते हैं और ये बेचारी, बिल्कुल अकेली, मृत्युपर्यन्त सड़कों पर आ जाती हैं। वहाँ पर इतनी सारी दीन महिलाएं थी कि उन्हें देखकर मेरी आँखों से आंसू झरने लगे। ये सब मैं सहन न कर सकी। जब-जब भी मैं उनके विषय में सोचती हूँ तो मुझे आश्चर्य होता है कि प्रेम एवं करुणा, रहीम और रहमत, जिसके विषय में मोहम्मद साहब ने बताया, क्या वास्तव में यही है? यह तो मौत की ओर ले जाने वाले भय एवं निरन्तर कष्टों की भट्टी है। इन महिलाओं की रक्षा कौन करेगा?

अपने माता-पिता के तलाक के कारण बहुत से मुसलमान बच्चों की मृत्यु हो रही है और वो नहीं जानते कि कहाँ जाएं। परन्तु इस दयनीय जीवन से

छुटकारा पाने का कोई मार्ग नहीं है। हमारे देश में शाहबानो का एक बहुत महत्वपूर्ण मुकदमा उठा था। इसमें शाहबानो ने कहा कि अपने भरण पोषण के लिए उसे पति से कुछ धन मिलना चाहिए। हमारे देश में एक बहुत बड़ी समस्या ये है कि यहाँ पर सत्तारूढ़ लोग अल्पसंख्यकों को तुष्ट करने में लगे रहते हैं। इसे वे धर्मनिरपेक्षता कहते हैं। इस प्रकार उन लोगों को तुष्ट करते हुए और उनके सभी प्रकार के अत्याचार से सहमत होते हुए, बहुसंख्यक दल शासन करता रहता है। भारत के आम कानून से अलग मुस्लिम कानून और ईसाई कानून भी है। कैथोलिक कानून के अनुसार ईसाईयों का तलाक नहीं हो सकता। शाहबानो केस में यद्यपि उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि उसे अपने पति से भरण पोषण के लिए धन मिलना चाहिए, उस समय के प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने ये कहते हुए इस फैसले को मानने से इनकार कर दिया कि मुसलमानों का भी इससे सहमत होना आवश्यक है। जब तक सभी मुसलमान पुरुष इसे स्वीकार नहीं करते ये निर्णय स्वीकार नहीं किया जा सकता। कोई भी मुसलमान इस निर्णय के पक्ष में आगे नहीं आया। क्या ये लोग ईरान के या भारतीय मुसलमानों के फतवे से इतना घबराते हैं? वे ये बात क्यों नहीं समझते कि जिस समस्या का सामना उनकी माता को करना पड़ा उसी का सामना उनकी बहनों और बेटियों को भी करना पड़ सकता है। सभी देशों में होने वाली घटनाओं की यह पराकाष्ठा है। कुरान का दुरुपयोग करते हुए और अपनी महिलाओं को सताते हुए रूढ़िवादी हमें मिल सकते हैं। वे स्वयं अत्यन्त व्यभिचारी, आक्रामक और शराबी हैं। विश्वास नहीं होता कि उन्हें इतनी भी समझ नहीं है कि वो क्या कर रहे हैं और वे निरन्तर महिलाओं का अपमान किए चले जा रहे हैं! अगर महिलाओं के प्रति निष्कपट रूप से न्याय न किया गया तो वे निश्चित रूप से पाश्चात्य शैली को अपना लेंगी। उन्हें मुक्ति का केवल यही मार्ग दिखाई पड़ता है।

मुझे एक रूसी व्यक्ति मिला जिसने मुझसे पूछा कि संयुक्तराष्ट्रसंघ

क्यों बोस्निया के मुसलमानों की सहायता कर रहा है ? उसने कहा कि रूस को अजर-बैजान (Ajarbaijans) के लोगों से समस्या थी। परन्तु उसने इस समस्या को सुलझाया और चैचन्या (Chachenya) के मामलों पर भी नियन्त्रण किया। संयुक्त राष्ट्र मुसलमानों के विषय में नहीं जानता क्योंकि बहुत से मुस्लिम राष्ट्र इसके सदस्य हैं। एक बार यदि सर्बिया (Serbia) पर उनका अधिकार हो गया तो वे इस देश को भी रूढ़िवादी इस्लामिक देश बना देंगे क्योंकि उनका विश्वास है कि यह जेहाद का समय है। प्रजातन्त्र राष्ट्र में अपनी जनसंख्या बढ़ाने के लिए वे बहुत से बच्चे उत्पन्न करते हैं। अब रूस एक प्रजातन्त्र देश है। धर्मों पर आधारित किसी देश को हम प्रजातन्त्र कैसे कह सकते हैं? मुसलमानों के विषय में उसके विचार सुनकर मुझे आघात लगा। बहुत से रूसी लोगों के प्रति मेरे मन में बहुत सम्मान है। काश! कि वे सब इस बात पर विश्वास कर पाते कि यह जेहाद का समय नहीं है, कियामा का समय है, पुनरुत्थान का समय है, बसन्त का समय है। क्या वे यह अवसर खो देंगे?

दोनों ही चीज़ें गलत हैं। व्यक्ति को समझना होगा कि सभी धर्मों का जन्म आध्यात्मिकता के एक ही वृक्ष पर हुआ। लोगों ने इस वृक्ष के फुल तोड़ लिए और अब इन मृत पुष्पों को लेकर लड़े जा रहे हैं! निःसन्देह कुछ पापी लोगों की भ्रान्त व्याख्याओं तथा दखलन्दाज़ी के कारण कुछ बेतुकी घटनाएं घटित हुईं। ये घटनाएं सभी धर्मों में आम बात है क्योंकि ये धर्म परमात्मा विरोधी लोगों के हाथों में यतीमों की तरह से हैं। उदाहरण के रूप में यहूदियों, ईसाईयों और मुसलमानों का विश्वास है कि मृत्यु के पश्चात् पुनरुत्थान के समय अन्तिम निर्णय के समय या कयामा के समय कब्र में से उनके शरीर निकलेंगे और उनका पुनर्जन्म होगा। ऐसा सोचना अत्यन्त असंगत है क्योंकि 500 वर्ष पश्चात् उनकी कब्रों में क्या शेष रह जाएगा? कोई भी ये सोचना और समझना नहीं चाहता कि इन कब्रों में से शरीर नहीं आत्माएं बाहर निकलेंगी, मानव के रूप में जन्म लेंगी और कयामा या पुनरुत्थान के माध्यम

से उन्हें बचाया जाएगा। यह बात उन्हें कौन बताएगा? कोई उनसे बात नहीं कर सकता। ज्यों ही कोई उनसे इस विषय पर बात शुरु करता है तो वे भड़क उठते हैं और बात करने वाले की हत्या भी हो सकती है। वे केवल यही कार्य जानते हैं। सारे सच्चे ज्ञान को समझे जाने से रोकने के लिए वे केवल हत्या का मार्ग ही जानते हैं। उनमें से अधिकतर अशिक्षित हैं और जो शिक्षित हैं वो भी उन्हें प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं क्योंकि इस प्रकार उन लोगों पर शासन करने का अवसर उन्हें प्राप्त होता है। रूढ़िवादी लोगों के साथ सबसे बड़ी समस्या ये है कि उनमें करुणा का पूर्ण अभाव है। वे मोहम्मद साहब को न तो समझते हैं और न ही उनसे प्रेम करते हैं। वो नहीं जानते कि मोहम्मद साहब कौन थे और क्यों वे पृथ्वी पर अवतरित हुए? वास्तविकता का उन्हें बिल्कुल भी ज्ञान नहीं है। वो तो बस इतना जानते हैं कि वही ठीक हैं और इच्छानुसार अधिक से अधिक काफिरों की हत्या करने का अधिकार उन्हें है, तथा इच्छानुसार समस्याएं भी वे खड़ी कर सकते हैं और जो लोग उनके रूढ़िवाद को नहीं मानते उन लोगों को वे नष्ट कर सकते हैं। हम देखते हैं कि रूढ़िवादी लोग धर्म की मूल बातों को भी नहीं जानते। दूसरी ओर स्वयं को अत्याधुनिक मानने वाले लोग भी ये नहीं जानते कि यह आधुनिक मस्तिष्क उन्हें कहाँ ले जाएगा। आधुनिक मानव की, जिसका विश्वास परमात्मा से उठ गया है, प्रतीक्षा कितने आघात कर रहे हैं! दोनों ही प्रकार से वे ऐसे कार्य करने का प्रयत्न करते हैं जो न तो विश्वशान्ति के लिए सहायक हैं और न ही मानव उत्थान द्वारा अपने हृदय की शान्ति प्राप्त करने में सहायक हैं। कारण ये है कि मन तो भ्रम है, मस्तिष्क वास्तविकता है। मन अहम् और बन्धनों की सृष्टि करता है जो मस्तिष्क का नियन्त्रण करते हैं।

वास्तव में हज़रत मोहम्मद साहब ने कुरान में इस्लाम को एकमात्र धर्म नहीं बताया। उन्होंने मोजिज़, अब्राहम, ईसामसीह और माँ मेरी के विषय में अत्यन्त सम्मानपूर्वक बातें कीं। फिर भी मुसलमान सोचते हैं कि वे कुछ

विशिष्ट हैं। यहूदी और ईसाई भी अपने धर्मों को विशिष्ट मानते हैं। एक अन्य समस्या ये है कि मोहम्मद साहब ही परमात्मा के एकमात्र दूत थे और ईसाई ईसामसीह को अन्तिम शब्द मानते हैं जबकि यहूदियों का मानना है कि उनके रक्षक (Saviour) को अभी अवतरित होना है। यदि यही अवतरण अन्तिम थे तो मोहम्मद साहब ने ये क्यों कहा कि मैं तुम्हें बारहवी महदी (Twelth Mahadi) भेजूंगा? ईसा मसीह भी ये क्यों कहते कि वे आदिशक्ति (Holy Ghost) भेजेंगे? हम नहीं कह सकते कि कब तक यहूदी लोग अपने रक्षक (Saviour) की प्रतीक्षा करेंगे। वे छोटे-छोटे ताबीज़ों में रखे धर्मादेशों (Torah) को धारणकर बिलबिलाने वाली दीवार के सम्मुख बैठकर रोते बिलबिलाते हैं। वास्तव में उनका मुख्य कार्य उधार दिए हुए पैसे को वसूलना और किसी भी कीमत पर हीरे खरीदना है।

कम पढ़े-लिखे मुसलमान लोग, जिनमें मूल कुरान को समझने की योग्यता नहीं है, वे स्वयं को जेहाद का सिपाही मानते हैं, यद्यपि अहंकारी शिक्षित तथा चालाक वर्ग जेहाद को चलाता है। उन्होंने तो कुरान को पढ़ा भी नहीं होता। मोहम्मद साहब की मृत्यु के चालीस वर्ष पश्चात् कुरान का सम्पादन किया गया। सम्पादक स्वयं अत्यन्त क्रूर व्यक्ति था जिसने हज़रतअली, उनके दो पुत्रों तथा दो अन्य खलीफों की हत्या की थी। कहते हैं कि पाँचवे खलीफ़े की माँ ने चौथे खलीफ़ा का जिगर कच्चा चबा लिया। इस जेहाद में कितने मुसलमान मारे जाएंगे? एक ओर तो वे मुस्लिम जनसंख्या को बढ़ाने के लिए बेशुमार बच्चे पैदा करते हैं और दूसरी ओर हज़ारों की संख्या में आपस में लड़कर मर जाते हैं! जेहाद का साया मंडरा रहा है और जिस भी देश में मुसलमान लोग रहते हैं वे उसकी शान्ति तथा उन्नति के लिए वास्तविक खतरा हैं। मोहम्मद साहब ने कहा था, 'आत्मज्ञान के बिना आप परमात्मा को नहीं जान सकते।'

इस क्रूर रूप से बचने का एक ही तरीका है कि सभी वली या सच्चे सूफ़ी

बन जाएं। मुसलमानों की यही आवश्यकता है-आत्मसाक्षात्कार द्वारा शान्त जीवन की प्राप्ति। ईसाईयों तथा यहूदियों के साथ भी ऐसा ही है। दोनों एक ही बाइबल पर विश्वास करते हैं, मुसलमान और यहूदी दोनों पूर्वविधान (Old Testament) को मानते हैं, परन्तु इसके बावजूद भी एक दूसरे की हत्या करते हैं! अत्यन्त दु:खमय और हृदयविदारक बात है कि आज जब मानव, शास्त्रों में दिए गए वचनों के अनुसार, परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश कर रहा है, भिन्न धर्मों के ये रूढ़िवादी लोग एक दूसरे की हत्या कर रहे हैं! परमात्मा उन्हें विवेक एवं सद्बुद्धि प्रदान करें। उन्हें उनका पुनर्जन्म प्राप्त हो जाए, 'आत्मज्ञान' ही उत्थान का आरम्भ है।

समझा जा सकता है कि क्यों यहूदी, ईसाई और इस्लाम धर्म इतने अधिक आक्रमक हो गए? जब उनका आरम्भ हुआ था तब उथल-पुथल, अशान्ति तथा आक्रामकता विनाश की सीमा तक थी। परिणामस्वरूप अपने को सुरक्षित बनाए रखने के लिए उन्होंने युद्ध पर आधारित धर्म आरम्भ किया। वे बातें तो प्रेम की करते थे परन्तु प्रतिशोध उनके धर्मों की लुप्त मुख्य धारा थी। वे सभी एक भिन्न पुस्तक को मानते हैं। शब्दों के जाल (शब्दजालम) में ये फँसे हुए हैं।

भारत में भी इसी प्रकार से विकास हुआ। आक्रमक मुसलमानों ने जब हिन्दुओं पर अत्याचार किए तो इस विपत्ति से लड़ने के लिए एक नई शक्ति की आवश्यकता पड़ी। परिणामस्वरूप सिक्ख धर्म का उदय हुआ। पंजाब के हर परिवार को कहा गया कि अपने एक बेटे, सम्भवत: बड़े बेटे, को सिक्ख बनाए ताकि मुस्लिम आक्रमकता का सामना किया जा सके। बाकी हिन्दू इसके प्रति निष्क्रिय रहे और अपने उत्थान कार्य में लगे रहे। बुद्ध और जैन धर्म जैसे अन्य धर्म भी हैं। ये धर्म कष्ट एवं पीड़ा सहने में विश्वास करते हैं। करुणा में भी इनका विश्वास है। इसके बावजूद भी इनके अनुयायी पुस्तकें पढ़कर या कर्मकाण्डों द्वारा यद्यपि मानसिक रूप से काफी विकसित हो गए थे

फिर भी उनमें बहुत से विभाजन हो गए। कुछ हिन्दुओं ने रूढ़िवादी हिन्दू कर्मकाण्डों से परिपूर्ण धर्म के विरुद्ध आर्यसमाज नामक एक धर्म की स्थापना की। ये निराकार शक्ति में विश्वास करते हैं। अपने वादविवादों में इस धर्म के लोग अत्यन्त आक्रमक हैं। ये एक अन्य प्रकार की नस्ल है जो समझते हैं कि आध्यात्मिकता के विषय में वही सब कुछ जानते हैं। उन्हें ये समझाना बहुत कठिन है कि अभी तक वे मानसिक स्तर पर हैं। हिन्दुओं का सहिष्णुता पर विश्वास था। परन्तु मुसलमानों तथा ईसाइयों के अत्याचारों से तंग आकर सुरक्षा के लिए वे भी युद्ध को स्वीकार करने लगे।

इनके अतिरिक्त चीनी धर्म हैं जो मानव से कहीं अधिक पशुओं के प्रति अहिंसा में विश्वास करते हैं। इस प्रकार इतने महान, इतने श्रेष्ठ ये सभी धर्म एक ऐसी नई स्थिति तक ले आए गए जिसके अन्दर आक्रमकता का भाव भरा हुआ था। धर्म के इन बन्धनों ने मानव को विभाजित कर दिया। इस समस्या का समाधान करने का केवल एक ही मार्ग है कि सभी लोग समझ लें कि सभी धर्मों का सारतत्व एक ही है और सभी धर्मों का सम्मान किया जाना चाहिए। व्यक्ति को किसी एक धर्म से सम्बन्धित न होकर सभी धर्मों से जुड़ा होना चाहिए या अपने अन्दर के धर्म से, अन्तर्जात तथा जागृत धर्म से। ये धर्म सभी में विद्यमान है। इसे हम अन्तर्जात शाश्वत पावनधर्म कह सकते हैं। गाँधी जी की धर्म निरपेक्षता को यह सच्चा अर्थ प्रदान करेगा। गाँधी जी की धर्म निरपेक्षता वर्तमान भारत की तरह वोट प्राप्त करने के लिए न होकर अन्तर्जात आन्तरिक एकता प्राप्त करने के लिए थी।

हिन्दू धर्म में माना जाता था कि हर मनुष्य के हृदय में परमात्मा का प्रतिबिम्ब आत्मा के रूप में है। यदि ऐसा है तो किस प्रकार हम हिन्दू समाज को भिन्न जातियों में बाँट सकते हैं? भारतीय सभ्यता के आरम्भिक हज़ारों वर्षों में लोग मनुष्य के स्वभाव के अनुसार उसकी जाति मानते थे, 'जाति' अर्थात् मानव की प्रवृत्ति। परमात्मा को प्राप्त करने की प्रवृत्ति वाले लोग

'ब्राह्मण' कहलाते थे। इन लोगों को पूर्णत: पावन तथा धन एवं सत्ता से विमुख होना पड़ता था। सत्ताकांक्षी लोगों को क्षत्रिय कहते थे। ये लोग अबोध, धार्मिक एवं दीन दुखी लोगों की सुरक्षा के लिए जिम्मेदार हुआ करते थे। व्यापार तथा धनार्जन में जिन लोगों की अभिरुचि होती थी वे वैश्य कहलाते थे। चौथी प्रकार के लोगों को शूद्र कहा जाता था अर्थात् निम्न-चेतना के लोग जो तुच्छ सेवाओं द्वारा अन्य लोगों की सेवा करके धनार्जन करते थे। ये जातियाँ जन्म से न होकर व्यक्ति की प्रवृत्ति के अनुसार हुआ करती थीं।

बाद में परमात्मा के अवतरण श्रीराम ने अपने जीवन से दर्शाया कि वे प्रवृत्ति के कारण ही लोगों का सम्मान करते थे। उदाहरण के रूप में वनवास के समय वे आदिवासी जाति की वृद्ध महिला शबरी से मिले। अत्यन्त प्रेम एवं भक्ति से उसने श्रीराम को बेर अर्पण किए। उसने कहा, 'कि आप इन बेरों को खाइए, ये बिल्कुल भी खट्टे नहीं हैं। मैंने इन सबको स्वयं चखा है। किसी का दाँत से काटा हुआ फल पवित्र नहीं रह जाता और इसे आप किसी को भेंट नहीं कर सकते, अवतरण को तो बिल्कुल भी नहीं। परन्तु श्रीराम उस बूढ़ी महिला के प्रेम के कारण अत्यन्त अभिभूत हुए। अत्यन्त आनन्दपूर्वक उन्होंने वे बेर स्वीकार किए तथा उन्हें खाया। उनके स्वाद की उन्होंने बहुत प्रशंसा की और कुछ बेर अपनी पत्नी सीता को भी दिए। श्रीराम के भाई लक्ष्मण को उनसे बहुत ईर्ष्या हुई और उन्होंने भी उनसे कुछ बेर मांगे। ऐसी बहुत सी घटनाएं हैं जहाँ श्रीराम तथाकथित छोटी जाति के लोगों के भी बहुत समीप आए। रामायण, जो उनकी जीवन कथा थी, उसे भी एक मछुआरे ने लिखा जो डाकू था। इस मछुआरे को नारद नामक एक अन्य देवदूत ने सन्त बना दिया था। नि:सन्देह एक सर्वसाधारण मछुआरा, जो डाकू था, के मन में श्रीराम के प्रति इतना सम्मान था कि उसने रामायण नामक इतने सुन्दर महाकाव्य का सृजन किया।

तत्पश्चात् श्री कृष्ण का अवतरण हुआ। वे भी ब्राह्मण या क्षत्रिय कुल

के स्थान पर (यादवों-दूध बेचने वालों) के परिवार में जन्में। बाल्यकाल से ही श्री कृष्ण ने बहुत से चमत्कार किए। उन्होंने अपने जीवन से दर्शाया कि बच्चे के किसी परिवार विशेष में जन्म लेने मात्र से उसकी जाति का निर्णय नहीं किया जा सकता। हस्तिनापुर जाकर वे न तो उच्चकुलीन लोगों के यहाँ रहते थे और न ही उनके यहाँ खाना खाते थे। दुर्योधन के स्थान पर वे आत्मसाक्षात्कारी पुरुष विदुर के साथ ठहरते और उसी के घर खाना खाते। विदुर निम्न जाति से सम्बन्धित थे। वे दासी पुत्र कहलाते थे। परन्तु श्रीकृष्ण सदैव हस्तिनापुर के सम्राट के स्थान पर विदुर के यहाँ रहते और वहीं खाना खाते।

श्रीकृष्ण के बाद के समय में जन्म को जाति का आधार बना दिया गया क्योंकि स्वार्थी लोग अपने बच्चों के लिए उनकी प्रवृत्ति को देखे बिना ही उच्चजाति के लाभ चाहते थे। इसलिए व्यक्ति की जाति उसके परिवार के अनुसार निर्णित होने लगी। जातिप्रथा के आरम्भ में जाति का मूल आधार जन्म न हुआ करता था। देवी दुर्गा भी केवल दो ही वर्गों को जानती थी- असुर (राक्षस) और भक्त। ये कहना कठिन है कि कब हिन्दू समाज ने जन्म से इस विध्वंसक जातिप्रथा को अपना लिया। सम्भवत: कुछ धर्मान्ध पुजारियों ने धर्मग्रन्थों में परिवर्तन करके इस अभिशाप को प्रवर्तित किया। ये एक आम बात है कि धर्मान्ध तथा महिलाओं से घृणा करने वाले लोगों ने भिन्न धर्मग्रन्थों में अपने विचार घुसेड़ दिए। किस प्रकार हम इन धर्मग्रन्थों को पावन एवं मूल मानकर अक्षरश: इनका अनुसरण कर सकते हैं? इन धर्मों के सृजनकर्ताओं ने न तो इस प्रकार के धर्मग्रन्थों को लिखा और न ही इनका सम्पादन किया।

भारत में निम्नजातियों में उत्पन्न हुए बहुत से आत्मसाक्षात्कारी महान कवि तथा सन्त हुए हैं। उच्च जातियों में भी हमारे यहाँ बहुत से महान कवि तथा सन्त हुए। इससे यह बात प्रमाणित होती है कि जन्म के आधार पर व्यक्ति की जाति द्वारा ही उसके आध्यात्मिक गुणों का निर्णय नहीं होता है। ये सभी कवि तथा सन्त एक दूसरे का सम्मान करते थे तथा मानवहित की

चिन्ता करते थे। इन्होंने कभी नहीं सोचा कि वे अत्यन्त परिष्कृत वर्ग के हैं या किसी निम्नजाति से सम्बन्धित हैं। ये भी एक महान वरदान है कि हिन्दू धर्म गैरमिलनसार नहीं है। इनका केवल एक ही धर्मग्रन्थ नहीं है। हिन्दू धर्म आयोजित नहीं है। यहाँ शंकराचार्य हैं परन्तु उनके पास भी पादरियों और मुल्लाओं की तरह से अधिकार नहीं हैं। ऐसा लगता है कि हिन्दू लोग सभी की पूजा करते हैं और सभी सन्तों को स्वीकार करते हैं, चाहे वे हिन्दू सन्त हों या मुसलमान।

आज ब्राह्मण सत्ता के भूखे हो गए हैं और क्षत्रिय तो सत्ता के भूखे हैं ही। सत्ता प्राप्त करने के लिए ये सदैव लड़ते रहते हैं। ये सभी धनलोलुप भी हैं और चाहे जिस परिस्थिति में वे हैं, उल्टे-सीधे ढंग से भी पैसा बटोरते हैं। इस तरह पैसा बटोरने की आज्ञा तो वैश्य लोगों को भी न थी। उचित अनुचित की सीमा तो उनके लिए भी थी। लोगों से पैसा झपटना तथा गरीब लोगों से पैसा बनाने की आज्ञा उन्हें भी न थी। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ध्रुवत्व का नियम कार्य करेगा तथा शीघ्र ही इन सब धोखेबाजों और शोषणकर्ताओं का पर्दाफ़ाश हो जाएगा।

सिकन्दर महान जब भारत आए तो उन्होंने 'हिन्दू' शब्द का सृजन किया। उसे सिन्धु अर्थात् समुद्र, नदी पार करनी पड़ी। सिन्धु शब्द का ठीक से उच्चारण न कर पाने के कारण उसने 'सिन्धू' को 'इन्दू' कहा और इस प्रकार भारतीय लोगों के धर्म का नाम हिन्दू पड़ गया। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में भारत को हिन्दुस्तान कहा, परन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतीय भाषा में इसे भारत कहा गया और अंग्रेजी में इंडिया। पुर्तगाली तथा एरिट्रिया (Eritrea) जैसे अफ्रीकन देश भी इसे हिन्दू कहकर पुकारते हैं।

सभी धर्म मर्यादाओं के बावजूद भी यहाँ का समाज अत्यन्त जाति-चेतन बन गया और इसने जातीयता के मूलतत्व को खो दिया। भारत में आज भी चुनाव जातियों के अनुसार होते हैं और सर्वत्र ये जातिप्रथा बहुत

शक्तिशाली है। जिन लोगों ने भारत का संविधान बनाया, आरम्भ में तो उन्होंने भी अल्पवर्गों को बहुसंख्यक नियमों से परे रखने का प्रयत्न किया और 40 वर्षों के लिए उन्हें एक विशेष दर्जा प्रदान किया। परन्तु अब भी अल्पसंख्यकों के लिए ये रियायतें बनी हुई हैं और ज्यों-ज्यों लोग इन अनुदानों के प्रति जागरूक हो रहे हैं वे उच्च वर्गों पर प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न करते हैं। इस प्रकार एक अजीबोगरीब समाज बन गया है जो उल्टे ढंग से कार्य करता है। अदूरदर्शी राजनीतिज्ञ इस जातिप्रथा का पूरा लाभ उठाते हैं और सत्ता प्राप्त करने के लिए लोगों को लड़वाए रखते हैं। यह देख पाना कठिन है कि किस प्रकार ये लोग सामान्य अवस्था में लौटेंगे और समझ पाएंगे कि उनकी अपनी-अपनी प्रवृत्तियाँ हैं जिनका जन्म और जाति से कुछ लेना देना नहीं है। सहजयोग में हमने इस समस्या का समाधान कर लिया है। सहजयोग में व्यक्ति अपने जन्म की जाति के महत्व को छोड़ देता है। सन्तों की तरह इन सब चीज़ों से ऊपर उठकर सहजयोगी आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति बन जाते हैं। जाति और धर्म की झूठी श्रेणियाँ इस प्रकार लुप्त हो जाती हैं जैसे सूर्योदय के पश्चात् अंधकार। जाति, प्रजाति या राष्ट्रीयता के धर्म के बन्धनों से मुक्त होकर सहजयोगी परस्पर विवाह करते हैं। यह सब अपने आप से, स्वत: घटित होता है और इन विवाहों में 95 प्रतिशत विवाह सफल होते हैं। ये अत्यन्त प्रसन्न पारिवारिक सम्बन्धों के उदाहरण बनते हैं।

अब कुछ शब्द बुद्ध धर्म के विषय में। भगवान बुद्ध ने बार-बार करुणा की बात की। समय के सभी कष्टों को उन्होंने सहा और जीवन के अन्त में वे दारिद्रय अवस्था में थे। अन्ततः भारत के एक सुदूर कोने में उनकी मृत्यु हुई। भगवान बुद्ध का जीवन वास्तव में बहुत आदर्श था। पहले इन्होंने आत्मसाक्षात्कार प्राप्त किया और फिर बुद्ध धर्म का आचरण किया परन्तु लोग सोचते हैं कि बिना उन्हीं की तरह कष्ट उठाए, बिना उन्हीं की तरह सभी कुछ त्यागे, व्यक्ति आध्यात्मिक उत्थान नहीं प्राप्त कर सकता। त्याग की

धारणा ये है कि व्यक्ति को परिवार, धन सम्पत्ति, सामान्य जीवन त्यागना होगा और आध्यात्म पथ पर अग्रसर होने के लिए पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। यह सहजयोग में नहीं माना जाता, कारण आत्मसाक्षात्कार के बाद वह सब कुछ घटित होता है। परन्तु बुद्ध धर्मी भी बहुत प्रकार के हैं। उनमें से अधिकतर या तो कर्मकाण्डों में खो गए हैं या मानसिक ध्यानधारणा में। जापान के लोग ज़ेन प्रणाली को समझे बिना इसका अनुसरण करते हैं। उन्होंने बोधी-गया में, जहाँ भगवान बुद्ध को निर्वाण प्राप्त हुआ था, बहुत सुन्दर मन्दिर बनाया है। चंगेजखाँ ने जब बिहार पर आक्रमण किया तो बौद्धभिक्षुओं ने उसका मुकाबला नहीं किया और मृत्यु के घाट उतार दिए गए। जापानियों की एक अन्य बुद्धशैली है जिसके अनुसार वे हीरोशिमा के भयानक कष्टों से शिक्षा लेते हैं।

दलाईलामा अहिंसा का पाठ पढ़ाते हैं। परन्तु वे अत्यन्त धन या स्वर्णलोलुप लोग हैं। बीजिंग में गुप्त तहखानों में हज़ारों स्वर्ण ईटें तथा स्वर्ण बीयरमग देखे जा सकते हैं जिन पर पाली भाषा में खुदाई की गई है। कहते हैं कि जब दलाईलामा तथा उसके अनुयायी ये स्वर्ण लेकर भारत की ओर भाग रहे थे तो चीन के सिपाहियों ने उनका पीछा किया और ये सारा स्वर्ण उन्होंने एक नदी में फेंक दिया। चीनी सिपाही इसे निकालकर यहाँ ले आए और अजायबघर में रख दिया। स्वयं को सन्यासी दर्शाने के लिए वे गेरुए वस्त्र पहनते हैं परन्तु धर्मशाला में राजाओं की तरह रहते हैं। कनाडा में मैं एक कनाडा के सन्यासी से मिली जिसने मुझे बताया कि उसके पास पहने हुए वस्त्रों के अतिरिक्त कुछ भी न था। उसने बताया कि विश्वभर से भीख माँगने वाले दलाई लामा को उसने सारी सम्पत्ति दान कर दी है। धर्मशाला में दलाईलामा के आक्रमक लोगों का बहुत विरोध हुआ था। परन्तु इस धनलोलुप आध्यात्मिक मुखिया के प्रति बहुत सी सरकारों की हमदर्दी है। अतः सत्य एवं पाखण्ड का भेद न समझ पाने वाली इन अज्ञानमय सरकारों

को शान्त करने के लिए विरोधकर्ताओं को क्षमा माँगनी पड़ी। वास्तव में बुद्ध धर्म दलाईलामा का निजी व्यापार बन गया है।

भारत पर शरणार्थियों का बहुत बड़ा बोझ है और ये देश इन स्वर्णलोलुप सन्यासियों का भार सहन नहीं कर सकता जिन्होंने चीन और भारत के मध्य कूटनीतिक दरार डाल दी है। नेपाल में कुछ ऐसे बुद्धधर्मी हैं जो काले जादू को मानते हैं। बहुत से साधक नेपाल जाकर भ्रमित हो जाते हैं। बौद्ध लामा कई किस्मों के हैं। कुछ ऐसे मठ हैं जहाँ साधक की कुण्डलिनी को उठाने के लिए उनकी मेरुरज्जु को तब तक पीटा जाता है जब तक वह टूट न जाए। चीन में लोग 'दयामयी माँ' (Mother Mercy) क्वान यिन (Kwan Yin) की पूजा करते हैं। ये चीनी अवतरण थीं। भगवान बुद्ध ने उच्चारण के लिए तीन मन्त्र दिए हैं। यही मन्त्र भगवान बुद्ध के या आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति के सम्मुख समर्पित होने के लिए सहजयोगी उच्चारण करते हैं। 'बुद्धम् शरणम् गच्छामि,' 'धम्मम् शरणम् गच्छामि,' 'संघम् शरणम् गच्छामि।' मन्त्रोच्चारण के लिए बोधि विलाप सी आवाजें निकालते हैं। सभी धार्मिक अवतरणों की तरह से बुद्ध ने भी 'मात्रेया' की बात की जो कि भविष्य की बुद्ध होंगी और जो मोक्ष प्रदान करेंगी। मात्रेया अर्थात् त्रिगुणात्मक अवतार जिसका अवतरण निर्वाण प्रदान करने के लिए होगा।

इस प्रकार का आदर्शवाद ईसाईयों में भी प्रचलित है। विशेष रूप से कैथोलिक ईसाईयों में जहाँ युवा महिलाएं साध्वियां (Nuns) बन जाती हैं और युवक पादरी (Priest) बन जाते हैं। ये तरीके अत्यन्त अस्वाभाविक हैं क्योंकि मानव तो मानव है। यदि ये बेतुके कर्म उस पर लादे गए तो वे किसी न किसी प्रकार से इनसे बचने का प्रयत्न करेगा और गुप्तरूप से अन्य प्रकार का जीवन जिएगा। कुछ पादरियों तथा साध्वियों (Nuns) के कामुक प्रलोभनों में फँस जाने का यह भी कारण है। बहुत से पादरी और साध्वियों (Nuns) ने निःसन्देह किसी तरह से अत्यन्त कठोर ब्रह्मचारी जीवन निभाया, परन्तु इस प्रकार

उनका इतना दमन हुआ कि उनमें से अधिकतर अत्यन्त उग्रस्वभाव के हो गए जिनके मन में किसी के प्रति भी न कोई प्रेम है और न कोई स्नेह। वे मशीनसम हो गए। उन्हीं लोगों ने युद्ध अपराधियों को जर्मनी से अर्जेन्टिना भागने में सहायता दी।

आश्चर्य की बात है कि किस प्रकार वैटिकन (Vetican) ने 90 लाख डालर के नकली नोट बैंका डी अमरोसिया (Banca De Amrosia) के माध्यम से वितरित करने के लिए छाप लिए! माफिया तथा ईसाई डैमोक्रैटिक पार्टी से उनके सम्बन्धों को इटली में प्रतिदिन एक बहुत अच्छे दण्डअधिकारी (Megistrate) चुनौती देते हैं। कनाडा में चर्च अधिकारियों ने बहुत से बच्चों के साथ घिनौने कृत्य किए! आस्ट्रिया में बहुत से पादरियों ने विवाहित महिलाओं को रखेल बनाकर रखा, कुछ पादरी तो गुप्त रूप से अपनी पत्नियों के साथ रहते हैं और उनसे उनके बच्चे भी हैं। वे शब्द के वास्तविक अर्थ के अनुसार पिता (Father) हैं। इसका कारण ये माना जाता है कि चर्च विधवाओं की पैंशन की रकम नहीं देना चाहता इसलिए वे ये नहीं कह सकते कि उनकी पत्नियाँ हैं।

आप यदि उन्हें देखें और ये जान लें कि वे वास्तव में कैसे लोग हैं तो आपको हैरानी होगी कि किस प्रकार उन्हें शान्ति पुरस्कार दिए गए! मैं एक ऐसी महिला को जानती हूँ जिन्हें शान्ति पुरस्कार दिए गए परन्तु वे इतनी क्रोधी स्वभाव की हैं कि उन जैसा क्रोधी कहीं और मैंने अपने जीवन में नहीं देखा। एक बार हम कलकत्ता में यात्रा कर रहे थे और ये महिला भी कुछ भद्दी सी चीज़ हाथ में लेकर वायुयान में चढ़ी। ये आगे की सीट पर बैठना चाहती थी परन्तु यान अधिकारी ने उसे बताया कि आगे की सीटें कुछ अशक्त व्यक्तियों के लिए आरक्षित हैं और उन्हें किसी अन्य सीट पर नहीं भेजा जा सकता। उन्हें तो उनके लिए आरक्षित सीटों पर ही बैठना होगा। अत्यन्त अहंकारपूर्वक उस महिला ने घोषणा की कि वह अत्यन्त महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं और उसे आगे की सीट अवश्य मिलनी चाहिए। वास्तव में वह

वायुयानकर्मियों से लड़ने लगी। दरवाजे के सामने की थोड़ी सी जगह में वह इधर से उधर नृत्य करने लगी और ये नृत्य आधे घंटे तक चलता रहा। अन्ततः उन्हें वायुयान से बाहर आने के लिए कह दिया गया। यह सब मुझसे सहन न हुआ और मैं सो गई। निःसन्देह शान्ति पुरस्कार मिलने से पूर्व ही यह सब घटित हुआ था, कहीं यदि ये घटना पुरस्कार मिलने के पश्चात् हुई होती तो न जाने कितने वायुयान कर्मचारी जेल जाते? दुर्भाग्य की बात है कि इस प्रकार का अक्खड़पना ऐसे लोगों में आम बात है जो ये सोचते हैं कि वो परमात्मा के लिए, राष्ट्रीय कार्य के लिए या सार्वभौमिक विचारों के लिए महान बलिदान कर रहे हैं। वे इतने उग्र स्वभाव हो जाते हैं कि उनसे बातचीत करने के लिए भी व्यक्ति को बीच में कोई रोक लगानी पड़ती है। न तो वे परमात्मा के समीप हैं और न ही किसी करुणामय धर्म के।

भारत में लोगों के धर्मपरिवर्तन करके उन्हें ईसाई बनाया जाता है। प्रायः ऐसे लोग बहुत गरीब परिवारों के होते हैं। सम्भवतः कुछ भारतीय ईसाई मानते हैं कि ईसामसीह बकिंघम महल (Buckingham Palace) में जन्में अंग्रेज थे। इलाहाबाद के समीप के ग्रामीण के विषय में एक चुटकला है। उसका धर्म परिवर्तन करके उसे सिकन्दर नाम दिया गया तो वह सिकन्दर भूरा बन गया। भूरा उसका अपना नाम था, जिसका अर्थ है भूरे रंग का व्यक्ति। जब-जब भी वह इलाहाबाद आता तो गंगा पर स्नान करने के लिए जाता। जिन धर्मप्रचारकों ने उसे ईसाई बनाया था वे उसे कहते कि अब वह ईसाई बन गया है इसलिए गंगा नदी की पूजा नहीं कर सकता। इस बेतुकी बात पर वह बहुत हैरान हुआ और ग्रामीण अपनी भाषा में कहने लगा, ''अब मैं साहब बन गया हूँ (अंग्रेज), परन्तु मैं अपना धर्म किस प्रकार छोड़ सकता हूँ?''

प्रजातन्त्र का ये अभिशाप है कि बहुसंख्य मत होने आवश्यक हैं। इसलिए मुसलमान और ईसाई, दोनों, लोगों का धर्म परिवर्तन करके या अधिक से अधिक बच्चे बनाकर अपने वोट बढ़ाने का प्रयत्न कर रहे हैं। कहा

जाता है कि मुसलमान महिलाएं बच्चे बनाने के कारखाने हैं।

इस राजनीतिक व्यापार में पोप भी बहुत कुशल हैं। वह गर्भपात के पक्ष में नहीं है, परन्तु साम्यवाद से युद्ध करने, हज़ारों निरीह पॉलिश लोगों की हत्या करने के लिए पोलैण्ड हथियार भेजने में उसे बिल्कुल भी संकोच नहीं हुआ।

अब हम जैन धर्म को देखते हैं जिनके बहुत से मज़ेदार रिवाज़ हैं। सर्वप्रथम तो वे कीड़े-मकोड़ों, मच्छरों और खटमलों की रक्षा करना चाहते हैं। कहते हैं कि कोई झोंपड़ी लेकर वे किसी ब्राह्मण को उसमें डाल देते हैं और गाँव के सारे खटमल इकट्ठे करके उस पर डलवा देते हैं ताकि ये उस गरीब ब्राह्मण का लहू पी सकें और वह ब्राह्मण उनके डंक सहता रहे। ब्राह्मण का लहू पी पीकर जब खटमलों का पेट भर जाता है तो वे जमीन पर गिर जाते हैं, केवल तभी वह गरीब ब्राह्मण झोंपड़े से बाहर आ सकता है। इस बलिदान के लिए उसे बहुत सा धन दिया जाता है। मैं हैरान होती थी कि इस कार्य के लिए वे ब्राह्मण को ही क्यों चुनते हैं। ब्राह्मण के शुद्ध लहू से क्या वे खटमलों को आध्यात्मिक जीवन देना चाहते हैं? व्यक्ति को ऐसी बहुत चीजें दिखाई देती हैं जो बैतुकेपन की पराकाष्ठा हैं। भगवान महावीर को स्थान-स्थान पर इस प्रकार से नग्न अवस्था में वे कैसे दिखा सकते हैं? वास्तव में कथा इस प्रकार है, श्री महावीर जंगल में ध्यान कर रहे थे। जब उनका ध्यान टूटा और वो महल की ओर चलने लगे तो कंटीले कुंज में उनकी धोती उलझ गई और आधी फट गई। परन्तु अभी भी आधी धोती उनके शरीर पर थी। श्री कृष्ण ने उनकी परीक्षा लेनी चाही। भिक्षु के रूप में आकर वे उनसे कहने लगे, ''ये धोती का टुकड़ा अपने शरीर पर लपेटे रहने की आपको क्या आवश्यकता है? आप तो राजकुमार हैं और मैं दरिद्र हूँ। आप कृपा करके ये वस्त्र मुझे दे दीजिए।'' उदार हृदय श्री महावीर ने वह कपड़ा उन्हें दे दिया और शरीर को पत्तों से ढ़क कर महल में चले गए। महल वहाँ से बहुत समीप था। केवल कुछ ही क्षणों के लिए उनका शरीर निर्वस्त्र था। अपने गुप्तांगों को पत्तों से ढ़क कर

वे महल में चले गए। परन्तु अब हमें सर्वत्र श्री महावीर की नग्न प्रतिमाएं देखने को मिलती हैं और उनके गुप्तांगों को इतनी कुशलतापूर्वक दर्शाया जाता है मानो श्री महावीर इनके अतिरिक्त कुछ भी न हों! किसी भी सम्वेदनशील व्यक्ति को क्षोभित करने के लिए ये पर्याप्त कारण है। क्यों उन्हें श्री महावीर का इस प्रकार अपमान करना चाहिए? आप यदि माइकल एंजेलो के सिस्टाइन चैपल (Sistine Chapel) नामक चित्र को देखें तो उसमें उन्होंने ईसा मसीह, माँ मेरी या पिता परमात्मा को निर्वस्त्र नहीं दिखाया। अन्य लोगों को उन्होंने नग्न दिखाया परन्तु इन्हें नहीं। अतः श्री महावीर जैसे महान अवतरण का इस प्रकार निर्वस्त्र प्रदर्शन अत्यन्त अपमानजनक है।

दो वर्ष पूर्व भारत में मुम्बई के मेयर ने एक अत्यन्त गम्भीर मामले पर मेरी राय लेने के लिए किसी को भेजा। समस्या ये थी कि जैन लोग जलछट में भी कीड़ों को नहीं मारना चाहते थे। वे घड़े में जलछट के सारे कीड़े एकत्र कर लेते और एक विशेष टीले पर जाकर डाल देते। परिणामस्वरूप वह टीला वर्षा के पश्चात् बहुत गन्दा हो गया और मेयर की समझ में ये न आ रहा था कि समस्या को किस प्रकार सुलझाया जाए। वास्तव में मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि क्यों ये जैन लोग कीड़ों और खटमलों को बचाना चाहते हैं! क्या हम मच्छरों, मुर्गियों और बकरियों को आत्मसाक्षात्कार दे सकते हैं? अहिंसावाद के आदर्शों से वो किसे बचाने का प्रयत्न कर रहे हैं? पशुओं को? सर्वप्रथम उन्हें मानव के प्रति अहिंसावादी होना पड़ेगा, परन्तु वो ऐसा नहीं करते। भारत में अधिकतर जैनी लोग बहुत धनी हैं, परन्तु वे बहुत अनैतिक भी हैं। मैं एक धनी जैन महिला से मिली। वह एक धनवान बीमार पुरुष को इलाज करवाने के लिए अपने साथ लाईं थी, ये पुरुष उसका प्रेमी था। उसके पति, जो कि समाचार पत्र के मालिक थे, के उस बीमार पुरुष की पत्नी से प्रेम सम्बन्ध थे। ये सब जैनियों की पूर्ण पारस्परिक रज़ामन्दी से हो रहा है। कुछ जैनी डॉक्टर अत्यन्त धनलोलुप हैं, उनमें नैतिकता बिल्कुल भी

नहीं है। अपने धर्म के बावजूद भी वे अत्यन्त चालाक और क्रूर हैं। वैसे भी सर्वत्र ये लोग धनलोलुप हैं। श्री महावीर को ये बिल्कुल निर्वस्त्र दिखाने का प्रयत्न करते हैं। ये बात औचित्य से परे है कि नंगापन व्यक्ति को कैसे परमात्मा तक पहुँचाएगा? पूरे भारत में लज्जावान भारतीय नारियों को आघात पहुँचाते हुए निर्वस्त्र जैन सन्तों को सड़कों पर जाते हुए देखा जा सकता है।

मेरे पति जब मेरठ जिले के कलैक्टर थे तो मैं उनके साथ हस्तिनापुर गई। उनके साथ वहाँ जाकर मैं बड़ी ही बेतुकी स्थिति में फँस गई। जैन धर्म के दो समूहों में किसी प्रकार का झगड़ा था। एक समूह स्वयं को दिगम्बर कहता है और वस्त्र पहनना बिल्कुल अनावश्यक समझता है। वे वस्त्र पहनने वाले सन्तों को भी नहीं मानते, क्योंकि ये लोग उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम की दिशाओं के अनुरूप वस्त्र पहनते हैं। श्वेताम्बर कहलाने वाला दूसरा समूह श्वेत वस्त्र धारण करने में विश्वास करता है। ये लोग अपने मुँह पर सफेद पट्टी बांधे रखते हैं ताकि मुँह के रास्ते कीटाणु उनके शरीर में प्रवेश न कर सकें और कहीं उनकी हत्या न हो जाए।

दुर्भाग्यवश पहले हम दिगम्बर मन्दिर में गए और वहाँ कॅलेक्टोरेट का सारा साजोसामान लेकर बैठे, यहाँ पर चालीस बिल्कुल नंगे साधु आए और मंच पर बैठ गए। यह मेरे लिए तीव्र सदमा था। मैंने अपना सिर झुका लिया और मेरे पति को बहुत गुस्सा चढ़ा। ये साधु अपने सिर से तथा शरीर के अन्य हिस्सों से बाल उखाड़ रहे थे। इस विषय में महान कवि सन्त कबीर ने कहा है कि , ''अपने बाल उखाड़कर यदि आप सोचते हैं कि आप स्वर्ग प्राप्त कर लेंगे या सिर मुंडवाने से यदि स्वर्ग मिलता तो वर्ष में दो बार मूंडी जाने वाली भेंड़ें आपसे पहले स्वर्ग पहुँच गई होतीं।'' तो ये हथकण्डे अपनाने की क्या आवश्यकता है? हैरानी की बात यह है कि इन लोगों का विश्वास है कि यदि आप अपने बाल उखाड़ते रहेंगे तभी आपको जैनधर्म में पूर्णत्व प्राप्त होगा। इस सारे नाटक से मेरे पति इतने क्रुद्ध हुए कि वे अपने स्थान से खड़े हो गए

और मेरा हाथ पकड़कर उस सभागार से बाहर चले आए। हमारे पीछे-पीछे कलेक्टोरेट का सारा साज़ोसामान भी आ गया। मुझे कार में बिठाकर मेरे पति भी बैठ गए। एक व्यक्ति दौड़ता हुआ आया और पूछने लगा: ''क्या बात है श्रीमान, आप नाराज़ क्यों हैं?'' मेरे पति ने कहा, ''यह अशिष्टता, निर्लज्जता और अपमान मैं सहन नहीं कर सकता।'' ड्राइवर गाड़ी चालू कर चुका था। नीचे देखते हुए मेरे पति ने मुझसे पूछा, ''उन्होंने हमारे साथ ऐसा क्यों किया ?'' लज्जा के कारण मैं मौन थी। मैंने केवल इतना कहा, ''मैं नहीं जानती थी कि भगवान महावीर के अनुयायी ऐसा करते हैं। हमें जल्दी यहाँ से चलना चाहिए।'' उन्होंने कहा, ''तुम्हें धर्मों का ज्ञान है फिर भी तुम्हें इस बात का ज्ञान क्यों नहीं था कि ये लोग दूसरों को इस प्रकार का भयानक सदमा पहुँचाते हैं? ''मैंने स्वीकार किया, ''धर्मों का मुझे ज्ञान है, परन्तु धर्मस्थापक गुरुओं के विरुद्ध चलने वाले अनुयायियों का ज्ञान मुझे नहीं है।''

जैनियों में साध्वियों की प्रथा भी है। यह प्रथा केवल महिलाओं के लिए ही नहीं, ब्रह्मचारी साधुओं की प्रथा भी है। ये लोग नग्न रहने की बात करते हैं परन्तु अधिकतर जैनियों की कपड़ा बेचने की, विशेष रूप से पाश्चात्य वेशभूषा बेचने की दुकानें हैं। उनकी सूती वस्त्रों की मिलें हैं और बहुत प्रकार के कारखाने हैं जिनके कारण पर्यावरण की समस्या बढ़ रही है। वे जैन साधुओं को भोजन करवाने में बहुत कुशल हैं परन्तु किसी गरीब को वे कुछ नहीं देते। श्री महावीर के लाखों लोगों के जुलूस में उनकी फोटो पर चँवर (सुरागाय की पूंछ से बने) झलने का अधिकार पाने के लिए धनी लोग बोली लगाते हैं। लाखों रुपये खर्च कर सकने वाले व्यक्ति को ये सौभाग्य प्राप्त हो सकता है।

मानव के लिए मर्यादाओं के रूप में धर्म के दस तत्व हैं जो दस धर्मादेशों की तरह से हैं। इन धर्मादेशों का जब पतन हो जाता है तो मानव अत्यन्त भ्रमित या आक्रमक हो उठता है। प्रेम एवं नैतिक अनुशासन की

शिक्षा द्वारा मानव सन्तुलन को ठीक करने के लिए समय-समय पर बहुत से आदिगुरु अवतरित हुए परन्तु अनुयायियों ने उनकी शिक्षाओं को बिल्कुल विकृत कर दिया। सहजयोग द्वारा परमेश्वरी प्रेम का शाश्वतधर्म अन्तस में आलोकित हो उठता है और साधक स्वतः सच्चे शब्दों में धार्मिक, धर्मपरायण, नैतिक, शान्त, करुणामय और सशक्त ज्योतिर्मय व्यक्ति बन जाता है।

अध्याय 7

शान्ति
(Peace)

मस्तिष्क, जो कि मिथ्या (Myth) है, अहं तथा बन्धनों का सृजन करता है। अपने मस्तिष्क से क्योंकि हम बन्धनों का सृजन करते हैं, बाद में यही बन्धन हमारे मस्तिष्क का नियन्त्रण करते हैं। इसी प्रकार अहं एवं बन्धन मस्तिष्क का नियन्त्रण करते हैं। हमारे अन्दर 'अहं' बहुत भयानक बीमारी है। अहं का गुब्बारा जब फुल जाता है तो व्यक्ति को लगता है कि वह विश्व के शिखर पर है। फुले हुए अहं के साथ वह वास्तव में उड़ने लगता है और इस असत्य अस्तित्व के कष्ट का आभास भी उसे नहीं होता। दूसरों को कष्ट पहुँचाने तथा उन्हें पूर्णत: दयनीय बनाने में अहं की बहुत तुष्टि होती है। ये आपको अत्यन्त अमानवीय कार्य करने पर बाध्य कर देता है। बिना अन्तर्दर्शन किए लोग अहं के दुष्ट स्वभाव को नहीं देख सकते। अचानक यदि कोई व्यक्ति धनवान हो जाए तो उसका अहं और भी बढ़ जाता है। किसी भी प्रकार की उपलब्धि या मान्यता अहं के गुब्बारे को फुला सकती है।

एक महिला टैनिस खिलाड़ी को आगामी मैच जीत पाने के बारे में कतई विश्वास न था। उसके एक पुरुष मित्र ने आत्मसंशय पर नियन्त्रण करने के लिए उसका साहस बढ़ाया। साथ रहकर मैच खेलने में उसकी सहायता करने के लिए वह उसके साथ इंग्लैण्ड गया। इसके लिए उसे पैसा उधार लेना पड़ा। पूरे मैच के दौरान तालियाँ बजाकर और चिल्लाकर वह उसे उत्साहित करता रहा। अन्तत: वह मैच जीत गई और उसे बहुत सा पैसा मिला। परन्तु जीत के उन प्रफुल्लित क्षणों में उसने अपने मित्र की अवज्ञा कर दी और जब उसने उससे बातचीत करनी चाही तो उसका अपमान तक कर दिया।

व्यक्ति के पास यदि कोई सम्पत्ति हो तो वह अपनी कोई सीमा नहीं देख पाता। हमारे यहाँ बहुत से जमींदार हुआ करते थे जिन्हें बहुत ही शोरगुल करने वाला माना जाता था। ऊँची आवाज में वे इतना चिल्लाते कि ऐसा लगता मानो संसार का अन्त होने वाला है। चालीस वर्ष पूर्व बने कानूनों के कारण अब वे जमींदार पृथ्वी विहीन हैं, परन्तु चिल्लाने की उनकी जीवनशैली अब भी बनी हुई है। व्यक्ति को यदि कोई सुन्दर स्त्री मिल जाए, चाहे वह उससे विवाह करे या न करे, व्यक्ति का अहं बढ़ जाता है। बुद्धिवादी, वैज्ञानिक, व्यवसायी, दफ्तरशाह और राजनीतिज्ञ, विशेष रूप से अहं बढ़ने की इस प्रक्रिया के प्रति प्रवृत्त होते हैं। उन्हें लगता है कि बाकी सब लोग मूर्ख हैं। कुछ सभ्यताएं ऐसी हैं जो इस अहं चालित व्यक्तित्व की सृष्टि करती हैं। सम्भवतः ऐसे पुरुष और महिलाएं ये नहीं देख पाते कि उनका व्यवहार कितना हास्यास्पद है और बाकी का विश्व उन पर हँसता है! उन्हें ये नहीं महसूस होता कि अहं के प्रभाव में किया गया उनका मूर्खव्यवहार मानवीयविवेक से कितना परे है!

यह बात स्पष्ट है कि स्थायी रूप से हास्यास्पद चीज़ों का यदि आप विरोध करने का प्रयत्न करें तो अहं प्रक्रिया इसके विरोध में खड़ी होने लगती हैं। बड़ी ही चतुराई से अहं इस गलत एकरूपता को तर्कसंगत ठहराता है। यह लोगों को ये समझने से रोकता है कि यह बात गलत है और पूरी तरह से असामान्य। ऐसे लोग ये भी कह सकते हैं कि वे किसी विशेष आचरण या दृष्टिकोण को इसलिए स्वीकार करते हैं क्योंकि इसमें नयापन है।

सम्वेदनशीलता का अपना सन्तुलन वे खो देते हैं। यह नया प्रयोग है और मूर्खतापूर्ण नए दुस्साहस करने के लिए वे सदैव उद्यत होते हैं। एक बार मैं एक वरिष्ठ बाद में राजनयिक से बात कर रही थी और बातचीत फ्रॉयड पर चली गई। उसने मुझसे पूछा, ''आप फ्रॉयड को क्यों पसन्द नहीं करती ?'' मैंने कहा, ''क्योंकि वह गलत है तथा चरित्रहीनता सिखाता है। मुझे युँग पसन्द है

क्योंकि उसने सूझ-बूझ के विवेक का उपयोग करते हुए फ्रॉयड का विरोध किया।'' वह कहने लगा, ''युँग में क्या महानता है? इन्होंने तो पारम्परिक रूप से कही हुई बात ही पुनः कही है। उसने नया क्या कहा है? फ्रॉयड ने नई बात की और इसी कारण से वो महान है।'' अपनी व्यवहार कुशलता की चिन्ता किए बिना मैंने उससे कहा, ''श्रीमान्, अपने पूरे जीवन में आप ये खाना खाते रहे हैं परन्तु ये मेज़ आपने कभी नहीं खाई। क्यों नहीं आप इस मेज़ को खाकर देखते ? ये एक नया कार्य है।'' यद्यपि यह बात मैंने अत्यन्त नर्मी से कही थी फिर भी उसे अच्छा खासा सदमा लगा। ये भद्र पुरुष अत्यन्त बुद्धिमान थे और अपने लेखों के लिए काफी विख्यात भी। जब उन्होंने इतने गैर जिम्मेदाराना ढंग से बात की तो मुझे हैरानी हुई क्योंकि इस प्रकार उन्होंने जीवन की मूल चीज़ों के विषय में अपनी अज्ञानता को प्रकट किया था। अन्य लोगों में भी यदि उतनी ही तरंग-दीर्ध्या (Wave Length) होगी तो वे उसे अत्यन्त सहिष्णु, सन्तुलित, कल्पनाशील तथा सामान्य समझ लेंगे।

पश्चिम में पहली सहजयोग सभा में मुझे सात हिप्पी मिले। उस समय उनके पास कमाई का कोई साधन न था परन्तु उनके बाल ऐसे थे जैसे पृथ्वी पर किसी अन्य जीव के नहीं हैं। किसी पशु या पक्षी के विषय में भी मैं नहीं सोच सकती जिसकी जटाओं में इस प्रकार गाँठें पड़ी हुई हों! बालों में जुएं पड़ी हुई थीं और गाँठें पड़ी इस केश शैली को वे हर समय खुजाते थे। मैंने जब उनसे पूछा कि आदिवासियों की तरह से तुमने ये बाल क्यों रखे हुए हैं तो उन्होंने उत्तर दिया कि वे भी आदिवासी बनना चाहते हैं क्योंकि आदिवासी शान्त होते हैं। मुझे उनको बताना पड़ा कि ''आपके बालों के नीचे आपमें अत्यन्त आधुनिक मस्तिष्क है। अपने गाँठें पड़े मस्तिष्क को आप कैसे परिवर्तित कर सकते हैं ?''

अहं अन्य लोगों की अपेक्षा तेज़ चलना चाहता है। इससे कदम मिलाकर चलने के लिए पूरे आधुनिक साहित्य तथा कला की अभिव्यक्ति

की गति भी बढ़ गई है। माना जाता है कि गति जितनी तेज़ होगी उनकी ही लोकप्रियता अधिक होगी। साहित्य यदि आकर्षण चाहता है तो इसे अत्यन्त तीव्र होना होगा। फिल्में भी अत्यन्त तीव्र कथावस्तु पर बनाई जा रही हैं, इतनी तेज कि व्यक्ति कथावस्तु की तेज़ी के साथ अपना मस्तिष्क नहीं चला पाता। फिल्म बनाने वालों के भ्रमित होने के कारण अधिकतर फिल्में बेतुकी हैं। फिल्म की गति, कथावस्तु को दर्शक की गहराईयों तक नहीं पहुँचने देती। यह न तो भावनाओं को छूती है और न ही उस क्षेत्र को जो शान्ति प्रदायक हैं तथा पावन आनन्द का सृष्टा है।

ग्रैंड प्रिक्स (Grand Prix) की तरह से बहुत बड़ा अहं विकसित करने का एक अन्य मार्ग गति (Speed) है। लोगों ने स्वीकार कर लिया है कि ग्रैंड प्रिक्स मोटरों की दौड़, बहुत अच्छा खेल है तथा लोग इसका बहुत आनन्द लेते हैं। परन्तु वास्तव में अहं के लिए यह बहुत बुरा है क्योंकि इससे अहं बहुत बढ़ जाता है। जीतने वाले व्यक्ति को अहंकार हो जाता है और उसके प्रोत्साहकों को भी। खिलाड़ी जब धमाके से गिरता है तो दर्शकों को जीवन भर का रोमांच तथा उत्तेजना प्राप्त हो जाती है। हम देख सकते हैं कि ग्रैंड प्रिक्स में जल जाने वाला व्यक्ति इस तरह से जलने के लिए परमात्मा द्वारा चुना गया कोई विशेष व्यक्ति नहीं हो सकता परन्तु ऐसा व्यक्ति ग्रैंड प्रिक्स का आनन्द लेने वाले लोगों को सदमा पहुँचाने के लिए होता है। इसी तरह की डरावनी उत्तेजना का एक अन्य उदाहरण स्पेन का बैल युद्ध (Bull Fighting) है। स्पेन के लोग बैल युद्ध खेल बहुत पसन्द करते हैं। वर्ष में छः बार बैल युद्ध खेल का आयोजन किया जाता है और बहुत बड़ा स्टेडियम लोगों से खचाखच भरा होता है। तुर्की के लोग जब स्पेन के शासक थे तो उन्होंने वहाँ इस कला को प्रचलित किया था। तुर्क लोग वहाँ के स्थानीय लोगों के प्रति बहुत क्रूर थे। तत्पश्चात् फ्रेंको (Franco) आया। वो भी अत्यन्त कठोर तानाशाह था और परिणामस्वरूप लोगों में प्रतिरोधभाव का विकास हुआ।

अन्ततः यह प्रतिरोध अमानवीय अहम् के रूप में विकसित हो गया जो वृषहन्ता (बैल को मारने के लिए नियुक्त व्यक्ति) द्वारा बैल का वध कर देने पर उन्हें परपीड़न आनन्द प्रदान करता है। मैं स्पेन की कुछ महिलाओं से मिली और पाया वे अत्यन्त अहंकारी थीं। मैंने उनसे पूछा, ''आप क्या कर रही हैं? आप क्या काम करती हैं?'' उन्होंने बताया, ''हमें वृषहन्ता (Matadors) का प्रशिक्षण प्राप्त है।'' मैं चुप रही क्योंकि ऐसी महत्वाकांक्षी महिलाओं से क्या कहा जाए? महिलाएं यदि पहलवानी या वृषहन्ता का कार्य सीखने लगें तो उनकी क्या स्थिति होगी? वो तो ऐसे जीव बन जायेंगी जो न पुरुष हैं न महिलाएं।

एक बार मैं अमरीका में लॉस एंजलिस गई। वायुपतन पर बिना बाजू के ब्लाऊज पहने हुए भयंकर मांस पेशियों वाली बहुत सी महिलाओं को खड़े देखकर मुझे हैरानी हुई। पहले तो मुझे ये दृश्य समझ न आया। लम्बे बालों वाले ये व्यक्ति महिलाओं सम प्रतीत होते थे परन्तु इनकी मांसपेशियाँ किसी भी सामान्य पुरुष से बड़ी थीं। बाद में मुझे बताया गया कि पुरुषों को नीचा दिखाने के लिए उनसे अच्छी मांसपेशियाँ विकसित करने का एक आन्दोलन शुरु हुआ है। तो इस प्रकार पुरुषों और महिलाओं के बीच अब भी सूक्ष्मस्तर की हिंसा प्रचलित है। जब दोनों ही लिंग परस्पर सम्पूरक हैं तो विपरीत लिंग से लड़ने की क्या आवश्यकता है? मैं नहीं जानती कि कब ये बात उनकी समझ में आएगी कि ये सारे कार्य निरर्थक हैं। यदि पुरुष और महिलाएं शारीरिक उपलब्धियों के क्षेत्र में ही मुकाबला करते रहेंगे, अपनी नैतिक उपलब्धियों को नहीं देखेंगे तो बच्चे भी वही चीज़ सीखेंगे। शरीर बेचकर पैसा कमाने की जब तक आवश्यकता न हो महिलाओं को इतना अधिक शरीरचेतन नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार पुरुषों को जब तक फुटबाल मैच न खेलना हो तो उन्हें अपने शरीर की मांस पेशियाँ बनाने पर इतना अधिक समय नहीं देना चाहिए। आजकल पतले होने का भी फैशन है- शरीर गठन समाज

के लक्ष्यों के बिल्कुल विपरीत। शरीर को पतला बनाए रखने के लिए कभी-कभी तो वे भूखा मरने की हद तक चली जाती हैं और क्षुधाअभाव तथा अन्य कई बीमारियों की शिकार हो जाती हैं। हैरानी की बात है कि पतला होने से आपमें अहंकार की मात्रा बढ़ जाती है। मोटे व्यक्ति की अपेक्षा पतला व्यक्ति कहीं अधिक उग्र स्वभाव होता है। खराब जिग़र इसका कारण है। अशक्त होकर व्यक्ति एक ओर तो पतला हो जाता है और दूसरी ओर अत्यन्त उग्र स्वभाव। पतला होने के कारण मैंने लोगों को कांपते हुए देखा है क्योंकि वे अपने क्रोध पर नियन्त्रण नहीं कर सकते। क्रोध की अभिव्यक्ति करते हुए वे सेम की डंडी (Bean Stalk) की तरह काँपते हैं। उनका रंग इतना पीला पड़ जाता है मानो उन्होंने मृत्यु देख ली हो, उन्हें देखने वाले लोग घबरा जाते हैं।

बहुत सी अन्तर्जात गलतफहमियाँ अहं को बढ़ावा देती हैं। किसी देश विशेष में पलने के कारण व्यक्ति में ये गलतफहमियाँ आ जाती हैं। गलतफहमियों के साए में पलना मानव की पुरानी आदत है। अहं अत्यन्त अपरिष्कृत ढंग से अपनी अभिव्यक्ति करता है। लोग जब कहते हैं, ''मुझे ये पसन्द नहीं है, मुझे वो पसन्द नहीं है'' तो उनकी घटिया परवरिश का पता चलता है। ''मुझे विश्वास है'', कहना राजनीतिज्ञों की शैली है। किसी चीज़ को पसन्द करने वाले या किसी चीज़ का विश्वास करने वाले और उस धारणा को आगे फैलाने वाले आप कौन होते हैं? क्या प्रमाण है कि आपका विश्वास सच्चा है या जो आपको पसन्द है वह अत्यन्त दुर्लभ है या आप जैसे पारखी के लिए बहुत असाधारण है?

मैं ऐसे बहुत लोगों से मिली हूँ जो अपने अहं के कारण सत्य को स्वीकार नहीं कर सकते। एक बार इंग्लैण्ड के दूरदर्शन से एक असभ्य और अहंकारी भेंटकर्ता मुझसे साक्षात्कार के लिए आये। प्राय: ये सब इसी तरह के वातावरण में पले होते हैं इसलिए इनकी मूर्खता के लिए हमें इनकी आलोचना नहीं करनी चाहिए। अब ये भेंटकर्ता तो कुछ विशेष ही था। उसने पूछा कि मैं

लन्दन या इंग्लैण्ड में क्या कर रही हूँ? कहने लगा कि मुझे अपने निर्धन भारत की सहायता करनी चाहिए। मैंने उसे बताया कि मैं यहाँ अपनी खुशी से नहीं आई हूँ। मेरे पति क्योंकि संयुक्तराष्ट्र के पद के लिए चुने गए हैं और उनका मुख्यालय लन्दन में है इसलिए मुझे भी उनके साथ रहना आवश्यक है। परन्तु अब भी मैं वर्ष में कम से कम छः महीने भारत में रहती हूँ। अत्यन्त विनम्रता से मैंने उससे पूछा कि भारत की निर्धनता के लिए कौन जिम्मेदार है? किसी देश में बिना प्रवेश या प्रवास पत्र के यदि तीन सौ वर्षों तक मेहमान डटे रहें तो देश के सम्पन्न होने की आशा किस प्रकार की जा सकती है? जीवनपर्यन्त बेकारी भत्ते पर रहने वाले आलसी लोगों के राष्ट्र को जनहितराष्ट्र बनाने की मंशा से, अत्यन्त बेदर्दी पूर्वक भारत की धन सम्पत्ति का शोषण किया गया। एक व्यक्ति से जब मैं पहली बार मिली तो उसने डींग हाँकी कि ''परमात्मा का शुक्र है कि अब मेरे पास नौकरी नहीं है।'' इस महान आनन्द में बहुत से अन्य लोगों ने भी उसका साथ दिया और कहा कि वे तो मुद्दत से खाली हैं। ऑक्सफोर्ड तथा कैम्ब्रिज़ के विद्यार्थियों को स्नातक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् अपने खाली होने की स्थिति की इस प्रकार डींग हाँकते हुए कल्पना कीजिए ! इस समूह में से अब हमारे पास हज़ारों लोग ऐसे हैं जो इस अनुदान को लेने के लिए लज्जित हैं। मैंने उससे पूछा कि ऐसी स्थिति में कौन ग़रीब होगा और कौन अमीर? एक सामान्य भारतीय गृहणी से इस प्रकार का उत्तर पाकर वह अत्यन्त विकल हुआ। तब उसने एक अन्य प्रश्न पूछा, ''भारत में इतनी अधिक जनसंख्या क्यों है?''

अत्यन्त शान्तिपूर्वक मैंने उत्तर दिया, ''श्रीमान, मैं ये कहना चाहूँगी कि इस अत्यधिक जनसंख्या के लिए भी सम्भवतः आप जिम्मेदार हैं।'' मौनपूर्वक इस अंग्रेज भेटकर्ता का अहं देखने योग्य था। क्रोध से वह उछल पड़ा, ''अपनी पागल जनसंख्या के लिए भी आप हमें किस प्रकार जिम्मेदार ठहरा सकती हैं?'' और अधिक शान्ति से मैंने उत्तर दिया, मैंने कहा,

''श्रीमान मैं अखबारों में पढ़ती हूँ कि इंग्लैण्ड में, नहीं लन्दन में, हर सप्ताह माता-पिता अपने दो जायज़ बच्चों की हत्या कर देते हैं। तो श्रीमान आप मुझे बताएं कि कौन से विवेकशील बच्चे ऐसे देश में जन्म लेना चाहेंगे जहाँ बच्चों के लिए प्रेम का वातावरण ही नहीं है? यहाँ तो पड़ोसी भी बच्चों को पसन्द नहीं करते। किसी के यदि बच्चे हों तो उसे किराए पर फ्लैट भी नहीं मिलता। सम्भवत: बच्चे भी प्रेम तथा स्नेहमय भारतीय माता-पिता तथा पड़ोसियों के यहाँ जन्म लेकर ही प्रसन्न होते हैं। बच्चे ये नहीं जानना चाहते कि बैंक में हमारा कितना धन है, वे तो प्रेम चाहते हैं जो कि बहुमूल्यतम है।'' मेरे उत्तरों ने उसे क्रोध से पागल कर दिया। उसने मुझ पर फिर आक्रमण किया। मैंने सुना है कि ''आप आत्मसाक्षात्कार के कार्य के लिए पैसा नहीं लेतीं। यह बात एंगलोसैक्सन मस्तिष्क की समझ से परे है।'' अत्यन्त विनम्रता पूर्वक मैंने उत्तर दिया, ''श्रीमान, परमेश्वरी प्रेम के लिए आप कितना धन दे सकते हैं? ईसा मसीह को आपने कितना धन दिया? क्या मैं आपसे एक प्रश्न कर सकती हूँ?'' उसने कहा, ''हाँ, हाँ, पूछिए।'' मैंने पूछा, ''क्या आप मुझे बता सकते हैं कि कौन से परमात्मा ने यह विशेष एंगलोसेक्सन मस्तिष्क बनाया है?'' इस प्रश्न ने उसे शान्त कर दिया और वह अपने साजो-समान तथा फोटोग्राफर के साथ बाहर चला गया। बाद में लोगों ने मुझे उसके विषय में बताया कि मीडिया क्षेत्र में भी वह शिकारी कुत्ते के नाम से जाना जाता था। मुझे लगा कि जो कुत्ता मुझपर एकबार भी नहीं भौंका, उसका अपमान किसलिए किया जाना चाहिए।

वे यदि सत्य स्वीकार नहीं करना चाहते तो ठीक है। मेरे दृष्टिकोण से तो यह ठीक है परन्तु सत्य को नकारने वाला व्यक्ति अन्तत: भ्रमित व्यक्तित्व की समस्या का शिकार हो जाता है। मैं लोगों को यह बताने का प्रयत्न करती हूँ कि आपको शराब नहीं पीनी चाहिए क्योंकि शराब अच्छी चीज़ नहीं है। शराब के कारण उत्पन्न हुई बीमारियों वाले बहुत से लोग मेरे पास आते हैं।

अस्सी वर्ष का एक वृद्ध व्यापारी जो कि शराब पिया करता था, मेरे पास आया और कहने लगा, ''मैं अस्सी वर्ष का हूँ परन्तु अब मैं मानव नहीं हूँ।'' मैंने कहा, ''क्यों, क्या हुआ?'' उसने कहा, ''मुझे नींद नहीं आती इसलिए शराब पीकर सो जाता हूँ परन्तु अगले दिन मेरा सिर भारी (Hang Over) होता है। तब मैं अपने नौकरों, पत्नी और बच्चों पर चिल्लाता हूँ, अब वे सब भी मुझे छोड़ गए हैं। अब जब मैं बिस्तर से उठता हूँ तो मेरे घर में कोई नहीं होता। सभी लोग मुझे छोड़कर चले गए हैं। पागलों की तरह से शराब पीने का परिणाम मुझे ये मिला है और इसके साथ-साथ दिवालियापन। परन्तु अब मैं सोचता हूँ कि इस आयु में मैं बदल नहीं सकता। आप मुझे आशीर्वाद दें कि अपने अगले जीवन में मैं शराब नामक चीज़ को छुऊं भी नहीं।'' ये वृद्ध व्यक्ति अत्यन्त निराश था। परन्तु मुझे कई ऐसे युवा व्यापारी मिले जो उसे महानता का नमूना मानते थे क्योंकि अपनी शराब पीने की लत के बावजूद भी वह अपने व्यापार में बहुत सफल था। ये सब युवा यही सोचते थे कि शराब पीने की आदत से वे भी अस्सी वर्ष की आयु में अत्यन्त सफल व्यापारी बन जाएंगे। जब आप कोई गलत कार्य करते हैं तो आपमें एक प्रकार का अहं विकसित हो जाता है अन्यथा किस प्रकार आप अपने गलत कार्यों को उचित ठहरा सकते हैं? इन कार्यों के विषय में आप विश्वास करना चाहते हैं तथा प्रमाणित करना चाहते हैं कि आप बिल्कुल ठीक कर रहे हैं। नशे की स्थिति में एक व्यक्ति ने मुझे बताया कि वह बिल्कुल नशा नहीं करता। मैंने उसके कथन को चुनौती देने की हिम्मत नहीं की।

आजकल यह अजीब बात है कि पश्चिमी देशों में बच्चे भी अत्यन्त अभद्र एवं हिंसात्मक हैं। आप उन्हें नियन्त्रित नहीं कर सकते। एक दिन सर्रे (Survey) स्थित अपने घर से लन्दन जाने के लिए मैं प्रथम श्रेणी के एकान्त डिब्बे में यात्रा कर रही थी। मार्ग में आठ से बारह साल की आयु के किसी बहुत अच्छे निजी स्कूल में पढ़ने वाले बीस बच्चे उस डिब्बे में आ गए।

उनकी स्कूल की वर्दियों पर गुम्फाक्षर (Monogram) लगे हुए थे। वे मेरे डिब्बे में आए और एक ब्लेड तथा छोटे चाकू से सीटों के कुशन काटने लगे। सामूहिक रूप से सभी ने मुझसे कहा, ''आप चिन्ता नहीं करें, हम आपको नहीं छुएंगे, परन्तु जो भी कुछ हम कर रहे हैं उसका आप हमें मज़ा लेने दें।'' मैंने उनसे पूछा, ''तुम ऐसा क्यों कर रहे हो?'' उन्होंने उत्तर दिया, ''क्योंकि हमें ऐसा करना अच्छा लगता है। आपको क्या एतराज़ है?'' ये सोचकर मैं चुप रही कि अगर मैंने कुछ कहा तो ये अपना चाकू मेरे गले पर रख देंगे। अगले स्टेशन पर पहुँचकर मैंने ये सब स्टेशन मास्टर को बताया कि लड़के क्या कर रहे हैं। छोटे बच्चों को सम्भालने के लिए जिम्मेदार बड़े लड़के शराब पीकर सो रहे थे। उसी वक्त ये छोटे बच्चे मेरे डिब्बे में घुसे थे। इन बड़े बच्चों को जगाने की कोशिश की गई परन्तु जागकर भी वे अर्धमूर्छित से थे। मैं उन्हें बताना चाहती थी कि अपने स्कूल के छोटे विद्यार्थियों को सम्भालने का ये कोई तरीका नहीं है। स्टेशन मास्टर ने मुझे समझाया कि मैं उनसे कुछ न कहूँ क्योंकि वे सब अत्यन्त उच्छृंखल लड़के थे। स्टेशन मास्टर ने जब उनसे पूछा कि तुमने शराब क्यों पी तो उन्होंने उसे भी पीटने की धमकी दी। लड़कों ने उसे चेतावनी दी कि यदि उसने स्कूल अधिकारियों को इसके विषय में सूचित किया तो परिणाम बहुत गम्भीर होंगे।

इंग्लैण्ड में ये स्थिति देखकर मुझे बहुत सदमा पहुँचा। ऐसे स्थान पर कोई भी महिला अकेली किस प्रकार यात्रा कर सकती है? इतने उन्नत देश में कोई भी किस प्रकार सुरक्षित रह सकता है? अमेरिका में तो स्थिति इससे भी खराब है। शाम को आठ बजे के पश्चात् यदि आप सड़क पर केक खरीदने के लिए कार से उतरें तो वहाँ पर चार पाँच मुशटंडे खड़े होंगे जो आपके पैसे छीन लेंगे और यदि आपने विरोध किया तो आपकी हत्या कर देंगे। ये हिंसा केवल ज़र, ज़ोरु और जमीन के लिए न होकर केवल हिंसा की भावना के कारण होती है क्योंकि लोग अब हिंसक होना चाहते हैं। कोई यदि हिंसात्मक नहीं है तो लोग

सोचते हैं कि वह दुर्बल है और वास्तव में उसका मज़ाक उड़ाया जाना चाहिए।

शारीरिक रूप से दुर्बल लोगों के प्रति हिंसा, मानसिक रूप से अविकसित लोगों के प्रति हिंसा, अनपढ़ लोगों के प्रति हिंसा, भिन्न प्रजाति के लोगों के प्रति हिंसा, कानूनी तौर पर प्रवासी लोगों के प्रति हिंसा, महिलाओं के प्रति हिंसा, पत्नी और बच्चों के प्रति हिंसा आम बात है। कुछ शक्तिशाली मनुष्य अपने ही समाज के दुर्बल एवं पिछड़े हुए लोगों के साथ ये व्यवहार कर रहे हैं। जहाँ भी उनका वश चलता है वो इस हिंसा का आनन्द लेते हैं मानो हिंसा कोई बहुत अच्छा कार्य हो! प्राचीन समय में लोग सन्तों के प्रति क्रूर थे। अत्यन्त सहिष्णु और सच्चे परन्तु स्पष्टवादी होने के कारण सन्तों को दुष्प्रवृति लोग पसन्द नहीं करते थे। आज भी धार्मिक संस्थाओं के रूप में बेईमान और हिंसक लोग विद्यमान हैं। ये लोग असत्य सिखाकर सहज तथा श्रद्धालु लोगों से धन ऐंठते हैं। सन्त नामदेव ने कहा था कि 'दुष्ट सदा दुष्ट ही रहेगा और मक्खी की तरह से सदैव दूसरों को कष्ट देने के लिए आतुर रहेगा।' आपके, पेट में जाकर मक्खी यदि मर भी जाए तो भी यह आपको बीमार कर देगी, उल्टियाँ कर-कर के आपकी जान निकल जाएगी।

दूसरी ओर बुद्धिवादी लोग हैं जिन्हें वास्तविकता का बिल्कुल ज्ञान नहीं है। राजनीतिक क्षेत्र में बने रहने के लिए या किसी राजनीतिक दल को बढ़ावा देने के लिए वे मंच बनाने का प्रयत्न करते हैं। हमारे यहाँ महराष्ट्र में भी एक दुष्ट समूह है। वे स्वयं को 'अंधश्रद्धा उन्मूलन संस्था' कहते हैं परन्तु स्वयं उन्हें सत्य का ज्ञान नहीं है। सन्तों की तरह से उनमें आध्यात्मिक शक्ति नहीं है। कुछ लोगों ने मिलकर स्वयं अन्य लोगों की अंध-श्रद्धा उन्मूलन के लिए 'स्व- नियुक्त' (Self Appointed) संस्था बना ली है।

जो लोग स्वयं अन्धे हैं और आँखे बन्द करके अपने विचारों में विश्वास करते हैं वे किस प्रकार अन्य लोगों की अंधश्रद्धा दूर कर सकते हैं?

केवल सच्चा सन्त ही ये कार्य कर सकता है। भारत में ऐसे बहुत से सन्त हुए जिन्होंने अंधश्रद्धा और कुगुरुओं के विरोध में बात की। सन् 1972 से मैं स्वयं भी लोगों को खुल्लमखुल्ला अंधश्रद्धा, झूठमूठ के गुरुओं तथा उनके पंथो के विषय में सावधान कर रही हूँ। लोगों ने मुझे चेतावनी दी कि मैं बहुत स्पष्टवादी हूँ और मुझे बहुत सावधान रहना चाहिए क्योंकि ये दुष्ट लोग मेरी हत्या करने का प्रयत्न भी करेंगे। परन्तु किसी ने मेरी हत्या करने का प्रयत्न नहीं किया और न ही मैंने ये कहना बन्द किया कि व्यक्ति अपने गुरु या स्वामी को खरीद नहीं सकता।

जो लोग सहजयोग में आ गए हैं वे अन्धश्रद्धा, रीतिरिवाज़ों तथा उन गलतफ़हमियों की उग्र धारणाओं से मुक्त हो गए हैं जिनमें वे पहले फंस गए थे। एक बार आत्मा का प्रकाश आपके अन्दर जागृत होने पर ये सब स्वत: ही घटित हो जाता है। केवल तभी आप उस वास्तविकता को देख सकते हैं जो अत्यन्त पोषक और आनन्ददायक है। मुझ पर भी बहुत से झूठे दोष लगाए गए परन्तु उनमें बिल्कुल भी सार नहीं है क्योंकि अरबों डालर बनाने वाले लोग स्वयं को उचित ठहराने के लिए ईमानदार लोगों को धनलोलुप कहते हैं। स्वयं को धर्माधिकारी मानने वाले लोगों को अपनी आँखे खोलकर ये समझने का प्रयत्न करना चाहिए कि वास्तविकता क्या है और उनके धर्म का अनुसरण करने वाले लोगों का हित काहे में है? सत्य से पोषित न होने के कारण अन्तत: लोग हिंसा पर उतारू हो जाते हैं। यह प्रमाणित करना सुगम है कि सहजयोग आत्मसाक्षात्कार प्राप्ति का मार्ग है। बहुत से देशों में ये प्रमाणित हो चुका है। यहाँ तक कि सन्तों के लिए प्रसिद्ध महाराष्ट्र राज्य में भी कुछ पथभ्रष्ट लोगों ने सहजयोग पर आक्रमण करके, हमारी गोष्ठियों में बाधा डालकर अनिष्टकर आनन्द लिया है। सबसे बुरी घटना सुदूर के गाँव में घटी जहाँ उन लोगों ने प्राथमिक पाठशाला के बच्चों को पकड़कर पाँच सौ पत्थर उन लोगों पर फेंकवाए जो मुझे सुन रहे थे। इससे हमारे लोगों को बहुत

चोटें पहुँची। नि:सन्देह अब वे सब लोग ठीक हो गए हैं। इस हिंसक अन्धी संस्था के विरुद्ध मुकद्दमा दायर करने के लिए सब कुछ किया गया। परन्तु इन लोगों ने पुलिस को रिश्वत देकर ये साबित करने का प्रयत्न किया कि वास्तव में उन्हीं लोगों को सहजयोगियों ने पीटा है। घायल होने का डॉक्टर का कोई प्रमाण पत्र उनके पास नहीं था। पिछले पाँच सालों से ये मुकद्दमा न्यायालय में विचाराधीन है। अभी तक इसका कोई निर्णय नहीं हुआ है। आज बीसवीं शताब्दि में भी सच्चे लोगों की यह दुर्दशा है!

पूरे विश्व के हित के लिए वास्तविकता सामने लाई जानी आवश्यक है। यह कार्य भारत जैसे देश में होने चाहिएं जहाँ बहुत से सन्तों ने जन्म लिया। दुर्भाग्यवश भारत में भी बहुत से सन्तों को सताया गया, कष्ट दिये गए परन्तु बेईमान तथा रजनीश जैसे अच्छे वक्ता समाज में बहुत लोकप्रिय हैं। आश्चर्य की बात है कि न जाने क्यों लोग अपनी सन्तानों के विषय में नहीं सोचते और अपने बच्चों को भी सच्चाई नहीं देना चाहते!

अगले अध्याय में मैं आपको बताऊँगी कि सहजयोग कितना हित कर सकता है। यह बात मात्र दावा नहीं है, ये सच्चाई है। परन्तु ये कहते हुए मुझे प्रसन्नता होती है कि जो लोग सहजयोग में आ गए हैं वे पूर्णत: अहिंसावादी, प्रेम एवं करुणामय बन गए हैं और परमात्मा की कृपा से कोई उन्हें छूने की भी हिम्मत नहीं कर सकता। ये नकारात्मक शक्तियाँ यदि उन्हें हानि पहुँचाने का प्रयत्न भी करें तो सहजयोगी उनके द्वारा खड़ी की गई समस्याओं पर नियन्त्रण कर सकते हैं। अनोखी बात है कि जिस दिन से मस्तिष्क में सातवां चक्र (सहस्रार) को खोला गया, चीज़ें इस तरह से घटित हो रही हैं कि बिना किसी प्रदर्शन के, शान्ति का ये आन्दोलन हृदय के माध्यम से लोगों के रोम-रोम में उतरता चला जा रहा है!

ये मेरा सौभाग्य है कि अपने जीवनकाल में ही मैं देख पाई हूँ कि पैंसठ

राष्ट्रों के लोग हमारी गोष्ठी में एकत्र होते हैं और न कोई लड़ाई होती है न झगड़ा। ये गोष्ठियाँ समुद्र तट पर बसे एक दूरस्थ गाँव में एक हफ्ते से भी लम्बी चलती हैं। यहाँ भी कुछ लालची ग्रामीणों ने कुएं में गन्दी चीज़ें डालकर उसका पानी खराब करने का प्रयत्न किया परन्तु पाँच वर्ष से भी कम आयु के छोटे-छोटे बच्चे देवदूतों की तरह से मेरे पास आए और बताया कि हम इस कुएं का जल न पीएं। आश्चर्य की बात है कि इतनी शक्तिशाली आसुरी शक्तियों के होते हुए भी किस प्रकार से परमेश्वरी सहायता आती है! ये नकारात्मक शक्तियाँ सोचती हैं कि जिसे चाहें ये हानि पहुँचा सकती हैं, किन्तु सच यह है कि ये बहुत सुखद समय है और जो लोग भी इसका लाभ उठाना चाहेंगे वे जीवन का वास्तविक अर्थ अत्यन्त सुगमता से प्राप्त कर सकेंगे।

केवल आत्मा के प्रकाश में ही अपने मध्य-नाड़ी-तन्त्र पर हम देख तथा महसूस कर सकते हैं कि हम आदिपिता और आदिशक्ति माँ के ही अंग-प्रत्यंग हैं। शरीर के अन्दर के कोषाणु सामूहिक रूप से कार्य करते हैं। शरीर के एक हिस्से पर यदि चोट लगे तो पूरा शरीर उस हिस्से की देखभाल करता है। पूरा शरीर पूर्णतः समन्वित है और अत्यन्त ही समन्वित (Co-ordinated) ढंग से कार्य करता है। हमें इसके वैज्ञानिक पक्ष पर जाने की आवश्यकता नहीं है। फिर भी यह बात स्पष्ट है कि किसी न किसी प्रकार से मध्य-नाड़ी-तन्त्र के माध्यम से शरीर का हर अंग दूसरे अंगों से जुड़ा होता है। सहजयोग में एक साथ रहने वाले लोगों के शरीर में होने वाली प्रतिवर्ती क्रियाएं (Reflex Actions) स्वतः ही एक सी होती हैं। एक व्यक्ति यदि बीमार हो तो सामूहिक रूप से सभी सहजयोगी उसकी सहायता के लिए दौड़ पड़ते हैं। किसी व्यक्ति को यदि कोई वास्तविक समस्या हो तो पूरी संस्था, जो कि जीवन्त है, उस व्यक्ति की समस्या का समाधान करने के लिए स्वतः कार्य करती है। आत्मा के प्रकाश में व्यक्ति पूर्णतः समग्र (Integrated) चेतन और विवेकशील हो जाता है। महानतम उपलब्धि ये होती है कि वह अत्यन्त आनन्दमय हो जाता

है और दूसरों में दोष खोजने के स्थान पर उनके व्यक्तित्व का आनन्द उठाने के लिए सम्वेदनशील बन जाता है। बातें करना या आयोजन करना पृथ्वी पर शान्ति लाने का एकमात्र मार्ग नहीं है। ये कार्य चतुर्थ-आयाम की इस नवचेतना के प्रति लोगों को परिवर्तित करने से सम्भव है, जहाँ लोग आत्मा बन जाएं। परन्तु हिंसक लोगों का हम क्या करें? उनसे अपनी रक्षा किस प्रकार करें? ये प्रश्न सदैव मुझसे पूछा जाता है। इसका उत्तर ये है कि अब हम सर्वशक्तिमान परमात्मा के साम्राज्य में हैं।

अब हम परमात्मा के साम्राज्य से सम्बन्धित हैं और वे हमारी सुरक्षा एवं पोषण का प्रबन्ध करने में सक्षम हैं। परन्तु सर्वप्रथम हमें अत्यन्त विनम्रता तथा तत्परता से परमात्मा के साम्राज्य में प्रवेश करना होगा। कोई व्यक्ति यदि आत्मसाक्षात्कार नहीं लेना चाहे तो उसे विवश नहीं किया जा सकता। बीज को अंकुरित होने के लिए विवश कर पाना सम्भव नहीं है। बीज को जब तक पृथ्वी माँ में डालकर प्रेम से न सींचा जाए वह अंकुरित नहीं होता। इसी प्रकार यदि हम आत्मा के प्रकाश में हैं तो हम परेशान, अशान्त चिन्तित या तनावग्रस्त नहीं हो सकते। सत्यसाधकों में यदि सत्य को प्राप्त करने की, असत्य को नहीं,शुद्ध इच्छा है तो उनके स्वप्न सुगमता से साकार हो सकते हैं।

विश्व के मामलों के अधिकारी यदि आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर लें तो विश्व शान्ति स्थापित की जा सकती है। ये लोग भिन्न देशों के नेता हैं, इनमें यदि सहज सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं तो ये परस्पर प्रेम एवं सम्मान करेंगे। तब ये लोग विश्वशान्ति के विषय में सोचने वाले सुकरात वर्णित हितैषी राजा सम होंगे।

आज ऐसा प्रतीत होता है मानो पूरा विश्व युद्ध से या युद्ध की तैयारी से झुलस रहा है। उदाहरण के रूप में बोसनिया का युद्ध क्रोट (Croats) मुसलमान तथा सर्बों की नासमझी का परिणाम है। ये लोग ईसाई तथा

मुस्लिम धर्म को मानते हैं। क्रोट (Croats) कैथोलिक ईसाई होते हैं परन्तु क्या ये ईसामसीह को मानते हैं? और निराकार को मानने वाले मुसलमानों का भूमि के लिए युद्ध करना कहाँ तक उचित है? वास्तव में मोहम्मद साहब ने कभी किसी एकमात्र धर्म की बात नहीं की। उन्होंने अब्राहम, मोजिज़ और ईसामसीह के विषय में बोलने के बाद चौथे स्थान पर अपने विषय में बताया। ईसामसीह ने भी अब्राहम और मोजिज़ की बात की। तो मोजिज़, ईसामसीह और मोहम्मद साहब को मानने वाले लोग क्यों परस्पर लड़ते हैं? उनकी जड़ें तो एक ही हैं। ये तीनों धर्म तो कम से कम ऐसे लोगों का सृजन करें जो उनके धर्मों की एकरूपता को समझें। नि:सन्देह हिन्दू धर्म भी अनन्य नहीं है। ये सभी धर्मों को स्वीकार करता है। परन्तु हिन्दू धर्माधिकारियों ने भी भिन्न धर्मों के भिन्न कायदे कानून बना दिए हैं! मत प्राप्त करने के लिए वे अल्पसंख्यकों का लाभ उठा रहे हैं।

मानव मस्तिष्क सदैव विचारों का निशाना बना रहता है। ये अहं की रचना करता है और इसके कारण प्रतिक्रिया करता है। बन्धनों में फंसे हुए लोग सदैव भयभीत रहते हैं। ये विचार या तो भूतकाल से आते हैं या भविष्यकाल से, परन्तु वास्तविकता तो वर्तमानकाल में विद्यमान है, जहां हम शान्ति प्राप्त करते है।

मस्तिष्क किसी व्यक्ति विशेष या सामूहिकता के लिए समस्याएं खड़ी करता है। उसे चाहिए कि मस्तिष्क से ऊपर उठकर निर्विचार चेतना में स्थापित हो जाए जहाँ शान्ति है।

शान्ति-वीरों की एक प्रजाति का सृजन किया जा चुका है। मैं तो केवल इतनी आशा करती हूँ कि इस प्रजाति का इस प्रकार विस्तार हो कि बहुत से लोग शान्त होकर अपने व्यक्तित्व एवं दिव्य कार्यों द्वारा विश्व में शान्ति प्रसारित करें।

अध्याय 8

विश्व शान्ति
(World Peace)

इस तथ्य के प्रति हमें जागृत होना पड़ेगा कि आधुनिक काल की अव्यवस्थित स्थितियों से प्रभावित होने के कारण हाल ही के दशकों में हमारे बच्चे, माता-पिता और परिवारों के हमारे चारित्रिक मूल्यों का बहुत विनाश हुआ है।

शान्ति से परिपूर्ण सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था कायम करने के लिए ये आवश्यक है कि चारित्रिक मूल्यों को पुनर्जीवित करने का हर सम्भव प्रयत्न किया जाए। इस लक्ष्य के लिए हमें जड़ों से आरम्भ होना होगा। अपने बच्चों और उनके पालन पोषण पर हमें अधिक से अधिक ध्यान देना चाहिए क्योंकि आज के बच्चे ही कल के नागरिक हैं। आज के बच्चे ही कल के समाज की संस्थापना करेंगे। हथियारों पर खर्ची गई पूंजी वास्तव में शान्तिपूर्ण भविष्य का आश्वासन नहीं हैं, अपने बच्चों पर किया गया निवेश ही आने वाले भविष्य में बहुमूल्य लाभांश प्रदान करेगा। सर्वप्रथम हमें अपने बच्चों की देखभाल करनी होगी और ऐसा करना तभी सम्भव है जब माता-पिता इस बात को समझ लें कि बच्चों में आध्यात्मिकता का परिचय कराए जाने की जिम्मेदारी महत्वपूर्णतम है।

परिवार के बच्चों के पालन पोषण की ओर विशेष ध्यान दिए जाने की जिम्मेदारी माता-पिता की है इसके लिए माता-पिता बच्चों, समाज और निसन्देह, देश के ऋणी हैं। आज जिस प्रकार से चीज़ें चल रही हैं, ये आवश्यक हो गया है कि माता-पिता को उनकी जिम्मेदारियों तथा आध्यात्मिक कर्तव्यों के विषय में शिक्षित किया जाए। सर्वप्रथम तो ये

आवश्यकता है कि फ्रॉयड द्वारा विरासत में दिया गया विध्वंसक ज्ञान सदा के लिए समुद्र में फेंक दिया जाए। महाविद्यालयों तथा पाठशालाओं के पाठ्यक्रम से फ्रॉयड के मनोविज्ञान को दूर रखकर ये उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है। छुट्टी के दिनों में तैराकी सूट पहनकर घरों से बाहर भागने के स्थान पर माता-पिता को घर में रहकर बच्चों के साथ समय व्यतीत करना चाहिए। जीवन आमोद-प्रमोद है परन्तु आध्यात्मिक अनुशासन पूर्णत्व है। चुपके-चुपके बड़े प्रेम से बच्चों पर नज़र रखी जानी चाहिए कि बच्चे कहाँ जाते हैं, कब वापिस आते हैं और उनके मित्र कौन हैं? बच्चों के साथ माता-पिता की अत्यन्त मधुर संगति होनी चाहिए। यदि ऐसा होगा तो गलियों में, आवारागर्दी करते रहने के स्थान पर बच्चों को माता-पिता के साथ समय बिताने में आनन्द आएगा। बच्चों की प्रवृत्ति का पता लगाकर उन्हें उनके रुझान में प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। बच्चों की संगति पावन आनन्द प्रदायक है। बच्चों से बातचीत करना ही अत्यन्त आनन्दमय है।

अक्षय नाम का एक छोटा सा लड़का था। वह गिर गया और उसकी खोपड़ी टूट गई, परन्तु सहजयोग से वह ठीक हो गया। एक दिन मैंने उसे बुलाया और वह बातचीत करने लगा। उसने मुझसे पूछा, ''श्री माताजी क्या आपको बिस्कुट बनाने आते हैं?'' मैंने उत्तर दिया, ''नहीं मुझे नहीं आते।'' तो वह मुझे शिक्षा देने लगा, ''सबसे पहले अपनी मम्मी से कहो कि वह परात साफ करे। तब उनसे कहो आटा गूंधे, तत्पश्चात पेड़े बनाकर उन्हें बेलने के लिए कहो। तब मम्मी से कहो कि ट्रे को भट्टी में रखे। मम्मी दस्तानों का उपयोग करती है। बिस्कुट जब पक जाएं तो मम्मी को ट्रे निकालने के लिए कहो। जब ये ठण्डी हो जाएं तो प्लेट में डालकर अपने मित्रों के साथ आप ये केक खा सकते हैं।'' मैंने उससे कहा, ''अक्षय मेरी तो मम्मी ही नहीं हैं।'' उसने पूछा, ''वो कहाँ गई हैं? आप उन्हें बुला लो।'' मैंने कहा, ''वो परमात्मा के पास चली गई हैं, वापिस नहीं आ सकतीं।'' उसे

वास्तव में खेद हुआ और उसने कहा, ''तब आप बिस्कुट नहीं बना सकतीं, मैं आपके लिए कुछ बिस्कुट बनवा दूंगा क्योंकि मेरी तो मम्मी हैं।'' दो मित्रों के बीच कितना सुन्दर सम्वाद था! मेरे पास ऐसी सुन्दर-सुन्दर कहानियों के भण्डार भरे हुए हैं। इन अनुभवों पर मैं एक पूरी पुस्तक लिख सकती हूँ।

बच्चों की अबोधिता खराब करने के सभी उद्यमियों के प्रयत्नों का माता-पिताओं को सामूहिक रूप से मुकाबला करना होगा। बच्चों के अबोध मस्तिष्क में असभ्य एवं अनैतिक विचार भरने वाले वीडियोकैसेट तथा फिल्मों पर प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए। माता-पिता को चाहिए कि ऐसे वीडियोकैसेट और फिल्मों के विरोध में अभियान छेड़ें। बच्चों की शिक्षा तथा प्रशिक्षण, बड़ों के प्रति, अध्यापकों के प्रति, परस्पर, समाज के प्रति, देश के प्रति तथा विश्व के सभी लोगों के प्रति सम्मान का सृजन करने के लिए होना चाहिए क्योंकि हम तो सार्वभौमिक परिवर्तन की आशा लगाए हुए हैं। बहुत ही छोटी आयु में बच्चों को मानव परिवार, सार्वभौमिक शान्ति तथा सार्वभौमिक धर्म की अवधारणा को सीख तथा समझ लेना चाहिए। अपने प्रेममय माता-पिता के माध्यम से बच्चों को जान लेना चाहिए कि पावन तथा निस्वार्थ प्रेम ही जीवन में महत्वपूर्णतम है तथा नैतिकता बहुमूल्यतम सद्गुण, धन से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। चुनिन्दा अच्छी कहानियाँ तथा उपन्यासों को पढ़कर बच्चे धर्मपरायण जीवन को अपना लेंगे। उनकी भाषा मधुर तथा सम्मानमय रूप से विनम्र होनी चाहिए। इस तथ्य के प्रति उन्हें चेतन किया जाना चाहिए कि मानव प्रजाति के सदस्य होने के नाते वे विकास की पराकाष्ठा हैं तथा उत्थान की इससे भी अधिक उच्चस्थिति को प्राप्त करने के लिए इस पृथ्वी पर अवतरित हुए हैं।

बच्चों की पढ़ाई का पाठ्यक्रम बहुत अधिक ध्यानपूर्वक बनाया जाना चाहिए। स्वार्थी एकान्तिकता के स्थान पर बच्चों को बाँटकर लेने का आनन्द उठाना चाहिए। विश्व के अन्य भागों के लोगों के विषय में उन्हें सच्ची

सूचनाएं दी जानी चाहिएं ताकि उनके रंग, जाति या राष्ट्रीयता की चिन्ता किए बिना वे उनका सम्मान करें। जिस समाज में वे रहते हैं उसके विषय में- उसके श्रेष्ठ भाग के विषय में, उन्हें चेतन किया जाना चाहिए। विचार-विमर्श करने के लिए समाज में सभाएं होनी चाहिएं कि अबोध बच्चों को अव्यवस्थित आधुनिक समाज में व्यवस्थित करने के लिए क्या किया जाना चाहिए? समस्याएं उत्पन्न करने वाले तथा परमात्मा के नाम पर लड़वाने वाले किसी भी धर्म विशेष को मानने के लिए उन्हें विवश नहीं किया जाना चाहिए। घृणा तथा स्वामित्वभाव त्यागने के लिए उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। बचपन से ही यदि उन्हें बताया जाएगा, ''अपने आसपास की सभी चीज़ों पर तुम्हें अधिकार करना है,'' तो उनमें छोटी-छोटी चीज़ों, यहाँ तक कि बेकार के खिलौनों के लिए भी भयंकर अहं विकसित हो जाएगा। बच्चों के लिए खिलौने अत्यन्त ध्यान पूर्वक चुने जाने चाहिए। ये न तो हिंसा की प्रशंसा करने वाले हों और न ही हिंसा को बढ़ावा देने वाले तथा हिंसा इनकी विषयवस्तु भी न हो। बच्चों के खिलौने अत्यन्त सुन्दर तथा सृजनात्मक होने चाहिए ताकि वे सृजन के सौन्दर्य को महसूस कर सकें। भूतकाल या वर्तमान के भयानक जीवों के आकार में बनाए गए बेढब खिलौने न तो बच्चों को दिए जाने चाहिएं न ही बाज़ार में बेचे जाने चाहिएं। ऐसे खिलौने वर्जित कर दिए जाने चाहिएं। यदि केवल अच्छे खिलौने बनाए जाएं और सभी गन्दे एवं असुन्दर खिलौने वर्जित कर दिए जाएं तो निश्चित रूप से बच्चों में सृजनात्मक तथा सुन्दर खिलौनों के प्रति शौक पैदा हो जाएगा। मेरी बेटियाँ जब छोटी थीं तो मैंने एक प्रकार से उनके लिए आवश्यक कर दिया था कि वे केवल ऐसी फिल्में देखें जो रामायण, महाभारत, गीता या बाइबल पर बनी हों। आश्चर्य की बात है कि उनमें ऐसी ही फिल्मों के प्रति रुचि उस सीमा तक उत्पन्न हो गई कि जब मैंने उन्हें अपनी माँ के घर भेजा तो मेरी बहनों ने मुझे लिखा कि वे (मेरी बेटियाँ) कोई भी ऐसी फिल्म नहीं देखना चाहतीं जिनमें पारम्परिक विषयवस्तु न हो या जो पौराणिक कथाओं पर आधारित न हों।

अब मेरी बेटियाँ बड़ी हो चुकी हैं और वे अन्य लोगों से बहुत भिन्न हैं। अच्छी फिल्मों के लिए रुचि उत्पन्न करने का यह मात्र एक तरीका है।

तब बच्चे कोई भी गन्दी फिल्म नहीं देखना चाहते। अपने अनुभव में मैंने देखा है कि बच्चे मूलत: अबोध एवं पावन होते हैं। नि:सन्देह यदि माता-पिता हर समय लड़ते रहते हैं या जब माँ गर्भवती हो और वे गन्दी पुस्तकें पढ़ें या गन्दी फिल्में देखें तो इसका कुप्रभाव बच्चे पर पड़ता है। बच्चों के साथ माता-पिता की पूर्ण घनिष्ठता होनी चाहिए और उन्हें चाहिए कि अत्यन्त प्रेम एवं कोमलता पूर्वक उनकी देखभाल करने में अधिक समय व्यतीत करें। बच्चों के सम्मुख परस्पर झगड़ने के स्थान पर यदि माता-पिता घर में बच्चों से बातचीत करें और उनकी संगति करने में समय लगाएं तो निश्चित रूप से वे बहुत सुन्दर बच्चों का सृजन करेंगे, जो समाज के लिए महान सम्पदा होंगे।

बच्चों को यदि बाहर ले जाना हो तो गन्दे स्थानों पर नहीं ले जाना चाहिए। बच्चे अच्छी-बुरी सभी चीजें.आत्मसात करते हैं। वे जुआ खेलना भी सीख लेते हैं। मैं कुछ ऐसे बच्चों को जानती थी जो किसी भी बात पर शर्त लगा लेते थे और फिर लड़ते थे। दूसरी ओर जिन बच्चों को माता-पिता प्रेम तथा स्नेहपूर्वक पालते हैं वे अत्यन्त सुन्दर तथा मधुर बच्चे बन जाते हैं। शनै: शनै: इनमें स्वामित्व और संग्रहण भाव समाप्त होने लगता है। हमारे स्कूल में अमरीका से दो बच्चे आए, वो दिनों दिन पतले होने लगे। जब मैंने पूछा कि ''ये पतले क्यों हो रहे हैं?'' तो स्कूल अधिकारियों ने बताया, ''ये हमेशा मैकडॉनल्ड के बर्गर तथा अन्य चीज़ें माँगते हैं। स्कूल में हमारे पास इन चीजों. का कोई प्रबन्ध नहीं है।'' शनै: शनै: बच्चों में स्वाद परिवर्तन हुआ और घर का बना खाना उन्हें अच्छा लगने लगा। अगले वर्ष जब वे अपने घर वापिस गए तो उनके माता-पिता हैरान थे। उन्होंने उनसे पूछा, ''क्या तुम मैकडॉनल्ड चलोगे?'' तो बच्चे कहने लगे, ''नहीं, नहीं हमें वो अच्छा नहीं लगता। झटपट-भोजन (Fast Food) की इन दुकानों पर हम नहीं जाना चाहते। घर पर

जो कुछ बना है हम वही खाएंगे।'' इस परिवर्तन से माता-पिता बहुत प्रसन्न हुए। अपनी प्रसन्नता तथा प्रेम दर्शाने के लिए माता-पिता ने बच्चों को कहा, ''क्योंकि तुमने स्कूल वापिस जाना है इसलिए हम तुम्हारी पसन्द की कोई चीज़ तुम्हारे लिए खरीदना चाहते हैं।'' कुछ देर सोचकर बच्चों ने कहा, ''अपने स्कूल के मित्रों के लिए क्या हम आपके फोटो ले जा सकते हैं?'' ये बच्चे इतने मधुर थे! अपनी कक्षा में अब वे बहुत अच्छी तरह से चल रहे हैं। अब उनका वज़न बढ़ गया है और वो सामान्य दिखाई पड़ते हैं।

मैंने देखा है कि घर यदि साफ-सुथरा तथा व्यवस्थित हो, उसे व्यवस्थित करने के लिए यदि प्रेम उड़ेला गया हो, तो बच्चे भी इसे बिगाड़ना नहीं चाहते। वे हर समय घर को स्वच्छ रखना चाहते हैं।

मुझे याद है कि एक बार मेरी नातिन हमारे यहाँ आई हुई थी। वह कालीन पर पड़ा हुआ एक धब्बा साफ करने लगी। इंग्लैण्ड में प्रायः लोग कालीनों को साफ रखने के मामले में बहुत चुस्त है क्योंकि वहाँ पर हर चीज़ को उपयोग के बाद बेच दिया जाता है। मुझे बताया गया कि मेरी नन्हीं नातिन कम से कम एक घण्टे से कालीन साफ करने में लगी हुई थी। मैंने उससे पूछा, ''तुम स्वयं क्यों इसे साफ कर रही हो?'' बाद में हम इसे साफ करवा लेते।'' ''नहीं, नहीं,'' उसने कहा, ''नानी माँ आपका घर इतना सुन्दर तथा स्वच्छ है, कालीन पर ये धब्बा छोड़कर मुझे आपका घर गन्दा नहीं करना चाहिए। ये धब्बा तो बहुत बुरा लग रहा है।'' उसकी सूझ-बूझ तथा जिम्मेदारी की भावना को देखकर मैं हैरान थी। अतः यदि बच्चों को चीज़ों को सुन्दर बनाने तथा साफ-सुथरा रखने के लिए जिम्मेदार बना दिया जाए तो वे निश्चित रूप से इस कार्य को करेंगे। भारत में ऐसा होता हुआ हमने देखा है। हर सृजनात्मक, कलात्मक, सुन्दर और हर उस चीज़ को जिसमें कोई सन्देश हो, बच्चे तुरन्त अपना लेते हैं। इसी प्रकार से हम उनमें गहन सम्वेदना विकसित कर सकते हैं। यह विचार कि बच्चे जो चाहें उन्हें करने दो, मात्र मेहनत से

बचने का बहाना है। बच्चे माता-पिता से उत्पन्न होते हैं पेड़ों से नहीं गिरते। तो सुव्यवस्थित बनने के लिए कौन उनकी सहायता करेगा? अध्यापकों को भी ठीक प्रकार से बच्चे की सहायता करनी चाहिए। आजकल के कुछ विचारों ने वास्तव में बच्चों को बहुत अधिक उच्छृंखल बना दिया है। माता-पिता तथा अध्यापकों का ध्यान आकर्षित करने के लिए बहुत छोटी आयु में ही बच्चे हिंसा पर उतारू हो जाते हैं।

पाश्चात्य देशों के स्कूलों में छोटी आयु के बच्चों को भी यौनशिक्षा दिए जाने पर बहुत अधिक बल दिया जा रहा है। इससे अपरिपक्व मस्तिष्क में उत्सुकता जागृत हो जाती है और परिणामस्वरूप बच्चों में सभी प्रकार की यौनसम्बन्धी समस्याएं पनप उठती हैं। अधिकतर नन्हें बच्चों के मस्तिष्क चिकनी मिट्टी की तरह होते हैं। इन्हें सुगमतापूर्वक बहुत ही सुन्दर आकृतियों में ढाला जा सकता है। परन्तु यदि सावधानी पूर्वक उनकी देख-रेख न की गई तो ये आकृति बिल्कुल विकृत भी हो सकती है। उनके अबोध मस्तिष्क में अश्लील भावनाएं नहीं होतीं। स्कूल, मीडिया तथा पुस्तकों के माध्यम से यौन और हिंसा के दृश्यों का निरन्तर आघात यदि उन पर किया गया तो, उनके मस्तिष्क फोटो लेने वाले कैमरे की तरह से होने के कारण, इन पर यौन और हिंसा की छाप रह जाती है और खाली समय में ये प्रतिमाएं उनके सम्मुख नृत्य करती हैं। इस आयु में उनके सम्मुख यौनसम्बन्धों की बातें खुल्लम-खुल्ला नहीं की जानी चाहिएं। जिन देशों में बच्चों के सम्मुख ये बातें नहीं की जातीं वहाँ के बच्चों को काफ़ी बड़े होने पर यौनसम्बन्धों का पता चलता है तथा वे यौनावस्था के उचित समय तक इससे दूर बने रहते हैं। वैसे भी माता-पिता ही बच्चों को सर्वोत्तम यौन शिक्षा दे सकते हैं। पिता-पुत्र को और माँ पुत्री को। कक्षा के खुले कमरे में यौनशिक्षा का प्रभाव बच्चों को उत्तेजित करने वाला होता है तथा छोटी आयु में ही उन्हें यौन-प्रयोग करने के लिए विवश कर सकता है। छोटी आयु में बेरोकटोक यौनभोग गम्भीर स्वास्थ्य

समस्याओं का कारण बनते हैं तथा स्वच्छन्द समाज की सृष्टि करते हैं। यौनसम्बन्ध, जो कि अत्यन्त निजी मामला होता है, के विषय में बच्चों में लज्जाशीलता समाप्त हो जाती है। भारत में यदि स्कूलों में ऐसी शिक्षा आरम्भ कर दी जाए तो माता-पिता तुरन्त इस प्रकार के स्कूल से अपने बच्चों को निकाल लेंगे। जो माता-पिता अपने बच्चों को पाश्चात्य स्कूलों में भेजते हैं वे स्वयं भी पाश्चात्य मूल्यों से प्रभावित होते हैं। पश्चिम के अधिकतर स्कूलों में इस प्रकार की यौनविकृतियों का बाहुल्य है क्योंकि बच्चों को यौनशिक्षा प्राप्त है और वो यौनभोग करना चाहते हैं। अध्यापकों को चाहिए कि बच्चों को सिखाएं कि पवित्रतापूर्वक वास्तविक प्रेम किस प्रकार करना है और किस प्रकार करुणामय और निर्लिप्त होकर समाज के लिए उपयोगी बनना है। यह पहला पाठ है जो बच्चों को आत्मसात करना है। अंकगणित, वर्णविन्यास (Spelling) आदि अन्य चीजें.बाद में आ सकती हैं। परन्तु अध्यापकों के लिए मुख्य चीज़ बच्चों में ये सभी सद्गुण भर देना है। सर्वप्रथम अध्यापकों को अपने उच्चस्तर से तथा दूसरे स्थान पर महान व्यक्तियों द्वारा लिखी गई अच्छी पुस्तकों के माध्यम से तथा उन पुस्तकों के माध्यम से जो दर्शाती हों कि इन सद्गुणों से विहीन व्यक्ति या धर्मादेशों की ओर ध्यान न देने वाले व्यक्ति को किस प्रकार कष्ट उठाना पड़ता है, ये कार्य करना है।

भारत में मिलकर खाना खाते हुए लोग एक दूसरे के हाथ में न तो नमक रखते हैं और न ही नमक का बर्तन एक-दूसरे को पकड़ाते हैं, क्योंकि ये माना जाता है कि ऐसा करने से नमक देने और लेने वाले की बीच झगड़ा हो जाता है। कहने का तात्पर्य ये है कि झगड़े को बढ़ावा देने वाला कोई भी कार्य नहीं करना चाहिए। मनुष्य में ये भावना आनी चाहिए कि हम किसी से भी झगड़ा नहीं करना चाहते क्योंकि ये मानवीय गरिमा के विरुद्ध है। बच्चों को इस बात के प्रति जागृत किया जाना चाहिए कि मानव ही विकास का सारतत्व (Epitome of Evolution) है। उन्हें ये जानना चाहिए कि हमें शान्त और

मित्रवत् होकर एक दूसरे को प्रसन्न करना है। हम पशुवत नहीं हो सकते। अन्य लोगों को प्रसन्न करना बहुत आवश्यक है और यह बात बच्चों को किसी भी तरीके से सिखाई जानी चाहिए। बच्चों को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि झगड़े से बचना दुर्बल व्यक्तित्व का चिन्ह नहीं है। शान्ति एवं प्रेम से प्रसन्नता पूर्वक रहना सम्मान-जनक होता है। व्यक्ति को चाहिए कि क्षमा करे और क्षमा ले। यह सद्गुण है। एक बार बच्चे जब सद्गुणों का आनन्द लेने लगेंगे तो वे मूर्खतापूर्ण चीज़ों को नहीं अपनाएंगे।

कुछ वर्ष पूर्व भारत में पाश्चात्य संस्कृति में रंगे हुए लोगों ने किशोरों के लिए एक समाचार पत्र आरम्भ किया था। हम अपने जीवन का विभाजन वयस्क या किशोरों में नहीं करते ये एक आधुनिक विचार था। मेरी बड़ी बेटी जब 13 वर्ष की थी तब ये लोग उससे मिलने आए और मुझसे कहा कि मैं उसे अकेली छोड़ दूं। उन्होंने उससे बहुत अटपटे प्रश्न पूछे। एक प्रश्न ये था कि ''क्या आपका कोई प्रेमी (Boy Friend) है?'' उसने कहा, ''मेरी बहुत सी सहेलियाँ हैं और कई चचेरे, ममेरे भाई भी हैं।'' भारत में चचेरे-ममेरे भाई भी सच्चे शब्दों में भाई ही होते हैं। उनका अगला प्रश्न ये था, ''पक्षी की तरह से आकाश में उड़ने के लिए क्या तुम स्वतन्त्र नहीं होना चाहती?'' उसने उत्तर दिया, ''पहले मेरे पंख तो निकल आने दो।'' तब माँ पर आक्रमण करते हुए उन्होंने कहा, ''क्या वे तुम्हें नियन्त्रित करती हैं?'' उसने उत्तर दिया, ''वो मुझे प्रेम करती हैं और उन्हें नाराज़ करने के लिए मैं कुछ नहीं करना चाहती। वे जानती हैं कि मेरे लिए क्या अच्छा है।''

आत्मसम्मान की गहन भावना बच्चों के मन में इस तरह से बिठा दी जानी चाहिए कि वे न तो सदैव चीज़ों की माँग करते रहें और न उनके लिए झगड़ते रहें। बातचीत द्वारा आत्मसम्मान प्रिय लोगों की कहानियाँ उन्हें सुनाकर यह कार्य किया जा सकता है। एक बार मैं ब्राइटन गई, मेरी दो नातिने मेरे साथ थीं। सवारी के लिए वे बच्चों की बनी छोटी सी रेल गाड़ी में गई। जब

वे वापिस आईं तो छोटी ने एक बार फिर रेल में सवारी करने के लिए ज़िद की और इसके लिए रोने लगी। अचानक उसे लगा, '' मैं ये क्या कर रही हूँ?'' उसका आत्मसम्मान उभरा और उसने अपना मुँह छिपा लिया। कहने लगी, ''नानी मुझे खेद है, मुझे बहुत दुख है। काफी देर तक वह अपना मुँह छिपाए रही। मैंने उससे पूछा, ''तुमने अपना मुँह क्यों छिपाया हुआ है?'' उसने उत्तर दिया, ''अपने व्यवहार पर मैं बहुत लज्जित हूँ।'' बच्चों को यदि हम अवसर दें और उन्हें समझने और उनका सम्मान करने के लिए उचित दृष्टिकोण बनाएं तो वे अपनी अबोधिता में ही बहुत शीघ्र परिपक्व हो सकते हैं। उनके सद्गुणों और छोटी-छोटी उपलब्धियों को बढ़ावा देने से बच्चे प्रोत्साहित होते हैं और समझ जाते हैं कि अच्छी चीजें सदैव सम्मानित होती हैं।

मेरी छोटी बेटी की भी कुछ अच्छी बातें मुझे याद हैं। मुम्बई विश्वविद्यालय में एम.ए. परीक्षा में वह प्रथम रही। इससे पूर्व वह मुम्बई के एक महाविद्यालय में पढ़ी जो कि कुछ सीमा तक पाश्चात्य रंग में रंगा हुआ था। एक दिन उसने मुझसे पूछा कि क्या मैं कॉलेज की अन्य लड़कियों की तरह से बिना बाज़ू का ब्लाऊज़ पहन सकती हूँ? मैंने उसे बताया, ''अब तुम बड़ी हो गई हो, स्वयं इसका निर्णय ले सकती हो।'' तब उसने पूछा, ''माँ, आप क्यों नहीं बिना बाजू के ब्लाऊज़ पहनती?'' मैंने कहा, ''मैं अपने कंधों के जोड़ों को नंगा नहीं रखना चाहती क्योंकि ऐसा करने से मेरे जोड़ों में दर्द उठ सकता है। फिर मैं तो अत्यन्त पारम्परिक हूँ।'' थोडी सी देर सोचकर वह बोली ''अवश्य कोई गहन कारण होगा।'' तब मैंने उसे बताया कि दोनों कंधों के जोड़ों पर श्री चक्र और ललिता चक्र नामक महत्वपूर्ण चक्र हैं जिनका ढका रहना आवश्यक है। उसे तेज झटका लगा। कहने लगी, ''माँ ऐसा कोई गलत कार्य करने की आज्ञा आपको मुझे नहीं देनी चाहिए। आप मेरी माँ हैं और मुझसे कहीं अधिक विवेकशील हैं। सीधे 'नहीं' कहकर आपको मेरे चक्रों की रक्षा करनी चाहिए थी।''

बच्चों की फिल्मों का पूर्वदर्शन होना चाहिए और माता-पिता समिति द्वारा इसकी जिम्मेदारी ली जानी चाहिए। जो फिल्में बच्चों के योग्य न हों, दूरदर्शन पर रात 9 बजे के बाद दिखाई जानी चाहिएं, जब बच्चे गहरी नींद में सो चुके हों। ऐसी फिल्में जिनमें राक्षस, मृत शरीर या भूत दिखाए गए हों या जिनमें बच्चों को भयभीत करने वाली चीज़ें हों, नहीं दिखाई जानी चाहिएं। इस कोमल आयु में यदि बच्चे डर जाएं तो भय की यह स्मृति उनके साथ बनी रहती है। हमने ऐसे बहुत से बच्चों को ठीक किया है जिनके मन में चाँद, पेड़ या कुत्तों आदि का भय बना हुआ था। छोटे बच्चों को भयभीत करने वाली कहानियाँ सुनाने वाले लोग ही इसका कारण होते हैं। ये भय निरन्तर बने रहते हैं तथा बहुत सबूरी तथा शान्ति से बच्चों के सम्मुख यह दर्शाने का प्रयत्न करने से कि उन्हें सुनाई गई कहानियों में ज़रा भी सत्य नहीं है, यह भय दूर किए जा सकते हैं।

मैंने पाया है कि कैंसर जैसी मनोदैहिक, बीमारियों का कारण भी बचपन से बच्चों के मन में बैठा हुआ भय होता है। इस भय के कारण बच्चे कई बार बड़े अजीबो गरीब ढंग से आचरण करते हैं। यहाँ तक कि वे गुप्त रूप से उन लोगों को नष्ट करने के मार्ग खोजते हैं जिनसे वे भयभीत हैं।

जो लोग विवाह करते हैं उन्हें भी इस बात की स्पष्ट सूझ-बूझ होनी चाहिए कि क्यों वे विवाह कर रहे हैं। वे यदि बच्चे उत्पन्न करना चाहते हैं तो उन्हें समझ होनी चाहिए कि क्यों वे बच्चे चाहते हैं। विवाहित लोगों की आचार संहिता ऐसी होनी चाहिए कि उनके अन्दर की खूबियों की अभिव्यक्ति हो सके और सफल विवाहित जीवन के उनके स्वप्नों को साकार करने के योग्य उन्हें बना सके। ऐसे बहुत से जोड़े हैं जो बिना विवाह के साथ रहते हैं। पश्चिम के लोग, प्राय: जब विवाह कर लेते हैं तो वे एक दूसरे से परेशान हो जाते हैं। इसका कारण ये है कि वहाँ के कानून में प्रावधान है कि पति-पत्नी की तलाक की स्थिति में घर का सारा धन और सम्पति दो हिस्सों

में विभाजित हो जाए। इसी कारण लोग विवाह करने से घबराते हैं। अमेरिका जैसे देश में मैंने देखा कि दस बार तलाक लेकर सभी पतियों की आधी सम्पत्ति पर अधिकार करके कुछ महिलाएँ इतना धन एकत्रित कर लेती हैं कि वे राजकुमारियाँ कहलाती हैं। ऐसी महिलाओं के कुछ पूर्वपति तो अन्ततः दरिद्र बनकर रह जाते हैं। जिन देशों में महिलाओं को सुरक्षित रखने के लिए ऐसे कानून बनाए गए हैं वहाँ पर ये बीमारी आम है। विवाह को ये महिलाएं व्यापार में उस स्तर तक परिवर्तित कर रही हैं कि अब लोग कहते हैं कि ''हमारी इन महिलाओं से रक्षा करो।'' बहुत समय पूर्व तो ऐसे कानून का औचित्य था परन्तु अब यह बहुत भयानक बन गया है। इसे परिवर्तित करने तथा धन ऐंठने का साधन बने इन तलाकों को रोकने के लिए कुछ किया जाना आवश्यक है।

आजकल जो फिल्में हम देखते हैं वे पहले समय में बनाई गई फिल्मों के मुकाबले कहीं नहीं ठहरतीं। यदि ये अमेरिकन फिल्में हों तो अमरीकन लोगों के अतिरिक्त कोई इनकी भाषा नहीं समझ पाता और यदि इंगलिश फिल्में हों तो केवल बर्तानवी लोग ही इनकी भाषा को समझ सकते हैं। पुराने समय में अंग्रेजी फिल्मों का उच्चारण बिल्कुल स्पष्ट हुआ करता था। अब चीज़ें बिल्कुल भिन्न हैं। अब अंग्रेजी का उच्चारण अमरीकन शैली में किया जाता है। दूरदर्शन समाचारवक्ता भी उच्चारण के विषय में उतने सावधान नहीं हैं जितने ये पहले हुआ करते थे। अब तो ये केवल तेज दौड़ते हैं। इसके विपरीत इंग्लैंड या अमेरिका से जाकर जो लोग भारत, हांग-कांग या जापान में बस गए हैं उनका उच्चारण इंग्लैंड और अमेरिका के निवासियों से कहीं अच्छा है।

आजकल की अधिकतर फिल्मों में घिनौनी कामुकता और भयंकर हिंसा का बाहुल्य सबसे अधिक परेशानी करने वाली बात है। न कोई घटनाएं होती हैं न कोई कहानी, मानो अच्छे लेखकों का अभाव हो गया हो, उन लेखकों का जिनमें सृजनात्मकता थी जिसके कारण हर फिल्म शाश्वत मूल्यों

वाली फिल्म होती थी! इन फिल्मों का समाज पर, विशेष रूप से युवा वर्ग पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ रहा है। अत्यन्त आदर्शवादी लोगों द्वारा इन फिल्मों का नियन्त्रण (Censor) किया जाना चाहिए। ऐसे नियमाचरण होने चाहिएं जो उन मापदण्डों का वर्णन करें जिनके दायरे में फिल्में बनाई जाएं। आजकल की अधिकतर फिल्मों को कलात्मक नहीं कहा जा सकता। वास्तव में ये अमंगलमय है और निर्लज्जता पूर्ण शुद्ध कला में लोगों को प्रभावित करने के लिए हिंसा और कामुकता की आवश्यकता नहीं पड़ती। कला तो अपने आप में ही अत्यन्त प्रभावशाली होती है। परन्तु आजकल तो जनता की पसन्द के अनुरूप सभी प्रकार के निम्नस्तर की फिल्में बनाई जाती हैं। फिल्म उद्योग में इतने अधिक विकास के बावजूद, बनाई गई फिल्में नीरस होती हैं। दिनोदिन फिल्में बद से बद्तर होती जा रही हैं और उनपर कोई प्रभावशाली नियन्त्रण भी नहीं है। ऐसे लोगों का एक नियंत्रण बोर्ड (Censor Board) होना चाहिए जो अपने सद्चरित्र के लिए सुप्रसिद्ध हो और इस प्रकार के फिल्म उत्पादन को सुधार सके। बच्चों की फिल्मों का, विशेष रूप से, बहुत ही सावधानी से पूर्वदर्शन एवं नियन्त्रण किया जाना चाहिए। इनका लक्ष्य बच्चों के चरित्र एवं करुणात्मक-मूल्यों को बढ़ावा देना होना चाहिए। फिल्में धन इकट्ठा करने के लिए न होकर सांस्कृतिक मूल्यों को बढ़ावा देने के लिए होनी चाहिएं। शिक्षा नीति भी ऐसी ही होनी चाहिए। विश्व भर के महान तथा श्रेष्ठ लेखकों द्वारा लिखी गई पुस्तकें, केवल उन्हीं के देश में लिखी गई पुस्तकें ही नहीं, पढ़ने के लिए बच्चों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। काल्पनिक या एक प्रकार से युद्धोत्तेजक लोगों की जीवन कथाओं के स्थान पर महान लोगों की जीवनियां तथा आत्मकथाओं के प्रति बच्चों के मन में रुचि विकसित की जानी चाहिए। बच्चों के सम्मुख यदि आप भयानक चरित्र के लोगों को रखेंगे तो बच्चे उनकी बुराइयों को सुगमता से आत्मसात कर लेंगे। बड़ी आयु के लड़के लड़कियाँ ऐसी पुस्तकें पढ़ सकते हैं जो ये दर्शाती हों कि अनैतिक जीवन किस प्रकार भयानक एवं विनाशकारी है।

बच्चों के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता का सिद्धान्त अत्यन्त भयानक है। उनको वास्तविक स्वतन्त्रता तो तभी दी जानी चाहिए जब वे स्वतन्त्रता का अर्थ समझ जाएं। यदि वे विवेकशील एवं परिपक्व हैं तो यह स्वतन्त्रता उनके लिए हितकर होगी। अपनी आयु पर माता-पिता को होना चाहिए उन्हें मूर्ख युवापीढ़ी की तरह से सनकी नहीं होना चाहिए। एक बार मैं एक भारतीय महिला के साथ अमेरिका में सान्ता मोनिका (Santa Monica) गई थी। एक सुबह उसने मेरा दरवाजा खटखटाया और कहा, ''जल्दी से जागो, जल्दी उठो।'' मेरी समझ में ये बात न आई। मैंने आकर दरवाजा खोला और पूछा, ''क्या बात है?'' उसने कहा, ''भूचाल आ रहा है।'' मैंने कहा, ''क्यों तुम ऐसा सोच रही हो?'' उसने उत्तर दिया, ''सभी लोग सड़क पर दौड़ रहे हैं।'' मैंने कहा, ''कहाँ?'' मैं बाहर आई और सभी लोगों को दौड़ते हुए देखा क्योंकि ये लोग व्यायाम करने के लिए दौड़ रहे थे। मैंने उसे बताया, ''ये तो जॉगिंग नामक व्यायाम है जो ये लोग सुबह सवेरे करते हैं।'' कहने लगी, ''नहीं, नहीं, यहाँ तो बहुत से वृद्ध पुरुष और महिलाएं भी दौड़ रहे हैं! ऐसा कैसे हो सकता है?'' ये लोग युवाओं की तरह से किस तरह व्यवहार कर सकते हैं? ये तो बहुत ही वृद्ध एवं दुर्बल हैं, इन्हें हृदयाघात हो सकता है।'' मैंने उसे बताया, ''तुम नहीं जानती, ये अमेरिका है। यहाँ वृद्ध लोग भी अभी तक इतने परिपक्व नहीं हुए कि वे समझ सकें कि युवा लोगों की तरह से दौड़ना उनके लिए हानिकारक है। अमेरिका में वृद्ध लोग भी वही करना चाहते हैं जो युवा करते हैं। उनमें विवेक का अभाव है और यही कारण है कि युवावर्ग उनका सम्मान नहीं करता।''

परिवार से हटकर, आइए, अब समाज को देखें। हैरानी की बात है कि पाश्चात्य समाज बिल्कुल भी व्यक्तिपुरक या परम्परावादी नहीं है। कोई भी फैशन हो, उसे ये अपना लेते हैं। कभी-कभी तो ये समझ में ही नहीं आता कि हर वर्ष अपने पुराने वस्त्र फेंककर और नए वस्त्र खरीदकर वेश-भूषाकारों को

शोषण का अवसर देकर ये लोग रोज़ के नए फैशन की नकल करने का प्रयत्न क्यों करते हैं? वृद्ध लोग भी अपनी आयु के अनुसार वांछित गरिमा के साथ नहीं रहते। यदि हम बच्चों को आत्मसम्मान तथा अपने सम्मान को बनाकर रखना सिखा दें तो वे पश्चिम के खर्चीले तौरतरीके अपनाने के स्थान पर गरिमा तथा सम्मानमय जीवन को अपनाएंगे और जिम्मेदार नागरिकों तथा समाज के अच्छे सदस्यों के रूप में उभरेंगे।

मेरा नाती जब छोटा था तो उसने मुझे कहा कि ''आप मुझे वैसे ही जूते और कपड़े लेकर दो जैसे नाना ने पहने हुए हैं।'' मैंने कहा, ''ये बहुत पुराने फैशन के हैं।'' कहने लगा, ''कोई बात नहीं, अत्यन्त फैशनेबल (Modern) वस्त्र अब मैं नहीं पहनना चाहता। मैं हैरान थी क्योंकि वह कुछ भी अपारम्परिक नहीं पहनना चाहता था। शनैः शनैः समय के व्यतीत होने के साथ उसका सम्पर्क अन्य बच्चों से हुआ और वह पाश्चात्य वस्त्र पहनने लगा, जिन्हें वह पहले भद्दे समझा करता था और कहता था कि उनमें बिल्कुल भी गरिमा नहीं है। आजकल छोटे-छोटे बच्चे भी अत्याधुनिक (Modern) वेशभूषाएं पहनते हैं जो छोटे बच्चों को न तो व्यक्तित्व प्रदान करती हैं और न गरिमा।

आधुनिक विचारों वाला समाज उनकी दुर्बलताओं की सामूहिक स्वीकृति और निर्लज्ज अभिव्यक्ति के सिवाए कुछ भी नहीं। रियो (Rio) में एक वार्षिक आनन्दोत्सव (Carnival) होता है। लोग इस मूर्खतापूर्ण अभद्र प्रदर्शन में भाग लेने के लिए पैसा बचाने की जी तोड़ कोशिश करते हैं। हैलोविन (Halloween) जैसे और भी कई उत्सव हैं जो सर्वत्र मनाए जाते हैं। न्यूयार्क में मैं एक घर खरीदना चाहती थी। जब हम वहाँ पहुँचे तो देखा कि इस घर के सामने के हिस्से पर, बाहर के दरवाजे के ऊपर, हैलोविन के प्रतीक के रूप में हाथ में झाडू लिए चुड़ैल की भयानक शक्ल बनी हुई थी। सम्भवतः यह हैलोविन उत्सव का महीना होगा। उसे देखकर मेरी नातिन कहने लगी,

''बेहतर होगा कि इस घर को खरीदा ही न जाए। इसके अगुवाड़े पर चुड़ैल दर्शायी गई है। ऐसे घर में प्रवेश करने का क्या लाभ है?'' ये बात बिल्कुल सच है कि आजकल चुड़ैलों, अच्छी महिलाओं, वेश्याओं तथा अभिनेत्रियों के बीच कोई फर्क नहीं किया जाता। आधुनिक समाज में ये सब इस प्रकार मिली हुई हैं कि व्यक्ति को समझ नहीं आता कि किसे क्या कहा जाए?

उदाहरण के रूप में, मैंने देखा है कि सामाजिक प्रीतिभोजों में महिलाएँ अटपटे वस्त्र पहनकर आती हैं। कहने का अभिप्राय ये है कि औपचारिक वेशभूषा के स्तर के अनुसार वे बिल्कुल नंगी होती हैं। वे पुरुषों के साथ इश्कबाजी करती हैं, गर्वपूर्वक धूम्रपान करती हैं तथा वासनापूर्ण दृष्टि से लोगों को देखती हैं। पुरुष भी ऐसा ही करते हैं। पुरुष और महिलाएं दोनों ही पार्टियों में केवल एक दूसरे से इश्कबाजी करने के लिए आते हैं। हैरानी की बात है कि इतनी निर्लज्जतापूर्वक इन गतिविधियों में लोग किस प्रकार लिप्त होते हैं!

अत्यन्त वृद्ध पुरुषों को एक के बाद एक युवा लड़कियों से विवाह करने में लज्जा नहीं आती! किसी वृद्ध पुरुष को बाग में खुल्लमखुल्ला किसी युवा लड़की से इश्क फरमाते हुए मैंने अभी तकनहीं देखा है। इसका अर्थ है कि इस मामले में अभी लज्जा शेष है। परन्तु आधुनिक समाज में अपनी आयु से तीस वर्ष छोटी लड़की से विवाह करना आपत्ति जनक नहीं माना जाता। कुछ देशों के प्रधानमन्त्री भी ऐसा करते हैं। कुछ समय पूर्व हमने देखा था कि एक व्यक्ति लन्दन की सभाओं में हर बार अपने साथ एक नई बीवी लाता था। एक बार वह अपने साथ अट्ठारह वर्ष की एक लड़की को लाया। मेरे पति मेरे कान में बुदबुदाए, ''यह इसकी नई पत्नी है, इसे इसकी पोती मानकर बात मत करना।'' मुझे सद्मा लगा। वह पैंसठ वर्ष का वृद्ध व्यक्ति था और अट्ठारह वर्ष की नन्हीं लड़की उसकी दुल्हन थी। मुझे बताया गया कि ये युवा दुल्हनें वृद्ध पतियों को चीनी के पिता (Sugar Daddy) या इसी तरह का

कुछ नाम पुकारती हैं। नि:सन्देह उनके अपने प्रेमी होते हैं और बूढ़े-खूसटों के धन को वे पापमय जीवन बिताने के लिए उपयोग करती हैं। किसी न काम के बूढ़े से विवाह करना और युवा प्रेमियों के साथ रंगरलियाँ मनाना! कुछ लोग तो मॉडल या वेश्याओं को पत्नियाँ बनाकर ले आते हैं। इस प्रकार की चीज़ों को स्वीकार किया जाना अत्यन्त हास्यास्पद है। प्राय: ऐसी पत्नियों को सरकारी रूप से निमन्त्रित किया जाता है और उनके होटल तथा यात्रा के खर्चे भी वहन किए जाते हैं। क्यों न यह शब्द (Spouse-पति/पत्नी) को बदलकर इसके स्थान पर 'कानूनी पत्नी या कानूनी पति कर दिया जाए?' इस प्रकार बहुत सी उलझनपूर्ण घटनाएं रोकी जा सकेंगी।

विनाशकारी, अभद्र और निर्लज्जतापूर्ण धारणाओं को एक के बाद एक स्वीकार करते चले जाना आधुनिक काल के अभिशापों में से एक है। किसी भी प्रकार की कोई रोक-टोक नहीं है और यदि कोई इसका विरोध करे तो कहा जाता है कि यह व्यक्ति दकियानूस है। वृद्ध लोग ही यदि चरित्रहीन जीवन बिताना चाहेंगे तो युवा पीढ़ी के कारनामों का हम किस प्रकार बुरा मान सकेंगे?

समाचार पत्र तथा मीडिया आजकल के दैत्यों की एक अन्य जाति है। समाज के अन्दर विद्यमान सारे माधुर्य एवं सौन्दर्य को ये निगल लेते हैं, नष्ट कर देते हैं। ये उत्तेजनावाद पर विश्वास करते हैं। इनमें से कुछ तो चरित्रहनन तथा पशुसम दोषारोपण में लिप्त हो जाते हैं। इनके पास जाकर कोई भी किसी व्यक्ति के बारे में शिकायत कर सकता है। सत्य को खोजने का तनिक भी प्रयास किए बिना ये सुनी हुई बात को छाप देते हैं, चाहे वह लांछन लगाने वाला व्यक्ति कितना ही अविश्वसनीय क्यों न हों। किसी भी प्रकार से आप इन्हें रोक नहीं सकते क्योंकि उन्हें अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता प्राप्त है। बात चाहे ठीक हो या गलत, इन्होंने इसे छापना ही है और लोगों को इसकी कोई क्षतिपूर्ति नहीं मिलती क्योंकि कानूनी कार्यवाही अत्यन्त महंगी है और

पश्चिमी देशों में तो मुकद्दमेबाजी में व्यक्ति बर्बाद हो सकता है। भारत में स्थिति इतनी गम्भीर नहीं है। यहाँ अभी भी कम खर्चेपर कानूनी तौर पर क्षतिपूर्ति प्राप्त करना सम्भव है।

उदाहरण के रूप में तीन विदेशी भारत गए और बिना आज्ञा के हमारे स्कूल में प्रवेश करके इसके विषय में सभी प्रकार के झूठे वक्तव्य दे डाले। उनके विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई गई और न्यायालय ने निर्णय दिया कि ये विदेशी पत्रकार यदि पुनः भारत आए तो इन पर कानूनी कार्यवाही की जाएगी। इसके कारण सम्बन्धित दूतावास नाराज़ हो गया, यद्यपि उनके पत्रकारों ने समाचार को हमारे विरुद्ध पूरे यूरोप में, विशेष रूप से बेल्ज़ियम, फ्रांस तथा कैथोलिक चर्च के कुछ देशों में उपयोग किया था। ये देश हमारी सफलता के कारण परेशान थे। एडफी (ADFI) नामक उनकी एक संस्था है जो निरन्तर आध्यात्मिक और धार्मिक संस्थाओं की गतिविधियों की तांक-झाँक करती रहती है और पंथ (Cult) कहकर उनकी निन्दा करती है। मैं पूछती हूँ कि क्या कैथोलिक चर्च सबसे बड़ा पंथ (Cult) नहीं है? यदि पंथ की परिभाषा एक ऐसी संस्था है जो हिंसा, गैरकानूनी हथियार या नकली नोट बनाने में लिप्त है तो कैथोलिक चर्च को सबसे बड़ा पंथ कहा जा सकता है क्योंकि कैथोलिक चर्च में ये सभी कुकृत्य हो रहे हैं। यद्यपि ये बात भली-भांति प्रमाणित हो चुकी है कि सहजयोग में गोपनीय, गुप्त या अवैध गतिविधियाँ बिल्कुल नहीं हैं तथा सहजयोग विश्वभर के लोगों के हित के लिए कार्य करने वाली पावन एवं आध्यात्मिक संस्था है, फिर भी ये लोग हमें पंथ (Cult) कहते हैं।

और फिर, ऐसे कौन से पाश्चात्य देश हैं जिन्हें धर्मनिरपेक्ष कहा जा सकता है? खेदपूर्वक मुझे कहना पड़ता है कि इंग्लैण्ड में केवल इंग्लैण्ड का चर्च (Church of England) ही राज्य धर्म (State Religion) है, कोई अन्य धर्म नहीं। स्पेन, इटली, जर्मनी, आस्ट्रिया और फ्रांस में विशेष रूप से

कैथोलिक चर्च को ही धर्म की मान्यता दी जाती है, कोई भी अन्य धर्म जो कैथोलिक नहीं है उससे पंथ की तरह से व्यवहार किया जाता है।

लोगों की बदनामी तथा चरित्रहनन करने के अतिरिक्त कुछ समाचार-पत्र तथा पत्रिकाएं लोगों को अत्यन्त अपमानजनक सूचनाएं देने का एक अन्य भयानक कार्य भी करते हैं। गुणवत्ता में वो इतने तुच्छ हैं कि पाठकों को आकर्षित करने के लिए उन्हें अधनंगी महिलाओं के फोटो उपयोग करने पड़ते हैं। उनका पूरा विवेक नंगे फोटो एकत्र करने पर ही खर्च होता है। विश्व के भिन्न देशों के सम्मुख जो समस्याएं खड़ी हुई हैं उनके लिए इन समाचार पत्रों को वास्तव में कोई चिन्ता नहीं है। मानव प्रकृति के निकृष्टतम तत्वों की रुचि को ध्यान में रखते हुए अश्लील कहानियाँ छापने में ही उनकी दिलचस्पी है, या शरारत और ईर्ष्या के वशीभूत होकर वे महत्वपूर्ण पदों पर आरूढ़ लोगों के विरुद्ध अभियान छेड़ देते हैं। फ्रांस में यूनेस्को (Unesco) के एक पूर्वमहासचिव के साथ भी उन्होंने ऐसा ही किया। ये समझ पाना कठिन है कि क्यों व्यक्ति ऐसे पूर्णतः तुच्छ कार्यों में लिप्त हो सकता है! उस महासचिव पर अत्यन्त तुच्छ आरोप लगाए गए। उन आरोपों में से एक ये था कि उसकी पत्नी ने एक राजदूत की पत्नी की अन्त्येष्टि पर पैरिस से ब्रसल्स (Paris to Brussels) पहुँचने के लिए सरकारी कार का उपयोग किया। कार ले जाने से पूर्व उस महिला ने दफ्तर को सूचित किया था। उड़ानें उपलब्ध न होने के कारण अन्त्येष्टि पर उचित समय पर पहुँचने के लिए उसे ऐसा करना पड़ा। सदस्य राज्यों की पूर्ण श्रद्धा से सेवा करने वाले श्रेष्ठ महासचिव को बदनाम करने की इच्छा से कुछ अन्य आरोप भी लगाए गए थे। उसने भिन्न देशों के महान ग्रन्थों का भिन्न भाषाओं में अनुवाद करवाया था। सांस्कृतिक रूप से मानवमात्र की विरासत, भिन्न देशों की बहुत सी प्राचीन इमारतों को सुरक्षित रखने के लिए उसने बहुत सहायता की थी। यूनेस्को ऐसी संस्था नहीं हो सकती जो पैसा बना सके परन्तु जब जब भी कोई श्वेतवर्ण (White

Skinned) व्यक्ति महासचिव बना तो पाश्चात्य मोर्चा बिल्कुल शान्त हो गया।

पाश्चात्य लोग उतनी सरलता से प्रभावित होने वाले हैं कि जो भी कुछ अखबारों में छपता है वे उसे सत्य मानकर स्वीकार कर लेते हैं! यह उत्तेजनावादी प्रवृत्ति बद से बदतर होती जा रही है। उदाहरण के रूप में ये लोग इतने निर्लज्ज हैं कि अत्यन्त आनन्दपूर्वक उन्होंने समाचार पत्रों में लिखा कि श्रीमती कैनेडी के अन्तर्वस्त्र कितने रुपयों में बेचे गए। उनका मस्तिष्क कितना अश्लील और गन्दा है जो ऐसी चीज़ों को समाचार पत्रों में छापता है! आश्चर्य की बात है कि अब इस प्रवृत्ति ने धर्माधिकारियों को भी प्रभावित किया है! उदाहरण के रूप में इंग्लैंड में प्रोटेस्टेंट चर्च के कुछ सुप्रसिद्ध नेता अब बिना विवाह किए सहवास करने वाले पुरुषों और महिलाओं के प्रति उदारता एवं सहिष्णुता का दृष्टिकोण अपना रहे हैं! इसे अपराध माना जाता था, परन्तु आजकल ऐसा नहीं है।

समाचार पत्र तथा मीडिया की अन्य शाखाओं ने क्योंकि अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग किया है तथा बच्चों, परिवार तथा समाज के लिए भी संकट बन गए हैं, अतः अब आवश्यक है कि उनका उचित नियन्त्रण किया जाए। मैं मनुष्य की तथा समाचार पत्रों की पूर्ण स्वतन्त्रता की पक्षधर हूँ। समाचार पत्रों में अपनी जिम्मेदारी को समझने का विवेक होना चाहिए। ये ऐसे समाचार देने के लिए हैं जो जनता के लिए हितकर एवं सुरक्षात्मक हों। पाठकों के लिए उनका शाश्वत मूल्य होना चाहिए। मनुष्य को नियन्त्रित करने और उसे हत्या, बलात्कार या लूट-खसूट से रोकने के लिए हमारे यहाँ कानून है। तो क्यों नहीं मीडिया को नियन्त्रित करने के लिए हम कानून बना सकते जो पागलों की तरह से दौड़ रहा है? आजकल कोई भी व्यक्ति समाचार पत्र आरम्भ कर सकता है। केवल जिम्मेदारी तथा नैतिकता की गरिमा का प्रमाणित विवेक और अन्य देशों की सूझ-बूझ के विवेक वाले लोगों को ही समाचार-पत्र आरम्भ करने की आज्ञा होनी चाहिए। प्रतिष्ठित लोगों के समूह

को चाहिए कि सभी सम्पादकों को पहले परखें और देखें कि क्या वे निष्पक्ष, ईमानदार और उत्तम लोग हैं। धूर्त लोगों के हाथ में समाचार पत्र नहीं जाने चाहिएं। एक बार यदि समाचारपत्र गलत हाथों में चला गया तो सभी प्रकार के भयानक, उत्तेजक, मूर्खतापूर्ण, सड़ीगली खबरों तथा सम्पादकियों को छपने से रोक पाना सम्भव न होगा। नि:सन्देह व्यक्ति को उन समाचारपत्रों के प्रति भी आभारी होना चाहिए जिन्होंने सत्तारूढ़ लोगों के गम्भीर कुकृत्यों को खोजकर उनका पर्दाफ़ाश किया। परन्तु मीडिया के ईमानदार और शक्तिशाली होने के बावजूद भी इस प्रकार के उदाहरण बहुत कम हैं। इसके विपरीत समाचारपत्र अभिव्यक्ति की शक्ति का इतना दुरुपयोग करते हैं कि वर्तमान में इसके विषय में व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता। अत: यह स्पष्ट है कि उच्चस्तर के बोर्ड या समिति की आवश्यकता है जो दखलंदाजी करे और प्रमाणित रूप से गलत या अपमानजनक कहानियाँ छापने वालों को कड़ा दण्ड दे। समाचार पत्रों में अपमानजनक समाचार छापने की आज्ञा नहीं होनी चाहिए। जनजीवन और पारिवारिक जीवन के हित में यह सर्वोत्तम कदम होगा।

समाचार पत्रों को चाहिए कि बच्चों के दृष्टिकोण को भी समझें ताकि बच्चे समाचार पत्र पढ़ सकें। नारकीय गंदगी को घोषणा के रूप में समाचार पत्रों में छापने का क्या लाभ है? झूठी, उत्तेजक खबरें केवल पैसा बनाने के लिए छापी जाती हैं। समाचार पत्र यदि विवेक एवं जिम्मेदारी की भावना से कार्य करने लगें तो मुझे पूर्ण विश्वास है कि वे कहीं अधिक धन कमाएंगे क्योंकि इनकी अभद्रता के कारण जिन लोगों ने समाचार पत्र पढ़ना छोड़ दिया है वे सब पुन: समाचार पत्र पढ़ना आरम्भ कर देंगे।

इसके अतिरिक्त समाचार पत्र सदैव दुखद एवम् सदमा पहुँचाने वाली खबरें छापते हैं। प्रथम पृष्ठ प्राय: प्रकृति या मानव रचित विपदाओं, युद्ध, हत्याओं, रोगों, अकाल की तस्वीरों तथा कहानियों से भरा होता है। इस तरह की परेशान करने वाली खबरों से दिन आरम्भ करना बहुत भारी पड़ता है। यह

आवश्यक है कि भयानक दृश्यों और भयानक घटनाओं को इतना अधिक महत्व न दिया जाए। सहायताकारी, लोगों को प्रभावित करने तथा उनमें हितकर परिवर्तन लाने वाली, उन्हें ईमानदार तथा नैतिक बनाने वाली अच्छी घटनाओं को महत्व दिया जाना चाहिए। परन्तु वर्तमान समय में मीडिया के माध्यम से विचारों की अभिव्यक्ति करने का कोई मार्ग नहीं है। वे केवल इतना ही जानना चाहते हैं कि कितने लोगों की मृत्यु हुई, कितने लोगों की हत्या हुई और कितने गायब हो गए!

मीडिया तथा समाचार पत्रों की तरह से फिल्मों में भी आजकल गहन अभद्र रोमांस तथा प्रेमसम्बन्ध दर्शाने की प्रवृत्ति पनप रही है, ऐसे प्रेमसम्बन्ध जिनके लिए प्रेमी या उनके विरोधी भयानक हिंसा तथा हत्या पर उतारू हो जाते हैं। वास्तव में इस प्रकार प्रेम एवं पारिवारिक जीवन के भ्रमपूर्ण संसार की सृष्टि होती है। अभी तक फिल्में बनाने वाले, मीडिया और समाचार पत्रों के लोग यह नहीं समझ पाए हैं कि समाज तथा अच्छाई को नष्ट करने के लिए वही लोग जिम्मेदार हैं। वे जीवन की अच्छाइयों पर अधिक बल देने का प्रयत्न नहीं करते। वे अत्यन्त धनलोलुप हैं। समाचार पत्रों के माध्यम से या दुष्ट लोगों के साथ मिलकर उनकी शानदार तस्वीर पेश करके, अश्लीलता को वैध बनाने की उनके पास बहुत बड़ी योजनाएं हैं।

उदाहरण के रूप में विकासशील देश में वे किसी धर्मप्रचारक की तस्वीर पेश करते हैं जो ईसामसीह की करुणा का दिखावा करके हर समय धन एकत्र करने में लगा रहता है। बड़ी बड़ी दान राशियाँ एकत्र होती हैं और सम्भवतः इन्हें मीडिया के साथ बाँटा जाता है। यह सब अत्यन्त लाभकारी व्यापार प्रतीत होता है। मीडिया उनकी ऐसी तस्वीर भी पेश कर सकता है जिसे शान्ति पुरस्कार दिया जा सके। कोई नहीं जानता कि ये सारा धन कहाँ जा रहा है और इसका क्या हो रहा है, इस पैसे का कोई निरीक्षित (Audited) लेखा नहीं है। सम्वेदनशील लोग, विशेष रूप से पश्चिमी देशों के, इन लोगों से बहुत

अधिक प्रभावित हो जाते हैं। एक बार एक धर्मप्रचारक एक गोष्ठी में आया और कहने लगा, ''आपको चाहिए कि दरिद्रों के विषय में भी सोचें, दीनदुखियों के लिए अपने भोजन में से कुछ न कुछ अवश्य निकालें,'' आदि आदि। दर्शकों में बैठे हुए पाश्चात्य लोगों ने ये तीन-चार वाक्य सुने और मैं हैरान थी, वे फुट-फुटकर रोने लगे। उन्होंने उस धर्म प्रचारक को बहुत सा पैसा दिया। बताते हैं कि वह धर्म प्रचारक गलियों से लोगों को एकत्र करके दीक्षा स्नान (Baptise) करवाकर धर्मपरिवर्तन द्वारा उन्हें ईसाई बना देता था। जो लोग बीमार होकर मृत्यु को प्राप्त होते हैं उन्हें अनौपचारिक रूप से दफ़ना दिया जाता है। लगभग सभी विकासशील देशों में मीडिया ऐसे धर्मप्रचारकों की तस्वीर बढ़ा-चढ़ा कर पेश कर रहा है।

वास्तव में मीडिया के लोग मानसिक प्रक्रियाओं के अनुसार कार्य करते हैं और मस्तिष्क की चाल रेखीय (Linear) है जो केवल एक ही दिशा में चलती है। वर्तमान समय में यह मात्र धनलोलुप है। मीडिया से सम्बन्धित एक अन्य गम्भीर समस्या भी है। पुराने दिनों में समाचारों को पूर्णत: निष्पक्ष माना जाता था। टिप्पणियाँ देने की स्वतन्त्रता थी लेकिन ये भी निष्पक्ष मापदण्ड पर आधारित होनी आवश्यक थीं। पत्रकारिता के इन दोष-विहीन नियमों को अब तिलांजलि दे दी गई है। एक ही घटना को एक समाचार पत्र एक प्रकार से पेश करता है दूसरा दूसरे प्रकार से, और टिप्पणियाँ निष्पक्ष होने के स्थान पर निर्लज्जता पूर्वक पक्षपातपूर्ण होती हैं! आप यदि रूपर्ट मर्डोक (Rupert Murdock) के पत्रकों (Papers) को पढें.तो आप समझ जायेंगे कि मेरा क्या अभिप्राय है। कोई हैरानी नहीं है यदि पाठक पूर्णत: भ्रमित हो जाएं। इस प्रकार इन भयानक समाचार पत्रों का आक्रमण हम पर हर समय बना रहता है, ऐसा आक्रमण जो सहजयोग के अनुसार रक्त कैंसर का कारण बनता है। पाठक की मूल्य प्रणाली को क्षत-विक्षत करके विश्व में इस प्रकार की विपदा लाने के लिए मैं मीडिया को ही दोष दूँगी।

धार्मिक रूढ़िवाद और धर्मान्धता विश्वशान्ति के लिए खतरा बन चुके हैं। इटली के कुछ धार्मिक लोगों से हमने बातचीत की तो उन्होंने किसी भी सार्वभौमिक धर्म को स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। वे अपने लिए एक विशेष धर्म चाहते थे। इस प्रकार वे भिन्न धर्मों के अनुयायियों में झगड़े को प्रोत्साहन देते हैं। उनका विश्वास है कि धर्म के नाम पर लोगों का वध करना उनका कर्तव्य है। दूसरी ओर सभी महान दार्शनिक, अवतरण, पैगम्बर और सूफी लोगों ने किसी भी धर्म विशेष की कभी बात नहीं की। सर्वप्रथम कन्फ्युशियस (Confucius) ने मानवता की बात की, इनके पश्चात् लाओत्से (Lao Tse) की 'ताओ' (Tao) आई जिसके द्वारा उन्होंने मनुष्य के सूक्ष्मपक्ष को उभारने का प्रयत्न किया। यह 'ताओ' सहजयोग की कुण्डलिनी की तरह से है। मैंने यैंगत्से नदी में यात्रा की। इस नाव यात्रा ने मुझे अद्वितीय अनुभव प्रदान किया और लाओत्से को भलीभांति समझने के योग्य बनाया। नाव से पार करने के लिए ये नदी आरम्भ में बहुत भयानक है। भिन्न दिशाओं में जाने वाली बहुत सी तेज धाराएं हैं, परन्तु नदी के तट पर प्राकृतिक सौन्दर्य का प्राचुर्य है। चीनी चित्रकारियों में जो सीधे खड़े पर्वत हम देखते हैं इन्हें वहाँ देखा जा सकता है। पर्वतों के बीचोबीच नदी बह रही है। यैंगत्से नदी का तट अत्यन्त रमणीय है। जैसा लाओत्से ने कहा था, ''हो सकता है कि बाह्य दृश्य अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक हों परन्तु आपको अपना चित्त अन्दर रखकर यैंगत्से नदी को पार करना चाहिए।'' यह बहुत महत्वपूर्ण बात है परन्तु कितने लोग समझते हैं कि लाओत्से ने क्या कहा? कितने लोगों ने उनके कथनानुसार चलने का प्रयत्न किया। चीन में बहुत से लोग लाओत्से और उसकी 'ताओ' की परवाह नहीं करते, परन्तु वह समय आएगा जब उन्हें एहसास होगा कि यह मानवता का सूक्ष्मपक्ष है।

जापान में विधितमा (Vidhitama) नामक एक अन्य महान गुरु हुए। वो महात्मा बुद्ध के शिष्य थे जिन्होंने जापान जाकर ज़ेनप्रणाली का आरम्भ

किया। ज़ेन का अर्थ है 'ध्यान'। वो चाहते थे कि लोग 'निर्विचार चेतना' को प्राप्त करें। लोगों को निर्विचार चेतना प्रदान करने के लिए उन्होंने बहुत से उपाय खोजे। उनके मन्दिर तथा चाय महोत्सव निर्विचार चेतना स्थापित करने के लिए ही हैं। मैं हैरान थी कि एक भी जापानी व्यक्ति को इस बात का ज्ञान न था कि इन बागों का लक्ष्य क्या है ? एक बाग में पहाड़ी की चोटी पर थोड़े से क्षेत्र में काई थी। यह बहुत दिलचस्प थी। वहाँ पर आवर्धक-लैंस (Magnifying Glass) से फुल तथा अन्य बेलबूटे देखने पड़ते हैं। ये सब व्यक्ति को आश्चर्य चकित करता है और उस स्थिति में वह निर्विचार समाधि में चला जाता है।ज़ेन की यही धारणा थी। परन्तु हैरानी की बात है कि बहुत कम लोगों ने ज़ेन को समझा। उनके अतिरिक्त ज़ोरास्टर नामक एक और पैगम्बर हुए जो अपने देश पर्शिया (Persia) में पाँच बार अवतरित हुए। अन्ततः धर्म के विषय में स्पष्ट रूप से बताने के लिए मोहम्मद साहब को अवतरित होना पड़ा। परन्तु उनके अनुयायियों ने ज़ोरास्टर तथा उनकी शिक्षाओं की एकरूपता को कभी नहीं समझा और उन्होंने फ़ारसी लोगों को भिन्न देशों में भगा दिया। उनमें से बहुत से फ़ारसी भारत भी आए।

मोहम्मद साहब ने अब्राहम, मोजिज़ और ईसामसीह की एक शृंखला में बातचीत की, क्योंकि वे क्रमशः एक के बाद एक अवतरित हुए। मोहम्मद साहब ने अत्यन्त सम्मान पूर्वक ईसामसीह की माँ (Mother Mary) के बारे में बताया। बाइबल में 'माँ मेरी' को उतना सम्मान नहीं दिया गया है क्योंकि बाइबल का सम्पादन पॉल ने किया था। उन्हें केवल 'स्त्री' (The Woman) कहकर बुलाया गया है। परन्तु पैगम्बर मोहम्मद कहते हैं कि इस पावन महिला के विरुद्ध बोलने वाले व्यक्ति को दण्डित किया जाएगा-आदि आदि। अतः हम देख सकते हैं कि मोहम्मद साहब ने कभी भी धर्मविशेष के रूप में इस्लाम की बात नहीं की (इस्लाम का अर्थ है:मैं सर्वशक्तिमान परमात्मा के सम्मुख समर्पण करता हूँ)। परन्तु इस्लाम धर्म के अनुयायी अन्य

धर्मों को मानने वाले लोगों से तथा परस्पर, लड़े जा रहे हैं!

धर्मपरिवर्तन की प्रथा सबसे बुरी है। बिना किसी श्रद्धा या धार्मिक कारणों के केवल विवाह करवाने के लिए या धन लाभ के लिए लोगों का एक धर्म से दूसरे धर्म में परिवर्तन किया जा रहा है। सर्वशक्तिमान परमात्मा के नाम पर भिन्न धर्मों के अनुयायियों के बीच विश्व के भिन्न भागों में युद्ध हो रहे हैं। कोई भी सन्त व्यक्ति इस क्रूर तथ्य को नहीं समझ पाता। इस्लाम धर्म का प्रचार करने का दावा करने वाले समूह इन युद्धों के मोर्चों पर सबसे आगे हैं। इस्लाम को मानने वाले लोगों में से सूफ़ियों ने उन्हें बताने का प्रयत्न किया कि यदि आप मोहम्मद साहब के अनुयायी हैं तो व्यवहार करने का ये कोई तरीका नहीं है क्योंकि इस प्रकार मोहम्मद साहब तथा इस्लाम के नाम पर बुराई आती है। कुछ लोगों का विश्वास है कि जेहाद करके इस्लाम धर्म को फैलाया जाए। मोहम्मद साहब का कभी भी ये विचार न था। जब वो पृथ्वी पर जीवित थे तो लोग बहुत बड़ी कठिनाई का सामना कर रहे थे क्योंकि उस समय बहुत से कबीले थे जो इस्लाम का नाम लेने वाले लोगों की हत्या कर देते थे। हो सकता है उस समय जेहाद की बात करना उचित हो परन्तु आज ऐसी कोई समस्या नहीं है। आजकल लगातार जेहाद की बात करने के कारण ये लोग अप्रिय हो रहे हैं, कारण जेहाद की लड़ाई स्वयं से है। केवल इतना ही नहीं, वास्तव में उन्हें कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ। ये सब करके क्या उन्हें आत्मसाक्षात्कार प्राप्त हो गया है? क्या कियामा तक पहुँचकर उन्होंने सत्य को पा लिया है? उनके साथ ऐसा कुछ भी नहीं हुआ है। गलत चीज़ों की ओर वे लोगों का ध्यान बाँट रहे हैं और इस प्रकार ऐसे कार्य करने का प्रयत्न कर रहे हैं जो विश्व शान्ति के हित में बिल्कुल नहीं है। इन्हीं के कारण बहुत से स्थानों पर शीतयुद्ध हो रहे हैं । चेचेन्या में युद्ध हो रहा है और जिन देशों में मुसलमान लोग स्वयं को परमात्मा द्वारा चुना हुआ मानते हैं और ये सोचते हैं कि पूरा विश्व मुसलमान हो जाए वहाँ भी युद्ध लड़े जा रहे हैं! वास्तव में

जेहाद का मतलब है स्वयं से लड़ना, अपने अन्दर की बुराईयों और दुष्टता से लड़ना।

उस दिन मैं रूस के एक महत्वपूर्ण व्यक्ति से मिली। वह कहने लगा, ''संयुक्त राष्ट्र इन मुसलमानों की सहायता क्यों कर रहा है?'' मैंने कहा, ''क्यों न करे?'' वह कहने लगा, ''जो मुसलमान लोग हमारे देश के नागरिक थे अब वे अपनी सीमाएं अलग करके हमारे देश की अखण्डता को खण्डित करना चाहते हैं। वो मानते हैं कि केवल उन्हीं का धर्म सच्चा है। अपनी तलवारों की नोंक पर वे इस्लाम धर्म का प्रचार करना चाहते हैं। केवल इतना ही नहीं अपनी महिलाओं को बच्चे बनाने का कारखाना मानते हुए वे अधिक से अधिक बच्चे उत्पन्न करना चाहते हैं। शीघ्रातिशीघ्र वे मुसलमानों की संख्या को बढ़ाकर प्रजातन्त्र में अपनी संख्या के बल पर स्थिति को इस्लाम के पक्ष में परिवर्तित करना चाहते हैं और इस प्रकार, परिणामस्वरूप, वे हर देश के शासक बन सकते हैं।''

व्यक्ति को यह समझना है कि प्रजातन्त्र में किसी धर्म विशेष को राज्य का आधार नहीं बनाया जाना चाहिए। धर्म एक निजी मामला है और हर देश में मनुष्य को अपनी इच्छानुसार धर्म अपनाने का अधिकार होना चाहिए। वर्तमान युग में एक धर्म वाले राज्य पुरानी बात हो गई है। किसी देश को जब मुसलमान, ईसाई या यहूदी घोषित कर दिया जाता है तो उस धर्मविशेष को मानने वाले लोग उच्च हो जाते हैं और अन्य लोगों का पद नीचा हो जाता है। यह किसी भी सच्चे प्रजातन्त्र में समानता की स्वीकृत धारणा के विरुद्ध है। ये धर्मविशेष पूर्णत: धर्मान्धता चालित होते हैं। इन धर्मों के मानने वाले लोग आँखें बन्द करके अपने धर्मादेशों को मानते हैं और लोग प्रतिद्वन्दी गुटों में बंट जाते हैं।

इंग्लैण्ड में चर्च के कुछ अगुआओं ने अब घोषणा की है कि ईसाई धर्म के अनुसार अपराधमय जीवन व्यतीत कर रहे लोग भी अब चर्च प्रार्थनाओं में

भाग ले सकते हैं। इसका कारण ये है कि चर्चों में आने वाले लोगों की संख्या निरन्तर घटती जा रही है और ये लोग बड़ी सामूहिकता को आकर्षित करना चाहते हैं, चाहे इसके लिए उन्हें धार्मिक और नैतिक मूल्यों को घटिया एवं अधोमुखी क्यों न बनाना पड़े। ईसाई धर्म को मानने वाले लोगों की संख्या बहुत तेज़ी से घटी है। यहाँ तक कि न तो लोग चर्च चला पा रहे हैं और न ही पादरियों को दूसरों के मुकाबले में उचित रूप से वेतन दे पा रहे हैं। अतः सौहार्द के रूप में उन्होंने यह उदार अवधारणा जनता के सम्मुख रखी है। उनका कहना है कि लोगों के रक्त में यदि गलत प्रकार के वंशाणु होंगे तो वे क्या कर सकते हैं। वंशाणुओं की आड़ में चरित्रहीनता को यह खुला आमन्त्रण है। यह अत्यन्त भयानक अभिधारणा (Postulate) है क्योंकि यह संकेत देती है कि उत्तराधिकार में प्राप्त हुए वंशाणु ही व्यक्ति का चरित्र निर्धारण करते हैं, जिसे शिक्षा, धर्म या आध्यात्मिकता द्वारा सुधारा नहीं जा सकता। परन्तु सच्चाई ये है कि उत्तराधिकार में प्राप्त वंशाणुओं के गुणों को परिवर्तित किया जा सकता है। ये बात समझ ली जानी चाहिए कि सदैव हम अपने वंशाणुओं को परिवर्तित कर सकते हैं।

उदाहरण के रूप में सहजयोग द्वारा कायापलट के पश्चात् लोगों के वंशाणुओं का पुनर्गठन हो जाता है और वे धर्मपरायण, प्रेममय तथा शक्तिशाली लोग बन जाते हैं। इससे ये प्रकट होता है कि वंशाणु जीवन के कार-व्यवहार से प्रभावित होते हैं। हम प्रतिदिन ये भी देखते हैं कि एक ही माता-पिता के बच्चों का न तो एक जैसा स्वभाव होता है न एक सम गुण। एक ही माता-पिता का एक बच्चा अत्यन्त मेधावी तथा देवतुल्य होता है और दूसरा मूर्ख तथा असुरसम। यह भी स्पष्ट देखा जा सकता है कि यदि वंशाणु हमें उत्तराधिकार में प्राप्त होते हैं तो चर्चों की या भक्तमण्डलियों की कोई आवश्यकता नहीं होती। परन्तु व्यक्ति को समझना चाहिए कि यदि हमारे चर्चों ने निष्कपट रूप से कार्य किया होता तो ईसाईयों के रक्ताणु वैसे ही

परिवर्तित हो गए होते जैसे सहजयोगियों के हो गए हैं। सहजयोग में यहूदी ईसामसीह की पूजा करते हैं और मुसलमान भगवान शिव की।

लोग परमात्मा के नाम पर लड़ रहे हैं और विश्वशान्ति का पूर्ण अभाव है। इन सारी गतिविधियों के पीछे धन का लोभ बहुत शक्तिशाली है और जब बात अर्थशास्त्र पर आ जाती है तो तथाकथित उच्च धार्मिक व्यक्ति भी समझौता करने के लिए घुटने टेक देते हैं चाहे यह धारणा कितनी ही अनैतिक क्यों न हो। धन-व्यापार की फैशनेबल प्रवृत्तियों का विरोध करने के लिए उनमें न तो चरित्र है, न साहस और न ही सच्चा विश्वास। वास्तव में वे अपने अनुयायियों को वर्तमान आसुरीप्रवाह के साथ बहने की आज्ञा दे देते हैं और इस प्रकार उन्हें नर्क का मार्ग दिखाते हैं जहाँ से कोई मुक्ति नहीं है। ये धर्म लोगों के मस्तिष्क में निर्धारित विचार भर देते हैं। ये निर्धारित विचार सामूहिक रूप से विकसित होने लगते हैं और ये उस सामूहिक राक्षस को जन्म दे सकते हैं जिसका विश्वास अन्य लोगों की हत्या करने और अपनी धारणाओं को बढ़ावा देने में है।

हिटलर की भी अडिग धारणाएं थी। उसका विश्वास था कि जर्मन उच्च प्रजाति के लोग हैं। ये धारणा कि जर्मन उच्च प्रजाति के लोग हैं, सबसे बड़ी मूर्खता थी। उन्होंने बच्चों को गैसकक्ष में डालकर मार दिया तथा सामूहिक हत्या करने के बहुत से मार्ग खोज निकाले। वो किस प्रकार उच्चप्रजाति के लोग हो सकते हैं? उच्च प्रजाति तो सन्तों की होती है। उनके जीवन में करुणा एवं प्रेम ही दो पेय (Drinks) होते हैं जिनका वो आनन्द लेते हैं। जर्मन लोगों को उच्चप्रजाति कहना शेष मानव-प्रजाति का अपमान करना है तथा इसे घटिया तथा अपरिष्कृत ठहराना है। यह निकृष्टतम प्रजातिवाद है। मैंने सुना है कि जर्मनी में तेरहवीं शताब्दि में एक महान सन्त हुए जिनका आज भी पूरे विश्व में बहुत सम्मान होता है। आश्चर्य की बात है कि जर्मन के लोग दावा करते हैं कि वेद उन्होंने लिखे। अपने विषय में असत्यधारणा की यह एक

अन्य पराकाष्ठा है। हर समय स्वयं को उच्च प्रजाति का मानने वाले और ये सोचने वाले कि उन्हें अन्य लोगों की हत्या करने का अधिकार है, किस प्रकार वेदों जैसे इतने विकसित एवं दार्शनिकग्रन्थ लिख सकते हैं? यद्यपि हिटलर की मृत्यु हो चुकी है और द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हुए पचास वर्ष हो चुके हैं, हम अब भी देखते हैं कि एक नए प्रकार का असाम्यवाद (Facism) विश्व में उभर रहा है। यह इटली, फ्रांस तथा पूरे यूरोप में पनप रहा है। पूरे यूरोपीय महाद्वीप में आप यह नया असाम्यवाद देख सकते हैं। राजनीति में उग्रपक्ष (Right Wing) असाम्यवाद के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है और ये असाम्यवाद अत्यन्त सहजता से लोगों के मस्तिष्क में रिसता जा रहा है। यूरोप के बहुत से देशों में, विशेष रूप से फ्रांस में, लोगों ने उग्रपक्ष को चुना है। आश्चर्य की बात है कि तीन वर्षों तक जर्मन लोगों की दासता तथा नियन्त्रण में रहने के पश्चात् भी उग्रपक्षीय असाम्यवादी (Right Wing Fascists) लोगों के विषय में फ्रांस के लोगों की अब भी ऐसी धारणाएं हैं! सम्भवत: वहाँ रहने वाले जर्मन लोगों की इस प्रवृत्ति ने फ्रांस के लोगों को प्रदूषित किया होगा!

एक महिला ने, जिसका पति रूसी था और जिसने फ्रांस से भागकर स्विटज़रलैण्ड के समीप घर बना लिया था, मुझे बताया कि फ्रांस के लोगों का विश्वास है कि जर्मनी अत्यन्त महान प्रजाति है तथा जर्मनी अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्र है। ऐसे फ्रेंच लोगों पर मैं हैरान थी जो इस प्रकार की असाम्यवादी धारणाओं पर विश्वास करते हैं! वर्ष 1995 के चुनाव परिणामों ने यह दर्शाया है कि फ्रांस के लोगों ने उग्रपक्षीय व्यक्ति को चुना जो पक्का नौकरशाह होने के कारण प्रसिद्ध है। चुने जाने के तुरन्त पश्चात् उसने घोषणा की कि वह प्रशान्त महासागर में अणुबम का विस्फोट करेगा। आज जब हम लोग एटम तथा आण्विक अस्त्रों को नष्ट करने की बात कर रहे हैं तो दक्षिणी प्रशान्त महासागर में विस्फोट करने की क्या आवश्यकता है? क्या वह

किसी अन्य राष्ट्र से इसलिए युद्ध करना चाहता है क्योंकि रूस की शक्ति का भय उन्हें समाप्त हो गया है? अब यूरोप को और कौन से देश का भय है? आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैण्ड जैसे राष्ट्रों को सताकर फ्रांस क्यों आण्विक अस्त्रों का परीक्षण प्रशान्त महासागर में करे? यह एक राजनीतिक चाल प्रतीत होती है क्योंकि फ्रैंच लोगों ने अपने मद्यदर्शन (Alcoholic Philosophy) के कारण कूटनीतिक दर्जा खो दिया है और अब अमरीका को प्रभावित करने के लिए वे उपद्रव करना चाहते हैं।

कई बार मुझे ऐसा प्रतीत होता है मानों हिटलर बार-बार जन्म लेकर विश्वभर में अपने कारनामें दिखाता हो! किस प्रकार आज भी लोग इन प्रजातिवादी लोगों के आसुरी विचारों के सामने झुक जाते हैं और इन्हें चुनते हैं? द्वितीय विश्वयुद्ध करवाने में हिटलर को नौ वर्ष लगे। वह यहूदियों के विरुद्ध था और उन दिनों जर्मनी का वातावरण अत्यन्त घिनौनी चरित्रहीनता का था। उसने इन दोनों चीज़ों का लाभ उठाया और युवा लोगों के मस्तिष्क में ज़हर भर दिया। नौ वर्ष के उस समय में यूरोप के देश क्या कर रहे थे? वो सो रहे थे या मन्दी से लड़ने में इतने व्यस्त थे कि उन्होंने जर्मनी में नाजिय़ों तथा इटली में असाम्यवादियों को उभरते हुए नहीं देखा? मानसिक धारणा, कि जिन लोगों में बुद्धि भागफल (I.Q.) अधिक है वे उच्च हैं, ने बहुत विनाश किया है और अब भावनात्मक भागफल (E.Q.) का सिद्धान्त स्थापित हो गया है। बुद्धि तथा भावनाओं में यदि सन्तुलन न हो तो व्यक्ति क्रूर बन जाता है।

आज भी ऐसे बहुत से लोग हैं जो भावनात्मक भागफल (E.Q.) के विषय में नहीं जानना चाहते, जो ये मानते हैं कि वे उच्चप्रजाति या उच्चधर्म के हैं तथा बाकी लोगों को नष्ट करने का उन्हें अधिकार है। ये सब निर्धारित विचार सभी देशों के लिए ही नहीं पूरे विश्व की शान्ति के लिए भयानक खतरा बने हुए हैं।

उदाहरण के रूप में मुसलमान निराकार परमात्मा में विश्वास करते हैं। यह धर्म सांसारिक चीज़ों से निर्लिप्तता सिखाता है, परन्तु ये जमीन के छोटे-छोटे टुकड़ों के लिए युद्ध करके सभी को कष्ट एवं यातनाएं दे रहे हैं और स्वयं भी कष्ट भुगत रहे हैं। इसे ये लोग जेहाद कहते हैं और मूर्खों की तरह से इनका ये विश्वास है कि जेहाद में मृत्यु प्राप्त करके इनका पुनरुत्थान हो जाएगा। केवल आत्मसाक्षात्कार के माध्यम से ही इन निर्धारित धारणाओं को निष्प्रभावित किया जा सकता है क्योंकि आत्मसाक्षात्कार के माध्यम से ही व्यक्ति वास्तविकता को जान सकता है। वास्तविकता ये है कि यह विश्व एक ही है, कोई भी चीज़ किसी व्यक्ति विशेष की नहीं है। किसी क्षेत्र या भूमि के टुकड़े के लिए युद्ध करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्हें चाहिए कि क्रूर, आक्रमक, अन्धराष्ट्रों से अपनी रक्षा करने के लिए अपने देश के इर्द-गिर्द सुरक्षा सीमाएं बना कर अपनी रक्षा करने का प्रयत्न करें। इस तथ्य को अनदेखा करना मूर्खता होगी कि बहुत से विनाशकारी लोग हैं जो विश्व शान्ति को नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनके प्रति हमें सावधान रहना होगा। परन्तु जगह-जगह झगड़े व लड़ाइयों को बढ़ावा देने का यह कोई कारण नहीं है।

आज एक अन्य समस्या ये है कि संयुक्त राष्ट्र-संघ भिन्न शक्तियों तथा समूहों के बीच सन्तुलन बनाने का प्रयत्न कर रहा है। इस प्रक्रिया में वह बड़ी बड़ी गलतियाँ करता है। कभी-कभी तो वह असत्य, आसुरी, बर्बर, हिंसात्मक तथा उग्रवादी लोगों को समर्थन दे देता है। अन्य देशों को क्या करना चाहिए, इस विषय में कोई भी निर्णय लेने से पूर्व संयुक्त राष्ट्रसंघ को उग्रवादी देशों के उद्देश्यों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए। कभी-कभी तो ये आक्रमक देश अत्यन्त उचित एवं तर्कसंगत प्रतीत होते हैं और वो एक ऐसी तस्वीर बनाते हैं जिसमें पूरे विश्व की नकारात्मकता खिंची चली आती है। सर्वप्रथम संयुक्त राष्ट्रसंघ को ये जान लेना चाहिए, कि इन लोगों का उद्देश्य

क्या है, उनकी पृष्ठ भूमि क्या है और उनके विचार क्या हैं? केवल तभी वे सद्दाम हुसैन जैसे आक्रमक लोगों की चालों में नहीं फँसेंगे।

कुछ देशों में बेरोज़गारी के कारण आर्थिक पतन या भयानक सामाजिक उथल पुथल है। जनता का ध्यान इस समस्या से हटाने के लिए वहाँ के शासक किसी अन्य देश से युद्ध छेड़ने का प्रयत्न करते हैं। विश्व में इस प्रकार से बहुत से युद्ध हुए और कोई भी देश जब एक बार शक्तिशाली हो जाता है तो ताकत का नशा उसे भयानक रूप से महत्वाकांक्षी बना देता है। ऐसा देश दूसरे देश के मामलों में दखलन्दाजी करने या युद्ध के परिणामस्वरूप होने वाली पीड़ा तथा कठिनाइयों की चिन्ता किए बिना उस देश पर आक्रमण करने में बिल्कुल संकोच नहीं करता। किसी देश पर यदि आक्रमण होगा तो उसे अपनी रक्षा करनी पड़ेगी। इस प्रकार प्रतिक्रियाओं की एक शृंखला का आरम्भ हो जाता है जिनके कारण झगड़ा विशालस्तर पर पहुँच सकता है। ईरान और इराक या तुर्की और यूनान के मध्य स्थिति पर दृष्टि डालें। जैसा हम सब लोग जानते हैं, कि युद्ध का आरम्भ सेना तथा राजनीतिक शासकों के मन और मस्तिष्क में होता है क्योंकि ये लोग धन तथा सत्तालोलुप होते हैं। युद्धों को रोकने तथा विश्वशान्ति को प्रोत्साहन देने का एकमात्र मार्ग सत्तारूढ़ लोगों के हृदय परिवर्तन के लिए कार्य करना है और इनकी मानसिक सोच से ऊपर उठना है ताकि ये लोग सत्ता एवं धनलोलुपता को छोड़कर धर्मपरायणता का मार्ग अपना लें। मन मिथ्या है और मस्तिष्क वास्तविकता।

मैं पहले भी प्रजातिवाद के विषय में लिख चुकी हूँ। इन प्रजातिवादी लोगों की असभ्यता को आप देख सकते हैं कि किस प्रकार वे लोगों का पशुओं की तरह से वध करने का प्रयत्न करते हैं! महात्मा गाँधी कहते हैं कि अहिंसा ही केवल ऐसा मार्ग है जिसके द्वारा हम युद्ध से मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। ये बात सत्य है कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए भारतीयों ने बर्तानिया से अहिंसापूर्वक युद्ध किया। परन्तु शासकवर्ग यदि क्रूर विधियाँ अपनाए तो

अहिंसात्मक तरीकों से स्वतन्त्रता प्राप्ति के परिणामस्वरूप कई बार देश के बहुत से लोगों को बलिदान करना पड़ सकता है। बहुत बार भारत के स्वतन्त्रता संग्राम के समय भी ऐसा ही हुआ। सौभाग्यवश परमात्मा के आशीर्वाद से द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के तुरन्त पश्चात् बर्तानिया में लेबर सरकार सत्ता में आई। इस सरकार ने स्वेच्छा से एक प्रक्रिया आरम्भ की जिसके परिणामस्वरूप भारत स्वतन्त्र हो गया। दुर्भाग्यवश सभी देश इतने भाग्यशाली न थे। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं जब पराधीन देशों को स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए बहुत से बहुमूल्य जीवन बलिदान करने पड़े।

जिन लोगों के देशवासियों ने बीते हुए समय में अत्याचार सहन किए थे, वे बदला लेने के विषय में भी सोचते हैं। उदाहरण के रूप में जिन लोगों के पुरखों को जर्मनी में हिटलर के नाजियों ने क्रूरतापूर्वक सताया तथा उनकी हत्या की वो निरन्तर जर्मन लोगों की वर्तमान पीढ़ी से बदला लेने की बात सोचते हैं। यह बिल्कुल गलत है। आज के जर्मन लोगों का नाजियों से कोई सरोकार नहीं था। उन पर किसी भी प्रकार का दोष नहीं दिया जा सकता। वो तो नई पीढ़ी के अत्यन्त शान्तिप्रिय मानव हैं। उदाहरण के रूप में जर्मनी में अब बहुत से सहजयोगी हैं जो इतने सुन्दर एवं सज्जन हैं कि आप विश्वास नहीं कर सकते कि वो हिटलर के अनुयायियों की सन्तानें हैं। आस्ट्रिया में भी सहजयोगी विनम्रता एवं भद्रता से परिपूर्ण महान जिज्ञासु हैं। ये लोग भी जर्मन भाषी हैं। इसके विपरीत, इनके चरित्र में कठोरता का नामों-निशान नहीं है। अपनी दया एवं सदाचरण के मामले में वे अन्य सहजयोगियों के सम्मुख आदर्श हैं। पहली बार जब मैं रूस गई तो ये जर्मन लोग मेरी सहायता के लिए वहाँ दौड़े चले आए। मैंने उनसे पूछा, ''आप इतनी दूर रूस क्यों चले आए?'' कहने लगे, ''श्री माताजी जर्मन लोगों ने इस देश को बहुत हानि पहुँचाई थी। अत: हमें अपने पूर्वजों के कुकर्मों की क्षतिपूर्ति करनी चाहिए। इन जर्मन लोगों ने रूस में मेरे लिए इतने प्रेम एवं करुणापूर्वक कार्य किया कि

रूस में सहजयोग को जो भी सफलता मिली है उसका श्रेय जर्मन तथा उनके साथ-साथ बर्तानिया के सहजयोगियों को दिया जा सकता है। बर्तानिया एक छोटा सा देश है परन्तु बीती शताब्दियों में उन्होंने विश्व के बहुत से देशों पर विजय प्राप्त की। यहाँ तक कि एक समय था जब वो कहते थे कि बर्तानवी साम्राज्य का सूर्यास्त कभी नहीं होता। इस प्रक्रिया में बर्तानिया ने बहुत जुल्म ढाए और बेशुमार लोगों की हत्याएं की, परन्तु ये सब बीते युग की बाते हैं। वर्तमान पीढ़ी नए लोगों की है और इसे किसी भी तरह से बीते हुए समय के कार्यों के लिए दोष नहीं दिया जाना चाहिए। जर्मनी तथा बर्तानिया, दोनों देशों ने रूस में कार्य करने के लिए महान सहजयोगी प्रदान किए। हाल ही में मुझे पता चला है कि इज़राइल में सहजयोग प्रचार द्वारा अस्ट्रिया के लोग वहाँ के जनहित का कार्य कर रहे हैं। वे इज़राइल में सहजयोगी भेज रहे हैं। सहजयोग के बिना क्या ये सम्भव हो पाता? जिन जर्मन लोगों ने यहूदियों की हत्याएं की थी और उन्हें नष्ट करने का प्रयत्न किया था, वे आज सहजयोग बताकर उन्हें आत्मसाक्षात्कार के आशीर्वाद द्वारा, आध्यात्मिक रूप से विकसित मानव में परिवर्तित होने में सहायता कर रहे हैं!

वास्तव में ये सब मेरे हृदय को छू लेता है कि आधुनिक युग में इतने सुन्दर लोग अवतरित हुए हैं जो अपने पूर्वजों के अत्याचारों का शिकार बने लोगों को अपना प्रेम एवं सहानुभूति देते हैं।

भिन्न देशों की तथाकथित प्रगति वहाँ के देश वासियों को किसी भी प्रकार से उत्थान की ओर नहीं ले जाती। इसके विपरीत इस प्रगति से वे धन लोलुप हो जाते हैं तथा अधिक और अधिक कमाने के लिए निरन्तर कठोर परिश्रम करने में लगे रहते हैं। यह प्रगति यदि व्यक्ति को आन्तरिक सन्तुष्टि एवं शान्ति प्रदान नहीं करती तो इसके द्वारा रचित असीम लालच प्राप्त करने का क्या लाभ है?

अमीर-गरीब, तथा ये होना चाहिए, ये नहीं होना चाहिए के कारण भी

एक अन्य बहुत बड़ी समस्या खड़ी होती है। ये समस्या विश्वशान्ति के लिए बहुत बड़े खतरों में से एक है। अमीर देशों को काफ़ी पुनर्विचार करना होगा। उन्हें ये समझना होगा कि किसी भी स्थान की गरीबी सभी स्थानों की शान्ति एवं सम्पत्ति के लिए खतरा है। अमीर देशों को अपने लिए अधिक और अधिक के लालच पर काबू पाना होगा। एकविश्व एक मानव-परिवार की धारणा पर उन्हें गम्भीरता पूर्वक विचार करना होगा। पर्यावरण के अनुसार भी विश्व एक ही है। क्या हमें आर्थिक और राजनैतिक रूप से भी एक ही विश्व के विषय में सोचना आरम्भ नहीं कर देना चाहिए? उपभोक्तावाद पर तथा अपनी आवश्यकताओं को सीमाबद्ध करने के दृढ़ निश्चय के साथ अमीर राष्ट्र गरीब देशों को गरीबी रेखा से ऊपर उठकर उचित जीवनयापन करने में उनकी सहायता कर सकते हैं। ऐसी करुणामय सोच धनवान लोगों को गहन आनन्द एवं आन्तरिक सन्तुष्टि प्रदान करेगी। साथ ही साथ यह विश्वशान्ति तथा बेहतर सामाजिक व्यवस्था को बढ़ावा देगी।

विश्व शान्ति के लिए खतरा बनी इन सभी समस्याओं का समाधान अब सहजयोग में है। सर्वप्रथम हमें निर्धारित विचारों से निपटना होगा। ये सभी नियतविचार अज्ञानता की देन हैं। ज्यों ही आप वास्तविकता को देखने लगते हैं और समझ जाते हैं कि सारा विश्व एक है, ये नियतविचार समाप्त हो जाते हैं। किसी भी बहाने से भूमि हथियाने के विचार पर विश्वास करने वाले लोगों को ये समझ लेना होगा कि यह पृथ्वी सर्वशक्तिमान परमात्मा की है और वो इसका आनन्द उठाने के लिए यहाँ हैं। इसके लिए लड़ने या किसी अन्य व्यक्ति से इसे हथियाने के लिए ये पृथ्वी नहीं है। सहजयोगी पृथ्वी के छोटे से छोटे से टुकड़े का भी आनन्द ले सकता है। वह प्रकृति से इतना एकरूप है कि ज़मीन के किसी छोटे से टुकड़े को अच्छी तरह से बो कर वह पृथ्वी माँ के प्रति न्याय कर सकता है, उसकी पैदावार का आनन्द उठा सकता है।

आत्मसाक्षात्कार की अवस्था एक राजा, एक बादशाह की अवस्था

जैसी होती है जिसका अपना ही साम्राज्य हो। आध्यात्मिकता के अपने साम्राज्य का वह आनन्द लेता है। सांसारिक सम्पत्तियों की वह तनिक भी परवाह नहीं करता। अपनी चीज़ों को बाँटने में उसे आनन्द आता है, बाँटना ही उसके लिए सबसे बड़ा आनन्द है। अपना प्रेम वह सबको देना चाहता है तथा अपने सृष्टा (परमात्मा) से वह प्रेम करता है। अपने जीवन में कुछ सन्तों ने यह दर्शाया है कि वे प्रेम को कितना महत्व देते हैं। एक बार एक महान भारतीय सन्त किसी मन्दिर विशेष के देवता पर चढ़ाने के लिए जल का घड़ा लेकर आ रहे थे। अपने हाथों में देवता पर चढ़ाने के लिए जल का यह घड़ा लेकर एक महीने तक उन्हें पैदल चलना पड़ा। जब वे मन्दिर के समीप पहुँचे तो उन्होंने देखा कि एक गधा प्यास के कारण मृत्यु के कगार पर था। तुरन्त मन्दिर पहुँचने का विचार उन्होंने त्याग दिया और इतनी कठिनाई से जिस जल को उठाकर वे यहाँ तक लाए थे, गधे का जीवन बचाने के लिए वह जल उसे पिला दिया। उनके साथ जो अन्य लोग जल (कावड़ें) लेकर आ रहे थे वे दंग रह गए। उन्होंने उससे पूछा कि देवता पर जल चढ़ाने के स्थान पर आपने यह जल गधे को क्यों पिला दिया? उन्होंने अत्यन्त सहजता से उत्तर दिया, ''देवता तक पहुँचने के लिए अब मुझे सीढ़ियाँ नहीं चढ़नी पड़ेंगी। देवता तो चलकर पहले ही नीचे आ चुके हैं। उनकी सूक्ष्म समझ पर वे आश्चर्यचकित हो गए परन्तु वास्तविकता तो यही थी। आध्यात्मिक आनन्द प्राप्ति के लिए स्वतः सबकुछ न्योछावर कर देना ही सर्वोच्च कार्य है क्योंकि आध्यात्मिक आनन्द बहुमूल्यतम है। अन्य लोगों की भूमि हथियाने के लिए कुछ लोग अत्याचार करते हैं तथा लालच के वशीभूत होकर सभी प्रकार के दुष्कर्म करते हैं। यदि वे क्षणभर रुककर सोचें कि जीवन का ध्येय क्या है तो निश्चित रूप से वे परिवर्तित हो जाएंगे। प्रसन्नता एवं आनन्द की प्राप्ति ही अन्तिम लक्ष्य है। सभी प्रकार की भौतिक वस्तुएं एकत्र करने में न प्रसन्नता है न आनन्द। परमात्मा से एकरूप होने में ही महानतम आनन्द है।

युद्धों के कारण अधिकतर लोग अपने सारे मूल्यों को खो देते हैं। सर्वशक्तिमान परमात्मा में भी उनका विश्वास समाप्त हो जाता है। परमात्मा ने मानव को स्वतन्त्रता प्रदान की है जिसे वे वापिस नहीं लेना चाहेंगे। स्वतन्त्र होकर ही हम 'पूर्ण' (Absolute) ज्ञान पा सकते हैं। पाठशाला में अध्यापक विद्यार्थी को दो जमा दो चार सिखाता है, परन्तु विद्यार्थी जब महाविद्यालय के स्तर पर पहुँच जाता है तो उन्हें स्वयं समस्याओं का समाधान खोजने के लिए स्वतन्त्र कर दिया जाता है। इसी प्रकार आज मानव जाति भी उस छलांग के किनारे पर खड़ी है जहाँ अपनी स्वतन्त्रता के माध्यम से उसे जान लेना चाहिए कि आध्यात्मिक उत्थान ही प्राप्त की जाने वाली महानतम उपलब्धि है।

हर युद्ध के बाद तथा-कथित शान्ति का समय होता है परन्तु उस शान्ति के समय में भी लोग आगे आने वाले युद्ध की तैयारी में लगे होते हैं। इसका कारण ये है कि वे उन लोगों को क्षमा नहीं कर पाते जिनसे उन्होंने युद्ध किए थे या जिन्होंने उनके सम्बन्धियों की हत्याएं की थीं। ये बात महसूस करनी होगी कि विश्व शान्ति को बनाए रखने के लिए कोई सार्वभौमिक संस्था हमें बनानी होगी। हमने संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना की। परन्तु संयुक्तराष्ट्रसंघ शान्ति के इस लक्ष्य को प्रभावशाली ढंग से पूर्ण नहीं कर सकता क्योंकि इसकी अपनी कोई विशेष शक्ति नहीं है। यह सदस्य राष्ट्रों की छाँव पर निर्भर है और यह राष्ट्र सदैव एक मत होकर कार्य नहीं करते। ये सभी अपने व्यक्तिगत विचार और माँगे संयुक्तराष्ट्रसंघ के सम्मुख रखते हैं और संयुक्त राष्ट्रसंघ का नियन्त्रण सदैव अमेरिका के हाथों में होता है। विश्व का नियन्त्रण करने के लिए अमेरिकन लोग ठीक नहीं हैं क्योंकि वे अत्यन्त अपरिपक्व तथा कामुक हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ में इससे भी उच्च एक सभा होनी चाहिए। हेग की विश्व अदालत की तरह से सुप्रसिद्ध न्यायाधीशों को इसमें लाया जा सकता है। ये लोग पूरे विश्व द्वारा चुने जाने चाहिएं। किसी राष्ट्र विशेष से इन्हें नहीं लिया जाना चाहिए। विश्व शान्ति को प्रभावित करने

वाली समस्याओं की पूर्ण सूझ-बूझ, आवश्यक निष्पक्षता एवं विवेक इन लोगों में होना चाहिए। संयुक्त राष्ट्रसंघ पर विशिष्टतम लोगों की यह संस्था संयुक्त राष्ट्रसंघ से भी बेहतर प्रबन्धन कर सकती है क्योंकि संयुक्त राष्ट्रसंघ सदैव अटपटी सरकारों द्वारा शासित राष्ट्रों के अंगूठों के नीचे दबा हुआ होता है। ऐसी स्थिति में इस नई संस्था तथा संयुक्त राष्ट्रसंघ को चलाने के लिए पर्याप्त आर्थिक साधनों को प्राप्त करने की एक अन्य समस्या खड़ी हो जाएगी। ये स्वीकार करते हुए कि सरकारें बहुत बड़ी धनराशि इस कार्य के लिए उपलब्ध कराने को तैयार नहीं होंगी, संयुक्त राष्ट्रसंघ के कर्मचारियों तथा उनके वेतनमानों को कम किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। वेतन यदि इतने अधिक न होंगे जितने आज हैं तो मात्र धनलोलुप लोग ही संयुक्त राष्ट्रसंघ की ओर आकर्षित नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में केवल जनसेवा की भावना वाले लोग ही इसमें आएंगे और इस विश्वसंस्था के लिए कार्य करेंगे। विश्वविख्यात उच्च विचारों वाले तथा सेवा की सच्ची भावना से कार्य करने के आदर्श वाले व्यक्तियों की सेवाएं प्राप्त करने के लिए हर तरह से प्रयत्न किए जाने चाहिएं। ये लोग महान बुद्धि तथा उच्च चरित्र के लिए सुप्रसिद्ध होने चाहिएं। इनका विशेष रूप से अत्यन्त परिपक्व एवं गहन अनुभवी होना आवश्यक है ताकि विश्व की समस्याओं को, विशेष रूप से विश्वशान्ति को प्रभावित करने वाली समस्याओं को, ये स्पष्ट एवं भली भांति समझ सकें।

उच्च महत्व सत्य-निष्ठा, विवेक, चरित्र एवं बुद्धि वाले लोगों को ही पूर्ण संयुक्त राष्ट्र प्रणाली का पथप्रदर्शन एवं निर्देशन करने के लिए इस प्रस्तावित संस्था के लिए चुना जाना चाहिए ताकि विश्व के लोग धार्मिक एवं कर्तव्यपरायण लोगों को विश्व का शासन चलाते हुए देखने का सुअवसर प्राप्त कर सकें, संकीर्ण, स्वार्थी, लालची और चरित्रहीन लोगों को नहीं। ऐसी स्थिति में विश्वशान्ति और अच्छी सामाजिक, राजनीतिक एवं नैतिक व्यवस्था कायम की जा सकेगी। ऐसी उच्चसंस्था, जिसे हम उच्चतम परिषद

कह सकते हैं, किसी एक देश, चाहे वह अमेरिका ही क्यों न हो, द्वारा नियन्त्रित नहीं होगी। कभी कभी, मुझे ऐसा लगता है कि कुल मिलाकर अमरीका के लोग अभी तक अपरिपक्व हैं। अमेरिका में अब्राहम लिंकन और जार्ज वाशिंगटन जैसे महान लोग भी हुए, परन्तु आज देखा जा सकता है कि अमरीका के लोगों को परिपक्व होने की आवश्यकता है और यह परिपक्वता केवल तभी आ सकती है जब वे सहजयोग को अपना लें, प्रोटेस्टेंट ईसाइयों (Evangelists) या कुगुरुओं को नहीं।

हम विश्वास के साथ ये नहीं कह सकते कि यह प्रस्तावित उच्चतम परिषद संयुक्तराष्ट्रसंघ को नियन्त्रित करने में पूर्णत: कुशल होगी। सर्वप्रथम उन्हें बहुत अधिक वेतन नहीं दिए जाएंगे, केवल कार्यशुल्क ही दिया जाएगा और यदि वे धनलोलुप होंगे तो अवसर मिलते ही बेईमानी करने का प्रयत्न करेंगे। तो केवल इसी परिणाम तक पहुँचा जा सकता है कि इस उच्चतम परिषद का गठन चुने हुए श्रेष्ठतम सहजयोगियों द्वारा होना चाहिए। उनमें सभी आवश्यक सद्गुणों का प्राचुर्य है-वे निस्वार्थ हैं, करुणामय हैं और जाति, धर्म या राष्ट्रीयता के तनिक भी पक्षपात के बिना जनहित के प्रति समर्पित हैं। अत: वे सदैव अत्यन्त उचित एवं विवेकशील निर्णय लेंगे। सबसे महत्वपूर्ण बात ये होगी कि सहजयोगियों द्वारा बनाई गई यह सर्वोच्च परिषद विश्व भर में, केवल शब्दों से ही नहीं अपने कार्यों से भी, सहजयोग का सन्देश सर्वत्र फैलाएगी। यह सन्देश पूर्ण मानवजाति को प्रेरित करेगा और एक नई शान्ति एवं न्यायपूर्ण विश्व-व्यवस्था के प्रति विश्वस्त करेगा। इस प्रकार सहजयोग ही आज की विश्व समस्याओं का एकमात्र समाधान है क्योंकि यह मानवहृदय का परिवर्तन करके एक नई अत्यन्त विकसित मानवजाति के सृजन को सुनिश्चित करेगा।

अध्याय 9

उत्क्रान्ति
(Evolution)

यह देखना अत्यन्त रोचक बात है कि अपनी उत्क्रान्ति प्रक्रिया के माध्यम से अपेक्षाकृत कम समय में हम मानव बन गए हैं। मानव सृजन में वास्तव में बहुत कम समय लगा है। कुछ लोग इसे संयोग मानते हैं परन्तु संयोग के नियमानुसार हम इस सृजन तक नहीं पहुँच पाते।

वास्तव में हमारी उत्थान प्रक्रिया का आधार अंतरिक्षयान के नियमों जैसा है। अंतरिक्ष यान के कई हिस्से होते हैं जो श्रृंखलाबद्ध एक दूसरे के अन्दर लग जाते हैं। अंतरिक्ष यान को जब पृथ्वी से छोड़ा जाता है तो कुछ समय के पश्चात् उसके सबसे नीचे या बाह्यभाग का विस्फोट होता है जिसके कारण अंतरिक्षयान तीव्र गति प्राप्त कर लेता है। मान लो उसकी आरंभिक गति 'क' मील प्रति घण्टा थी तो पहले विस्फोट के पश्चात् यह क2 मील प्रति घण्टा हो जाती है। इन गतिप्रदायक विस्फोटों की एक श्रृंखला के माध्यम से अंतरिक्षयान पृथ्वी के ध्रुवाकर्षण से बाहर निकलकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता है, वह लक्ष्य चाहे चन्द्रमा हो या बृहस्पति। इसी प्रकार हमारा उत्थान भी तीव्र गति से घटित होता है। आरम्भ में जीवन की अमीबा (amoeba) अवस्था बनाई गई। एक विस्फोट के पश्चात्, जीवन दूसरी अवस्था तक पहुँच जाता है-बन्दर या किसी अन्य मध्यस्थ अवस्था तक। इसी प्रकार के विस्फोटों की एक श्रृंखला के पश्चात् मानव का सृजन होता है।

मानव अवस्था में भी, आरम्भ में हमारा चित्त केवल भोजन और प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा के लिए एक घर या झोपड़ी आदि प्राप्त करने पर होता है। इसे प्राप्त करके उच्चावस्था के एक विशेष स्तर को, जब हम

प्राप्त कर लेते हैं तो अचानक हमारे अन्दर एक विस्फोट होता है जो हमें मानसिक रूप से चुस्त एवं बुद्धिमान बनाता है। इस प्रकार हम विज्ञान तक पहुँच जाते हैं और प्रौद्योगिकी विकसित कर लेते हैं जिसके द्वारा हम चाँद और बृहस्पति तक पहुँच सकते हैं। तत्पश्चात् मानसिक उपलब्धियों से भिन्न किसी अन्य विस्फोट द्वारा हम अपने अस्तित्व की भावनात्मक अवस्था विकसित कर लेते हैं। पूरे विश्व को जब हम घृणा एवं स्पर्धा से जलते हुए देखते हैं तो एक अन्य अवस्था प्राप्त होती है। यह अवस्था करुणा, प्रेम एवं शान्ति प्राप्त करने की छटपटाहट है। इससे भी पूर्व हम मानवीय सूझ-बूझ से ऊपर कुछ खोजने लगते हैं। एक बार फिर हम स्वयं को आन्तरिक विस्फोट की ओर मोड़ते हैं जिसके पश्चात् हम धर्म और परमात्मा की ओर झुक जाते हैं। यह भी उत्क्रान्ति की अन्तिम अवस्था नहीं है क्योंकि शीघ्र ही लोग समझ जाते हैं कि धार्मिक कर्म केवल कर्मकाण्ड मात्र हैं जो अन्तरात्मा को परिवर्तित करना तो दूर उसे छूते तक नहीं। यह बात स्पष्ट हो जाती है कि हमें अपने मस्तिष्क से परे कुछ तलाशना है।

सत्य साधक जब अपनी तलाश आरम्भ करते हैं- ईमानदारी से, सोच समझ कर, परन्तु बन्द आँखो से (Blindly), तब पथ भ्रष्ट होकर वह कुगुरुओं के शिकंजे में बुरी तरह फँस जाते हैं। ये तथाकथित गुरु वास्तव में चोर हैं जो राजाओं की वेशभूषा धारण किए हुए हैं। हमारे धर्मग्रन्थों में ये वर्णन है कि मानव को एक ऐसी स्थिति तक उन्नत होना है जहाँ वह अपनी चेतना के चतुर्थ आयाम (तुर्या-अवस्था) को प्राप्त कर ले। फ्राँसिस क्रिक (Francis Crick) जैसे वैज्ञानिक चेतना विषय पर, विशेष रूप से दिव्य चेतना (Awareness of Vision) पर शोध कर रहे हैं। तुर्या अवस्था सम्पूर्ण सूक्ष्म चेतनावस्था है। वैज्ञानिकों को तुर्या अवस्था प्राप्त करके एक ऐसी उच्चचेतना खोजनी चाहिए जो सांसारिक मानवीय चेतना का पथप्रदर्शन करे और उसे बढ़ावा दे। कभी-कभी तो मुझे लगता है कि वैज्ञानिक अपने ही अंधेरे

गलियारों में खोए हुए हैं और वास्तविकता की पूर्णदृष्टि प्रदान करने वाली परमेश्वरी शक्ति (Divinity) को स्वीकार नहीं करना चाहते। प्राय: हम तीन आयामों में रहते हैं। सन्तों ने चतुर्थ आयाम प्राप्त किया और इस उत्क्रान्ति के माध्यम से वे पूर्ण प्रशान्ति (Tranquillity), पूर्ण सामंजस्य (Integration) और वास्तविकता की पूर्ण चेतना की अवस्था पा लेते हैं। उत्थान प्राप्ति के उनके प्रयत्नों का वर्णन भिन्न भाषाओं और भिन्न तरीकों से किया गया है। जिन तीन आयामों में हम प्राय: जीवित हैं, वे हैं (१) शारीरिक (२) मानसिक (३) भावनात्मक। चतुर्थ आयाम आध्यात्मिकता है। तीनों आयामों को उग्रता पूर्वक उपयोग करने पर हम अपने जीवन की सारहीनता को समझ जाते हैं और तब पूर्ण सत्य को खोजने लगते हैं, जो ज्ञान हमें प्राप्त है, उससे हम सन्तुष्ट नहीं होते क्योंकि वह तो मानसिक शान्ति (Tranquil Mind) भी प्रदान नहीं कर सकता।

कहते हैं चौदह हज़ार वर्ष पूर्व मार्कण्डेय नामक एक सन्त हुए। उन्होंने इस चतुर्थ आयाम के विषय में लिखा और उसे आदिशक्ति माँ का आशीर्वाद कहा। इस ज्ञान में पारंगत दूसरे व्यक्ति आदिशंकराचार्य थे, जिन्होंने बहुत से ग्रन्थ लिखे। 'विवेक चूड़ामणि' उनका पहला ग्रन्थ था। इसमें उन्होंने चतुर्थ आयाम का वर्णन करते हुए व्याख्या की है कि क्यों हमें यह चतुर्थ आयाम प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। श्री शर्मा नामक एक बुद्धिवादी ने उन्हें चुनौती दी और बताया कि सन्यासी के रूप में वे ऐसा कुछ नहीं कर सके जिससे मेरी बुद्धि पर विजय प्राप्त कर पाते। आदिशंकराचार्य को लगा कि सर्वसाधारण व्यक्ति के लिए यह सारा विचार-विमर्श मात्र मानसिक कलाबाजियाँ हैं। अत: उन्होंने माँ आदिशक्ति की स्तुति करते हुए पुस्तकें लिखने का निर्णय किया। 'सौन्दर्य लहरी' में, विशेष रूप से, उन्होंने दिव्यलहरियों का माँ आदिशक्ति के प्रेमसौन्दर्य की लहरियों के रूप में वर्णन किया। उस समय यह सब संस्कृत भाषा में लिखा गया था जिसे आम आदमी

नहीं समझ सके, केवल कुछ विद्धान लोग ही उसे समझ पाए और उन्होंने भी इस प्रतिपादन की सूक्ष्मता में नहीं जाना चाहा।

महाराष्ट्र में बारहवीं शताब्दी में ज्ञानेश्वर नामक महान सन्त अवतरित हुए। नाथ पंथियों में इस युग में परम्परा थी कि एक गुरु केवल एक शिष्य को आत्मसाक्षात्कार दे सकता था। सामान्य लोगों से चतुर्थ आयाम की बात-चीत करने की आज्ञा भी उसे न होती थी। आम लोगों को कहा जाता था कि वे परमात्मा का स्मरण करें और उनकी स्तुति गाएं। परन्तु इस महान कवि एवं सन्त, ज्ञानेश्वर जी, को लगा कि अब समय आ गया है जब आध्यात्मिक उत्थान के विषय को आम लोगों के लिए भी स्पष्ट कर दिया जाना चाहिए।

गीता में न तो कुण्डलिनी का और न ही इसकी जागृति का कोई वर्णन है, यद्यपि आरम्भ में ही श्री कृष्ण ने कहा कि व्यक्ति को स्थितप्रज्ञ अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। स्थितप्रज्ञ अर्थात दिव्यज्ञान के माध्यम से सन्तुलित व्यक्ति। यह सब एक वर्णनमात्र था, वास्तव में उन्होंने ये नहीं बताया कि यह स्थिति किस प्रकार प्राप्त की जाए।

श्री ज्ञानेश्वर ने गीता पर ज्ञानेश्वरी नामक एक शोधप्रबन्ध (ग्रंथ) लिखा। इसके छठे अध्याय में अत्यन्त मधुरता पूर्वक उन्होंने कुण्डलिनी नामक इस चतुर्थ शक्ति की प्रकृति का वर्णन किया। उन्होंने बताया कि कुण्डलिनी त्रिकोणाकार अस्थि में सुप्तावस्था में होती है और कोई महान आत्मा इसे किस प्रकार जागृत कर सकती है, तथा इसकी जागृति के बाद व्यक्ति को चेतना की चतुर्थ अवस्था प्राप्त हो जाती है। अपने गुरु से उन्होंने अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार देने की आज्ञा नहीं ली। उन्होंने केवल इतना पूछा कि उन्हें कम से कम इसके विषय में लिखने की आज्ञा तो मिल जानी चाहिए। धर्म मार्तण्ड जब छठे अध्याय को समझ न सके तो उन्होंने इसे निषिद्ध घोषित कर दिया और इस प्रकार लोगों ने इस महान अध्याय की

उपेक्षा कर दी। लोगों ने केवल भक्ति मार्ग को अपना लिया अर्थात् वे परमात्मा का नाम जपने लगे और सर्वशक्तिमान परमात्मा की स्तुति गाने लगे।

हमारे देश में तीन तरह के आन्दोलन हुए। पहले में लोगों ने भौतिक पदार्थों का ज्ञान पाना चाहा, पदार्थ एवं संसार के उद्भव का ज्ञान। इस खोज में वे जान पाए कि हमारा दायाँ भाग किस प्रकार बनाया गया तथा हमारे शरीर की रचना करने वाले तत्व कौन से हैं। इस ज्ञान की प्रगति हमें अध्ययन के नए विज्ञान तक ले गईं । पूर्णतः समर्पित तथा पृथ्वी माँ द्वारा सृजित स्वयंभु देवी-देवताओं की स्तुति गान करने वाले लोगों ने एक अन्य पक्ष का संगठन किया। गुरुओं के आदेश के अनुसार वे लोग परमात्मा की स्तुति गाते और उन्हें प्रार्थना करते। महाराष्ट्र में विशेष रूप से, नाथपंथी कहलाने वाले मध्यमार्गी लोग भी थे। ये आत्मसाक्षात्कारी लोग थे जिन्होंने एक गुरु एक शिष्य परम्परा के अन्तर्गत आत्मसाक्षात्कार प्राप्त किया था। संत ज्ञानेश्वर भी नाथ सम्प्रदाय से थे अर्थात् नाथपंथी थे। अपनी पुस्तक में उन्होंने कुण्डलिनी जागृति का महान प्रतिपादन किया।

बाद में सोलहवीं शताब्दि में बहुत से सन्त हुए जो कुण्डलिनी, नाड़ियाँ एवं सूक्ष्म केन्द्रों के विषय में बताने लगे और भजन गाने लगे। पूरे भारत में इन सन्तों ने आत्मज्ञान (आत्मसाक्षात्कार) की बात की। कुछ सन्तों ने अपने शिष्यों को आत्मसाक्षात्कार देने का प्रयत्न भी किया परन्तु वे वास्तव में बहुत कम लोगों को आत्मसाक्षात्कार दे पाए क्योंकि उन्होंने सोचा कि अभी तक विश्व आत्मसाक्षात्कार के लिए तैयार ही नहीं है। जैसे कबीर साहब ने कहा है कि, ''कैसे समझाऊं सब जग अन्धा?'' इन लोगों को, जो सब अन्धे हैं, प्रकाश के विषय में कुछ नहीं जानते, उन्हें मैं किस तरह से समझाऊं? बुद्धिवादी लोगों ने, जो ये समझते थे कि सारे सन्त ढोंगी हैं और जनता को पथभ्रष्ट कर रहे हैं, अधिकतर सन्तों को बहुत कष्ट दिए। मैं सोचती हूँ कि एक बार फिर इस आधुनिक काल में यही लोग मंच पर वापिस आ रहे हैं और

पूर्णसत्य को खोजे बिना सच्चे साधकों और पावन सन्तों के विरुद्ध अवरोध खड़े कर रहे हैं। परन्तु इसी के साथ-साथ बहुत से झूठ-मूठ के गुरु और बहुत सी महिला गुरु भी हुईं जिनकी संख्या इतनी अधिक थी कि यह समझना कठिन हो गया कि कौन असली हैं और कौन नकली। गुरु की प्रथम पहचान ये है कि जो व्यक्ति आत्मसाक्षात्कार, परमात्मा का ज्ञान या उच्चचेतना देने के लिए धन लेता है वह पहले दर्जे का चोर है, निकृष्ट धनलोलुप व्यक्ति है जो लोगों का अनुचित लाभ उठाने का प्रयत्न कर रहा है। इन सब लोगों के प्रकट होने से पूर्व भी चर्चों, मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों के पुजारियों को दान के रूप में बहुत सा धन दिया जाता था। लोग अच्छे बुरे में भेद करना न जानते थे और सोचते थे कि परमात्मा के नाम पर व्यक्ति को धन देना चाहिए। परमात्मा पैसे को नहीं समझते, बैंक व्यापार नहीं जानते और न ही उन्होंने पैसे का सृजन किया है। ये सब तो मनुष्य की सिरदर्दी है। कुण्डलिनी की जागृति करने वाले लोगों की संख्या बहुत कम थी क्योंकि साधकों की संख्या भी बहुत कम थी।

जब मैं जन्मी तो मैंने देखा कि पूरे विश्व में लोगों ने एक नई दिशा में जाना आरम्भ कर दिया है, परमात्मा या आध्यात्मिकता में विश्वास करने के स्थान पर वे धन एवं सत्ता में विश्वास करने लगे हैं। इस संकट की घड़ी में, मैं कहना चाहूँगी, मेरे पिताजी जो कि महान उन्नत आत्मा थे, मेरी सहायता को आए और उन्होंने पूछा, ''तुम अपने जीवन का लक्ष्य जानती हो?'' मैंने कहा, ''मैं ये लक्ष्य जानती हूँ।'' तब उन्होंने कहा, ''तुम इमारत की सातवीं मंजिल पर खड़ी हो और वहाँ से पृथ्वी पर खड़े हुए लोगों को देख रही हो। उन्हें किस प्रकार विश्वास होगा कि तुम सातवीं मंजिल पर हो? यदि किसी तरह से तुम उन्हें पहली या दूसरी मंजिल तक भी उठा दो तो वो सोचने लगेंगे कि कोई उच्च अवस्था है जिसे उन्होंने प्राप्त करना है। अतः 'शारीरिक' उपलब्धियों की पहली सीढ़ी प्राप्त हो चुकी है, 'भावनात्मक' उपलब्धियों की दूसरी सीढ़ी भी प्राप्त हो चुकी है और तीसरी 'बौद्धिक' को भी पार कर लिया

जाएगा। परन्तु अब लोगों को उस बौद्धिकता से परे जाना होगा और वह भी व्यक्तिगत रूप से नहीं सामूहिक रूप से। सामूहिक जागृति के अपने लक्ष्य को मैं भली-भांति जानती थी। परन्तु मेरा जन्म इसी अन्धे विश्व में हुआ था।

मेरे पिताजी ने आगे बताया, ''कोई भी खोज जो व्यक्तिगत है उसे सामूहिकता तक लाना होगा अन्यथा यह अर्थहीन है, इससे कोई लाभ न होगा।'' मैंने उन्हें बताया, ''मैं जानती हूँ कि मेरा कार्य एक ऐसी विधि खोजना है जिसके द्वारा वास्तव में सामूहिक आत्मसाक्षात्कार दिया जा सके।'' यह सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए और इस प्रकार मैंने बहुत से मनुष्यों पर कार्य आरम्भ किया। पिताजी के साथ मेरा जीवन बहुत से सामाजिक सम्बन्धों से परिपूर्ण था क्योंकि वे महान स्वतन्त्रता सेनानी थे और बाद में वे संविधानसभा, केन्द्रीय सभा के सदस्य बन गए। उनके बहुत से मित्रों, उनकी पत्नियों और बच्चों से मैं मिली और अपने सूक्ष्म ढंग से देख पाई कि उनकी गतिहीन स्थिति के लिए कौन सी समस्याएं जिम्मेदार हैं। मानव की समस्याओं को खोजना एवं इन पर शोध करना मैंने आरम्भ कर दिया।

वर्ष १९४६ के अन्त में मैं इस परिणाम पर पहुँची कि मुझे ये कार्य अत्यन्त चुपके से करना होगा और अपनी अन्तर्गतिविधियों के माध्यम से खोज निकालना होगा कि मनुष्य के चक्रों तथा तीन नाड़ियों में समस्या का मुख्य कारण क्या है ?

अन्ततः वर्ष १९७० में एक तथाकथित गुरु की गोष्ठी में मुझे जाना पड़ा क्योंकि उसने मेरे पति से इसके लिए अनुरोध किया था। मेरे पति के एक मित्र वहाँ रहते थे और उन्होंने मेरी इस यात्रा का प्रबन्ध किया। इस व्यक्ति (कुगुरु) को देखकर मैं हैरान थी क्योंकि वह मुझसे आयु में दस वर्ष छोटा होते हुए भी मुझसे बीस वर्ष बड़ी आयु का प्रतीत होता था। परन्तु वह सभी लोगों को सम्मोहित कर लेता और लोग चिल्लाते और कुछ तो कुत्तों की तरह

से भौंकते। सम्मोहन द्वारा वह लोगों को उनके पूर्वकाल में ले जाता था।

इस घटना से मुझे बहुत बड़ा सदमा पहुँचा। एक पेड़ के नीचे बैठकर मैं देख रही थी कि वह क्या कर रहा है? रात्रि के समय मैं अकेली समुद्र तट पर चली गई और वहाँ बैठकर ध्यान करने लगी कि किस तरह से अपनी कुण्डलिनी का उपयोग मैं लोगों को सामूहिक आत्मसाक्षात्कार देने के लिए कर सकती हूँ। यही वह क्षण था जब यह कार्यान्वित हुआ और खड़ाक से हो गया। मैं हैरान थी कि तनिक सी गहनता में पैंठने मात्र से मैं इसे कार्यान्वित कर सकी! अनुभव इस प्रकार था: मैंने देखा कि मेरी कुण्डलिनी बड़ी तीव्रता से उठ रही है और दूरबीन की तरह से खुल रही है। इसका रंग अत्यन्त सुन्दर था, जैसा आप तपे हुए लोहे में, लाल गुलाब का रंग देखते हैं। परन्तु यह अत्यन्त शीतल एवं सुखद था। कुण्डलिनी मेरे सिर को तालू अस्थि (ब्रह्मरन्ध्र) को पार करके निकल गई। मेरा ब्रह्मरन्ध्र बचपन से ही खुला हुआ था और यह दिव्य चैतन्य लहरियाँ (पूर्णब्रह्म) प्रवाहित कर रहा था। इस नव अनुभव ने मुझे अपनी दिव्यशक्ति को पहचानने का एक नया आयाम प्रदान किया। एक अत्यन्त आशाजनक वास्तविकता के रूप में इसका उद्‌भव हुआ कि मेरे सामूहिक कार्य आरम्भ करने का समय आ गया है। मैंने पाया कि मेरा पूर्णअस्तित्व महान शान्ति एवं आनन्द से शराबोर हो गया था। मैंने अपनी आँखें खोलीं, इस कुगुरु के पास गई और उसे बताया, ''अब सभी लोगों का अन्तिम चक्र खोला जा सकता है।'' यह देखकर मैं हैरान थी कि सूक्ष्म केन्द्रों और तीन नाड़ियों का, जिन्हें मैं बचपन से ही जानती थी, उसे बिल्कुल भी ज्ञान न था। मैंने पाया कि बहुत से तथाकथित गुरु अत्यन्त झूठे और धनलोलुप थे और कुछ सम्मोहन के माध्यम से ईसामसीह विरोधी अनैतिक गतिविधियों को बढ़ावा देकर, या ये कहकर कि विश्व का अन्त होने वाला है, कार्य कर रहे थे।

एक व्यक्ति से मैंने कार्य आरम्भ किया और यह देखकर मैं हैरान थी कि तुरन्त वह महिला चतुर्थ आयाम तक पहुँच गई! वह बहुत वृद्ध महिला थी

परन्तु बहुत ही भली और धार्मिक महिला जिसने एकदम से यह अवस्था प्राप्त कर ली। दूसरी महिला छोटी आयु की थी और कुछ ही क्षणों में उसने भी अपना उत्थान प्राप्त कर लिया। उस दिन से उसे चैतन्य लहरियाँ निरन्तर आ रही हैं। उसी समुद्र तट पर तब मैं पच्चीस लोगों को ले गई। मैं हैरान थी कि उनमें से बारह लोगों को आत्मसाक्षात्कार मिल गया! उस दिन से सामूहिक रूप से यह कार्य आरम्भ हो गया। अब तो चाहे अट्ठारह हज़ार से बीस हज़ार लोग हों तो उनमें से लगभग सभी सामूहिक रूप से आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर सकते हैं, रूस में इन गोष्ठियों में विशेष रूप से बेशुमार लोग रोगमुक्त हुए हैं। मैं स्वीकार करती हूँ कि मैं बहुत सौभाग्यशाली हूँ। हजारों लोगों को खुशी-खुशी आत्मसाक्षात्कार देने के लिए, शक्तिशाली पावन चैतन्य लहरियाँ प्रवाहित करने के लिए, सर्वशक्तिमान परमात्मा की इच्छा को पूर्ण करने के लिए मेरा उपयोग किया जा रहा है। मेरे जीवन काल में ही यह समय आ गया है -बसन्त का समय-जब पृथ्वी पर इतने सारे पुष्प हैं जो सत्य साधक हैं और जो सुगमतापूर्वक फल बन सकते हैं।

मेरे पति के संयुक्तराष्ट्रसंघ के अन्तराष्ट्रीय समुद्रवर्ती संस्थान के महासचिव के पद पर चुने जाने पर मुझे लन्दन जाना पड़ा। मैंने सात हिप्पियों से अपना कार्य आरम्भ किया। इन लोगों को आत्मसाक्षात्कार देना टेढ़ी खीर थी। मैंने पाया कि पाश्चात्य संस्कृति से संस्कृतिविरोध तक पलायन करने में ये लोग अत्यन्त हेकड़, प्रभुत्ववादी एवं आक्रमक हो गए थे। मैंने उन पर कार्य आरम्भ किया और शनै:शनै: वे इस बात को जान गए कि, वे जैसा समझते थे, अभी तक चतुर्थ आयाम में न थे तथा अपने अस्तित्व की इस तथाकथित उच्चावस्था का रोब अन्य लोगों पर डालने का उन्हें कोई अधिकार न था। चार वर्षों के पश्चात् मैं इन सात हिप्पियों को आत्मसाक्षात्कार की स्थिति तक ला पाई। बीच-बीच में मैं भारत आती रही और अपने राज्य महाराष्ट्र में मुझे बहुत प्रोत्साहन मिला। यहाँ हज़ारों लोग आत्मसाक्षात्कार लेने लगे।

अध्याय 10

पराविज्ञान का संदेश
(Message of Meta Science)

विज्ञान के पास बहुत से प्रश्नों का उत्तर नहीं है। चिकित्सा विज्ञान में बहुत से लोगों ने सूक्ष्मतम कहलाने वाले वंशाणुओं (Genes) तक पहुँचने का प्रयत्न किया। परन्तु आधुनिक जीवन की जटिलताओं पर नियन्त्रण पाने के लिए वंशाणुओं की सहायता से प्रगति न कर सकने के कारण ये वैज्ञानिक हतोत्साहित हो गए हैं।

वैज्ञानिकों का यह निष्कर्ष कि ज़ीन्स (Genes) वंशानुगत हैं, पूर्णतः गलत है। दिन-प्रतिदिन के जीवन में हमारा जो व्यक्तित्व बनता है, वास्तव में जीन्स उसे प्रतिबिम्बित करते हैं। हमारी सारी अनुकम्पी गतिविधियाँ भी हमारे जीन्स पर प्रतिबिम्बित होती हैं।

चिकित्सा विज्ञान में ये वर्णन नहीं किया जा सकता कि क्यों एसिटिलकोलीन (Acetylcholine) या एड्रिनालीन (Adrenaline) नामक दो रसायन निर्धारित रसायन सिद्धान्त होते हुए भी शरीर में भिन्न प्रकार से कार्य करते हैं। इस बात का भी कोई उत्तर नहीं है कि भ्रूण के रूप में माँ के गर्भ में बने हुए बच्चे को भी वैसे ही शरीर बाहर क्यों नहीं फेंक देता, जिस प्रकार शरीर के स्वभाव के अनुसार अस्वीकार करके वह अन्य बाह्य पदार्थों को बाहर निकाल देता है? परन्तु भ्रूण को एक सीमा तक विकसित होने तक सुरक्षित रखा जाता है और समय आने पर इसे बाहर निकाला जाता है। प्रसव पीड़ा आरम्भ होती है और माँ के गर्भ से नन्हा बच्चा इस नए विश्व में जन्म लेता है। यह समय कौन निर्धारण करता है? और भी बहुत से सांस्कृतिक प्रश्न हैं जिनका उत्तर विज्ञान के माध्यम से नहीं दिया जा सकता। विज्ञान

क्योंकि केवल मानवशरीर या भौतिक पदार्थों को ही देखता है, यह आधुनिक युग की समस्याओं को नहीं सुलझा सकता। यह जीवन की सूक्ष्मतर या विस्तृत समस्याओं को नहीं खोज सकता। उदाहरण के लिए उत्क्रान्ति तथा मानव जीवन का अर्थ क्या है? आधुनिक जीवन, जो कि अत्यन्त भ्रामक और हिंसा से परिपूर्ण है, की दलदल से मुक्त होने का कौन सा मार्ग है? किस प्रकार हम सार्वभौमिक शान्ति प्राप्त कर सकते हैं? ये सभी प्रश्न पूछे जाने चाहिएं। परन्तु इतने महत्वपूर्ण प्रश्नों का भी विज्ञान के पास कोई उत्तर नहीं है।

अब हमें ये जानना होगा कि उत्तर हमारे अन्तर्निहित है, बाह्य संसार में नहीं। कभी कभी वैज्ञानिक भी गलत परिणामों पर पहुँच जाते हैं। उदाहरण के रूप में जीव विज्ञान के तर्कसंगत परिणामों के अनुसार ये माना जाता है कि हमारे वंशाणु (Genes) अनुवांशिक हैं और अन्तर्निष्ठ हैं और यही हमारे चरित्र को निश्चित करते हैं। सर्वप्रथम जीन (वंशाणु) केवल अन्तर्निष्ठ ही नहीं होते क्योंकि एक ही माता-पिता के पुत्रों के चरित्र और आचरण में समीपता तो हो सकती है परन्तु बहुत से अच्छे और ईमानदार माता-पिताओं को ऐसे बच्चे हो जाते हैं जो राक्षस होते हैं तथा शराबी माता-पिताओं के बच्चे मद्यपान से घृणा करने वाले होते हैं।

आइए, देखें कि किस प्रकार जीन हमारी कोशिकाओं में स्थापित किए गए हैं। अण्ड और शुक्राणु जब मिलते हैं तो पिण्ड (युग्मज) की रचना करते हैं। कोषाणु चार अवस्थाओं में से गुजरते हैं: पूर्वावस्था (Prophase), परावस्था (Metaphase), आद्यावस्था (Anaphase) और अन्त्यावस्था (Telophase)। मानव कोषाणु में 46 गुणसूत्र (Chromosomes) होते हैं। हर कोषाणु में विद्यमान इन 46 गुणसूत्रों में दो प्रकार के गुणसूत्र होते हैं। अलिंग सूत्र (Autosomes) संख्या में 44 हैं तथा लिंग के लिए दो बाधक हैं, ये हैं x और y1 2 x मादा (Female) है और xy नर (Male) है। प्रति अण्ड और शुक्राणु से हमें 22 गुणसूत्र प्राप्त होते हैं जो द्विगुणित (Diplod) एक गुणित

(Haploid) के विभाजन माध्यम से कोष्ठमय (Cellular) विभाजन में आते हैं। जब वो मिलते हैं तो तकली के आकार में मिलते हैं। ये पिण्ड (Zygote) के रूप में विकसित होते हैं जो कोषाणुओं की रचना आरम्भ करता है। इन पितृसूत्रों (Chromosomes) में लाखों वंशाणु (Genes) होते हैं जिनमें अरबों डी.एन.ए. (D.N.A.) होते हैं। डी.एन.ए. अर्थात् डिऑक्सीराइबो न्यूक्लिक एसिड (Deoxyrigo-Nucleic Acid) जो कि जीवन की संकेतपद्धति होती हैं। डी.एन.ए. के तीन ईकाई आधार (Unit Base) होते हैं: नाइट्रोजन (Nitrogen), शक्कर (Sugar) और क्षार (Phosphats)। नाइट्रोजन चार प्रकार की होती है-थियामिन (Thiamin), एडेनिन (Adenine), ग्वानिन (Guanine) और साइटोसिन (Cytosine)। जीन घुमावदार सूत्र होते हैं जो छल्लों की रचना करते हुए परस्पर अंशछादन करते हैं। ग्वानिन (Guanine) सदैव साइटोसिन (Cytosine) के सम्मुख होता है और एडेनिन (Adenine), थियामिन (Thiamin) के सम्मुख।

आरम्भ में पितृसूत्रों (Chromosomes) के अन्दर हमारे पोषण के लिए शक्कर होती है। शक्कर जैसे कार्बोहाड्रेट, कार्बन, हाइड्रोजन और आक्सीजन से बनती है। कार्बन पृथ्वी माँ का अंश है तथा हाइड्रोजन और आक्सीजन जल तत्व के। विकास प्रक्रिया में से गुजरते हुए अपने पहले चरण में हाइड्रोजन+आक्सीजन = H_2O (पानी)+कार्बन=कार्बोहाइड्रेट्स। अमीनो एसिड बनाने के लिए नाइट्रोजन इसमें मिली और कार्बोहाइड्रेट्स में जीवन डाला। डी.एन.ए. में नाइट्रोजन, शक्कर और फास्फेट का इकाई का आधार होता है, इनकी शृंखला जब स्थिति परिवर्तन करती है तो कोषाणु व्यक्ति के चरित्र परिवर्तन को सूचित करते हैं। इस परिणाम पर पहुँचना कि वंशाणु अन्तर्निष्ठ हैं, बहुत भयानक है क्योंकि इसका अर्थ तो ये होगा कि कोई भी व्यक्ति अपनी अपवित्र, क्रूर और अपराधमय जीवनशैली को त्याग नहीं सकता। यह तो पलायन है जो उन धर्ममार्तण्डों के अनुकूल है जो पापमय

जीवन की शिक्षा देते हैं, ऐसे जीवन की जो शास्त्र सम्मत नहीं है। यह असत्य वैज्ञानिक निष्कर्ष सभी धार्मिक एवं संघीय नियमों की छुट्टी कर सकता है। धर्मों तथा पावन नैतिकता पर विज्ञान की महान जीत की घोषणा वैज्ञानिक कर सकते हैं। परन्तु वास्तविकता बिल्कुल भिन्न है। वास्तव में आंकड़ों का आधार फास्फेट, नाइट्रोजन और कार्बोहाइड्रेटस से बनता है। आक्रामक गतिविधि से (Right Side Action) जब कोषाणु के अन्दर जल सूखकर वाष्पशील हो जाता है तो व्यक्ति हिंसक हो उठता है। व्यक्ति यदि बहुत अधिक विनीत है तो कार्बोहाइड्रेटस उसे आलसी एवं आज्ञाकारी बना देते हैं। आक्रमकता का बाहुल्य व्यक्ति को क्रूर-सम्भोगी (Sadist) बना देता है तथा आलसी प्रवृत्ति को स्वपीड़न-सम्भोगी (Masochist)। नाइट्रोजन सन्तुलन प्रदान करती है और जब विकास की आन्तरिक ऊर्जा कोषाणुओं को आन्तरिक ऊर्जा प्रदान करती है तो ये कोषाणु उन्नत आत्मा (Evolved Self) का आकार प्राप्त करते हैं।

इस समस्या को समझने का एक अन्य मार्ग भी है। हर कोषाणु का एक ग्राही (Receptor) होता है जो कोषाणु के आन्तरिक वातावरण को देखता है। कुछ और सूक्ष्मता में जाकर व्यक्ति देख सकता है कि मेरुरज्जु में दूरस्थनियन्त्रण (Remote Control) जैसी यंत्र-रचना बनाई गई है जिसमें सात छल्ले (Loops) हैं जिन्हें धर्मग्रन्थों में 'आत्मा' कहा गया है। हमारी अबोधिता तथा कल्याण को देखने की जिम्मेदारी आत्मा की है। मानव मस्तिष्क में विद्यमान अच्छाई और धर्मपरायणता की यह रक्षा करती है तथा हमें विनाश से बचाती है। ग्राही के नियन्त्रण के माध्यम से आत्मा कोषाणु के आन्तरिक वातावरण का यह नियन्त्रण करती है। किसी व्यक्ति के दुष्कर्मों से जब आत्मा को चुनौती मिलती है तो आत्मा उस कोषाणु के ग्राही (receptor) पर कार्य करती है जो अन्तत.कोषाणु के आन्तरिक वातावरण को आन्दोलित करता है। आत्मा की गतिविधि के कारण डी.एन.ए. के कोषाणु की

आंकड़ा-आधारित इकाइयों में परिवर्तन होता है। इस प्रकार जीन से व्यक्ति किसी के भी उपार्जित चरित्र को जान सकता है। पितृसूत्र (Chromosomes) जिन्हें अलिंग सूत्र (Autosomes) भी कहते हैं और जो शारीरिक पक्ष के लिए हैं, उनमें भी परिवर्तन हो सकता है जैसे हिरण के मांस या भूने जाने वाले चिकन के मांस में होता है। मानव में भी यह शरीर के ऐसे आकार धारण करता है जिन्हें शारीरिक भावनात्मक और मानसिक गतिविधियों से प्राप्त किया जा सकता है। ये जीन कुछ सीमा तक अन्तर्निष्ठ (Inherent) हो सकते हैं परन्तु माता-पिता के स्वभावानुसार जन्म से पूर्व यह नियमित श्रृंखला में नहीं भी हो सकते। हमारे रोज़मर्रा के जीवन के कारण, विशेष रूप से आधुनिक युग में, यह कोषाणु के आन्तरिक वातावरण को आन्दोलित करेगा। इस प्रकार ये आन्दोलन उन आंकड़ा-आधारों (Data Bases) की श्रृंखलाओं को परिवर्तित करते हैं, जो व्यक्ति के पूरे चरित्र को दर्शाते हैं चाहे वह वंशानुगत (Genetic) हों, अन्तर्निष्ठ हों या व्यक्ति द्वारा उपार्जित हों।

आध्यात्मवादी धर्मों की अभिव्यक्ति करते हुए, यदि धर्ममार्तण्डों ने यह सूझ-बूझ दर्शाई होती कि हमारे विकास के अन्तिम भेदन के लिए व्यक्ति को विवेकशील, सन्तुलित व करुणामय बनाना कितना महत्वपूर्ण है तो दुष्ट लोग भी सामान्य व्यक्ति तथा पूर्ण सत्य के गहन जिज्ञासु बन गए होते। परन्तु धर्माधिकारी लोग स्वयं ही धन और सत्तालोलुप हैं, आध्यात्मिक जिज्ञासु नहीं। सीधे सादे श्रद्धालु लोगों के अविकसित मस्तिष्क को विषाक्त कर उन्हें पथ-भ्रष्ट करके वे उन्हें नर्क में ले जा सकते हैं।

संयोग के नियम को यदि हम देखें तो मानव स्तर तक उत्क्रान्ति में बहुत कम समय लगा। मानवस्तर के विकास की तुलना अंतरिक्ष यान सम्पुटिका (Space Craft Capsule) से की जा सकती है जिसमें बहुत से इन्जन होते हैं और सम्पुटिका में बहुत सी आन्तरिक सतहें होती हैं। अंतरिक्ष यान को जब छोड़ते हैं तो यह अन्दर बनाए हुए सारे साज़ोसामान के साथ

तेजी से पृथ्वी से उठता है और जब बाह्य सम्पुटिका में विस्फोट होता है तो, कुछ ही देर बाद, जले हुए भाग को त्याग कर यह यान को तीव्र गति प्रदान करता है। इसी प्रकार हमारा मानवस्तर तक उत्थान घटित हुआ। यह इस प्रकार है :- 1) शारीरिक अवस्था 2) मानसिक अवस्था 3) भावनात्मक अवस्था और 4) मानवीय चेतना तक पहुँचाने वाली आध्यात्मिक अवस्था।

आधुनिक समय में इसमें विस्फोट हो चुका है और आध्यात्मिक जिज्ञासा आरम्भ हो गई है। यह सारी प्रगति मध्य नाड़ी तन्त्र के अन्दर घटित होती है तथा हमारी चेतना का विस्तार करती है।

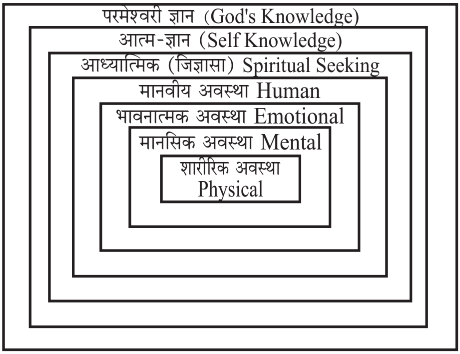

आत्मत्व (Self-Hood की छठी उपलब्धि,जिसमें हम आत्मचेतन हो जाते हैं सहजयोग के माध्यम से प्राप्त की जा सकती है। कुण्डलिनी के माध्यम से हम आत्मज्ञान प्राप्त करते हैं। परमात्मा के ज्ञान की ओर अब हमारी यात्रा आरम्भ होती है। आत्मज्ञान के बिना व्यक्ति परमात्मा को अनुभूत (actualised) ज्ञान के रूप में नहीं जाना जा सकता।

सत्य तो ये है कि त्रिकोणाकार पावन अस्थि में सुप्त अवशिष्ट शक्ति विद्यमान है जिसे कुण्डलिनी कहते हैं। हमारी उत्क्रान्ति के लिए वही सुप्त आन्तरिक ऊर्जा है। अव्यवस्थित जीन (वंशाणुओं) को पूर्णपोषण तथा सामंजस्य प्रदान करने की शक्ति इसी में है, चाहे ये वंशानुगत हों, अन्तर्निष्ठ

हों, या उपार्जित। जब इसकी जागृति होती है तो यह जीन-शृंखला को परिवर्तित कर देती है। यह केवल जीन्स के आंकड़ा-आधार (Data Base) को ठीक ही नहीं करती, ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करके यह साधक का योग परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति से करती है। इसे अदिशक्ति की शीतल लहरियाँ (Cool Breeze of the Holy Ghost), रूह, तम्भरा या परमचैतन्य भी कहते हैं। बप्तिस्म (Baptism) का वास्तवीकरण घटित होने के कारण व्यक्ति पुनर्जन्म लेकर आत्मसाक्षात्कारी बन जाता है। हमारे हृदय में स्थित सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आत्मा के प्रकाश के रूप में हमारे चित्त में प्रवेश कर जाता है और हमें प्रबुद्ध करता है। साधक का वास्तव में पुनर्जन्म होता है, पुनर्जन्म मात्र प्रमाणपत्र नहीं होता, अन्तर्परिवर्तन के कारण वह वास्तव में परिवर्तित हो जाता है। साधारण जिज्ञासु तथा आत्मसाक्षात्कारी व्यक्ति (योगी) में बहुत बड़ा अन्तर है।

दिव्य प्रेम से परिपूर्ण वह व्यक्ति स्वयं का गुरु बन जाता है। पुनर्जन्म की यह प्रक्रिया अण्डे से पक्षी बनने जैसी है। सम्भवत: यही कारण है कि प्रतीक के रूप में अण्डे भेंट किए जाते हैं ताकि स्मरण करवाते रहें कि व्यक्ति को पुनर्जन्म पाना है। जीन्स परिवर्तित हो जाते हैं और पूर्ण आन्तरिक परिवर्तन घटित हो जाता है। व्यक्ति यदि रोगी या अहंकारी हो तो कुछ समय लग सकता है। जो लोग दोषभावग्रस्त होते हैं या अन्य लोगों को क्षमा नहीं कर सकते उनके लिए अपनी आत्मसाक्षात्कार की अवस्था को स्थापित कर पाना कुछ कठिन होता है। जिन साधकों के साथ कुगुरुओं, सम्प्रदायों या धर्मान्धिता की समस्या होती है उन्हें भी समय लगता है, परन्तु वे भी सहजयोग में स्थापित हो सकते हैं। लोगों ने तो रातोंरात नशे का ऐब त्याग दिया। नशात्याग (Withdrawal Symptoms) से उन्हें कभी किसी भी प्रकार की कोई हानि या कष्ट नहीं होता। कुण्डलिनी जागृति के परिणाम स्वरूप आत्मसाक्षात्कार प्राप्ति ने आश्चर्यजनक परिणाम दर्शाए हैं। यह नई सृजनात्मक शक्ति प्रदान

करता है। बहुत से लोग कवि, संगीतकार तथा कलाकार बन गए हैं और अपनी-अपनी प्रतिभाओं में महान बुलन्दियाँ प्राप्त कर ली हैं। आर्थिक समस्याएं दूर हो गई हैं, मनौदेहिक रोगों-जैसे कैंसर, मेरुरज्जुशोथ (myelitis रीढ़ की हड्डी का रोग) से मुक्ति मिल गई है। बिना दवाइयों के बहुत से असाध्य रोगों से मुक्ति प्राप्त हो जाती है। साधक जीवनरूपी नाटक का साक्षी बन जाता है और उसमें आन्तरिक शान्ति स्थापित हो जाती है। वह सभी धर्मों का सम्मान करता है तथा अन्तर्जात शाश्वत धर्म से जुड़ जाता है, ऐसे धर्म से जो विश्व के सभी धर्मों का समावेश अपने में किए हुए हैं। सद्‌चरित्र उनमें अन्तर्जात तथा स्वैच्छिक हो जाता है। पूर्णपरिवर्तन के पश्चात् वह अनैतिक कार्यों के विरुद्ध हो जाता है। आत्मा के प्रकाश में वह उचित-अनुचित को भलीभांति जान जाता है तथा सभी विनाशकारी चीज़ों को त्यागने के कारण स्वच्छ एवं पावन बने रहने की शक्ति उसमें आ जाती है। बिना किसी सन्देह के जिन सद्गुणों का वह सम्मान करता है उनका वह आनन्द उठाता है तथा चरित्रवान मानव बन जाता है। मस्तिष्क से परे, उसे पहले निर्विचारचेतना प्राप्त हो जाती है और तत्पश्चात् निर्विकल्पचेतना। इस अवस्था पर पहुँचकर सहजयोगी अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार प्रदान कर सकता है। उस पर बुढ़ापे का असर नहीं होता, इसके विपरीत सहजयोगी अपनी आयु से कम से कम बीस वर्ष युवा प्रतीत होता है तथा युवा हो जाता है। वे सार्वभौमिक व्यक्ति बन जाते हैं। वासना, लोभ, क्रोध, स्वामित्वभाव, ईर्ष्या और मोह आदि मानवशत्रु, लुप्त हो जाते हैं। इस प्रकार सन्तों की एक नई प्रजाति का सृजन होता है जिन्हें अपनी निर्लिप्सा या सन्यास का प्रदर्शन करने के लिए किसी भी चीज़ का त्याग नहीं करना पड़ता।

परमेश्वरी प्रेम, जिसे सहजयोगी अपनी अंगुलियों के सिरों पर आदिशक्ति की शीतल लहरियों के रूप में महसूस करते हैं, पूर्ण सत्य है और इसके लिए धन नहीं दिया जा सकता। अंगुलियों के सिरे ऊर्जा केन्द्रों (चक्रों)

से जुड़े हुए हैं। ये चक्र हमारे शारीरिक, भावनात्मक और मानसिक अस्तित्व के लिए जिम्मेदार हैं। सहजयोगी यदि अपने चक्रों को सुधार सकते हैं तो वे अन्य लोगों के भी चक्रों को ठीक कर सकते हैं। इस प्रकार सभी शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक समस्याओं का समाधान हो जाता है। पवित्र लोगों में नैतिक जीवन का आवश्यक सन्तुलन होता है जो कुण्डलिनी के उत्थान के लिए मध्यनाड़ीतन्त्र (सुषुम्ना नाड़ी) के विस्तार को विश्वस्त करता है।

इस अध्याय में अब हमें समझना है कि हर मनुष्य में एक सूक्ष्मतन्त्र है जो इस विकास प्रक्रिया में पूर्णतया विकसित हो चुका है ताकि मनुष्य मानवीयचेतना तक पहुँच सके। उदाहरण के रूप में पशुओं में पाप, गन्दगी, घिनौनापन, कला या काव्य की चेतना का पूर्ण अभाव होता है। परन्तु मनुष्यों में इन संवेदनाओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति होती है क्योंकि हम पक्षियों, मछलियों और पशुओं की भी सराहना करते हैं और उनका आनन्द लेते हैं। क्या वे भी हमारे अन्दर के सौन्दर्य को देखते हैं? इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया जा सकता है : पशुओं, जिनकी हम इतनी देखभाल करते हैं, की अपेक्षा मानव विकास के उच्च स्तर पर है। पक्षियों से हम प्रेम करते हैं और नाचती हुई मछली का हम आनन्द लेते हैं। परन्तु स्वयं का सम्मान करना, स्वयं से प्रेम करना, वास्तव में बहुत अच्छी बात है। हमें अपना शरीर स्वच्छ रखना चाहिए, अपना मस्तिष्क और हृदय खुला तथा पारदर्शी रखना चाहिए क्योंकि विश्व में उच्चतम विकसित जीव होने के कारण आत्म-साक्षात्कार प्राप्त करना हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।

ऐसा करने की अपेक्षा, फ्रॉयड (Freud) और सेड (Sade) जैसे लेखकों की कृपा से, हमने मानव को मात्र यौन-बिन्दु बना दिया है। इतना जघन्य कार्य तो हिंसक पशु भी नहीं कर सकते। यह कितना संक्रामक तथा अपमानजनक रोग है कि यदि विकृत यौन का एक कोषाणु किसी पशु में डाल दिया जाए तो वह भी विकृत हो जाएगा! आज इस रोग ने पश्चिमी समाज को

इतना संदूषित कर दिया है कि हो सकता है कि इस शताब्दि के अन्त तक हमारे वांछित विनाश का मार्ग दिखाने वाले इन नए नीतिज्ञों के पुतले खड़े कर दिए जाएं! उत्थान मार्ग में जिन चीज़ों को व्यर्थ की बाधाएं समझ कर त्याग दिया जाना चाहिए था, उन्हीं को महान साहसिक कार्य मानकर समाज ने अपने अन्दर आत्मसात कर लिया है।

अब जो मैं आपको बताने जा रही हूँ उसे आँखे बंद करके स्वीकार न करके परिकल्पना के रूप में लिया जाना चाहिए। बार-बार मैं आपसे प्रार्थना करूँगी कि वैज्ञानिक की तरह से अपना मस्तिष्क खुला रखें। मैं जो कह रही हूँ वह यदि प्रमाणित हो जाए तो ईमानदारी पूर्वक मनुष्य को अपने विषय में यह सुन्दर आविष्कार स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि यह आपके हित के लिए है, आपके परिवार, आपके समाज, आपके राष्ट्र तथा पूरे विश्व के हित के लिए है।

वर्तमान वैज्ञानिक निष्कर्षों तथा मानसिक प्रक्षेपणों द्वारा बनाए गए सिद्धान्त किसी भी प्रकार से शाश्वतसत्य नहीं है। वास्तविकता को जानने के लिए व्यक्ति को पराविज्ञान, के साम्राज्य, मस्तिष्क से परे के क्षेत्र में, प्रवेश करना आवश्यक है और यह तभी सम्भव है जब हम आत्मसाक्षात्कार के माध्यम से सामूहिक परमचेतना के क्षेत्र में प्रवेश कर लें। मन भ्रम है और

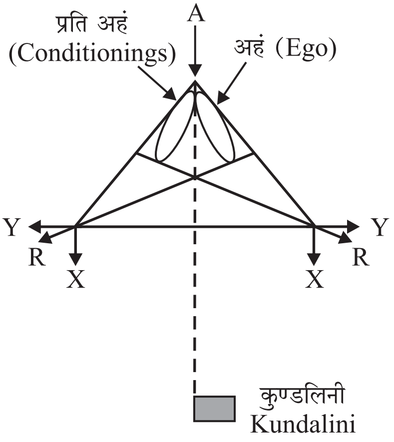

मस्तिष्क सत्य है।

जब भ्रूण बनता है तो आरम्भ में दिव्य शक्ति ‘A’ मस्तिष्क के मार्ग से बहती है। मानव मस्तिष्क एक प्रिज़्म, समपार्श्व के आकार का है जिसमें एक शिखाग्र (तालु भाग) है, जबकि पशुओं का मस्तिष्क आकार में चपटा है। मस्तिष्क की सतह दोहरी होने के कारण दिव्य ऊर्जा ‘R’ की किरणें ऊर्जा के रूप में एक दूसरे को पार करती हुई विकीर्णित (Refract) होती हैं। परिणामस्वरूप प्राप्त होने वाली ‘R’ ऊर्जा के एक हिस्से को ‘X’ रूप में नाड़ीतन्त्र आत्मसात कर लेता है तथा शेष ‘Y’, ऊर्जा मस्तिष्क के बाहर चली जाती है। यही ‘Y’ ऊर्जा हर चीज़ पर प्रतिक्रिया करती है और इस प्रकार अहं और प्रति अहं (बन्धनों) के गुब्बारों की सृष्टि करती है। अहं और प्रतिअहं मस्तिष्क के तटीय क्षेत्र (Limbic Area) को ढक लेते हैं और मस्तिष्क में विचारों के बुलबुलों का सृजन करते हैं जो वास्तविकता को मस्तिष्क से दूर रखते हुए विचारों के माध्यम से हमें नियन्त्रित करते हैं।

अध्याय 11

सूक्ष्म तन्त्र
(The Subtle System)

पावन अस्थि, (Sacrum) नामक त्रिकोणाकार अस्थि में शुद्ध इच्छा की अवशिष्ट (Residual) शक्ति विद्यमान है। यूनानियों ने इस अस्थि को पावन (Sacrum) कहा, इसका अर्थ ये हुआ कि वो जानते थे कि यह पवित्र अस्थि है। संस्कृत भाषा में इस शक्ति को 'कुण्डलिनी' नाम दिया गया है।

इस समय अत्यन्त विनम्रतापूर्वक मैं ये कहना चाहूँगी कि इस ज्ञान को व्यर्थ समझकर इसलिए न त्याग दिया जाए क्योंकि (पाश्चात्य कथनानुसार) यह भारत जैसे देश से आ रहा है। जहाँ तक बाह्य वैज्ञानिक जीवन का सम्बन्ध है पाश्चात्य संस्कृति ने बहुत प्रगति कर ली है। पाश्चात्य संस्कृति एक विशाल वृक्षसम है जो अपने आकार से कहीं अधिक बढ़ गया है। परन्तु व्यक्ति को जड़ें खोजनी होती हैं। जड़ें यदि भारत में या किसी अन्य देश में हैं तो क्यों न हम जड़ों के ज्ञान को स्वीकार कर लें? जड़ों के बिना कोई पेड़ जीवित नहीं रह सकता और जड़ें यदि गिरने वाले पेड़ों का पोषण नहीं करतीं तो वे अर्थहीन हैं।

शुद्ध इच्छा की यह शक्ति साढ़े तीन कुण्डलों में स्थित है। संस्कृत में इसे कुण्डल कहते हैं और क्योंकि यह मादा ऊर्जा है इसलिए इसे 'कुण्डलिनी' कहते हैं। बीजरूप में कुण्डलिनी त्रिकोणाकार अस्थि में बैठी हुई है। जागृत होकर रीढ़ की हड्डी में स्थित हमारे छः चक्रों को भेदकर यह हमारी तालु-अस्थि का भेदन करती है। (सूक्ष्मतन्त्र का चित्र पुस्तक के अन्त में है) जो सत्य पूर्ण हो, जो ये बताता हो कि हम शरीर, मन, बुद्धि, अहंकार, बन्धन या भावनाएं नहीं हैं परन्तु इन सबसे ऊपर 'आत्मा' हैं तो व्यक्ति को ऐसा सत्य

स्वीकार कर लेना चाहिए।

इस बिंदु पर मैं ये स्वीकार करती हूँ कि सहजयोग के माध्यम से इस ज्ञान का मार्ग सबके लिए खुला हुआ है फिर भी बहुत से लोग इसे मानसिक स्तर पर इस्तेमाल करते हैं क्योंकि वे उन सन्तों की पुस्तकें पढ़ते हैं जो आत्म-साक्षात्कारी नहीं हैं। ऐसे लोग शब्दजाल में पूरी तरह खो जाते हैं। वे सभी प्रकार के कर्मकाण्ड, व्रत, जप और तपस्या करते हैं। परिवार और समाज को त्यागकर वे ब्रह्मचारी बनने का प्रयत्न करते हैं। ऐसा जीवन अत्यन्त अस्वाभाविक है।

ऐसे लगभग सभी लोग धनलोलुप होते हैं। उनकी संस्थाओं में सभी प्रकार का मिथ्याचार सिखाया जाता है। मेरे नाम पर लोगों से धन ऐंठ कर स्विटज़रलैंड भेजने के लिए भी किसी ने सहजयोग केन्द्र आरम्भ किया था। परन्तु बिना कोई पैसा दिए आप क्या प्राप्त करते हैं, इसका निर्णय करने के लिए छोटे से छोटा आवश्यक प्रमाण क्या है? सर्वप्रथम आपको अनुभव या आत्मसाक्षात्कार का वास्तवीकरण प्राप्त होना चाहिएं। परमचैतन्य की शीतल लहरियाँ आपको अंगुलियों के सिरों पर महसूस होनी चाहिएं। व्यक्ति को मानसिक व शारीरिक रूप से ठीक हो जाना चाहिए। मनुष्य में अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार देने की शक्ति आ जानी चाहिए। उसे ये ज्ञान हो जाना चाहिए कि उसके तथा अन्य लोगों के चक्रों में क्या खराबी है और उस खराबी को ठीक करने का ज्ञान भी उसे हो जाना चाहिए। झूठे गुरुओं के कारण घटित हुई समस्याओं का समाधान किया जाना आवश्यक है। आर्थिक समस्याएं आश्चर्यजनक ढंग से ठीक होनी चाहिएं। व्यक्ति को अन्दर और बाहर से शान्त हो जाना चाहिए। सहजयोग में किए गए 95% विवाह अत्यन्त सफल होते हैं और उत्पन्न होने वाले बच्चे जन्मजात आत्म-साक्षात्कारी एवं महान सन्त होते हैं।

एक अन्य सत्य भी है जो स्वीकार किया जाना चाहिए कि परमेश्वरी प्रेम के सूत्र की एक सूक्ष्मशक्ति है जो सारा जीवन्त कार्य करती है। जीवन्त प्रक्रिया की व्याख्या आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् की जा सकती है। स्वतः ही कुण्डलिनी की जागृति घटित होती है और यह ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करती है। हमारे हृदय में प्रतिबिम्बित आत्मा ज्योतित होकर हमारे चित्त को ज्योतित करती है और आत्मा के प्रकाश को अपने चित्त में फैलते हुए हम देखते हैं। यह सब स्वतः घटित होता है और हमारी भी अंगुलियों के सिरों पर, तथा तालु-अस्थि (ब्रह्मरन्ध्र) पर भी, शीतल लहरियाँ महसूस होती हैं। ये शीतल लहरियाँ भिन्न नामों से जानी जाती हैं। इन नामों के विषय में हमें वाद-विवाद में नहीं पड़ना चाहिए।

आधुनिक समय में लोगों को यह विश्वास दिलाना अत्यन्त कठिन है कि एक ऐसा मार्ग भी है जिससे वे आन्तरिक शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक मस्तिष्क इतना जटिल है कि इसने निष्कर्ष निकाल लिया है कि केवल तार्किकता के माध्यम से ही इस युग की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है। मस्तिष्क की ये जटिलता और दृढ़ विश्वास विद्वानों, बुद्धिवादियों तथा इस युग के वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में पूर्ण सत्य को प्रवेश नहीं होने देते।

गोष्ठियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय सभाओं में वे किसी भी ऐसे विषय पर बात नहीं करना चाहते जो निर्विवाद हो। वाद-विवाद के खेल का आनन्द लेने वाले वर्तमान लोगों को ये सब स्वीकार्य नहीं है। उदाहरण के रूप में पहली बार पैरिस जाकर जब मैंने आन्तरिक आनन्द के विषय में बातचीत की तो लोगों ने मुझे चेतावनी दी कि आप अत्यन्त प्रसन्न एवं आनन्दचित्त लगती हैं और इस प्रकार की शक्ल तथा दृष्टिकोण के लोगों को फ्रांस के महान बुद्धिवादी लोग स्वीकार नहीं करेंगे। वो निष्कर्ष निकालेंगे कि अज्ञानता के कारण आप आनन्दित हैं क्योंकि वे सोचते हैं कि जिस व्यक्ति ने जीवन को

समझ लिया है वह अत्यन्त दयनीय हो जाएगा। मैं ये न समझ सकी कि किस प्रकार उन्होंने अपने आप ये धारणा बना ली है कि फ्रांस के लोग सबसे अधिक दुखी (Miserable) हैं। वास्तव में फ्रांस के लोग स्वयं को अत्यन्त विशिष्ट मानते हैं। अपनी स्नानागार संस्कृति (Bathroom Culture) को उच्चतम मानते हैं। उन्होंने अपनी सड़ीगली प्रणाली द्वारा लोगों को शराबी बनाकर स्वयं को तथा अन्य लोगों को दयनीय बना दिया है।

अपना भाषण आरम्भ करते हुए मैंने श्रोताओं को ''कष्ट पीड़ितो'' (Lese Miserables) कहकर सम्बोधित किया। मैंने सोचा कि फ्रांस के लोगों को ''कष्ट पीड़ितो'' कहकर सम्बोधित करना उन तक पहुँचने का सबसे अच्छा तरीका होगा। जो मुझे कहना था उसे सुनने के लिए वे एकदम तैयार हो गए। मैंने उन्हें बताया कि पैरिस के हर दसवीं बत्ती के खम्भे के नीचे आपको शराबी लोग बैठकर विश्व के अन्त तथा अन्तिम घटना के विषय में सोचते हुए मिलेंगे। यदि आपके यहाँ हर दसवें खम्भे पर एक शराब खाना है, हर दूसरे तीसरे खम्भे के बाद एक वेश्या खड़ी हुई है तो स्वयं को दयनीय कहने की आड़ में सूर्यास्त होते ही, और उनमें से कुछ तो सूर्योदय के साथ ही, स्वयं को शराब में डुबो देने वाले लोगों के साथ और क्या हो सकता है?

एक बार हम हूवर क्राफ्ट (Hover Craft) मंडराने वाले यान द्वारा लन्दन से पैरिस जा रहे थे। अपनी यात्रा हमने कैलेइस (Calais) से आरम्भ की। लिले (Lille) पर हमने देखा कि शाम को साढ़े सात बजे ही सभी घर बन्द थे। हम रास्ता भटक गए थे। अत: हमने उन सभी घरों के दरवाज़े खटखटाए जिनमें बत्ती जल रही थी। हमने पाया कि हमारी खटखटाहट का उत्तर देने के लिए या तो कोई नशे में धुत्त पुरुष आया या नशे में धुत्त महिला। वे इतनी पिए हुए थे कि हम उनसे कुछ भी नहीं पूछ सके। हमने सोचा कि किसी शराबखाने पर जाकर ही रास्ते के विषय में पूछना बेहतर होगा। परन्तु ये हमें शराबखाने का रास्ता भी न बता सके। फ्रांस का अत्यन्त फैशनेबल भाग माने जाने वाले उस

स्थान पर शाम को नौ बजे के बाद किसी से बात कर पाना कठिन कार्य था।

दूसरी ओर बुद्धिवादी तथा विशिष्टवर्ग दूसरे प्रकार के नशे में मदमस्त हो रहे हैं। वे इतने बन्धनग्रस्त हैं कि उनके सम्मुख परमात्मा का नाम लेना भी असम्भव है। पश्चिमी देशों में पुरुष लोग तो प्राय: जुए, शराब तथा परस्त्रीगमन में ही व्यस्त हैं। जिस प्रकार जीविकार्जन के लिए किसी वेश्या को करना पड़ता है, वहाँ की महिलाएं सत्तर वर्ष की आयु में भी पुरुषों को आकर्षित करने के लिए स्वयं को सुन्दर बनाए रखने में लगी हुई हैं।

ऐसे समाज में जहाँ किसी भी चीज़ का सम्मान नहीं होता वहाँ व्यक्ति को दिव्यत्व के विषय में बात करने का अवसर कहाँ है? फिर भी हम कह सकते हैं कि इस घिनौनी संस्कृति के परिणामस्वरूप सभी पाश्चात्य् देशों में एक प्रकार का भ्रम उत्पन्न हो गया है और इस संस्कृति के विरुद्ध विद्रोह आरम्भ हो चुका है। परन्तु ये विद्रोह उससे भी बद्तर था। युवावर्ग ने सभी प्रकार के विनाशशील तरीके अपना लिए। अन्त में, जब बहुत से लोग नष्ट हो गए तो वे भयानक सम्प्रदायों तथा कुगुरुओं की ओर कूद पड़े। धर्म से हटकर सम्प्रदायों और कुगुरुओं की ओर जो धन और सत्तालोलुप थे। ये सत्य-साधक आर्थिक तथा भावनात्मक रूप से पूर्णत: दिवालिए हो गए, उन सबको सम्मोहित कर लिया गया। जो युवा बच गए वो अत्यन्त ही विक्षिप्त थे और हर समय अपने बन्धन और विचारग्रस्त मस्तिष्क को आघात पहुँचाने के लिए किसी न किसी प्रकार का रोमांचक खेल खेलना चाहते थे, मानो वास्तविकता से बचने के लिए वे भ्रम और बनावटी जीवन में प्रवेश करने का प्रयत्न कर रहे हों! एक प्रकार से, ये वर्णन किया हुआ है कि ये भयंकर कलियुग है जिसमें लोग भ्रम और भ्रान्ति के शिकार हैं। ये भ्रम अत्यन्त कष्टदायी (Taxing) है जो लोगों को शान्त नहीं होने देता। यद्यपि इन सभी बनावटी बाधाओं के बावजूद भी सत्य-साधना आरम्भ हो चुकी है। दिव्यत्व को ज़ोर-शोर से इन सभी देशों में प्रवेश कर जाना चाहिए क्योंकि ये लोग

वास्तव में अज्ञानवश दुखी तथा सताए हुए हैं तथा अपने हालात से सन्तुष्ट नहीं हैं और बेहतर जीवन खोजने के प्रयत्न कर रहे हैं।

विश्व भर में जो साधक मानसिक शान्ति खोज रहे हैं, उन सबके लिए शुभ समाचार है कि आन्तरिक शान्ति प्राप्त करने के लिए एक अद्वितीय मार्ग खोज लिया गया है। व्यक्ति को मानसिकता से ऊपर उठना होता है। पूर्व में यह बहुत पुरातन आत्म ज्ञान है, विशेष रूप से भारत में, तथा पश्चिम में भी ऐसे सन्त हुए जिन्हें ये ज्ञान प्राप्त था, जिनके माध्यम से आत्म-साक्षात्कार की अवस्था प्राप्त की जा सकती थी। इंग्लैण्ड में विलियम ब्लेक, फ्रांस में मोलिरे (Moliere), डी मोपासां (De Maupassant) तथा सी.एस.लिविस (C.S.Lewis) जैसे बहुत से कवि और अमेरिका के कुछ सन्तों को भी मानव अस्तित्व में दिव्य जीवन के प्रवेश के भविष्यदर्शन का ज्ञान प्राप्त था।

व्यक्ति विश्वास करे या न करे, परन्तु सत्य ये है कि मानव चेतना में हम एक ऐसी अवस्था तक पहुँच गए हैं जहाँ हम पूर्णसत्य को नहीं जानते। यही कारण है कि बहुत से दर्शन हैं, बहुत सी विचारधाराएं हैं और लोग विशिष्ट प्रकार के भिन्न धर्म चाहते हैं तथा परस्पर लड़कर धर्म के मूलतत्वों को समाप्त कर देते हैं।

अब जो मुझे कहना है उसे आँखे बन्दकर के स्वीकार नहीं कर लिया जाना चाहिए। अन्धविश्वास के कारण हमें बहुत से कष्ट हो चुके हैं। परन्तु यदि व्यक्ति का मस्तिष्क वैज्ञानिक की तरह से खुला है तो इसे यह सब परिकल्पना के (Hypothesis) के रूप में देखना चाहिए और एक बार प्रमाणित होने पर स्वीकार कर लेना चाहिए कि उत्क्रान्ति के अन्तिम भेदन तक पहुँचने के लिए हमारे शरीर में सूक्ष्मतन्त्र विद्यमान है। सर्वप्रथम व्यक्ति को ये जानना चाहिए कि हमारे सृष्टा (परमात्मा) महानतम आयोजक हैं।

मानव शरीर में तीन प्रकार के नाड़ी तन्त्र हैं। पहला मध्य नाड़ी तन्त्र है,

दूसरा अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र जिसका बायाँ और दायाँ भाग है और तीसरा परानुकम्पी नाड़ी तन्त्र है।

अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र आपात स्थितियों के लिए है। उदाहरण के रूप में व्यक्ति यदि जंगल में बाघ देख ले तो वह तेजी से दौड़ने लगता है। इस आपात स्थिति में हृदय की धड़कन बहुत तेज हो जाती है। यह कार्य अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र करता है परन्तु परानुकम्पी नाड़ी तन्त्र, जो बाएं और दाएं भाग के मध्य में हैं, के कार्य के कारण यह सामान्य स्थिति में वापिस आ जाता है। चिकित्सा विज्ञान में मैं नहीं जानती कि वे इस निष्कर्ष पर पहुँच चुके हैं या नहीं कि बायाँ और दायाँ अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र परस्पर सम्पूरक होने के कारण विपरीत दिशा में कार्य करते हैं। उदारहण के रूप में बाएं अनुकम्पी नाड़ीतन्त्र का पोषण ईड़ा नाड़ी (चन्द्र वाहिका) नामक सूक्ष्म नाड़ी करती है और दाएं नाड़ीतन्त्र का पोषण पिंगला नाड़ी (सूर्य वाहिका) द्वारा होता है। ईड़ा नाडी मनुष्य को उसका भावनात्मक पक्ष प्रदान करती है। व्यक्ति के अवचेतन में इस ईड़ा नाड़ी पर भूतकाल चिन्हित होता है। अवचेतन भूतकाल है, आज का भूतकाल, तत्पश्चात कल का भूतकाल, इस जीवन का भूतकाल, पूर्वजन्मों का भूतकाल और अन्ततः ब्रह्माण्ड के सृजन के समय से आया हुआ भूतकाल-'सामूहिक अवचेतन'।

ये सारे क्षेत्र ऊर्ध्वता (Vertically) की दिशा में स्थापित किए गए हैं, क्षितिजावस्था (Horizontally) में नहीं। जिस प्रकार बहुत से मनोवैज्ञानिकों ने कहा है, उत्क्रान्ति के लिए व्यक्ति को अवचेतन के इन सभी क्षेत्रों में से गुजरना आवश्यक नहीं है। कारण वह समान्तर हैं, एक के ऊपर एक नहीं हैं।

एक अन्य पिंगला नाड़ी, शरीर एवं मनस के लिए कार्य करती है अर्थात मानव के बुद्धिवादी कार्य के लिए। मध्य में परानुकम्पी है जो बाएं और दाएं अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र के छल्लों से बना है। आपात स्थितियों के कारण जब

जब भी अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र थक जाता है तो परानुकम्पी इन दोनों नाड़ी तन्त्रों को शान्त करके इनका पोषण करता है और अन्ततः इनकी सहायता करता है। जिस स्थान पर ये छल्ले परस्पर मिलते हैं वहाँ ऊर्जा केन्द्रों का सृजन होता है जिन्हें चक्र कहते हैं। ये छल्ले हमारे बाएं और दाएं अनुकम्पी नाड़ी तन्त्र की रोज़मर्रा की गतिविधियों से प्रभावित होने वाले वंशाणुओं (genes) के अनुरूप होते हैं।

मध्यतन्त्र,जो पराअनुकम्पी है, का पोषण, सुषुम्ना (उत्थान वाहिका) नामक नाड़ी करती है। अपनी उत्क्रांन्ति में जो कुछ भी हमने प्राप्त किया है यह सब मध्य नाड़ी तन्त्र पर अंकित है। उदाहरण के रूप में कुछ क्षेत्रों में मानव पशुओं की अपेक्षा उच्च और अधिक सम्वेदनशील है। किसी कुत्ते या घोड़े को यदि आप गन्दगी से निकालना चाहें तो इसे कोई एतराज न होगा, परन्तु मानव इस गन्दे मार्ग से नहीं निकल सकता। अतः मानव में गन्दगी और दुर्गन्ध के विषय में सम्वेदना विकसित हो गई है जबकि पशुओं में यह सम्वेदना नहीं है। ऐसी बहुत सी चीज़ें हैं जिनमें मानव पशुओं की अपेक्षा कहीं अधिक सम्वेदनशील है। इस सारी सम्वेदना की अभिव्यक्ति मध्य नाड़ी तन्त्र के माध्यम से होती है। अपनी विकास प्रक्रिया में जो कुछ भी हमने प्राप्त किया है उसकी अभिव्यक्ति हमारे अस्तित्व में मध्य नाड़ी तन्त्र के माध्यम से हो रही है।

एक अन्य अवशिष्ट ऊर्जा, जो कि कुण्डलाकार है, वह त्रिकोणाकार (Sacrum) पावन अस्थि नामक अस्थि में संभाव्य (Potential) के रूप में विद्यमान है। अवशिष्ट ऊर्जा या अवशिष्ट शक्ति का अर्थ ये है कि यह मूल आद्यशक्ति है जिसका विभाजन नहीं हुआ। परमेश्वरी शक्ति जब पूर्ण विकसित भ्रूण के मस्तिष्क पर पड़ती है तब सम-पार्श्व-सम (Prism-Like) मस्तिष्क में यह तीन श्रेणियों में आती हैं। विकीर्णन (Refraction) के कारण ऐसा होता है। जो ऊर्जा मस्तिष्क के किनारों पर पड़ती है वह अनुकम्पी नाड़ी

तन्त्र की सृष्टि करने के लिए एक दूसरे को पार करती है। परन्तु परमेश्वरी ऊर्जा जब मस्तिष्क के शिखर पर पड़ती है तो मस्तिष्क प्रिज़्म (समपार्श्व) जैसा होने के कारण, मूलभूत शक्ति बिना विकीर्णित हुए, उसमें से गुजरकर पावन अस्थि में कुण्डल आकार में, कुण्डलिनी के रूप में, बैठ जाती है। सम्भवतः यूनानी लोग जानते थे कि यह पावन अस्थि है इसलिए उन्होंने इसे 'पावन' (Sacrum) की संज्ञा दी। ये मूलभूत पूर्ण शक्ति साढ़े तीन लपेटों में है तथा सम्भावित अवस्था (Resting Potential State) में सुप्त है। हमारे अन्दर जो सूक्ष्मतन्त्र है वह अन्तर्रचित है। हमारी विकास प्रक्रिया में मेरुरज्जु पर तथा मस्तिष्क में भी सात मुख्य ऊर्जाकेन्द्र हैं। जब यह चतुर्थ ऊर्जा वाहिका (जिसे संस्कृत भाषा में कुण्डलिनी कहते हैं) बीज के अंकुरण की तरह से जागृत होती है तो छः चक्रों को भेदकर अन्ततः तालुअस्थि क्षेत्र में स्थित ब्रह्मरन्ध्र नामक सातवें चक्र को भेदती है और मानवचेतना को परमात्मा के प्रेम की सर्वव्याप्त शक्ति से जोड़ती है। इस प्रकार व्यक्ति में चतुर्थ-आयामी (तुर्या) चेतना विकसित होती है। इस प्रकार कुण्डलिनी यह योग प्राप्त करती है। जब यह कुण्डलिनी उठती है तो वह जीन्स (वंशाणुओं) के आँकड़ा आधारों को परिवर्तित करती है तथा व्यक्तित्व में परिवर्तन घटित होता है। छः चक्र शुद्ध, पोषित एवं प्रकाशमय हो जाते हैं और ये घटना वंशाणुओं (Genes) पर प्रतिबिम्बित होती है। इन जीन्स की संख्या छल्ले (Loop) के दोनों ओर तीन-तीन है।

व्यक्ति को समझना चाहिए कि उसका अन्तिम लक्ष्य क्या है। हमारे विकास का अन्तिम लक्ष्य आत्मा (Spirit) बनना है जो हमारे हृदय में सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब है। यही आत्म सारूप्य (Self Indentity) है और आत्मज्ञान (Self Knowledge) भी है। व्यक्ति परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति के साथ एकरूप हो जाता है। आत्मा हमारी चेतना को प्रकाशमय कर देती है और हमारे मध्य नाड़ी तन्त्र से चैतन्य लहरियाँ बहने

लगती हैं जो हमारे पूर्ण अस्तित्व को ज्योतिर्मय बना देती हैं। परमचैतन्य की शीतल लहरियों को हम महसूस करने लगते हैं। ये चैतन्य लहरियाँ परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति है जो हमारे तालुअस्थि क्षेत्र (ब्रह्मरन्ध्र) से तथा हमारे हाथों तथा अंगुलियों के छोरों से बहने लगती हैं।

साधक निर्विचार होकर शान्त-चित्त हो जाता है। स्वत: ही वह अत्यन्त पवित्र एवं धर्मपरायण ढंग से आचरण करने लगता है। सभी विध्वंसकारी आदतें छूट जाती हैं। साधक का स्वभाव अबोधिता एवं करुणा से परिपूर्ण हो उठता है। सभी विकृत यौन शैलियाँ सामान्य हो जाती हैं और उनकी दृष्टि तथा चित्त भी वासना और लोभ विहीन हो जाते हैं। साधक अब पूर्णसत्य को अपनी अंगुलियों के सिरों पर जानता है। उसके चक्षु चमक उठते हैं क्योंकि दीप्ति की लौ उन्हें चमक प्रदान करती है। ऐसे व्यक्तित्व पर समय की पकड़ ढीली पड़ जाती है और आयु का असर रुक जाता है। कर्म, अकर्म बन जाते हैं तथा आत्म-साक्षात्कारी व्यक्ति यद्यपि कर्म करता है परन्तु ये कर्म वह अहँ वश नहीं करता। पारिवारिक वातावरण के कारण भूतकाल के बन्धन, जो कि व्यक्ति पर बाध्य होते हैं, पूरी तरह से छूट जाते हैं और एक नई पावन संस्कृति उसमें अभिव्यक्त होती है। सहजयोगियों का सामूहिक जीवन अत्यन्त सुन्दर आनन्द का विषय बन जाता है। सहजयोगी बहुत से अन्य लोगों को आत्मसाक्षात्कार प्रदान करने की शक्तियाँ प्राप्त कर लेते हैं। इसी प्रकार सहजयोग विश्व के 65 देशों में फैला है।

यह इस बात का प्रमाण है कि जिन लोगों ने जागृति प्राप्त की है उनमें कुछ घटित हुआ है। हमारे विकास की अन्तिम उपलब्धि के रूप में इस जागृति की सत्य साधकों को चिर प्रतीक्षा थी। इस उपलब्धि के लिए न तो आप आज्ञा दे सकते हैं न धन और न ही इसका अपमान किया जा सकता है।

कुछ लोग जो साधक नहीं हैं परन्तु अत्यन्त हेकड़ और सम्भवत: मूर्ख हैं

और आत्मसाक्षात्कार की माँग करते हैं, मैंने देखा है कि ऐसे लोगों को आत्मसाक्षात्कार मिलना बहुत कठिन है, चाहे जो प्रयत्न इसके लिए किए जाएं इन जटिल एवं कठिन लोगों पर बहुत-बहुत दिन तक कुछ कार्यान्वित नहीं होता।

दूसरी प्रकार के लोग हिटलर की तरह से क्रूर होते हैं या क्रूर-पर-पीड़न-आनन्द की भावना से भरे लोग। ऐसे लोगों के लिए आत्मसाक्षात्कार प्राप्त कर पाना कठिन है। परन्तु मैं हैरान थी कि इस विश्व में बहुत से गहन सच्चे साधकों ने भी इस आधुनिक काल, इस घोर कलियुग में जन्म लिया है। उनमें कुछ मानवीय दुर्बलताएं हो सकती हैं, परन्तु इन बाधाओं से ऊपर उठकर कुण्डलिनी इन लोगों को पुनर्जन्म प्रदान करती है। वास्तव में कुण्डलिनी हर मनुष्य की व्यक्तिगत माँ है। हमारे पूर्वजन्मों, हमारी प्रेरणाओं, हमारी इच्छाओं के विषय में इसके पास सारी सूचना है, मानों टेप पर अंकित की गई (Tape Recorded) हो। वे हर व्यक्ति की व्यक्तिगत माँ है और अपने बच्चे को प्रेम करती हैं तथा उसे पुनर्जन्म देने के लिए उत्सुक हैं। वे हमें समझती हैं और जब उनका सामना परमेश्वरी सत्य से होता है तो वे उठती हैं और ब्रह्मरन्ध्र का भेदन करती हैं। इस भेदन को किसी ज़माने में बहुत कठिन कार्य माना जाता था। इसके लिए न तो आपको सिर के भार खड़े होना है, न भूखों मरना है, न व्रत करना है, न मन्त्रोच्चारण करने हैं, कुछ भी आवश्यक नहीं है। केवल एक समर्पित विनम्र हृदय आवश्यक है। इस घटना की उपलब्धि परमात्मा का आशीर्वाद है।

दिव्यत्व के विचार से आप दूर चले गए हैं और इसकी जिम्मेदारी साहित्य, दर्शन, राजनीति और अर्थशास्त्र से अंसख्य धुरन्धरों द्वारा किए गए महान बुद्धिवादी कार्यों पर है। उनके सारे प्रयत्नों के बावजूद भी बहुत से लोगों ने ये महसूस किया है कि इन बुद्धिवादी कार्यों से उन्हें न तो शान्ति और सामंजस्य प्राप्त हुआ है और न ही उनका कोई हित हुआ है। मानवस्तर पर भी

यह सोचना असम्भव है कि आक्रामक या सताए गए लोगों द्वारा इस विश्व में शान्ति स्थापित की जा सकती है। बहुत से लोगों को भविष्य के लिए कोई आशा दिखाई नहीं पड़ती। हम यदि विश्व को बचाना चाहते हैं तो सहजयोग अपनाना एकमात्र उपाय है।

सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब आत्मा ही पूर्ण सत्य एवं आनन्द का स्रोत है। परन्तु मानव अवस्था में आत्मा हमारी चेतना में प्रकाशमान नहीं होती। केवल आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् ही आत्मा हमारी चेतना को ज्योतिर्मय करती है। अत: पूर्ण सत्य, पावन प्रेम, शान्ति एवं आनन्द खोजने के लिए व्यक्ति का आत्मा बनना आवश्यक है। यह बात समझना तथा स्वीकार करना प्रथम आवश्यकता है क्योंकि हम ये शरीर, मन, बुद्धि, भावनाएं, बन्धन या अहं नहीं हैं। हम कहते हैं: ''मेरा शरीर, मेरा मन'' आदि-आदि, परन्तु ''मेरा'' कहने वाला यह 'मैं' कौन है ?

इन सुन्दर फुलों, वृक्षों, फलों और सभी प्रकार के जीवन्त कार्यों को होते हुए, सारे ऋतुपरिवर्तन को हम देखते हैं, परन्तु इतना भी नहीं सोचते कि ''इन सभी कार्यों का कर्ता कौन है?'' 'तम्भरा' नामक परमात्मा के प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति है जो ये सारे चमत्कारिक कार्य करती है जिन्हें बिना सोचे-समझे हम अपना अधिकार मान लेते हैं। आप यदि किसी चिकित्सक से पूछें, ''हमारा हृदय कौन चलाता है?'' वह कहेगा, ''यह कार्य स्वचालित नाड़ीतन्त्र (Autonomous Nervous System) करता है, परन्तु इस स्वचालित नाड़ी तन्त्र के पीछे 'स्व' (Auto) है। हृदय को चलाने वाला यह 'स्व' है कौन? इस प्रश्न का उत्तर वे न दे सकेंगे। उत्तर न देना भी उनकी ईमानदारी है, परन्तु इस प्रश्न का उत्तर है। आत्मा ही हमारे शरीर में सभी महत्वपूर्ण कार्यों का नियन्त्रण करती है।

जैसा मैंने बताया कुण्डलिनी जब उठती है तो तालू-अस्थि का भेदन

करके हमारा योग परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति से करती है। यही शक्ति सारा जीवन्त कार्य कर रही है जिसके लिए हमें कोई पैसा नहीं देना पड़ता और न ही इसके प्रति हम अनुगृहीत हैं। इसके विषय में हम सोचते तक नहीं! इस प्रकार यह ओजस्वी शक्ति हमारे पूर्ण अस्तित्व में बहने लगती है तथा हमारे जीन्स की उचित व्यवस्था हो जाने के कारण हमारी शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक, सभी समस्याओं का समाधान हो जाता है।

अन्तिम पृष्ठ पर छपे चित्र में जैसा दर्शाया गया है, हमारे उत्थान मार्ग (सुषुम्ना मार्ग) पर सात सूक्ष्म ऊर्जा चक्र हैं। परन्तु कुछ सहायक चक्र भी हैं (जैसा चित्र में दिखाया गया है) हमारी विकास प्रक्रिया के दौरान इन सूक्ष्म चक्रों का सृजन हुआ। शरीर के बाएं हिस्से (बाएं अनुकम्पी तन्त्र) में ये चक्र हमें भावनात्मक पोषण प्रदान करते हैं और दाएं हिस्से (दाएं अनुकम्पी तन्त्र) पर शारीरिक एवं मानसिक पोषण।

कुण्डलिनी नामक यह शक्ति जब उठती है तो हमारी शारीरिक, मानसिक भावनात्मक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने वाले इन चक्रों का पोषण करती है। सूक्ष्म चक्र अपनी नई अवस्था को जीन्स (वंशाणु) पर प्रतिबिम्बित करते हैं। ये चक्र ज्योतिर्मय हो जाते हैं और इस प्रकार हमारी शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक स्थिति में सुधार होता है। हमारी तालु-अस्थि, जो कि बचपन में बहुत कोमल होती है, को कुण्डलिनी जब भेदती है तो परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापक शक्ति से एकरूप हो जाती है। परमचैतन्य की शीतल लहरियाँ, पावन चैतन्य लहरियों के रूप में साधक की अंगुलियों के सिरों से बहने लगती हैं। अपने तालू पर भी आप इन शीतल लहरियों का अनुभव कर सकते हैं। आत्मसाक्षात्कार का ये प्रथम अनुभव है।

दूसरा अनुभव ये है कि जब कुण्डलिनी उठती है तो ये निर्विचार समाधि की स्थिति की सृष्टि करती है। मनुष्य सदैव या तो भूत के विषय में सोचता है या भविष्य के विषय में, उन्हें यदि बताया जाए कि केवल वर्तमान में रहना है तो यह उनके लिए सम्भव नहीं है। मनुष्य में एक के बाद एक विचार लहरों की तरह से उठते हैं। विचारों की ये लहरें उठती और गिरती रहती हैं। इनका उद्गम या तो भूत से होता है या भविष्य से। कुण्डलिनी जब उठती है तो दो विचारों के बीच की दूरी, (विलम्ब) जो कि बहुत ही छोटी होती है, विस्तृत हो जाती है और एक पूर्ण शान्ति की अवस्था का सृजन होता है। तब हम वर्तमान में होते हैं, परन्तु निर्विचार। चिन्ता तथा क्रोध मुक्त हम वर्तमान में खड़े होते हैं, वर्तमान में जो कि वास्तविकता है। वास्तव में वर्तमान ही सत्य है क्योंकि भूतकाल समाप्त हो चुका है और भविष्य का भी कोई अस्तित्व नहीं है। वर्तमान की इस अवस्था में जब हम होते हैं तो पूर्णतः मौन एवं शान्त होते हैं। इस प्रकार हम आन्तरिक शान्ति प्राप्त करते हैं। हज़ारों लोगों की कुण्डलिनी जागृति हो जाने पर सामूहिक रूप से यह शान्ति प्राप्त की जा सकती है और समाज का पूर्णोद्धार हो सकता है।

उदाहरण के रूप में पानी में जब हम खड़े होते हैं तो उठती हुई लहरों से भयभीत होते हैं। परन्तु यदि नाव पर सवार हो सकें तो लहरों के इस उतार चढ़ाव को हम देख सकते हैं और इनकी विनाशशक्ति के साक्षी बन सकते हैं। केवल इतना ही नहीं हम इनका आनन्द भी ले सकते हैं। वर्तमान की स्थिति में जब हम स्थिर होते हैं तब भी ऐसा ही घटित होता है। हमें घेरने वाली सभी समस्याओं को हम देखते हैं, उन्हें देखते हैं और साक्षी बन जाते हैं और सदा सर्वदा के लिए उन समस्याओं से मुक्त हो जाते हैं। उनके समाधान हम जान जाते हैं और इस प्रकार समस्याओं का समाधान कर लेते हैं। उस अवस्था में हमें न भूत की चिन्ता होती है न भविष्य की, हम केवल वर्तमान के आशीर्वादों का आनन्द लेते हैं, वर्तमान जो कि सत्य है। तब हम निर्विचार

समाधि की अवस्था में होते हैं, सब कुछ जानते हुए भी निर्विचार समाधि में होते हैं! जो भी कुछ हम देखते हैं, हमारी स्मृतिपटल पर चित्र की तरह से अंकित हो जाता है। अन्त:शान्ति हमारे हृदय को खोल देती हैं। प्रशान्त प्रेम सागर के मौन में सभी अहं और बन्धन विलय होने लगते हैं। उदाहरण के रूप में मेरा अपना यदि कोई सुन्दर कालीन हो तो इसका रखरखाव एक समस्या है। किसी अन्य व्यक्ति का कालीन यदि मेरे पास हो तो समस्या उससे भी बद्तर होगी। मैं इसे सम्भालती रहूँगी और इसकी चिन्ता में फँसी रहूँगी। परन्तु यदि मैं निर्विचार समाधि में चली जाऊँ तो बिना किसी चिन्ता के मैं इसे देखूंगी। इस प्रकार कालीन के बनाने वाले कलाकार का आनन्द ब्रह्मरन्ध्र से मेरे पूर्ण अस्तित्व में बहने लगेगा। अत्यन्त आनन्ददायी और सुखद आनन्द लहरियाँ मुझे अभिभूत कर देंगी। ऐसी अवस्था में जो भी विचार आते हैं वो प्रेरणाओं की तरह से दिव्य आनन्दमय विचार होते हैं। हम यदि विचार करना चाहें तो विचार कर सकते हैं और न करना चाहें तो कोई आवश्यकता नहीं है। इस अवस्था को संस्कृत भाषा में हम चतुर्थ-आयामी-चेतना कहते हैं, तुर्या अवस्था। जागृति के पश्चात् कभी-कभी यह तुर्या अवस्था केवल कुछ क्षणों के लिए ही स्थापित होती है और तत्पश्चात् शनै:शनै: इसका समय बढ़ता चला जाता है तथा व्यक्ति अपने अन्दर पूर्णशान्ति को प्राप्त कर सकता है।

समुद्र के जल से सर्वप्रथम हम नाव पर सवार होने का प्रयत्न करते हैं। नाव पर चढ़ने के पश्चात् यदि हमें तैरना आ जाए तो पुन: समुद्र की लहरों में कूदकर हम उन सब लोगों को बचा सकते हैं जो डूबने से डर रहे हैं। यही दूसरी अवस्था है जिसमें हम 'निर्विकल्प समाधि' नामक अवस्था प्राप्त करते हैं जिसमें अपने विषय में कोई विकल्प नहीं रह जाता। व्यक्ति पूर्णत: आत्मविश्वस्त होता है और अन्य लोगों की कुण्डलिनी जागृत कर सकता है, उन्हें रोगमुक्त कर सकता है और वातावरण से प्रभावित हुए बिना अपनी तुर्या-अवस्था में बना रह सकता है। यह अवस्था निर्विकल्प समाधि

कहलाती है जिसमें न तो व्यक्ति को स्वयं पर कोई सन्देह रह जाता है और न ही सृष्टि में कार्यरत परमेश्वरी शक्ति पर।

सर्वव्यापक परमेश्वरी शक्ति कार्यरत है। एक बार यदि हमारा योग इससे हो जाए तो यह हमारी रक्षा करती है। यही परमेश्वरी शक्ति ज्ञान का सागर है, चमत्कारों का सागर है, परमानन्द एवं प्रेम का सागर है, यह करुणा का सागर है और सर्वोपरि, क्षमा का भी सागर है।

अतः उचित रूप से उत्थान प्राप्ति के लिए व्यक्ति को चाहिए कि बिना कुछ सोचे सबको क्षमा कर दे। आपको अपने हृदय में कम से कम तीन बार कहना होगा, 'मैं सबको क्षमा करता हूँ।' ऐसा कहते हुए आपको यह नहीं सोचना कि आप किनको क्षमा करेंगे क्योंकि उनके विषय में सोचना आपके लिए सिरदर्द बन जाएगा। अतः सामान्य रूप से यह कह देना ही सर्वोत्तम है ''मैं सबको क्षमा करता हूँ।'' प्रतिदिन कम से कम तीन बार ऐसा कहना है। चाहे आप क्षमा करें या न करें, आप कुछ नहीं करते, लेकिन क्षमा न करने पर आप गलत हाथों में खेलते हैं। जैसा अभी तक होता रहा है, आप गलत हाथों में खेलते रहे और स्वयं को कष्ट देते रहे, जबकि वो सब लोग मज़े लेते रहे। अतः अब उपयुक्त समय है कि आप इस बोझ से मुक्त हो जाएं। इसके लिए आपको कहना होगा, ''मैं सबको क्षमा करता हूँ।''

दूसरी बात ये है कि आपको यह समझना होगा कि यदि आप सत्य को खोज रहे हैं तो आप दोषी नहीं हो सकते। सत्य को पाने की शुद्ध इच्छा के कारण आपके सारे दोष समाप्त हो गए हैं। अतः न तो दोषभाव की कोई आवश्यकता है और न ही किसी के सम्मुख दोष स्वीकार करने की। एक बार जब आप सत्य को खोजने लगते हैं तो आपके मस्तिष्क में बने हुए दोषभावों से आपको मुक्ति मिल जाती है। अधिकतर दोषभाव बनावटी होते हैं। मस्तिष्क में किसी भी प्रकार का कोई दोषभाव रखने की आवश्यकता नहीं।

परन्तु लोग फैशन की तरह से दोष भाव स्वयं पर लादे रखते हैं। दोष भूतकाल की चीज़ है और क्योंकि भूतकाल का कोई अस्तित्व ही नहीं है, व्यक्ति को इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। जो भी गलतियाँ आपने की होंगी उनका फल भी उसी समय भुगत लिया होगा। भूतकाल की गलतियों के लिए चिन्ता करने का अब कोई लाभ नहीं। अतः स्वयं को कहें, ''मैंने स्वयं को क्षमा किया।'' आपको कहना होगा, ''मैंने स्वयं को क्षमा किया,'' क्योंकि प्रेम की यह दिव्यशक्ति क्षमा का सागर है। अतः आपको स्वयं को पूर्णतः क्षमा करना होगा और स्वयं को दोषी मानने पर अपना समय बर्बाद नहीं करना होगा। आप यदि स्वयं को क्षमा नहीं करते तो बाईं विशुद्धि चक्र पकड़ जाता है और इस चक्र में इतनी रुकावट आ जाती है कि कुण्डलिनी उठ नहीं सकती। कुछ लोग तो अपने पूर्वजों द्वारा अन्य लोगों के प्रति किए गए अपराधों के लिए भी स्वयं को दोषी मान लेते हैं!

दूसरे, यदि आप स्वयं को या अन्य लोगों को क्षमा नहीं करते तो दृकतन्त्रिका (Optic Chiasma) पर स्थित आज्ञा चक्र बाधित हो जाता है। ये चक्र अत्यन्त संकीर्ण है। आप यदि स्वयं को या अन्य लोगों को क्षमा नहीं करते तो यह खुल नहीं सकता, और ये आवश्यक है कि किसी भी तरह से ये चक्र खुले और कुण्डलिनी इसमें से गुज़रे। एक बार जब आप बिना कुछ सोचे सबको क्षमा कर देते हैं तो आपको बहुत हल्का महसूस होता है। परन्तु आज्ञा चक्र में से कुण्डलिनी जब उठती है तो यह आपको निर्विचार समाधि में ले जाती है। अतः कृपया बिना लोगों के विषय में कुछ सोचे दिन में तीन बार- प्रातः, सांय, तथा सोने से पूर्व सबको क्षमा कर दें। ये भी प्रार्थना सम है।

अपने वर्तमान में जब आप खड़े होते हैं तो हैरान होते हैं कि किस प्रकार आप इतने शान्त हो गए हैं! आपके मस्तिष्क में न कोई परेशानी होती है और न कोई उथल-पुथल। आनन्दमय जीवन का महान आशीर्वाद मानकर आप इस शान्ति की अवस्था का आनन्द लेते हैं। अपने अन्दर यह शान्ति स्थापित

करने के लिए तथा निर्विचार समाधि की अवस्था प्राप्त करने के लिए व्यक्ति को प्रतिदिन प्रयास करना होगा। प्रकृति या मानवरचित सभी सुन्दर चीज़ें स्वत: ही आपको निर्विचार समाधि में ले जाएंगी। बिना किसी विचार के हर चीज़ को देखें और उस रचना को देखने का आनन्द लें जो निराकार ऊर्जा की तरह से आपके रोम-रोम को भर देने का कार्य करती है और आप आन्तरिक रूप से (Subjectively) आनन्द से ओत-प्रोत हो जाते हैं। यह किसी वस्तुपरक (Objective) या सुविचारित (Deliberate) मानसिक प्रतिक्रिया के कारण नहीं होता।

आज विश्व को ऐसे लोगों की आवश्यकता है जिनके हृदय शान्ति एवं आनन्द से परिपूर्ण हों तथा जो बाद में अन्य लोगों को भी अपने जैसा बना सकें, एक ऐसे सुनियोजित या सुव्यवस्थित समाज, सामूहिकता तथा प्रजाति की रचना कर सकें जो जीवन की इस शान्तिपूर्ण अवस्था का आनन्द ले सके। इस शान्त अवस्था में न तो हम समाज से दूर भागते हैं न किसी की भर्त्सना करते हैं। अब हम एक पके हुए घड़े की तरह से होते हैं जिस पर कोई और निशान नहीं पड़ सकता क्योंकि अब यह पूरी तरह से पका हुआ है। अत: हम परिपक्व चेतनामय व्यक्ति बन जाते हैं जिनकी चेतना को न तो आसुरी शक्तियाँ विकृत कर सकती हैं, न बिगाड़ सकती हैं और न दूषित कर सकती हैं। इस प्रकार आधुनिक समय में केवल ऐसे ही लोगों के माध्यम से सार्वभौमिक शान्ति की स्थापना की जा सकती है जिन्होंने यह अवस्था प्राप्त कर ली है। आधुनिक समय अत्यन्त विशेष है। मैं इसे बसन्त का समय (Blossom Time) कहती हूँ। बाइबल में इसका वर्णन अन्तिम निर्णय (Last Judgement) कहकर किया गया है तथा कुरान में इसे कियामा (पुनरुत्थान का समय) कहा गया है। अन्यथा यह विश्वास कर लेना मिथ्या है कि लोगों का कोई समूह या संस्था दिमागी जमा खर्च से सार्वभौमिक शान्ति स्थापित कर सकती है। अब समय आ गया है कि बहुत से लोग आत्मसाक्षात्कार

प्राप्त कर सकें और मुझे पूर्ण विश्वास है कि वह दिन दूर नहीं जब परमात्मा के प्रेम के साम्राज्य में ये नवजन्मित (आत्म-साक्षात्कारी) लोग शान्ति का प्रसार करेंगे और सार्वभौमिक शान्ति का सृजन करेंगे।

आत्मा के प्रकाश में मानव सभी परेशान करने वाली बनावटी तथा असत्य चीज़ों से मुक्ति पा लेगा। सर्वप्रथम साधकों के मस्तिष्क से भय समाप्त हो जाता है। उदाहरण के रूप में जब हम वाहनों की भयानक भीड़ में से गुजरते हैं तो हम इसके विषय में चिन्तित होते हैं, परन्तु यदि पर्वत की चोटी पर बैठकर हम वाहनों की भीड़ को देख रहे हों तो यह हमें परेशान नहीं कर सकता। अपने मस्तिष्क के अन्दर चलने वाले उथल-पुथल एवं संघर्ष को भी हम इसी प्रकार देखते हैं और बिल्कुल भी नहीं घबराते। बल्कि उन हालात का हल निकल आता है। इस प्रकार मृत्यु तथा अन्य चीज़ों का भय लुप्त हो जाता है और वर्तमान में ही हम अनन्त जीवन जीते हैं। अपने जीवन के हर क्षण का हम आनन्द लेते हैं और यही आनन्द सभी लोगों को देने का प्रयत्न करते हैं।

यह जान लेना आवश्यक है कि पहला चक्र मूलाधार, अर्थात् जड़ों का आधार, कुण्डलिनी के नीचे स्थित है। यह चक्र श्रोणि-चक्र पर कार्य करता है जो मलोत्सर्जन के कार्य को देखता है। इसका एक अन्य कार्य रतिक्रिया भी है। कुण्डलिनी के नीचे स्थित होने के कारण मानव-उत्थान में इसकी कोई भूमिका नहीं है। इसके विपरीत कुण्डलिनी जागृति के समय यह चक्र अपनी सारी गतिविधियाँ रोक देता है और कुण्डलिनी हमें परमेश्वरी शक्ति से एकाकारिता प्रदान करती है और हम बच्चों की तरह से अबोध हो जाते हैं।

जब कुण्डलिनी नाभि चक्र के आगे स्थित तीसरे भाग में पहुँचती है तो हम पूर्णत: धर्मपरायण हो जाते हैं। जिस क्षेत्र को हम भवसागर कहते हैं वह गुरुतत्व के दस धर्मादेशों से ज्योतित हो जाता है। आदिगुरुओं ने दस धर्मस्थान बनाए, जिनके ज्योतित होने पर हम पवित्र हो जाते हैं। अपने

आचरण में कठोरता लाने की आवश्यकता नहीं। स्वत: ही हम वास्तव में आध्यात्मिक हो जाते हैं। जिस प्रकार अण्डा पक्षी बनता है हम भी दूसरा जन्म लेते हैं। संस्कृत में योगी या ब्रह्म अर्थात् परमात्मा की सर्वव्यापी शक्ति को जानने वाले व्यक्ति को द्विज कहते हैं तथा पक्षी भी द्विज कहलाता है अर्थात् दूसरी बार जन्मा हुआ। अब्राहम, मोजिज़ और सभी दस आदिगुरु पृथ्वी पर बार-बार अवतरित हुए। जोरास्टर (Zoroaster) ने पाँच बार जन्म लिया और बहुत से अन्य गुरु भिन्न देशों तथा भिन्न स्थानों पर जन्में ताकि धार्मिक जीवन अपनाने और उत्थान के लिए आवश्यक सन्तुलन बनाने के लिए लोगों का मार्गदर्शन कर सकें।

परन्तु धार्मिक जीवन की बातें करने मात्र से ये कर्यान्वित नहीं होता। धर्मग्रन्थ पढ़ते रहने से हम शब्दजाल में फँस जाते हैं। जागृति के पश्चात् कुण्डलिनी जब भवसागर में आती है तो हम अपने अन्तस में शाश्वत पावन धर्म के अस्तित्व को महसूस करते हैं। यह चक्र जब पूर्णत: प्रकाशित हो जाता है और आध्यात्मिकता इसमें स्थापित हो जाती है तब हम स्वत: ही धर्मपरायण बन जाते हैं। अपनी मूल्य प्रणाली का हम सम्मान करने लगते हैं, और चरित्रवान, ईमानदार, अहिंसात्मक तथा अन्तर्जात रूप से करुणामय हो जाते हैं। हमारे अन्दर ये सब गुण इतने प्रत्यक्ष होने लगते हैं कि परिवर्तित होकर हम नया रूप धारण करते हैं जो कि अत्यन्त धर्मनिष्ठ, सन्तसम होता है। ऐसे व्यक्ति के लिए 'करने योग्य और न करने योग्य' की बात करना अनावश्यक है। वे स्वयं ही सत्य के ज्ञाता होते हैं।

दूसरा चक्र, स्वाधिष्ठान जब प्रकाशित होता है तो हमारे अन्दर सृजनात्मकता आश्चर्यजनक रूप से बढ़ जाती है। हमारे यहाँ बहुत से कलाकार, संगीतज्ञ, चित्रकार, भवन निर्माता, वास्तुकार और अन्य सभी प्रकार के सृजनात्मक लोग हैं जो अचानक विश्व विख्यात हो गए हैं और जिन्होंने सृजनात्मकता का बहुत उच्च स्तर प्राप्त कर लिया है। स्वाधिष्ठान

चक्र का बायाँ भाग (बायाँ स्वाधिष्ठान) हमें परमेश्वरी नियमों का ज्ञान प्रदान करता है कि ये किस प्रकार कार्य करते हैं और किस प्रकार अपने अन्दर हमें इन शक्तियों का उपयोग करना है और अपने तथा अन्य लोगों के हित के लिए किस प्रकार इन्हें काम में लेना है। स्वाधिष्ठान चक्र का उद्‌भव नाभि के मध्य में स्थित नाभि चक्र से होता है। स्वाधिष्ठान चक्र कमल की तरह से भवसागर में घूमता है। यह बाईं ओर को आता है और बाईं ओर की सभी बाधाओं को नष्ट करते हुए बाएं भाग का पोषण करता है। बाईं ओर की बाधाओं का उद्‌भव आध्यात्मिकता में गलत ढंग के अभ्यासों से होता है। यह केन्द्र शुद्ध ज्ञान का चक्र है। परमेश्वरी नियम, इनकी कार्य पद्धति और उपयोग, मानव की समस्या है जिसकी अभिव्यक्ति मनुष्य के मध्य नाड़ीतन्त्र पर होती है और स्वत: ही व्यक्ति में अपनी तथा अन्य लोगों की समस्याओं का समाधान करने की योग्यता आ जाती है। परन्तु जब ये दाईं ओर को आ जाता है तो सीधे ही पिंगला नाड़ी से जुड़ जाता है और मानव बुद्धि का अत्यन्त विवेकशील, सन्तुलित चेतना में परिवर्तन करता है। बहुत से बच्चे जो अपनी कक्षा में फिस्ड्डी थे और जिन्हें अध्यापकों ने स्कूल से निकाल दिया था, वे भी आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् अपनी कक्षा में प्रथम आने लगे। बहुत से विद्यार्थियों को वज़ीफ़े भी प्राप्त हुए। सहजयोग में आने वाले बहुत से बच्चे प्रथम दर्जा प्राप्त करते हैं और कभी-कभी तो सर्वप्रथम दर्जा। सहजयोग मस्तिष्क को शुद्ध करता है, बुद्धि को कुशाग्र करता है - सामान्य से कहीं कुशाग्र। परन्तु यह बुद्धि के धूर्तपक्ष को नहीं उभारता और न ही अक्खड़ अहं को। इसके विपरीत ऐसे विद्यार्थी या लोग जिन्हें सहजयोग की सहायता प्राप्त हुई है वे अत्यन्त विनम्र, सुहृदय, विद्वान तथा करुणामय हो गए हैं।

जीवन में व्यक्ति को सावधान रहना चाहिए कि कहीं वह अति में न चला जाए। परन्तु आधुनिक जीवन ऐसा है कि जब तक मनुष्य को आधात

नहीं लगता वह अति में उतरता चला जाता है। आप ये देखें कि लोग दोपहर के भोजन के बाद, एक बजे के बाद, घण्टों धूप में बैठे रहते हैं जबकि उस समय की धूप का चमड़ी पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। इसके कारण उन्हें चमड़ी का कैंसर हो सकता है, फिर भी वो इसी तरह से धूप में बैठते चले जाते हैं जब तक उन्हें चमड़ी का कैंसर नहीं हो जाता। सारी आदतें एक ही प्रकार की प्रतीत होती हैं। उदाहरण के रूप में ग्रैंड प्रिक्स (Grand Prix) सबसे बुरे खेलों में से एक है। इस खेल में दर्शकों को प्रसन्न करने के लिए किसी न किसी व्यक्ति को वास्तव में मरना पड़ता है, स्पेन के बैल-युद्ध की तरह। अब तो स्पेन की महिलाएं भी सांड़ों से लड़ने लगी हैं। अत: भविष्यवादी लोग जो आक्रमक रूप से प्रचण्ड व्यवहार करते हैं, और उन्हें जिन पर ये लोग आघात करते हैं, बहुत से रोग हो सकते हैं, जैसे जिगर की समस्या, जटिल कब्ज़, अस्थमा, भयानक हृदयाघात, पक्षघात, शक्कर रोग, रक्त कैंसर और गुर्दा रोग आदि आदि।

प्रचण्ड व्यवहार के कारण उत्पन्न हुई दाईं या अवांछित सहनशीलता से हुए बाईं ओर के सभी रोग कुण्डलिनी द्वारा ठीक हो सकते हैं। क्योंकि जब इसकी जागृति होती है तो यह चित्त को मध्य की ओर खींचती है और व्यक्ति प्रचण्डता तथा ग्लानि को छोड़कर अत्यन्त सन्तुलित व्यक्तित्व हो जाता है। इतना ही नहीं, अहं प्रचालित आदतें छूट जाती हैं तथा बन्धनों के कारण बनी हुईं आदतें भी लुप्त हो जाती हैं और दैत्यावस्था की आदतों से भी मुक्ति मिल जाती है। व्यक्ति स्वतन्त्र व्यक्तित्व हो जाता है और अपने भूतकाल को देखकर अपने पर हँसता है।

आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् एक अन्य परिवर्तन जो व्यक्ति में घटित होता है वह ये है कि व्यक्ति जातिवाद, राष्ट्रवाद, साम्यवाद, पूंजीवाद और सभी 'वादों' (Isms) से मुक्त होकर, जीवन की बनावटी सीमाएं भूल जाता है तथा परमेश्वरी प्रेम के सार्वभौमिक धर्म एवं सार्वभौमिक

साम्राज्य का अंश बन जाता है।

विश्वव्यापी धर्म आन्तरिक रूप से ज्योतिर्मय होता है तथा व्यक्ति के अन्तस की अभिव्यक्ति होती है जो हमारे मस्तिष्क के सारे सन्देहों पर विजय पाकर सुस्पष्ट चित्र बनाती है कि हमारी प्रणालियों में, हमारे परिवारों में, देश में और विश्व में क्या त्रुटियाँ हैं तथा शान्ति का अभाव क्यों है ? यह कारण समझती है और किसी भी 'बन्धन' या 'वाद' (Ism) से एकरूप नहीं होती, क्योंकि यह गुलाम नहीं है। यही आत्मा का प्रकाश हमारे हृदय में सर्वशक्तिमान परमात्मा का प्रतिबिम्ब है जो पूर्णत: स्वतन्त्र है और सर्वज्ञ है। इसी प्रकाश में हम जान जाते हैं कि हमारे अन्दर, हमारे परिवार में, समाज में, हमारे देशों में कुछ कमियाँ हैं जिनके कारण हम कष्ट उठा रहे हैं। उदाहरण के रूप में स्विटज़रलैंड में मैं एक महिला से मिली जिसका पुत्र चारपाई मृत्यु (Cot Death) का शिकार हो गया था। दुख के कारण वह पूरी तरह से शराबी हो चुकी थी। मैंने उससे पूछा कि उसके पुत्र की मृत्यु किस प्रकार हुई? तो बहुत सोच सोच के उसने बताया, ''बच्चा दो महीने का था और रात को साथ के कमरे में सोया हुआ था तथा हम पति पत्नी दूसरे कमरे में सोते थे। एक दिन प्रात: अचानक मैंने पाया कि बच्चा अपने बिस्तर पर मृत पड़ा हुआ था। इससे मुझे आघात लगा और दुख के कारण मैं बेहोश सी हो गई।

पहली बार मुझे पता लगा था कि पश्चिम में माता-पिता नन्हें बच्चों से भी अलग सोते हैं। एक वर्ष से छोटा होने पर भी बच्चों को दूसरे कमरे में सुलाया जाता है। बच्चा यदि भूख-प्यास से, किसी परेशानी से बिलख रहा है या बिस्तर में उसका दम घुट रहा है तो भी माता-पिता दूसरे कमरे में उससे दूर निर्वस्त्र पड़े होते हैं क्योंकि वहाँ पर यौन सम्बन्धों का इतना महत्व है! उसने मुझे बताया, ''क्योंकि हम निर्वस्त्र सोते हैं इसलिए बच्चों को अपने कमरे से बाहर रखते हैं। सर्वप्रथम तो मैं ये न समझ सकी कि स्विटज़रलैण्ड की कड़कती ठण्ड में पति-पत्नी निर्वस्त्र क्यों सोते हैं! पागल माता-पिता ने यदि

वस्त्र न भी पहनें हों तो भी दो माह के नन्हें शिशु पर क्या फर्क पड़ता है? उसने मुझे बताया, ''ये हमारी संस्कृति है। काम-लोलुप इस संस्कृति ने बहुत से नन्हें बालकों का जीवन ले लिया है क्योंकि जन्म से पूर्व इन बच्चों को अपने माता-पिता की इस संस्कृति का ज्ञान न था। जिन देशों में माता-पिता बच्चे ही नहीं चाहते उन देशों में वे उत्पन्न ही क्यों हुए? जिस प्रकार पुरुष और महिलाएं यौन सम्बन्धों के विषय में सोचते हैं, इसकी बात करते हैं या इसे भोगते हैं, यह सब वास्तव में घिनौना है। अशक्त होकर वे नपुंसक हो जाते हैं। उनका यौनजीवन भारत के हिजड़ों जैसा है जो केवल यौनभोगों की बातें करते हैं। आत्मसाक्षात्कार प्राप्त करने के पश्चात् माता-पिता परिवर्तित हो जाते हैं। अपने बच्चों के प्रति वे अत्यन्त सतर्क हो जाते हैं। यौन, धन एवं सत्ता लोलुप संस्कृति आत्माभिमुखी अत्यन्त सुन्दर, प्रेममय, मिल बाँटकर लेने वाली, करुणामय, क्षमाशील संस्कृति बन जाती है और आनन्दमय पारिवारिक जीवन शैली उभरकर आती है क्योंकि आत्मा के प्रकाश में लोग इस घिनौनी संस्कृति के अंधकार को देखते हैं। वे अत्यन्त विवेकशील, सन्तुलित और नैतिक यौनजीवन अपनाते हैं। उनसे उत्पन्न हुए अधिकतर बच्चे जन्मजात आत्मसाक्षात्कारी होते हैं जो अत्यन्त विवेकशील, आज्ञाकारी, प्रेममय और बुद्धिमान होते हैं।

मेरुरज्जु पर उरोस्थि (sternum Bone) के पीछे मध्य नाड़ी तन्त्र पर चौथा चक्र है जिसे हृदय चक्र या अनहद् कहते हैं। इसके दो उपचक्र भी हैं, एक बायां और एक दायाँ, मध्य हृदय चक्र अनहद् चक्र कहलाता है क्योंकि हृदय की धड़कन (Lub-Dub) की आवाज बिना किसी थपक (Percussion) के पैदा होती है। यद्यपि इसके बाएं और दाएं भाग हैं, यह केन्द्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि बारह वर्ष की आयु तक उरोस्थि में यह चक्र रोगप्रतिकारकों (Antibodies) का सृजन करता है और पूरे शरीर में इनका प्रसारण करता है। ये सभी रोगप्रतिकारक उरोस्थि के सुदूर नियन्त्रण

(Remote Control) में होते हैं। जब भी कभी व्यक्ति पर आक्रमण होता है या उसे घबराहट होती है तो ये उरोस्थि धड़कने लगती है और रोगप्रतिकारकों को सन्देश देती है। संस्कृत में ये रोगप्रतिकारक (Antibodies) 'गण' कहलाते हैं। रोग प्रतिकारक रोग से तथा आक्रमणकर्ता से युद्ध करते हैं। मध्य में स्थित एकमात्र मध्य-हृदय-चक्र ही हमारी प्रतिरक्षाप्रणाली के लिए जिम्मेदार है। जब हम आदिशक्ति माँ के प्रति अपराध करते हैं अर्थात् विकृत यौन सम्बन्धों, शराब, नशे, ओछी और घटिया उत्सुकता के कारण आन्तरिक तनाव, अत्याचार का भय आदि में लिप्त होते हैं तब ये चक्र बिगड़ जाता है। हमारे अन्दर रोग-प्रतिकारात्मकता दुर्बल हो जाती है जिसके कारण व्यक्ति के अन्दर रोगों से मुकाबला करने की शक्ति का ह्रास हो जाता है।

बाईं तरफ स्थित हृदय चक्र, हृदय को देखता है। यही चक्र है जहाँ 'सर्वशक्तिमान परमात्मा' आत्मा के रूप में प्रतिबिम्बित हैं। आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् यही आत्मा चित्त को ज्योतिर्मय करती है। जब लोग शारीरिक या मानसिक रूप से बहुत अधिक कार्य करते हैं या बहुत अधिक गुस्सा करते हैं और शराब पीते हैं तो यह चक्र पकड़ा जाता है। इस प्रकार हृदय ऐसी स्थिति में चला जाता है जहाँ छोटी सी घटना भी हृदयाघात का कारण बन सकती है। विशेष रूप से युवा आयु में लोग यदि बहुत अधिक टैनिस या कोई अन्य खेल खेलें और शराब भी पियें तो वे जान-लेवा हृदयाघात के शिकार बन सकते हैं। इसका सम्बन्ध स्वाधिष्ठान नामक दूसरे चक्र से जुड़े हुए जिग़र की समस्याओं से भी है। भविष्यवादी लोगों में या तो शुष्क स्वभाव होते हैं या आक्रमक क्रोधमय स्वभाव। उनमें भी हृदयाघात की सम्भावना होती है, जो बड़ी आयु में जाकर भयानक भी हो सकती है। इस प्रकार के लोग यदि अभद्र, धूर्त, चालाक और भ्रष्ट स्वभाव के हों तो उन्हें सदा जानलेवा हृदयाघात का खतरा होता है।

बाएं हृदय का सम्बन्ध हमारी सांसारिक माँ से और दाएं हृदय का

सांसारिक पिता से होता है। यदि पिता की असामयिक मृत्यु हो जाए या वह बेटे-बेटियों को बचपन से ही छोड़ दे या बचपन में बेटे-बेटी के साथ दुर्व्यवहार करे तो यह चक्र कठिनाई में फँस जाता है। इसके विपरीत यदि बेटा या बेटी पिता का अपमान करें या चोरी, धोखाधड़ी, हेरा-फेरी, असत्य वचन, हिंसा या कत्ल आदि करके पिता या सर्वशक्तिमान परमात्मा के विरुद्ध अपराध करें तो ये सारी गतिविधियाँ दाएं हृदय के लिए अत्यन्त कष्टकर हैं। माँ को दुख देना, अपमान करना आदि जघन्य व्यवहार से बायाँ हृदय चक्र पकड़ता है।

हृदय चक्र के ऊपर एक अन्य चक्र है जिसे हम विशुद्धि चक्र कहते हैं। मेरुरज्जु पर कंधों के झुकाव के ऊपर दोनों ग्रीवा-अस्थियों (Cervical Bones) के मध्य यह स्थित है। सामूहिक रूप से यह चक्र संचारण (Communication) के लिए है। ये चक्र जब दाईं तरफ़ बहुत अधिक गतिशील होता है तो व्यक्ति के बोल-चाल तथा व्यवहार को आक्रामक तथा अहंकार पूर्ण बनाने का कारण बनता है। ऐसा व्यक्ति बहुत अच्छा वक्ता बन सकता है परन्तु अपने भाषण में वह बिल्कुल शुष्क होता है। जिस व्यक्ति का दायाँ विशुद्धि चक्र खराब होता है वह कठोर शब्दों का उपयोग कर सकता है, शेर की दहाड़ की तरह से अपनी आवाज़ ऊँची कर सकता है और अपनी कठोर भाषा द्वारा लोगों पर अपना रोब जमा सकता है। कर्कश स्वर के कारण कई अन्य शारीरिक समस्याएं भी हो सकती हैं जैसे गले में आवाज़ का समाप्त हो जाना। लोग जब दोष भाव ग्रस्त होते हैं तो विशुद्धि चक्र का बायाँ भाग संकट में पड़ जाता है। ऐसा व्यक्ति अत्यन्त झेंपु, भीरु तथा चालाक हो जाता है। विशुद्धि जब कष्ट में होती है तो व्यक्ति की सम्प्रेषण (Communication) शक्ति कम हो जाती है। वह न तो गा सकता है न सामूहिकता का आनन्द ले सकता है। दोष भावना यदि बहुत अधिक गहन हो जाए तो व्यक्ति को हृदयशूल रोग हो सकता है और यदि हृदयशूल न हो तो

ग्रीवा का कैंसर हो सकता है। यह चक्र यदि खराब हो और इसके साथ-साथ कुछ अन्य चक्र भी खऱाब हों तो असाध्य तरह का कोई जटिल रोग हो सकता है जो चिकित्सकों के नियन्त्रण से भी बाहर होता है।

भवों के मध्य में विशुद्धि चक्र की एक अन्य शाखा है जिसे 'हँसा चक्र' कहते हैं। यह चक्र विवेकशक्ति के लिए है। आत्मसाक्षात्कार के पश्चात् ज्योतिर्मय हो जाने पर यह दिव्य विवेक प्रदान करता है। विवेकशक्तिहीन मनुष्य पर यदि निर्णय का बोझ भी हो तो नाड़ीव्रण (Sinus) या एक तरफ तेज़ सिरदर्द रोग हो सकता है। यह चक्र जब पकड़ा हुआ हो तो व्यक्ति को गले को नुकसान देने वाली खट्टी या तीखी चीज़ें नहीं खानी चाहिएं।

मस्तिष्क में दृक-तन्त्रिका (Optic Chiasma) के चौराहे पर 'आज्ञा' नामक चक्र है। इस चक्र की दो पंखुड़ियाँ हैं। एक शंकुरूप (Pineal Body), और दूसरी श्लेष्मीय (Pituitary) का नियन्त्रण करती है। पाइनीअल 'प्रति अहं' के रूप में संस्कारों को सम्भालकर रखती है और श्लेश्मीय अहं का सृजन करती है। अहं और प्रतिअहं के दो गुब्बारे दृक-तन्त्रिका के चौराहे पर, जहाँ आज्ञा चक्र का स्थान है, विपरीत दिशाओं में स्थापित किए गए हैं। इस प्रकार उग्र स्वभाव व्यक्ति का अहं का गुब्बारा मस्तिष्क के बाईं ओर होता है और तामसी प्रवृत्ति (Left Sided) व्यक्ति के बन्धन और प्रति अहं का गुब्बारा मस्तिष्क के दाईं ओर होता है। किसी व्यक्ति को यदि दाईं ओर पक्षघात हुआ हो तो हमें जान लेना चाहिए कि उसके मस्तिष्क का बायाँ भाग प्रभावित हुआ है। मैं नहीं जानती कि चिकित्सा विज्ञान ने इसे स्वीकार किया है या नहीं। बहुत अधिक सोचने पर इस चक्र के दाईं ओर की समस्याएं हो सकती हैं, जहाँ अहं का गुब्बारा मस्तिष्क के दाईं ओर फुलता चला जाता है और हमारे विवेक को पूर्णत: ढक लेता है। बचपन से हमारे अन्दर बने संस्कार मस्तिष्क के बाईं ओर बढ़ते चले जाते हैं और समस्याएं उत्पन्न करते हैं। परन्तु व्यक्ति यदि गलत प्रकार के धार्मिक लोगों और तथाकथित

कुगुरुओं और सम्प्रदायों के पास गया हो, जो लोगों को सम्मोहित करने का प्रयत्न करते हैं, तो वह धर्मान्ध हो सकता है। इन बन्धनों में कोई सत्य नहीं है, परन्तु जैसे जैसे हम इन बन्धनों में उतरते चले जाते हैं, हम उन्हें स्वीकार कर लेते हैं। ज्यों ज्यों हम उन्नत होते हैं ये बन्धन भी उन्नत होते हैं और कभी कभी तो हमारे मनस (Psyche) पर बहुत बुरा प्रभाव डालते हैं।

अन्तिम चक्र तालूक्षेत्र में है। इसके ऊपर तालूअस्थि होती है जिसका भेदन हमारा अन्तिम भेदन, ब्रह्मरन्ध्र भेदन है। यह चक्र-सहस्रार महत्वपूर्णतम है। इसकी एक हज़ार पंखुड़ियाँ हैं अर्थात् एक हज़ार नाड़ियाँ हैं। जब ये ज्योतिर्मय होता है तो ये नाड़ियाँ शान्तिपूर्वक जलती हुई दीपशिखाओं सम प्रतीत होती हैं। इन पंखुड़ियों की संख्या के बारे में बहुत बड़ा विवाद है जो, अपने सीमित ज्ञान से बहस करने वाले चिकित्सों के लिए, सहजयोग को समझ पाना असम्भव कर देता है। बाइबल में कहा गया है, ''मैं आपके सम्मुख शोलों की जुब़ान की तरह से प्रकट हूँगा'' (I will appear before you like tongues of flames)। नि:सन्देह इसका वर्णन बहुत से भारतीय ग्रन्थों में भी हुआ है। सातवें चक्र को पार करते हुए कुण्डलिनी तालू-अस्थि का भेदन करती है जो एक बार फिर शैशव काल की तरह से, थोड़ा सा कोमल हो जाता है और ये कुण्डलिनी परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति से जुड़ जाती है, इससे एकाकार हो जाती है। परिणामस्वरूप अपनी अंगुलियों के छोरों पर और बाद में अपने हाथों और तालू-अस्थि क्षेत्र पर हम परमचैतन्य की शीतल लहरियों को अनुभव करने लगते हैं। इस प्रकार पहली बार हम परमेश्वरी प्रेम की सर्वव्यापी शक्ति का अनुभव करते हैं।

झूले की तरह से या लोलक (Pendulum) की तरह से लोग बाएं से दाएं, दाएं से बाएं आते जाते रहते हैं। परन्तु वे मध्य में स्थिर नहीं हो पाते। मध्य में स्थित होना केवल तभी सम्भव हैं जब कुण्डलिनी सर्वव्यापी परमेश्वरी शक्ति से पूरी तरह से जुड़ जाए।

बाएं और दाएं के इस निरन्तर आड़ोलन के कारण हम अपने लिए और समाज के लिए समस्याएं उत्पन्न करते हैं।

जिस तरह से चित्र में दर्शाया गया है हम अपने और अन्य लोगों के चक्रों को अपनी अंगुलियों के सिरों पर महसूस कर सकते हैं। आत्मज्ञान द्वारा आपको यदि अपने चक्रों को ठीक करने का ज्ञान हो तो हम अन्य लोगों के चक्रों को भी ठीक कर सकते हैं। स्वतः ही हमारी मानवीय चेतना सामूहिक चेतना की स्थिति पा लेती है जिसके द्वारा हम अन्य लोगों के चक्रों के विषय में जान लेते हैं। अब हम चक्रों की भाषा बोलते हैं और अन्य लोगों तथा उनकी समस्याओं को चक्रों द्वारा समझते हैं। प्रचण्ड आक्रमक प्रवृत्ति (Extreme Right Side) हमारे उग्र भविष्यवादी व्यक्तित्व या सामूहिक पराचेतन (Collective Supra-Conscious) की और प्रचण्ड तामसी प्रवृत्ति (Extreme Left Side) हमारे सामूहिक अवचेतन (Collective Suv-conscious) व्यक्तित्व की द्योतक हैं। कुण्डलिनी के सर्वव्यापी परमेश्वरी प्रेम में भेदन द्वारा जब हमारा उत्थान वर्तमान में होता है तो हम परा-चेतना (Super-Consciousness) की स्थिति को प्राप्त कर लेते हैं।

सर्वाधिकार सुरक्षित

बिना पूर्व आज्ञा के इस पुस्तक के किसी भी भाग की प्रतिलिपि या किसी भी रूप में प्रसारण वर्जित है। कोई भी व्यक्ति अनधिकृत रूप से यदि इसका प्रकाशन करता है तो उस पर हानिपूर्ति का दावा किया जाएगा।

visit us at www.sahajayoga.org to know more about Sahaja Yoga.